चन्द्रकान्ता सन्तति

बाबू देवकीनन्दन खत्री



भारती भाषा प्रकाशन
शाहदरा, दिल्ली-110032

चन्द्रकान्ता सन्तति

बाबू देवकीनन्दन खत्री

5



प्रकाशक

भारती भाषा प्रकाशन
518/6 बी, विश्वासनगर
शाहदरा, दिल्ली-110032

आवरण : हरिप्रकाश त्यागी

संस्करण : 1995 मूल्य : 125.00

मुद्रक : विकास ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

CHANDRAKANTA SANTATI, PART V (NOVEL) *by*
BABU DEVKINANDAN KHATRI

चन्द्रकान्ता सन्तति

सत्रहवाँ भाग

1

हमारे पाठक 'लीला' को भूले न होंगे। तिलिस्मी दारोगा वाले बँगले की बर्बादी के पहले तक इसका नाम आया है जिसके बाद फिर इसका जिक्र नहीं आया।[1]

लीला को जमानिया की खबरदारी पर मुकर्रर करके मायारानी काशी वाले नागर के मकान में चली गई थी और वहाँ दारोगा के आ जाने पर उसके साथ इन्द्रदेव के यहाँ चली गई। जब इन्द्रदेव के यहाँ से भी वह भाग गई और दारोगा तथा शेरअली खाँ की मदद से रोहतासगढ़ के अन्दर घुसने का प्रबन्ध किया गया, जैसा कि सन्तति के बारहवें भाग के तेरहवें बयान में लिखा गया है उस समय लीला भी मायारानी के साथ थी, मगर रोहतासगढ़ में जाने के पहले मायारानी ने उसे अपनी हिफाजत का जरिया बनाकर पहाड़ के नीचे ही छोड़ दिया था। मायारानी ने अपना तिलिस्मी तमंचा, जिससे बेहोशी के बारूद की गोली चलाई जाती थी, लीला को देकर कह दिया था कि मैं शेरअली खाँ की मदद से और उन्हीं के भरोसे पर रोहतासगढ़ के अन्दर जाती हूँ मगर ऐयारों के हाथ मेरा गिरफ्तार हो जाना कोई आश्चर्य नहीं क्योंकि वीरेन्द्रसिंह के ऐयार बड़े ही चालाक हैं। यद्यपि उनसे बचे रहने की पूरी-पूरी तरकीब की गई है मगर फिर भी मैं बेफिक्र नहीं रह सकती, अस्तु, यह तिलिस्मी तमंचा तू अपने पास रख और इस पहाड़ के नीचे ही रहकर हम लोगों के बारे में टोह लेती रह। अगर हम लोग अपना काम करके राजी-खुशी के साथ लौट आये तब तो कोई बात नहीं। ईश्वर न करे यदि मैं गिरफ्तार हो जाऊँ तो तू मुझे छुड़ाने का बन्दोबस्त करना और इस तमंचे से काम निकालना। इसमें चलाने वाली गोलियाँ और वह ताम्र-पत्र भी मैं तुझे दिए जाती हूँ जिसमें गोली बनाने की तरकीब लिखी हुई है।

जब दारोगा और शेरअली खाँ सहित मायारानी गिरफ्तार हुई, और वह खबर शेरअली खाँ के लश्कर में पहुँची जो पहाड़ के नीचे था, तो लीला ने भी सब हाल सुना

---

1. देखिए, चन्द्रकान्ता सन्तति, नौवाँ भाग, आठवाँ बयान।

और वह उसी समय वहाँ से टलकर कहीं छिप रही, फिर भी जब तक राजा वीरेन्द्रसिंह वहाँ से चुनारगढ़ की तरफ रवाना न हुए तब तक वह भी उस इलाके के बाहर न गई और इसी से शिवदत्त और कल्याणसिंह (जो बहुत से आदमियों को लेकर रोहतासगढ़ के तहखाने में घुसे थे) वाला मामला भी उसे बखूबी मालूम हो गया था।

माधवी, मनोरमा, और शिवदत्त ने जब ऐयारों की मदद से कल्याणसिंह को छुड़ाया था तो भीमसेन भी उसी के साथ ही छुड़ाया गया, मगर भीमसेन कुछ बीमार था इसलिए शिवदत्त के साथ मिल-जुलकर के रोहतासगढ़ तहखाने में न जा सका था, शिवदत्त ने अपने ऐयारों की हिफाजत में उसे शिवदत्तगढ़ भेज दिया था।

सब बखेड़ों से छुट्टी पाकर जब राजा वीरेन्द्रसिंह कैदियों को लिए हुए चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए तो मायारानी को कैद से छुड़ाने को फिक्र में लीला भी भेष बदले हुए उन्हीं के लश्कर के साथ रवाना हुई। लश्कर में नकली किशोरी, कामिनी और कमला के मारे जाने वाला मामला उसके सामने ही हुआ और तब तक उसे अपनी कार्रवाई करने का कोई मौका न मिला मगर जब नकली किशोरी, कामिनी और कमला की दाह-क्रिया करके राजा साहब आगे बढ़े और दुश्मनों की तरफ से कुछ बेफिक्र हुए तब लीला को भी अपनी कार्रवाई का मौका मिला और वह उस खेमे के चारों तरफ ज्यादा फेरे लगाने लगी जिसमें मायारानी कैद थी और चालीस आदमी नंगी तलवारें लिए बारी-बारी से उसके चारों तरफ पहरा दिया करते थे। एक दिन इत्तिफाक से आँधी-पानी का जोर हो गया और इसी से उस कम्बख्त को अपने काम का अच्छा मौका मिला।

वीरेन्द्रसिंह का लश्कर एक सुहावने जंगल में पड़ा हुआ था। समय बहुत अच्छा था, संध्या होने के पहले ही से बादलों का शामियाना खड़ा हो गया था, बिजली चमकने लग गई थी, और हवा के झपेटे पेड़-पत्तों के साथ हाथापाई कर रहे थे। पहर रात जाते-जाते पानी अच्छी तरह बरसने लग गया और उसके बाद तो आँधी-पानी ने एक भयानक तूफान का रूप धारण कर लिया। उस समय लश्कर वालों को बहुत ही तकलीफ हुई। हजारों सिपाही, गरीब बनिये, घसियारे और शागिर्द पेशे वाले जो मैदान में सोया करते थे इस तूफान से दुःखी होकर जान बचाने की फिक्र करने लगे। यद्यपि राजा वीरेन्द्रसिंह की रहमदिली और रिआयापरवरी ने बहुतों को आराम दिया और बहुत से आदमी खेमों और शामियानों के अन्दर घुस गये यहाँ तक कि राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह के खेमों में भी सैकड़ों को पनाह मिल गई मगर फिर भी हजारों आदमी ऐसे रह गये थे जिनकी भौंडी किस्मत में दुःख भोगना बदा था। यह सब-कुछ था मगर लीला को ऐसे समय भी चैन न था और वह दुःख को दुःख नहीं समझती थी, क्योंकि उसे अपना काम साधने के लिए बहुत दिनों बाद आज यही एक मौका अच्छा मालूम हुआ।

जिस खेमे में मायारानी और दारोगा वगैरह कैद थे, उससे चालीस या पचास हाथ की दूरी पर सलई का एक बड़ा और पुराना दरख्त था। इस आँधी-पानी और तूफान का खौफ न करके लीला उसी पेड़ पर चढ़ गई और कैदियों के खेमे की तरफ मुँह करके तिलिस्मी तमंचे का निशाना साधने लगी। जब-जब बिजली चमकती तब-तब वह अपने निशाने को ठीक करने का उद्योग करती। सम्भव था कि बिजली की चमक में कोई उसे

पेड़ पर चढ़ा हुआ देख लेता, मगर मगर जिन सिपाहियों के पहरे में वह खेमा था उन (कैदियों वाले) खेमे के पास जो लोग रहते थे, सभी इस तूफान से घबराकर उसी खेमे के अन्दर घुस गये थे जिसमें मायारानी और दारोगा वगैरह कैद थे। खेमे के बाहर या उस पेड़ के पास कोई भी न था जिस पर लीला चढ़ी हुई थी।

लीला जब अपने निशाने को ठीक कर चुकी तब उसने एक गोली (बेहोशी वाली) चलाई। हम पहले के किसी बयान में लिख चुके हैं कि इस तिलिस्मी तमंचे के चलाने में किसी तरह की आवाज नहीं होती थी मगर जब गोली जमीन पर गिरती थी तब कुछ हलकी-सी आवाज पटाखे की तरह होती थी।

लीला की चलाई हुई गोली खेमे को छेद के अन्दर चली गई और एक सिपाही के बदन पर गिरकर फूटी। उस सिपाही का कुछ नुकसान नहीं हुआ जिस पर गोली गिरी थी। न तो उसका कोई अंग-भंग हुआ और न कपड़ा जला, केवल हलकी-सी आवाज हुई और बेहोशी का बहुत ज्यादा धुआँ चारों तरफ फैलने लगा। मायारानी उस वक्त बैठी हुई अपनी किस्मत पर रो रही थी। पटाखे की आवाज से वह चौंककर उसी तरफ देखने लगी और बहुत जल्द समझ गई कि यह उसी तिलिस्मी तमंचे से चलाई गई गोली है जो मैं लीला के सुपुर्द कर आयी थी।

मायारानी यद्यपि जान से हाथ धो बैठी थी और उसे विश्वास हो गया था कि अब इस कैद से किसी तरह छुटकारा नहीं मिल सकता मगर इस समय तिलिस्मी तमंचे की गोली ने खेमे के अन्दर पहुँचकर उसे विश्वास दिला दिया कि अब भी तेरा एक दोस्त मदद करने लायक मौजूद है जो यहाँ आ पहुँचा और कैद से छुड़ाया ही चाहता है।

वह मायारानी, जिसकी आँखों के आगे मौत की भयानक सूरत घूम रही थी और हर तरह से नाउम्मीद हो चुकी थी, चौंककर सम्हल बैठी। बेहोशी का असर करने वाला धुआँ बच रहने की मुबारकबाद देता हुआ आँखों के सामने फैलने लगा और तरह-तरह की उम्मीदों ने उसका कलेजा ऊँचा कर दिया। यद्यपि वह जानती कि यह धुआँ मुझे भी बेहोश कर देगा, मगर फिर भी वह खुशी की निगाहों से चारों तरफ देखने लगी और इतने में ही एक दूसरी गोली भी उसी ढंग की वहाँ आकर गिरी।

मायारानी और दारोगा को छोड़कर जितने आदमी उस खेमे में थे सभी को उन दोनों गोलियों ने ताज्जुब में डाल दिया। अगर गोली चलाते समय तमंचे में से किसी तरह की आवाज निकलकर उनके कानों तक पहुँचती, तो शायद कुछ पता लगाने की नीयत से दो-चार आदमी खेमे के बाहर निकलते, मगर उस समय सिवाय एक-दूसरे का मुँह देखने के किसी को किसी तरह का गुमान न हुआ और धुएँ ने तेजी के साथ फैलकर अपना असर जमाना शुरू कर दिया। बात की बात में जितने आदमी उस खेमे के अन्दर थे, सभी का सिर घूमने लगा और एक-दूसरे के ऊपर गिरते हुए सब के सब बेहोश हो गए, मायारानी और दारोगा को दीन-दुनिया की सुध न रही।

पेड़ पर चढ़ी हुई लीला ने थोड़ी देर तक इन्तजार किया। जब खेमे के अन्दर से किसी को निकलते न देखा और उसे विश्वास हो गया कि खेमे के अन्दर वाले अब बेहोश हो गये होंगे, तब वह पेड़ से उतरी और खेमे के पास आई। आँधी-पानी का

जोर अभी तक वैसा ही था, मगर लीला ने इसे अच्छी तरह सह लिया और कनात के नीचे से झाँककर खेमे के अन्दर देखा तो सभी को बेहोश पाया।

पाठकों को यह मालूम है कि लीला ऐयारी भी जानती थी। कनात काटकर वह खेमे के अन्दर चली गई। आदमी बहुत ज्यादा भरे हुए थे, इसलिए उसे मायारानी के पास तक पहुँचने में बड़ी कठिनाई हुई। आखिर वह उसके पास पहुँची और हाथ-पैर खोलने के बाद लखलखा सुंघाकर होश में लाई। मायारानी ने होश में आकर लीला को देखा और धीरे से कहा, "शाबाश, खूब पहुँची। बस, दारोगा को छुड़ाने की कोई जरूरत नहीं।" इतना कहकर मायारानी उठ खड़ी हुई और लीला के हाथ का सहारा लेती हुई खेमे के बाहर निकल गयी।

लीला ने चाहा कि लश्कर में से दो घोड़े भी सवारी के लिए चुरा लावे मगर मायारानी ने स्वीकार न किया और उसी तूफान में दोनों कम्बख्तों ने एक तरफ का रास्ता लिया।

2

पाठकों को मालूम है कि शिवदत्त और कल्याणसिंह ने जब रोहतासगढ़ पर चढ़ाई की थी तब उनके साथ मनोरमा और माधवी मौजूद थीं। भूतनाथ और सरयूसिंह ने शिवदत्त और कल्याणसिंह को डरा-धमकाकर मनोरमा को तो गिरफ्तार कर लिया[1] परन्तु माधवी कहाँ गई या क्या हुई, इसका हाल कुछ लिखा नहीं गया, अस्तु अब हम थोड़ा-सा हाल माधवी का लिखना उचित समझते हैं।

जिस जमाने में माधवी गया और राजगृह की रानी कहलाती थी, उस जमाने में उसका राज्य केवल तीन आदमियों के भरोसे पर चलता था। एक दीवान अग्निदत्त, दूसरा कोतवाल धरमसिंह और तीसरा सेनापति कुबेरसिंह। बस यही तीनों उसके राज्य का आनन्द लेते थे और इन्हीं तीनों का माधवी को भरोसा था। यद्यपि ये तीनों ही माधवी की चाह में डूबने वाले थे मगर कुबेरसिंह और धरमसिंह प्यासे ही रह गये जिसका उन दोनों को बराबर बहुत ही रंज बना रहा।

जब राजगृह और गया की किस्मत ने पलटा खाया, तब धर्मसिंह कोतवाल को तो चपला ने माधवी की सूरत बना और धोखा दे गिरफ्तार कर लिया, और दीवान अग्निदत्त बहुत दिनों तक बचा रह कर अन्त में किशोरी के कारण एक खोह के अन्दर मारा गया, परन्तु अभी तक यह न मालूम हुआ कि उसके मर जाने का सबब क्या था। हाँ सेनापति कुबेरसिंह जिसने माधवी के राज्य में सबसे ज्यादा दौलत पैदा की थी, बचा रह गया क्योंकि उसने जमाने को पलटा खाते देख चुपचाप अपने घर (मुर्शिदाबाद) का रास्ता लिया मगर माधवी के हाल-चाल की खबर लेता रहा, क्योंकि यद्यपि उसने माधवी

1. देखिये चन्द्रकान्ता सन्तति, चौदहवाँ भाग, दूसरा बयान।

का राज्य छोड़ दिया था, मगर माधवी के इश्क ने उसके दिल में से अपना दखल नहीं उठाया था।

माधवी की बिगड़ी हुई अवस्था देखकर भी उसकी मुहब्बत से हाथ न धोने के दो सबब थे एक तो माधवी वास्तव में खूबसूरत हसीन और नाजुक थी, दूसरे राजगृह और गया के राज्य से खारिज हो जाने पर भी वह माधवी को अमीर और बेहिसाब दौलत की मालिक समझता था और इसलिए वह समय पर ध्यान रखकर माधवी के हाल-चाल की बराबर खबर लेता रहा और वक्त पर काम देने के लिए थोड़ी-सी फौज का मालिक भी बना रहा।

मनोरमा के गिरफ्तार हो जाने के बाद शिवदत्त और कल्याणसिंह के साथ जब माधवी रोहतासगढ़ की तराई में पहुँची तो वहाँ एक आदमी ने गुप्त रीति से उसे एक चिट्ठी दी और जल्द उसका जवाब माँगा। यह चिट्ठी कुबेरसिंह की थी और उसमें यह लिखा हुआ था—

"मुझे आपकी अवस्था पर बहुत रंज और अफसोस है। यद्यपि आपकी हालत बदल गई है और आप मुझसे बहुत दूर हैं, मगर मैं अभी तक आपकी खयाली तस्वीर अपने दिल के अन्दर कायम रखकर दिन-रात उसकी पूजा किया करता हूँ। यही सबब है कि बहुत दिनों तक मेहनत करके मैंने इतनी ताकत पैदा कर ली है कि आपकी मदद कर सकूँ और आपको पुनः राजगृह की गद्दी का मालिक बनाऊँ। आप अपने ही दिल से पूछ देखिये कि अग्निदत्त, जिसके साथ आपने सब-कुछ किया, कैसा बेईमान और बेमुरौवत निकला और मैं, जिसे आपने हद से ज्यादा तरसाया कैसी हालत में आपकी मदद करने को तैयार हूँ! यदि आप मुनासिब समझें तो इस आदमी के साथ मेरे पास चलीं आवें या मुझको अपने पास बुला लें। यह आदमी जो चिट्ठी लेकर जाता है मेरा ऐयार है।

आपका—कुबेर।"

माधवी ने उस चिट्ठी को बड़े गौर से दोहरा कर पढ़ा और देर तक तरह-तरह की बातें सोचती रही। हम नहीं जानते कि उसका दिल किन-किन बातों का फैसला करता रहा या वह किस विचार में देर तक डूबी रही, हाँ थोड़ी देर बाद उसने सिर उठा चिट्ठी लाने वाले की तरफ देखा और कहा, "कुबेरसिंह कहाँ पर है?"

ऐयार—यहाँ से थोड़ी दूर पर।

माधवी—फिर वह खुद यहाँ क्यों न आया?

ऐयार—इसीलिए कि आप इस समय दूसरों के साथ हैं जिन्होंने आपको न मालूम किस तरह का भरोसा दिया होगा या आप ही ने शायद उनसे किस तरह का इकरार किया हो, ऐसी अवस्था में आपसे दरियाफ्त किये बिना इस लश्कर में आना उन्होंने मुनासिब नहीं समझा।

माधवी—ठीक है, अच्छा तुम जाकर उसे बहुत जल्द मेरे पास ले आओ। कितनी देर में आओगे?

ऐयार—(सलाम करके) आधे घंटे के अन्दर।

वह ऐयार तेजी के साथ दौड़ता हुआ वहाँ से चला गया और माधवी उसी जगह टहलती हुई उसका इन्तजार करने लगी।

दिन आधे घंटे से कुछ ज्यादा बाकी था और इस समय माधवी कुछ खुश मालूम होती थी। शिवदत्त और कल्याणसिंह का लश्कर एक जंगल में छिपा हुआ था और माधवी अपने डेरे से निकल कर सौ सवा सौ कदम की दूरी पर चली गई थी। माधवी कुबेरसिंह के अक्षर अच्छी तरह पहचानती थी इसलिए उसे किसी तरह का धोखा खाने का शक कुछ भी न हुआ और वह बेखौफ उसके आने का इन्तजार करने लगी।

संध्या होने के पहले ही उसी ऐयार को साथ लिए हुए कुबेरसिंह माधवी की तरफ आता दिखाई दिया जो थोड़ी ही देर पहले उसकी चिट्ठी लेकर आया था। उस समय वह ऐयार भी एक घोड़े पर सवार था और कुबेरसिंह अपनी सूरत-शक्ल तथा हैसियत को अच्छी तरह सजाये हुए था। माधवी के पास पहुँच कर दोनों आदमी घोड़े से नीचे उतर पड़े और कुबेरसिंह ने माधवी को सलाम करके कहा, "आज बहुत दिनों के बाद ईश्वर ने मुझे आपसे मिलाया! मुझे इस बात का बहुत रंज है कि आपने लौंडियों के भड़काने पर चुपचाप घर छोड़कर जंगल का रास्ता ले लिया और अपने खैरख्वाह कुबेरसिंह (हम) को याद तक न किया। मैं खूब जानता हूँ कि आपने दीवान अग्निदत्त से डर कर ऐसा किया था मगर उसके बाद भी तो मुझे याद करने का मौका जरूर मिला होगा।"

माधवी—(मुस्कुराती हुई कुबेरसिंह का हाथ पकड़ के) मैं घर से निकलने के बाद ऐसी मुसीबत में पड़ गयी थी कि अपनी भलाई-बुराई पर कुछ भी ध्यान न दे सकी, और जब मैंने सुना कि गया और राजगृह में वीरेन्द्रसिंह का राज्य हो गया तब और भी हताश हो गई, फिर भी मैं अपने उद्योग की बदौलत बहुत-कुछ कर गुजरती, मगर गयाजी में अग्निदत्त की लड़की कामिनी ने मेरे साथ बहुत बुरा बर्ताव किया और मुझे किसी लायक न रक्खा।(अपनी कटी हुई कलाई दिखाकर) यह उसी की बदौलत है।

कुबेरसिंह—वह खानदान का खानदान ही नमकहराम निकला और इसी फेर में अग्निदत्त मारा भी गया।

माधवी—हाँ, उसके मरने का हाल मायारानी की सखी मनोरमा की जुबानी मैंने सुना था। (पीछे की तरफ देखकर) कौन आ रहा है?

कुबेरसिंह—आप ही के लश्कर का कोई आदमी है, शायद आपको बुलाने आता हो, नहीं वह दूसरी तरफ घूम गया, मगर अब आपको कुछ सोच-विचार करना, किसी से मिलना या इस जगह खड़े-खड़े बातों में समय नष्ट न करना चाहिए और यह मौका भी बातचीत करने का नहीं है। आप (घोड़े की तरफ इशारा करके) इस घोड़े पर शीघ्र सवार होकर मेरे साथ चली चलें, मैं आपका ताबेदार सब लायक और सब कुछ करने के लिए तैयार हूँ, फिर किसी की खुशामद की जरूरत ही क्या है? यदि कल्याणसिंह के लश्कर में आपका कुछ असबाब हो तो उसकी परवाह न कीजिए।

माधवी—नहीं, अब मुझे किसी की परवाह नहीं रही, मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।

इतना कहकर माधवी कुबेरसिंह के घोड़े पर सवार हो गई। कुबेरसिंह अपने ऐयार के घोड़े पर सवार हुआ तथा पैदल ऐयार को साथ लिए हुए दोनों एक तरफ को रवाना हुए।

यही सबब था कि शिवदत्त वगैरह के साथ माधवी रोहतासगढ़ के तहखाने में दाखिल नहीं हुई।

3

कैद से छुटकारा मिलने के बाद बीमारी के सबब से यद्यपि भीमसेन को घर जाना पड़ा और वहाँ उसकी बीमारी बहुत जल्दी जाती रही, मगर घर में रहने का जो सुख उसको मिलना चाहिए वह न मिला क्योंं एक तो माँ के मरने का रंज और गम उसे हद से ज्यादा था और अब वह घर काटने को दौड़ता था, दूसरे थोड़े ही दिन बाद बाप के मरने की खबर भी उसे पहुँची, जिससे वह बहुत ही उदास और बेचैन हो गया। इस समय उसके ऐयार लोग भी वहीं मौजूद थे जो बाहर से यह दुखदायी खबर लेकर लौट आये थे। पहले तो उसके ऐयारों ने उसे बहुत समझाया और राजा वीरेन्द्रसिंह से सुलह कर लेने में बहुत सी भलाइयाँ दिखाईं, मगर उस नालायक के दिल में एक भी न बैठी और वह राजा वीरेन्द्रसिंह से बदला लेने तथा किशोरी को जान से मार डालने की कसम खाकर घर से बाहर निकल पड़ा। बाकरअली, खुदाबक्श, अजायबसिंह और यारअली इत्यादि उसके लालची ऐयारों ने भी लाचार होकर उसका साथ दिया।

अब की दफा भीमसेन ने अपने ऐयारों के सिवाय और किसी को भी साथ न लिया, हाँ रुपये-अशर्फी या जवाहिरात की किस्म में से जहाँ तक उससे बना या जो कुछ भी उसके पास था, लेकर अपने ऐयारों को लालच भरी उम्मीदों का सब्जबाग दिखाता रवाना हुआ और थोड़ी दूर जाने के बाद ऐयारों के साथ ही उसने भी अपनी सूरत बदल ली।

"राजा वीरेन्द्रसिंह को किस तरह नीचा दिखाना चाहिए और क्या करना चाहिए ?" इस विषय पर तीन दिन तक उन लोगों में बहस होती रही और अन्त में यह निश्चय किया गया कि राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके खानदान तथा आपस वालों का मुकाबला करने के पहले उनके दुश्मनों से दोस्ती बढ़ाकर अपना बल खूब पुष्ट कर लेना चाहिए। इस इरादे पर वे लोग बहुत कुछ कायम भी रहे और माधवी, मायारानी तथा तिलिस्मी दारोगा वगैरह से मुलाकात करने की फिक्र करने लगे।

कई दिनों तक सफर करने और घूमने-फिरने के बाद एक दिन ये लोग दोपहर होते-होते एक घने जंगल में पहुँचे। चार-पाँच घण्टे आराम कर लेना इन लोगों को बहुत जरूरी मालूम हुआ क्योंकि गर्मी की चलाचली का जमाना था और धूप बहुत कड़ी और दुःखदायी थी। मुसाफिरों को तो जाने दीजिये, जंगली जानवरों और आकाश में उड़ने वाली तथा बात-की-बात में दूर-दूर की खबर लाने वाली चिड़ियाओं को भी पत्तों की आड़ से

निकलना बुरा मालूम होता था।

इस जंगल में एक जगह पानी का झरना भी जारी था और उसके दोनों तरफ पेड़ों की घनाहट के सबब और जगहों के बनिस्बत ज्यादा ठंडक थी। ये पाँचों मुसाफिर भी झरने के किनारे पत्थर की साफ चट्टान देखकर बैठ गए और आपस में इधर-उधर की बातें करने लगे। इसी समय बातचीत की आहट पाने और निगाह दौड़ाने पर इन लोगों की निगाह दस-बारह सिपाहियों पर पड़ी जिन्हें देख भीमसेन चौंका और उनका पता लगाने के लिए अजायबसिंह से कहा, क्योंकि दोस्तों और दुश्मनों के खयाल से उसका जी एक पल के लिए भी ठिकाने नहीं रहता था और 'पत्ता खड़का बन्दा भड़का' की कहावत का नमूना बन रहा था।

भीमसेन की आज्ञानुसार अजायबसिंह ने उन आदमियों का पीछा किया और दो घंटे तक लौट कर न आया। तब दूसरे ऐयारों को भी चिन्ता हुई और वे अजायबसिंह की खोज में जाने के लिए तैयार हुए मगर इसकी नौबत न पहुँची, क्योंकि उसी समय अजायबसिंह अपने साथ कई सिपाहियों को लिए भीमसेन की तरफ आता दिखाई दिया।

अजायबसिंह के इस तरह आने ने पहले तो सभी को खुटके में डाल दिया मगर जब अजायबसिंह ने दूर ही से खुशी का इशारा किया तब सभी का जी ठिकाने हुआ और उसके आने का इन्तजार करने लगे। पास आने पर अजायबसिंह ने भीमसेन से कहा, "इस जंगल में आकर टिक जाना हम लोगों के लिए बहुत अच्छा हुआ क्योंकि रानी माधवी से मुलाकात हो गई। आज ही उनका डेरा भी इस जंगल में आया है। कुबेरसिंह सेनापति और चार-पाँच सौ सिपाही उनके साथ हैं। जिन लोगों का मैंने पीछा किया था वे भी उन्हीं के सिपाहियों में से थे और ये भी उन्हीं के सिपाही हैं जो मेरे साथ आपको बुलाने के लिए आए हैं।"

माधवी की खबर सुनकर भीमसेन उतना ही खुश हुआ जितना अजायबसिंह की जुबानी भीमसेन के आने की खबर पाकर माधवी खुश हुई थी। अजायबसिंह की बात सुनते ही भीमसेन उठ खड़ा हुआ और अपने ऐयारों को साथ लिए हुए घड़ी भर के अन्दर ही अपनी बेहया बहिन माधवी से जा मिला। ये दोनों एक-दूसरे को देखकर बहुत खुश हुए मगर उन दोनों की मुलाकात कुबेरसिंह को अच्छी न मालूम पड़ी जिसका सबब क्या था सो हमारे पाठक लोग खुद ही समझ सकते हैं।

थोड़ी देर तक भीमसेन और माधवी ने कुशल-मंगल पूछने में बिताया। माधवी ने खाने-पीने की चीजें तैयार करने का हुक्म दिया, क्योंकि उसे अपने अनूठे भाई की खातिरदारी आज मंजूर थी और इसलिए बड़ी मुहब्बत के साथ देर रात तक बातें होती रहीं।

माधवी को इस जंगल में आये आज पाँच दिन हो चुके हैं। पाँचवें दिन दोपहर के समय भीमसेन से मुलकात हुई थी। उसका (कुबेरसिंह का) ऐयार दुश्मनों की खोज खबर लगाने के लिए कहीं गया हुआ था क्योंकि माधवी और कुबेरसिंह ने इस जंगल में पहुँच कर निश्चय कर लिया था कि पहले दुश्मनों का हाल-चाल मालूम करना चाहिए, इसके बाद जो कुछ मुनासिब होगा; किया जायगा।

4

कैद से छूटने के बाद लीला को साथ लिए हुए मायारानी ऐसी भागी कि उसने पीछे की तरफ फिर के भी नहीं देखा। आँधी और पानी के कारण उन दोनों को भागने में बड़ी तकलीफ हुई, कई दफा वे दोनों गिरीं और चोट भी लगी, मगर प्यारी जान को बचा कर ले भागने के खयाल ने उन्हें किसी तरह दम न लेने दिया। दो घण्टे के बाद आंधी-पानी का जोर जाता रहा, आसमान साफ हो गया और चन्द्रमा भी निकल आया, उस समय उन दोनों को भागने में सुभीता हुआ और सवेरा होने तक ये दोनों बहुत दूर निकल गईं।

मायारानी यद्यपि खूबसूरत थी नाजुक थी, और परले सिरे की अमीरी कर चुकी थी मगर इस समय ये सब बातें हवा हो गईं। पैरों में छाले पड़ जाने पर भी उसने भागने में कसर न की और सवेरा हो जाने पर भी दम न लिया, बराबर भागती ही चली गई। दूसरा दिन भी उसके लिए बहुत अच्छा था, आसमान पर बदली छाई हुई थी और धूप को जमीन तक पहुँचने का मौका नहीं मिता था। अब मायारानी बातचीत करती हुई और पिछली बातें लीला को सुनाती हुई रुक कर चलने लगी। थोड़ी दूर जाती फिर जरा दम ले लेती, पुनः उठकर चलती और कुछ देर बाद दम लेने के लिए बैठ जाती। इसी तरह दूसरा दिन भी मायारानी ने सफ़र ही में बिता दिया और खाने-पीने की कुछ विशेष परवाह न की। संध्या होने के कुछ पहले वे दोनों एक पहाड़ी की तराई में पहुँचीं जहाँ साफ पानी का सुन्दर चश्मा बह रहा था और जंगली बेर तथा मकोय के पेड़ भी बहुतायत से थे। वहाँ पर लीला ने मायारानी से कहा कि अब डरने तथा चलते-चलते जान देने की कोई जरूरत नहीं। अब हम लोग बहुत दूर निकल आये हैं और ऐसे रास्ते से आये हैं कि जिधर से किसी मुसाफिर की आमद-रफ्त नहीं होती अतः अब हम को वेफिक्री के साथ आराम करना चाहिए। यह जगह इस लायक है कि हम लोग खा-पीकर अपनी आत्मा को सन्तोष दे लें और अपनी-अपनी सूरतें भी अच्छी तरह बदल कर पहचाने जाने का खटका मिटा लें!"

लीला की बात मायारानी ने स्वीकार की और चश्मे के पानी से हाथ-मुँह धोने और जरा दम लेने के वाद सबके पहले सूरत बदलने का बन्दोबस्त करने लगी क्योंकि दिन नाममात्र को रह गया था और रात हो जाने पर बिना रोशनी के सहारे यह काम अच्छी तरह नहीं हो सकता था।

सूरत-शक्ल के हेर-फेर से छुट्टी पाने के बाद दोनों ने जंगली बेर और मकोय को अच्छे-से-अच्छा मेवा समझकर भोजन किया और चश्मे का जल पीकर आत्मा को संतोष दिया, तब निश्चिन्त होकर बैठीं और यों बातचीत करने लगीं—

मायारानी—अब जरा जी ठिकाने हुआ, मगर शरीर चूर-चूर हो गया है। खैर, किसी तरह तेरी बदौलत जान बच गई, नहीं तो मैं हर तरह से नाउम्मीद हो चुकी थी और राह देखती थी कि मेरी जान किस तरह ली जाती है।

लीला—चाहे तुम्हारे सारे नौकर-चाकर तुम्हारे अहसानों को भूल जायें और तुम्हारे नमक का खयाल न करें मगर मैं कब ऐसा कर सकती हूँ ! मुझे दुनिया में तुम्हारे बिना चैन कब पड़ सकता है, जब तक तुम्हें कैद से छुड़ा न लिया, अन्न का दाना मुंह में न डाला बल्कि अभी तक जंगली बेर और मकोय पर ही गुजारा कर रही हूँ !

मायारानी—शाबाश ! मैं तुम्हारे इस अहसान को जन्म भर नहीं भूल सकती, जिस तरह आप रहूँगी उसी तरह तुम्हें भी रक्खूंगी । यह जान तुमने बचाई है इसलिए जब तक इस दुनिया में रहूँगी इस जान का मालिक तुम्हीं को समझूंगी ।

लीला—(तिलिस्मी तमंचा और गोली मायारानी के सामने रख कर) यह अपनी अमानत आप लीजिए और अब इसे अपने पास रखिये, इसने बड़ा काम किया ।

मायारानी—(तमंचा उठा कर और थोड़ी-सी गोलियाँ लीला को देकर) इन गोलियों को अपने पास रक्खो, बिना तमंचे के भी ये बड़ा काम देंगी । जिस तरफ फेंक दोगी या जहाँ जमीन पर पटकोगी उसी जगह ये अपना गुण दिखलावेंगी ।

लीला—(गोलियाँ रख कर) बेशक ये बड़े वक्त पर काम देती हैं । अच्छा, यह कहिये कि अब हम लोगों को क्या करना और कहाँ जाना चाहिए ?

मायारानी—इसका जवाब भी तुम्हीं बहुत अच्छा दे सकती हो, मैं केवल इतना ही कहूँगी कि गोपालसिंह और कमलिनी को इस दुनिया से उठा देना सबसे पहला और जरूरी काम समझना चाहिए । किशोरी, कामिनी और कमला को मारकर मनोरमा ने कुछ भी न किया, उतनी ही मेहनत अगर गोपालसिंह और कमलिनी को मारने के लिए करती तो इस समय मैं पुनः तिलिस्म की रानी कहलाने लायक हो सकती थी ।

लीला—ठीक है मगर मुझे··· (कुछ रुक कर) देखो तो, वह कौन सवार जा रहा है ! मुझे तो उस छोकरे रामदीन की छटा मालूम पड़ती है । यह पंचकल्यान मुश्की घोड़ी भी अपने ही अस्तबल की मालूम पड़ती है बल्कि···

मायारानी—(गौर से देखकर) यह वही घोड़ी है जिस पर मैं सवार हुआ करती थी, और बेशक वह सवार भी रामदीन ही है । उसे पकड़ो तो गोपालसिंह का ठीक हाल मालूम हो ।

लीला—पकड़ना तो कोई कठिन काम नहीं है क्योंकि तिलिस्मी तमंचा तुम्हारे पास मौजूद है, मगर यह कम्बख्त कुछ बताने वाला नहीं है ।

मायारानी—खैर जो हो, मैं गोली चलाती हूँ ।

इतना कहकर मायारानी ने फुर्ती से तिलिस्मी तमंचे में गोली भर कर सवार की तरफ चलाई । गोली घोड़ी को गर्दन में लगी और तुरन्त फट गई, घोड़ी भड़की और उछली-कूदी मगर गोली से निकले हुए बेहोशी के धुएँ ने अपना असर करने में उससे भी ज्यादा तेजी और फुर्ती दिखाई । घोड़ी और सवार दोनों ही पर बेहोशी का असर हो गया । सवार जमीन पर गिर पड़ा और दो कदम आगे बढ़कर घोड़ी भी लेट गई । मायारानी और लीला ने दूर से यह तमाशा देखा और दौड़ती हुई सवार के पास पहुँचीं ।

लीला—पहले इसकी मुश्कें बाँधनी चाहिए ।

मायारानी—क्या जरूरत है ?

लीला—क्यों, फिर इसे बेहोश किस लिए किया ?

मायारानी—तुम खुद ही कह चुकी हो कि यह कुछ बताने वाला नहीं है, फिर मुश्कें बाँधने से मतलब ?

लीला—आखिर फिर किया क्या जायगा ?

मायारानी—पहले तुम इसकी तलाशी ले लो, फिर जो कुछ करना होगा, मैं तुम्हें बताऊँगी।

लीला—बहुत खूब, यह तुमने ठीक कहा।

इस समय संध्या पूरे तौर पर हो चुकी थी, परन्तु चन्द्रदेव के दर्शन हो रहे थे, इसलिए यह नहीं कह सकते कि अन्धकार पल-पल में बढ़ता जाता था। लीला उस सवार की तलाशी लेने लगी और पहली ही दफा जेब में हाथ डालने से उसे दो चीजें मिलीं। एक तो हीरे की कीमती अँगूठी जिस पर राजा गोपालसिंह का नाम खुदा हुआ था और दूसरी चीज एक चिट्ठी थी जो लिफाफे के तौर पर लपेटी हुई थी।

चाहे अन्धकार न हो मगर चिट्ठी और अँगूठी पर खुदे हुए नाम को पढ़ने के लिए रोशनी की जरूरत थी और जब तक चिट्ठी का हाल मालूम न हो जाय तब तक कुछ काम करना या आगे तलाशी लेना उन दोनों को मंजूर न था, अतः लीला ने अपने ऐयारी के बटुए में से सामान निकाल कर रोशनी पैदा की और मायारानी ने सबसे पहले अँगूठी पर निगाह दौड़ाई। अँगूठी पर 'श्रीगोपाल' खुदा हुआ देख उसके रोंगटे खड़े हो गये फिर भी अपनी तबीयत सम्हाल कर वह चिट्ठी पढ़नी पड़ी। चिट्ठी में यह लिखा हुआ था—

"बेनीराम जोग लिखी गोपालसिंह—

आज हमने अपना पर्दा खोल दिया, कृष्ण जिन्न के नाम का अन्त हो गया, जिनके लिए यह स्वाँग रचा गया था, उन्हें मालूम हो गया कि गोपालसिंह और कृष्ण जिन्न में कोई भी भेद नहीं है, अतः अब हमने काम-काज के लिए इस छोकरे को अपनी अँगूठी देकर विश्वास का पात्र बनाया है। जब तक यह अँगूठी इसके पास रहेगी तब तक इसका हुक्म हमारे हुक्म के बराबर सभी को मानना होगा। इसका बन्दोबस्त कर देना और दो सौ सवार तथा चार रथ बहुत जल्द पिपलिया घाटी में भेज देना। हम किशोरी, कामिनी, लक्ष्मीदेवी और कमलिनी वगैरह को लेकर आ रहे हैं। थोड़ा-सा जलपान का सामान उम्दा अलग भेजना। परसों रविवार की शाम तक हम लोग वहाँ पहुँच जायेंगे।"

इस चिट्ठी ने मायारानी का कलेजा दहला दिया और उसने घबरा कर इसे पढ़ने के लिए लीला के हाथ में दे दिया।

मायारानी—ओफ! मुझे स्वप्न में भी इस बात का गुमान न था कि कि कृष्ण जिन्न वास्तव में गोपालसिंह है! आह, जब मैं पिछली बातें याद करती हूँ तो कलेजा काँप जाता है और मालूम होता है कि गोपालसिंह ने मेरी तरफ से लापरवाही नहीं की बल्कि मुझे बुरी तरह से दुःख देने का इरादा कर लिया था। किशोरी, कामिनी और

कमला के बारे में भी…ओफ ! बस अब मैं इस जगह दम भर भी नहीं ठहर सकती और ठहरना उचित भी नहीं है।

लीला—बेशक ऐसा ही है, मगर कोई हर्ज नहीं, आज यदि कृष्ण जिन्न का भेद खुल गया है तो यह (अँगूठी और चिट्ठी दिखा कर) चीजें भी बड़ी ही अनूठी मिल गई हैं। तुम बहुत जल्द देखोगी कि इस चिट्ठी और अँगूठी की बदौलत मैं कैसे-कैसे नामी ऐयारों की आँखों में धूल डालती हूँ और गोपालसिंह तथा उसके सहायकों को किस तरह तड़पा कर मारती हूँ। तुम यह भी देखोगी कि तुम्हारे उन लोगों ने जो ऐयारों का बाना पहने हुए थे और नामी ऐयार कहलाते थे, उसका पासंग भी नहीं किया जो मैं अब कर दिखाऊँगी। तो अब यहाँ से चलना चाहिए।

मायारानी—बहुत जल्द ही चलना चाहिए, मगर क्या इस छोकरे को जीता ही छोड़ जाओगी ?

लीला—नहीं-नहीं, कदापि नहीं। क्या इसे मैं इसलिए जीता छोड़ जाऊँगी कि यह होश में आकर जमानिया या गोपालसिंह के पास चला जाय और मेरी कार्रवाइयों में बट्टा लगाए !

इतना कह कर लीला ने खंजर निकाला और एक ही हाथ में बेचारे रामदीन का सिर काट दिया, तब लाश को उसी तरह छोड़ घोड़ी को होश में लाने का उद्योग करने लगी।

थोड़ी देर में घोड़ी भी चैतन्य हो गयी। उस समय लीला के कहे अनुसार माया-रानी उस घोड़ी पर सवार हुई और दोनों ने वहाँ से हटकर एक घने जंगल का रास्ता लिया। लीला घोड़ी की रकाब थामे साथ-साथ बातें करती हुई जाने लगी।

मायारानी—यह मदद मुझे गैब से मिली है। यकायक रामदीन का मिल जाना और उसकी जेब में से अंगूठी तथा चिट्ठी का निकल आना कहे देता है कि मेरे बुरे दिन बहुत जल्द खत्म होना चाहते हैं।

लीला—इसमें क्या शक है ! अबकी दफे तो राजा गोपालसिंह सचमुच हमारे कब्जे में आ गये हैं। अफसोस इतना ही है कि हम लोग अकेले हैं, अगर सौ-पचास आद-मियों की भी मदद होती तो आज गोपालसिंह तथा किशोरी, लक्ष्मीदेवी और कमलिनी वगैरह को सहज ही में गिरफ्तार कर लेते।

मायारानी—अब उन लोगों को गिरफ्तार करने का खयाल तो बिल्कुल जाने दे और एकदम से उन लोगों को मारकर बखेड़ा निपटा डालने की ही फिक्र कर। इस अँगूठी और चिट्ठी के मिल जाने पर यह काम कोई मुश्किल नहीं है।

लीला—ठीक है, जो कुछ तुम चाहती हो, मैं पहले से समझे बैठी हूँ। मेरा इरादा है कि तुम्हें किसी अच्छी और हिफाजत की जगह पर छोड़कर मैं जमानिया जाऊँ और दीवान साहब से मिलूँ जिनके नाम गोपालसिंह ने यह चिट्ठी लिखी है।

मायारानी—बस, रामदीन छोकरे की सूरत बना ले और इसी घोड़ी पर सवार होकर चिट्ठी लेकर जा। इस चिट्ठी के अलावा भी तू जो कुछ दीवान को कहोगी वह उससे इन्कार न करेगा। गोपालसिंह के लिखे अनुसार जो कुछ खाने-पीने की चीजें तू

लेकर उस घाटी की तरफ जायगी, उसमें जहर मिला देना तो तेरे लिए कोई मुश्किल न होगा और इस तरह एक साथ ही कई दुश्मनों को सफाई हो जायगी, मगर इसमें भी मुझे एक बात का खुटका होता है।

लीला—वह क्या ?

मायारानी—जिस वक्त से मुझे यह मालूम हुआ है कि गोपालसिंह ही ने कृष्ण जिन्न का रूप धारण किया था, उस वक्त से मैं उसे बहुत ही चालाक और धूर्त ऐयार समझने लग गई हूँ। ताज्जुब नहीं कि वह तेरा भेद मालूम कर लें या वे खाने-पीने की चीजें, जो उसने मँगाई हैं, उनमें से स्वयं कुछ भी न खाय।

लीला—यह कोई ताज्जुब की बात नहीं है। मेरा दिल भी यही कहता है कि उसने खाने-पीने का बहुत बड़ा ध्यान रखा होगा, सिवाय अपने हाथ के और किसी का बनाया कदापि न खाता होगा, क्योंकि वह तकलीफें उठा चुका है, अब उसे धोखा देना जरा टेढ़ी खीर है, मगर फिर भी तुम देखोगी कि इस अँगूठी की बदौलत मैं उसे कैसा धोखा देती हूँ और किस तरह अपने पंजे में फँसाती हूँ।

मायारानी—खैर, जो मुनासिब समझे, मगर इसमें तो कोई शक नहीं कि रामदीन छोकरे की सूरत बनाकर और घोड़ी पर सवार होकर तू दीवान साहब के पास जायगी।

लीला—मैं जाऊँगी और जरूर जाऊँगी। नहीं तो इस अँगूठी और चिट्ठी के मिलने का फायदा ही क्या हुआ! बस, तुम्हें किसी अच्छे ठिकाने पर रख देने भर की देर है।

मायारानी—मगर मैं एक बात और कहना चाहती हूँ।

लीला—वह क्या!

मायारानी—मैं इस समय बिल्कुल कंगाल हो रही हूँ और ऐसे मौके पर रुपये की बड़ी जरूरत है। इसलिए मैं चाहती हूँ कि दीवान साहब के पास तुझे न भेजकर खुद ही जाऊँ और किसी तरह तिलिस्मी बाग में घुसकर कुछ जवाहरात और सोना जहाँ तक ला सकूँ ले आऊँ, क्योंकि मुझे वहाँ के खजाने का हाल मालूम है और यह काम तेरे किये नहीं हो सकता, जब मुझे रुपये की मदद मिल जायगी, तो कुछ सिपाहियों का भी बन्दोबस्त कर सकूँगी और···

लीला—यह सब कुछ ठीक है, मगर मैं तुम्हें दीवान साहब के पास कदापि न जाने दूँगी। कौन ठिकाना कहीं तुम गिरफ्तार हो जाओ तो फिर मेरे किए कुछ भी न हो सकेगा। बाकी रही रुपये-पैसे वाली बात, सो इसके लिए तरद्दुद करना वृथा है. क्या यह नहीं हो सकता कि जब मैं दीवान साहब के पास जाऊँ और सवारी इत्यादि तथा खाने-पीने की चीजें लूँ, तो एक रथ पर थोड़ी सी अशर्फियाँ और कुछ जवाहिरात भी रख देने के लिए कहूँ? क्या वह इस अँगूठी के प्रताप से मेरी बात न मानेगा? और अगर अशर्फियों और जवाहरात का बन्दोबस्त कर देगा तो क्या मैं उन्हें रास्ते में से गुम नहीं कर सकती? इसे भी जाने दो, अगर तुम पता-ठिकाना ठीक-ठीक बताओ तो क्या मैं तिलिस्मी बाग में जाकर जवाहरात और अशर्फियों को कहीं निकाल ला सकती?

मायारानी—निकाल ला सकती है और दीवान साहब से भी जो कुछ माँगेगी, सम्भव है कि बिना कुछ विचारे दे दें, मगर इसमें भी मुझे दो बातों की कठिनाई मालूम पड़ती है।

लीला—वह क्या ?

मायारानी—एक तो दीवान साहब के पास अन्दाज से ज्यादा रुपये-अशर्फियों की तहवील नहीं रहती और जवाहरात तो बिल्कुल ही उसके पास नहीं रहते, शायद आज कल गोपालसिंह के हुक्म से रहता हो, मगर मुझे उम्मीद नहीं है, अब जो चीज तू उससे माँगेगी, वह अगर उसके पास न हुई तो उसे तुझ पर शक करने की जगह मिलेगी और ताज्जुब नहीं कि काम में विघ्न पड़ जाय।

लीला—अगर ऐसा है तो जरूर खुटके की बात है, अच्छा दूसरी बात क्या है ?

मायारानी—दूसरे यह कि तिलिस्मी बाग के खजाने में घुसकर वहाँ से कुछ निकाल लाना, नये आदमी का काम नहीं है। खैर, मैं तुझे रास्ता बता दूँगी, फिर जो कुछ करते बने, तू कर लेना।

लीला—खैर, जैसा होगा देखा जायगा, मगर मैं यह रांय कभी नहीं दे सकती कि तुम दीवान साहब के सामने या खास बाग में जाओ, ज्यादा नहीं तो थोड़ा-बहुत मैं ले ही आऊँगी।

मायारानी—अच्छा, यह बता कि मुझे कहाँ छोड़ जायगी और तेरे जाने के बाद मैं क्या करूँगी ?

लीला—इतनी जल्दी में कोई अच्छी जगह तो मिलती नहीं, किसी पहाड़ की कन्दरा में दो दिन गुजारा करो और चुपचाप बैठी रहो, इसी बीच में मैं अपना काम करके लौट आऊँगी। मुझे जमानिया जाने में अगर देर हो जायगी तो काम चौपट हो जायगा। ताज्जुब नहीं कि देर हो जाने के कारण गोपालसिंह किसी दूसरे को भेज दें और अँगूठी का भेद खुल जाय।

इत्तिफाक अजब चीज है। उसने यहाँ भी एक बेढब सामान खड़ा कर दिया। इत्तिफाक से लीला और मायारानी भी उसी जंगल में जा पहुँचीं जिसमें माधवी और भीमसेन का मिलाप हुआ था और वे लोग अभी तक वहाँ टिके हुए थे।

5

आधी रात का समय था जब लीला और मायारानी उस जंगल में पहुँचीं जिसमें माधवी और भीमसेन टिके हुए थे। जब ये दोनों उसके पास पहुँचीं और लीला को वहाँ टिके हुए बहुत से आदमियों की आहट मिली तो वह मायारानी को एक ठिकाने खड़ा करके पता लगाने के लिए उसकी तरफ गई।

हम ऊपर बयान कर चुके है कि सेनापति कुबेरसिंह के साथ थोड़ी-सी फौज भी

थी—अब लीला को थोड़ी ही कोशिश से मालूम हो गया कि यहाँ सैकड़ों आदमियों का डेरा पड़ा हुआ है और वे लोग इस ढंग से घने जंगल में आड़ देख टिके हुए हैं जैसे डाकुओं का गिरोह या छिपकर धावा मारने वाले टिकते हैं और हर वक्त होशियार रहते हैं। लीला खूब जानती थी कि राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके साथी या सम्बन्धी अगर किसी काम के लिए कहीं जाते हैं या लड़ाई करते हैं तो छिपकर या आड़ पकड़कर डेरा नहीं डालते। हाँ, अगर अकेले या ऐयार लोग हों तो शायद ऐसा करें, मगर जब उनके साथ सौ-पचास आदमी या कुछ फौज होगी, तब कदापि ऐसा न करेंगे, इसलिए उसे गुमान हुआ कि ये लोग जरूर कोई गैर हैं, बल्कि ताज्जुब नहीं कि हमारा साथ देने वाले हों, अब बहुत सी बातों को सोच-विचार और अपनी ऐयारी पर भरोसा करके लीला माधवी की फौज में घुस गयी और वहाँ बहुत से सिपाहियों को होशियार तथा पहरा देते हुए देखा।

पहले लिखा जा चुका है कि लीला भेष बदले हुए थी और यह भी दर्शाया गया है कि माधवी और कुबेरसिंह अपनी सूरत में सफर करते थे।

लीला को कई सिपाहियों ने देखा और एक ने टोका कौन है?

लीला—एक मुसाफिर परदेशी औरत।

सिपाही—यहाँ क्यों चली आ रही है?

लीला—अपनी भलाई की आशा से।

सिपाही—क्या चाहती है?

लीला—आपके सरदार से मिलना।

सिपाही—अपना परिचय दे तो सरदार के पास भिजवा दूँ।

लीला—परिचय देने में तो कोई हर्ज नहीं है, मगर डरती हूँ कि आप लोग भी कहीं उन्हीं में से न हों जिन्होंने मुझे लूट लिया है, यद्यपि अब मैं बिल्कुल खाली हो रही हूँ मगर···

इतने में और भी कई सिपाही वहाँ जुट आये और सभी ने लीला को घेरकर सवाल करना शुरू किया और लीला ने भी गौर करके जान लिया कि ये लोग राजा वीरेन्द्रसिंह के दल वाले नहीं हैं, क्योंकि उनके फौजी सिपाही अक्सर जर्द पोशाक काम में लाते हैं, इसी तरह से जमानिया वाले भी नहीं मालूम हुए, क्योंकि उनकी बातचीत और चाल-ढाल को लीला खूब पहचानती थी, अब कुछ और बातचीत होने पर लीला को विश्वास हो गया कि ये लोग उनमें से नहीं हैं जिसका मुझे डर है।

उन सिपाहियों को भी एक अकेली औरत से डरने की कोई जरूरत न थी, इसलिए उन्होंने अपने मालिक का नाम जाहिर कर दिया और लीला को लिए हुए उस जगह जा पहुँचे जहाँ माधवी और भीमसेन का बिस्तर लगा हुआ था और ये दोनों इस समय भी बैठे बातचीत कर रहे थे। लालटेन जलाया गया और लीला की सूरत अच्छी तरह देखी गयी, लीला ने भी उसी रोशनी में माधवी को पहचान लिया और खुश होकर बोली, "अहा, आप तो गया की रानी माधवीदेवी हैं।"

माधवीदेवी—और तू कौन है?

लीला—मैं प्रसिद्ध मायारानी की ऐयारा हूँ और उन्हीं के साथ यहाँ तक आई भी हूँ। यह दुनिया का कायदा है कि एक से दूसरे को मदद पहुँचती है। अब जिस तरह आपको मायारानी से मदद पहुँच सकती है, उसी तरह आप मायारानी की भी मदद कर सकती हैं। वाह-वाह, यह समागम तो बहुत ही अच्छा हुआ। अगर आजकल मायारानी मुसीबत के दिन काट रही हैं तो क्या हुआ, मगर फिर भी वह तिलिस्म की रानी रह चुकी हैं और जो वह कर सकती हैं, किसी दूसरे से नहीं हो सकता। आप लोगों का एक हो जाना बहुत ही मुनासिब होगा, तब आप लोग जो चाहेंगी, कर सकेंगी।"

माधवीदेवी—(खुश होकर) मायारानी कहाँ हैं? उन्हें तो राजा वीरेन्द्रसिंह कैद करके चुनार ले गये थे।

लीला—जी हाँ, मगर मैं अभी कह चुकी हूँ कि मायारानी आखिर तिलिस्म की रानी हैं, इसलिए जो कुछ वह कर सकती हैं, किसी दूसरे के किए नहीं हो सकता। राजा वीरेन्द्रसिंह ने उन्हें कैद किया तो क्या हुआ, उनका छूटना कोई मुश्किल न था!

माधवीदेवी—बेशक-बेशक, अच्छा बताओ, वह कहाँ हैं?

लीला—यहाँ से थोड़ी दूर पर खड़ी हैं। किसी सरदार को भेजिये, उनका इस्तकबाल करके यहाँ ले आवे, दो-तीन सौ कदम से ज्यादा न चलना पड़ेगा।

माधवीदेवी—मैं खुद उन्हें लेने के लिए चलूँगी।

लीला—इससे बढ़कर और क्या हो सकता है? अगर आप उनकी इज्जत करेंगी तो वह भी आपके लिए जान तक देना जरूरी समझेंगी।

लीला ने अपनी लम्बी-चौड़ी बातों में माधवी को खूब उलझाया, यहाँ तक कि माधवी अपने साथ भीमसेन और कुबेरसिंह तथा कई सिपाहियों को लेकर मायारानी के पास गयी और उसे बड़ी खातिर और इज्जत के साथ अपने डेरे पर ले आई। जल मँगवाकर हाथ-मुँह धुलवाया और फिर बातचीत करने लगी।

माधवीदेवी—(मायारानी से) आपको वीरेन्द्रसिंह की कैद से छूट जाने पर मैं मुबारकबाद देती हूँ यद्यपि आपके लिए यह कोई बड़ी बात न थी।

मायारानी—बेशक, यह कोई बड़ी बात न थी, इस काम को तो अकेली मेरी सखी या ऐयारा लीला ही ने कर दिखाया। इस समय आपसे मिलकर मैं बहुत खुश हुई और इसमें अब शक करने की कोई जगह न रही कि आप पुनः गया की रानी और मैं जमानिया की मालिक बन जाऊँगी। दुनिया में एक का काम दूसरे हुआ ही करता है और जब हम आप एक दिल हो जायेंगे तो वह कौन-सा काम है जिसे नहीं कर सकते! मुझे आपके कैद होने की भी खबर लगी थी और मुझे इस बात का बहुत रंज था कि आपको मेरी छोटी बहिन कमलिनी ने कैदखाने की सूरत दिखाई थी।

माधवीदेवी—इधर तो यह सुनने में आया है कि आपसे और कमलिनी से कोई नाता नहीं है और लक्ष्मीदेवी भी प्रकट हो गई है। तथा उसे राजा वीरेन्द्रसिंह चुनार ले गये हैं।

मायारानी—(मुस्कुराकर) बेशक, ऐसा ही है, मगर जिस जमाने का मैं जिक्र कर रही हूँ, उस जमाने में वह मेरी ही बहिन कहलाती थी। और लक्ष्मीदेवी को राजा

वीरेन्द्रसिंह चुनार नहीं ले गये हैं, वह तो किशोरी, कामिनी, कमलिनी, लाड़िली और कमला के सहित किसी दूसरी ही जगह छिपाई गई हैं, मगर इसमें कोई सन्देह नहीं है कि कल शाम को गोपालसिंह उन सभी को जमानिया की तरफ ले जायेंगे और हम लोग उन्हें गोपालसिंह के सहित रास्ते ही में गिरफ्तार कर लेंगे।

माधवीदेवी—(ताज्जुब से) हाँ ! क्या कल मैं दुष्टा किशोरी की नापाक सूरत देख सकूँगी ! उस पर मुझे बड़ा ही रंज है, और कमलिनी ने तो मुझे कैद ही किया था।

मायारानी—बेशक, कल किशोरी और कमलिनी इत्यादि तुम्हारे कब्जे में होंगी और गोपालसिंह भी तुम्हारे काबू में होगा जो वीरेन्द्रसिंह और उनके लड़कों की बदौलत तुम्हारा सबसे बड़ा दुश्मन हो रहा है ?

माधवीदेवी—निःसन्देह वह मेरा और तुम्हारा सबसे बड़ा दुश्मन है, तो क्या उसकी गिरफ्तारी का इन्तजाम हो चुका है ?

मायारानी—हाँ, चौदह आना इन्तजाम हो चुका जो दो आना बाकी है सो वह भी हो जायगा।

माधवी—क्या बन्दोबस्त हुआ है ? और किस समय तथा किस तरह वे लोग गिरफ्तार किये जायेंगे ?

मायारानी—(इधर-उधर देखकर)बहुत-सी बातें ऐसी हैं जो मैं केवल तुम्हीं से कहूँगी कोई दूसरा उसके सुनने का अधिकारी नहीं है।

माधवी—बहुत अच्छा यह कोई बड़ी बात नहीं है।

इतना कहकर माधवी ने भीमसेन और कुबेरसिंह की तरफ देखा क्योंकि माधवी मायारानी और लीला के सिवाय केवल ये ही दो आदमी वहाँ मौजूद थे। भीमसेन ने कहा, "हम दोनों यहाँ से हट जाते हैं, तुम लोग बेधड़क बातें करो मगर (मायारानी से)मेरे एक सवाब का जवाब पहले मिलना चाहिए।"

मायारानी—वह क्या ?

भीमसेन—आप अभी कह चुकी हैं कि कल किशोरी, कामिनी और लक्ष्मीदेवी वगैरह गिरफ्तार हो जायेंगी मगर मैंने सुना था कि राजा वीरेन्द्रसिंह के लश्कर में पहुँच कर मनोरमा ने किशोरी, कामिनी और कमला को जान से मार डाला, अब इस समय कोई और ही बात सुनने में आ रही है।

माधवी—हाँ, यह सवाल मैं भी करने वाली थी लेकिन बातों का सिलसिला दूसरी तरफ चला गया और मैं पूछना भूल गई।

मायारानी—हाँ, यह बात अच्छी तरह सुनने में आई थी और मुझे विश्वास भी हो गया था कि वास्तव में ऐसा ही हुआ है मगर आज यह बात खुद गोपालसिंह की लिखावट से खुल गई कि वास्तव में वे तीनों मारी नहीं गईं, परन्तु मुझे यह मालूम नहीं है कि इस विषय में किस तरह की चालाकी खेली गई या मनोरमा ने जिन्हें मारा, वे कौन थीं।

भीमसेन—तो निश्चय है कि वे तीनों मारी नहीं गईं ?

मायारानी—बेशक वे तीनों जीती हैं। (गोपालसिंह वाली चिट्ठी दिखाकर) देखो

एक ही सबूत से मैं तुम्हारी दिलजमई कर देती हूँ, इसे पढ़ो और माधवी रानी को सुनाओ। (माधवी से) देखो बहिन, तुम इस बात का खयाल न करना कि मैं तुम्हें आप कहकर सम्बोधन नहीं करती, मेरा तुम्हारा अब दोस्ती और मुहब्बत का नाता हो चुका इसलिए अब इन बातों का खयाल नहीं हो सकता।

माधवी—मैं भी यही पसन्द करती हूँ और इस बारे में अपने लिए भी तुमसे पहले ही माफी माँग लेती हूँ।

भीमसेन ने पत्र पढ़ा और माधवी को सुनाया।

भीमसेन—इस पत्र से तो बड़ा काम निकल सकता है ! यह कब का लिखा है और तुम्हारे हाथ क्योंकर लगा तथा जिस अँगूठी का इसमें जिक्र किया गया है वह कहाँ है ?

मायारानी—(अँगूठी दिखाकर) अँगूठी भी मुझे मिल गई है और यह चिट्ठी आज ही की लिखी है और आज ही मेरे हाथ लगी है। अभी इसकी कार्रवाई बिल्कुल बाकी है।

भीमसेन—अफसोस इतना ही है कि मेरे ऐयारों में से कोई भी रामदीन को नहीं जानता···

मायारानी—क्या हर्ज है, यह मेरी ऐयारा लीला बखूबी उसकी तरह बनकर काम निकाल सकती है, तुम्हारे ऐयार इसकी मदद पर मुस्तैद रह सकते हैं, और यह जब रामदीन की सूरत बनेगी तो इसे अच्छी तरह देख भी सकते हैं।

भीमसेन—(चिट्ठी मायारानी के हाथ में देकर) अच्छा अब तुम दोनों को जो कुछ गुप्त बातें करनी हैं कर लो पीछे मैं इस विषय में कुछ कहूँ सुनूंगा।

इतना कहकर भीमसेन उठ खड़ा हुआ और कुबेरसिंह को साथ लिए हुए कुछ दूर चला गया और मौका समझकर लीला भी कुछ पीछे हट गई।

मायारानी—जो कुछ पीछे कहोगी-सुनोगी उसे मैं पहले ही निपटा देना चाहती हूँ। सच पूछो तो मेरी और तुम्हारी अवस्था बराबर है, तुम भी विधवा हो और मैं भी विधवा हूँ, क्योंकि मैं वास्तव में गोपालसिंह की स्त्री नहीं हूँ और यह बात सभी को मालूम हो गई.बल्कि तुम भी सुन चुकी होगी।

माधवी—हाँ, मैं सुन चुकी हूँ, और मैंने यह भी सुना था कि तुमने राजा गोपालसिंह को वर्षों तक कैद कर रखा था पर आखिर कमलिनी ने उन्हें छुड़ा दिया। तो तुमने ऐसा क्यों किया और उन्हें मार ही क्यों न डाला ?

मायारानी—यही मुझसे भूल हो गई। तिलिस्म के दो-चार भेद जो मुझे मालूम न थे जानने के लिए मैंने ऐसा किया था, मुझे उम्मीद थी कि वह कैद की तकलीफ उठाकर बता देगा। तब उसे मार डालती तो आज यह दिन देखना नसीब न होता, मैं तिलिस्म की बदौलत अकेली ही राजा वीरेन्द्रसिंह ऐसे दस को जहन्नुम में पहुँचा देने की ताकत रखती थी। अब भी अगर गोपालसिंह को मैं पकड़ पाऊँ और मार सकूँ तो पुनः तिलिस्म की रानी होने से मुझे कोई भी रोक नहीं सकता और तब मैं बात-की-बात में तुम्हें राजगृही और गया की रानी बना सकतीं हूँ, मगर उस बात का सिलसिला तो टूटा ही जाता है।

तुम भी विधवा हो और मैं भी विधवाहूँ, तुम भी नौजवान और आशिक-मिजाज हो तथा मैं भी नौजवान और आशिक-मिजाज हूँ, तुम भी इन्द्रजीतसिंह के फेर में पड़कर दुःख भोग रही हो और मैं भी आनन्दसिंह की मुहब्बत में इस दशा तक आ पहुँची हूँ, अब भी मेरी और तुम्हारी किस्मतों का फैसला एक साथ और एक ही ठिकाने हो सकता है क्योंकि इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी आजकल जमानिया में तिलिस्म तोड़ रहे हैं, अगर हम तुम एक होकर काम करें तो बहुत जल्द दुश्मनों का नाम-निशान मिटाकर अपने प्यारों के साथ दुनिया का सुख भोग सकती हैं, मगर इस समय तुम्हारे दो कंटक दिखाई देते हैं।

माधवी—हाँ, एक तो मेरा भाई भीमसेन, और दूसरा मेरा सेनापति कुबेरसिंह, मगर तुम इन दोनों का कुछ भी खयाल न करो, इस समय हमें इन दोनों को मिला-जुलाकर काम ले लेना चाहिए फिर तुम जैसा कहोगी वैसा किया जायेगा।

मायारानी—शाबाश-शाबाश ! यही मालूम करने के लिए मैं तुमसे निराले में बातचीत किया चाहती थी क्योंकि ये बातें ऐसी हैं कि सिवाय मेरे और तुम्हारे किसी तीसरे का न जानना ही अच्छा है।

माधवी—निःसन्देह ऐसा ही है, हम दोनों के दिल की बातें हवा को भी मालूम न होनी चाहिए। आज बड़ी खुशी का दिन है कि हम दोनों जो एक ही तरह का दिल रखती हैं यहाँ पर आ मिली हैं, अब हम दोनों को हमेशा मेल-मिलाप रखने और समय पड़ने पर एक-दूसरे की मदद करने के लिए कसम खाकर मजबूत हो जाना चाहिए।

पाठक, मायारानी और माधवी दोनों ही अपना मतलब देख रही हैं। दोनों ही धूर्त, दोनों ही खुदगरज, और दोनों विश्वासघातिनी हैं। इस समय कुछ देर तक दोनों में घुल-घुलकर बातें होती रहीं, वादे भी हुए और कसमें भी खाई गईं। इसके बाद फिर भीमसेन और कुबेरसिंह बुलाए गए तथा लीला भी आ गई और आपस में बातें होने लगीं।

भीमसेन—अच्छा तो अब क्या निश्चय किया जाता है ? राजा गोपालसिंह की चिट्ठी लेकर जमानिया कौन जायेगा और क्या होगा ?

मायारानी—पहले तुम अपनी राय दो।

भीमसेन—मेरी राय तो यह है कि लीला रामदीन की सूरत बना दीवानसाहब के पास जाये और वहाँ से उनकी फरमाइश लेकर 'पिपलिया घाटी' पहुँचे और हम लोग भी अपनी फौज लेकर वहीं मौजूद रहें। लीला को यह चाहिए कि उन दो सौ सवारों को जिन्हें जमानिया से अपने साथ लायेगी किसी वजह से पीछे टिकवा दे जिसमें गोपालसिंह के पहुँचते ही हम लोग बात-की-बात में उन सभी को गिरफ्तार कर लें या मार डालें।

मायारानी— मगर यह बात मुझे नापसन्द है क्योंकि एक तो उसके लिखे अनुसार फौज 'पिपलिया घाटी' तक जरूर जायेगी, अगर मान लिया जाये कि नकली रामदीन के हुक्म से फौज पीछे रह भी जाये और तुम लोग उन सभी को गिरफ्तार कर लो तो भी हमारा काम न निकल सकेगा क्योंकि राजा गोपालसिंह के पकड़े या मारे जाने की खबर

दीवान को तुरन्त लग जायेगी और वह अपनी फौज को दुरुस्त करके लड़ने के लिए तैयार हो जायेगा और हम लोगों को जमानिया के अन्दर कभी घुसने न देगा। कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी जमानिया ही में तिलिस्म के अन्दर हैं, वे दोनों भी लड़ने-भिड़ने के लिए तैयार हो जायेंगे और उस समय हम लोग फिर लंडूरे ही रह जायेंगे, इतना बखेड़ा करने का कुछ फायदा न निकलेगा, न तो जमानिया की गद्दी मिलेगी और न गया का राज्य।

भीमसेन—तब आप ही कहिए कि क्या करना चाहिये।

मायारानी—(कुबेरसिंह से) इस वक्त आपके पास कितनी फौज है?

कुबेरसिंह—पाँच सौ।

मायारानी—(माधवी से) ऐसा करना चाहिए कि हम तुम भीमसेन और कुबेरसिंह चारों आदमी जमानिया वाले तिलिस्मी बाग के अन्दर जा घुसें और इन पाँच सौ आदमियों को इस तरह तिलिस्मी बाग के अन्दर ले चलें और छिपा रखें कि किसी को कानों-कान खबर न हो, क्योंकि उस बाग में इतने आदमियों को छिपा रखने की जगह है और वह बाग भी इस लायक है कि अगर मैं उसके अन्दर मौजूद रहूँ तो चाहे कैसा ही जवरदस्त दुश्मन हो और चाहे कितनी ही ज्यादा फौज लेकर क्यों न चढ़ आवे मगर बाग के अन्दर किसी की नजर तक पहुँचने न दूँ।

माधवी—बेशक वह ऐसा ही सुनने में आया है और तुम तो वहाँ की रानी ही ठहरीं तथा तुम्हें वहाँ के सब भेद मालूम हैं, अच्छा तब?

मायारानी—जब किशोरी और कमलिनी इत्यादि को लेकर गोपालसिंह जमानिया जायेगा तो निःसन्देह सबको लिए उसी बाग में पहुँचेगा। बस उस समय हम लोग जो छिपे हुए रहेंगे, निकल आवेंगे और वात-की-वात में सभी को मार लेंगे। ऐसा होने से जमानिया में दखल भी बना रहेगा और इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह भी कब्जे में आ जायेंगे।

माधवी—(खुश होकर)वात तो बहुत ठीक है, मगर हम लोग इतने आदमियों को लेकर चुपचाप उस बाग के अन्दर किस तरह पहुँच सकते हैं?

मायारानी—इसका बन्दोबस्त इस तरह हो सकता है कि हम तुम भीमसेन और कुबेरसिंह एक साथ ही भेष बदलकर लीला के साथ जमानिया जायें और लीला दीवान साहव से कहे कि गोपालसिंह ने इन सभी अर्थात् हम लोगों को खास बाग के अन्दर पहुँचा देने का हुक्म दिया है। बस इतना कहकर हम लोगों को उस बाग के अन्दर पहुँचा दे क्योंकि दीवान इस नकली रामदीन की बात अँगूठी की वरकत से टाल न सकेगा और रामदीन पहले भी उस बाग के अन्दर आता-जाता था यह बात दीवान जानता है। जब हम लोग उस बाग के अन्दर जा पहुँचेंगे तो एक गुप्त रास्ते से कुल फौज को बाग के अन्दर ले लेंगे। इन फौजी सिपाहियों को उस सुरंग के मुहाने का पता बता दिया जायेगा जिसकी राह से हम सभी को खास वाग के अन्दर पहुँचावेंगे।

माधवी—यह बात तो तुमने बहुत ही अच्छी सोची!

भीमसेन—इससे बढ़कर और कोई तरकीब फतेह पाने के लिए हो ही नहीं सकती !

कुबेरसिंह—और ऐसा करने में कोई टण्टा भी नहीं है ।

लीला—बस, अब इसी राय को पक्की रखिए ।

इसके बाद फिर सभी में बातचीत और राय होती रही यहाँ तक कि सवेरा हो गया । मायारानी, माधवी, भीमसेन और कुबेरसिंह ने सूरतें बदल लीं और लीला भी रामदीन बन बैठी । भीमसेन के चारों ऐयारों को सुरंग का पता-ठिकाना अच्छी तरह बता दिया गया और कह दिया गया कि उसी ठिकाने सुरंग के मुहाने पर फौजी सिपाहियों को लेकर इन्तजार करना, इसके बाद मायारानी, माधवी, भीमसेन, कुबेरसिंह और लीला ने घोड़ों पर सवार होकर जमानिया का रास्ता लिया ।

6

दिन दो पहर से कुछ ज्यादा ढल चुका था जब जमानिया में दीवान साहब को रामदीन के आने की इत्तिला मिली । दीवान साहब ने रामदीन को अपने पास बुलाया और उसने दीवान साहब के सामने पहुँचकर गोपालसिंह की चिट्ठी उनके हाथ में दी तथा जब वे चिट्ठी पढ़ चुकें तो अँगूठी भी दिखाई । दीवान साहब ने नकली रामदीन से कहा, "महाराज का हुक्म हम लोगों के सिर आँखों पर, तुम अँगूठी को पहन लो और हम लोगों को अपने हुक्म का पाबन्द समझो ! सवारी और सवारों का इन्तजाम दो घड़ी के अन्दर हो जायेगा । तुम यहाँ रहोगे या सवारों के साथ जाओगे ?"

रामदीन ने कहा, "मैं सवारों के साथ ही राजा साहब के पास जाऊँगा मगर इस समय चार आदमियों को खास बाग के अन्दर पहुँचाकर उनके खाने-पीने का इन्तजाम कर देना है जैसा कि हमारे राजा साहब का हुक्म है ।"

दीवान—(ताज्जुब से) खास बाग के अन्दर ?

रामदीन—जी, हाँ ।

दीवान—और वे चारों आदमी हैं कहाँ पर ?

रामदीन—उन्हें मैं बाहर छोड़ आया हूँ ।

दीवान—(कुछ सोचकर) खैर, जो कुछ राजा साहब ने हुक्म दिया हो या जो तुम्हारे जी में आवे वह करो । अब हम लोगों को तो रोकने-टोकने का अधिकार ही नहीं रहा ।

रामदीन सलाम करके उठ खड़ा हुआ और अपने चारों साथियों को लेकर तिलिस्मी बाग के अन्दर चला गया जहाँ इस समय बिल्कुल ही सन्नाटा था । अँगूठी के खयाल से उसे किसी ने भी नहीं रोका और मायारानी बे-खटके अपने ठिकाने पहुँच गई तथा लुकने-छिपने और दरवाजों को बन्द करने लगी ।

अब हम रामदीन के साथ राजा गोपालसिंह की तरफ रवाना होते हैं और देखते

हैं कि बनी-बनाई बात किस तरह चौपट होती है ।

संध्या होने से पहले खाने-पीने का सामान, चार रथ और दो सौ सवारों को लेकर नकली रामदीन पिपलिया घाटी की तरफ रवाना हुआ और दूसरे दिन दोपहर के बाद वहाँ पहुँचा।

आज ही संध्या होने के पहले राजा गोपालसिंह यहाँ पहुंचने वाले थे यह बात रामदीन की जुबानी सभी को मालूम हो चुकी थी और सभी आदमी उनके आने का इन्तजार कर रहे थे ।

संध्या हो गई, चिराग जल गया, पहर रात गई, दोपहर रात गुजरी, आखिर तमाम रात बीत गई, मगर राजा गोपालसिंह नहीं आये, इसलिए नकली रामदीन के ताज्जुब का तो कहना ही क्या ? उसके दिल में तरह-तरह की बातें पैदा होने लगीं, मगर इसके अतिरिक्त जितने फौजी सवार तथा अन्य लोग साथ आये थे उन सबको भी बहुत ताज्जुब हुआ और वे घड़ी-घड़ी राजा साहब के न आने का सबब उससे पूछने लगे, मगर रामदीन क्या जवाब देता ? उसे इन बातों की खबर क्या थी !

दूसरे दिन संध्या के समय राजा गोपालसिंह घोड़े पर सवार वहाँ आ पहुँचे मगर अकेले थे, साईस तक साथ न था। सिपाहियाना ठाठ से बेशकीमत कपड़ों के ऊपर तिलिस्मी कवच खंजर और ढाल-तलवार लगाये बहुत ही सुन्दर तथा रोआबदार मालूम होते थे। सभी ने झुककर सलाम किया और नकली रामदीन ने आगे बढ़कर घोड़े की लगाम थाम ली तथा उसकी गर्दन पर चार थपकी देकर कहा, "आश्चर्य है कि आपके आने में पूरे आठ पहर की देर हो गई है और फिर भी अकेले ही हैं !"

यह सुनकर राजा साहब ने कई पल तक रामदीन का मुँह देखा और तब कहा, "हाँ, किशोरी, कामिनी और लक्ष्मीदेवी वगैरह ने हमारे साथ आने से इनकार किया इसलिये हम अकेले ही आये हैं और हमारे जाने में रात भर की देर है। इस समय हम किसी काम को जाते हैं सवेरे यहाँ आयेंगे, तब तक तुम सभी को इस घाटी में टिके रहना होगा !"

रामदीन—घोड़ों का दाना तो सिर्फ एक ही दिन का आया था, और सवार लोग भी…

गोपालसिंह—खैर; क्या हर्ज है, घोड़े चराई पर गुजर कर लेंगे और सवार लोग रात भर फाका करेंगे ।

इतना कहकर राजा गोपालसिंह ने घोड़े की बाग मोड़ी और जिधर से आये थे उसी तरफ तेजी के साथ रवाना हो गये । रामदीन चुपचाप ज्यों-का-त्यों खड़ा उनकी तरफ देखता ही रह गया और जब वे नजरों की ओट हो गये तब उसने सभी को राजा साहब का हुक्म सुनाया और इसके बाद अपने बिछावन पर जाकर सोचने लगा—

गोपालसिंह की बातें कुछ समझ में नहीं आतीं और न उनके इरादे का ही पता लगता है ! लक्ष्मीदेवी और कमलिनी वगैरह को न मालूम क्यों छोड़ आये और जब उन्होंने इनके साथ आने से इनकार किया तो इन्होंने मान क्यों लिया ? क्या अब लक्ष्मीदेवी का और इनका साथ न होगा ? अगर ये अकेले जमानिया गए तो क्या केवल इन्हीं के साथ

वह सलूक किया जायेगा जो हम सोच चुके हैं ? मगर कमलिनी वगैरह का बचे रह जाना तो अच्छा नहीं होगा। लेकिन फिर क्या किया जाये लाचारी है, हाँ, एक बात का इन्तजाम तो कुछ किया ही नहीं गया और न पहले इस बात का विचार ही हुआ। जमानिया पहुँचने पर जब दीवान साहब की जुबानी गोपालसिंह को यह मालूम होगा कि रामदीन ने चार आदमियों को खास बाग के अन्दर पहुँचाया है तब वह क्या सोचेंगे और पूछने पर मुझसे क्या जवाब पावेंगे ? कुछ भी नहीं। इस बात का जवाब देना मेरे लिए कठिन हो जायेगा। तब फिर खास बाग पहुँचने के पहले ही मेरा भाग जाना उचित होगा ? ओफ, बड़ी भूल हो गई, यह बात पहले न सोच ली ! दीवान साहब को बिना कुछ कहे ही उन सभी को खास बाग में पहुँचा देना मुनासिब होता। मगर ऐसा करने पर भी तो काम नहीं चलता। अगर दीवान साहब को नहीं तो खास बाग के पहरेदारों को तो मालूम ही हो जाता कि रामदीन चार आदमियों को बाग के अन्दर छोड़ गया है और उन्हीं की जुबानी यह बात राजा साहब को भी मालूम हो जाती। बात एक ही थी, सबसे अच्छा तो तब होता जब वे लोग किसी गुप्त राह से बाग के अन्दर जाते, मगर यह सम्भव न था क्योंकि जरूर भीतर से सभी रास्ते गोपालसिंह ने बन्द कर रखे होंगे। तब क्या करना चाहिये ? हाँ, भाग ही जाना सबसे अच्छा होगा। मगर मायारानी को भी तो इस बात की खबर कर देनी चाहिए। अच्छा तब जमानिया होकर और मायारानी को कह-सुनकर भागना चाहिए। नहीं अब तो यह भी नहीं हो सकता, क्योंकि मायारानी फौजी सिपाहियों को बाग के अन्दर करके साथियों समेत कहीं छिप गई होगी और मैं उस भाग के गुप्त भेदों को न जानने के कारण इस लायक नहीं हूँ कि मायारानी को खोज निकालूँ और अपने दिल का हाल उनसे कहूँ या उन्हीं के साथ आने भी छिप रहूँ। ओफ ! वह तो मजे में अपने ठिकाने पहुँच गईं मगर मुझे आफत में डाल गईं। खैर, अभी तो नहीं मगर गोपालसिंह को जमानिया की हद में पहुँचाकर जरूर भाग जाना पड़ेगा। फिर जब मायारानी उन्हें मारकर अपना दखल जमा लेंगी तब फिर उनसे मुलाकात होती रहेगी।

इन्हीं विचारों में लीला (नकली रामदीन) ने तमाम रात आँखों में बिता दी। सवेरा होने के पहले ही वह जरूरी कामों से छुट्टी पाने के लिए घोड़े पर सवार होकर दूर चली गई और घण्टे भर बाद लौट आई।

7

दिन अनुमान दो घड़ी के चढ़ चुका होगा जब राजा गोपालसिंह दो आदमियों को साथ लिए हुए धीरे-धीरे आते दिखाई पड़े। वे दोनों भैरोंसिंह और इन्द्रदेव थे और पैदल थे। जब तीनों उस ठिकाने पर पहुँच गये जहाँ राजा साहब के रथ और सवार लोग थे तब राजा साहब ने अपना घोड़ा छोड़ दिया और उस पर भैरोंसिंह को सवार होने के लिए कहा तथा और सवारों को भी घोड़ों पर सवार हो जाने के लिए इशारा किया,

इसके बाद स्वयं एक रथ पर सवार हो और इन्द्रदेव को भी उसी पर अपने साथ बैठा लिया, बाकी तीन रथ खाली ही रह गये। सवारी धीरे-धीरे जमानिया की तरफ रवाना हुई और फौजी सवार खूबसूरती के साथ राजा साहब को घेरे हुए धीरे-धीरे जैसा कि रथ जा रहा था जाने लगे। भैरोंसिंह अपना घोड़ा बढ़ाकर नकली रामदीन के पास चला गया जो उसी पंचकल्यान घोड़ी पर सवार था और उसके साथ-साथ जाने लगा। यह बात लीला को बहुत बुरी मालूम हुई क्योंकि वह राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों से बहुत डरती थी। थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद वह बोली—

लीला—(भैरों से)आपने राजा साहब का साथ क्यों छोड़ दिया ?

भैरोंसिंह—(हँसकर)तुम्हारा साथ करने के लिये, क्योंकि मैं अपने दोस्त रामदीन को अकेला नहीं छोड़ सकता।

लीला—और जब मुझे राजा साहब ने अकेले जमानिया भेजा था तब आप कहाँ डूब गये थे ?

भैरोंसिंह—तब भी तुम्हारे साथ था मगर तुम्हारी नजरों में छिपा हुआ था।

लीला—(डरकर, मगर अपने को सम्हालकर) परसों तुम कहाँ थे ? कल कहाँ थे और आज सवेरा होने के पहले तक कहाँ गायब थे ? क्यों झूठी बातें बना रहे हो ?

भैरोंसिंह—परसों भी कल भी और आज तक भी मैं तुम्हारे साथ ही था मगर तुम्हारी नजरों से छिपा हुआ था, हाँ, जब दो घण्टे रात बाकी थीं तब मैंने तुम्हारा साथ छोड़ दिया और राजा साहब से जा मिला। अब मैं फिर तुम्हारे साथ जा रहा हूँ क्योंकि राजा साहब का ऐसा ही हुक्म है। (हँसकर) क्योंकि राजा साहब ने सुना है कि तुम्हारा इरादा जमानिया पहुँचने के पहले ही भाग जाने का है।

लीला—(अपने उछलते कलेजे को रोककर) यह उनसे किसने कहा ?

भैरोंसिंह—मैंने ?

लीला—और तुम्हें किसने खबर दी ?

भैरोंसिंह—तुम्हारे दिल ने।

लीला—मानो मेरे दिल के आप भेदिया ठहरे !

भैरोंसिंह—बेशक ऐसा ही है। अगर तुम्हें ऐयारी का ढंग पूरा-पूरा मालूम होता तब तुम्हारा दिल मजबूत होता मगर तुम्हारी ऐयारी अभी बिल्कुल कच्ची है। आह, एक बात तुमसे कहना तो मैं भूल ही गया, जिस रात मायारानी राजा वीरेन्द्रसिंह के लश्कर से भाग गई थी उसी रोज सवेरा होने के पहले ही खबर राजा गोपालसिंह को मालूम हो गई थी।

लीला—(काँपती हुई और लड़खड़ाती आवाज में) यह तो मुझे मालूम है, मगर तुम्हारे इस कहने का मतलब क्या है सो समझ में नहीं आता।

भैरोंसिंह—मतलब यही है कि तुम अपनी सूरत साफ करो और मेरे साथ राजा साहब के पास चलो क्योंकि अब असली रामदीन के सामने तुम्हारा रामदीन बने रहना मुनासिब नहीं है।

लीला—असली रामदीन अब कहाँ…

जल्दी में लीला इतना कह तो गई मगर फिर उसने जुबान बन्द कर ली। भैरोंसिंह की चलती-फिरती बातों ने उसका कलेजा हिला दिया और वह समझ गई कि अब मेरा नसीब मुझे धोखा दिया चाहता है, मेरा भेद खुल गया, और अब मेरे कैद होने में ज्यादा देर नहीं है। अब उसके दिल ने भी कहा कि वास्तव में कल ही राजा साहब को तुझ पर शक हो गया था, अगर तू कल ही भाग जाती तो अच्छा था, मगर अब तेरा भागना भी कठिन है। लीला ने कुछ और सोच-विचार के भैरोंसिंह से कहा, "तुम जरा निराले में चलकर मेरी एक बात सुन लो, बेहतर होगा कि हम दोनों आदमी घोड़ा बढ़ाकर जरा आगे निकल चलें, मैं जो बात कहना चाहता हूँ, उसे सुनकर तुम बहुत खुश होओगे।"

भैरोंसिंह—न तो मैं तुम्हारी कुछ सुन सकता हूँ और न तुम्हें छोड़ सकता हूँ, हाँ, एक बात तुम्हें और भी कहे देता हूँ, जिसे सुनकर तुम्हारे दिल का खुटका निकल जायेगा, वह यह है कि जब राजा साहब ने दीवान साहब के नाम की चिट्ठी देकर असली रामदीन को जमानिया भेजा था तो जुबानी कह दिया था कि "इस चिट्ठी में हमने दो सौ सवार भेजने के लिए लिखा है, मगर तुम केवल बीस सवार अपने साथ लाना और जिस दिन हमने माँगा है उसके एक दिन बाद आना।" कहो अब तो बहुत-सी बातें तुम्हारी समझ में आ गई होंगी?

इतना कहकर भैरोंसिंह ने लीला का हाथ पकड़ लिया और राजा साहब की तरफ चलने के लिए कहा मगर लीला को उधर जाना मंजूर न था इसलिए उसने अपनी घोड़ी को न रोका और झटका देकर हाथ छुड़ाना चाहा मगर ऐसा न कर सकी, भैरोंसिंह ने उसे खींचकर जमीन पर गिरा दिया। उसी समय भैरोंसिंह को मालूम हुआ कि यह मर्द नहीं, औरत है।

भैरोंसिंह की यह कार्रवाई देखकर सभी के क़ान खड़े हो गये। सवारों ने घोड़ा रोक दिया, राजा साहब की सवारी (रथ) खड़ी हो गई, कई सवार अपने घोड़े पर से कूद कर भैरोंसिंह के पास चले आये और इन्द्रदेव भी रथ पर से उतरकर उसके पास जा पहुँचे। आज्ञानुसार लीला की मुश्कें बाँध ली गयीं और पानी मँगा कर उसका चेहरा साफ किया गया और तब लीला को सभी ने पहचान लिया। लीला राजा गोपालसिंह के पास लाई गई और भैरोंसिंह ने सब हाल कहा, जिसे सुन राजा साहब हँस पड़े और बोले, "अब इन्द्रदेव जैसा कहें वैसा करो।"

इन्द्रदेव की आज्ञानुसार लीला रस्सियों से जकड़कर एक खाली रथ पर बैठा दी गई और कई सवार उसकी निगरानी पर मुस्तैद किये गये।

अब सवारी तेजी के साथ जमानिया की तरफ रवाना हुई। दोपहर के बाद जब सवारी जमानिया के पास पहुँची तब इन्द्रदेव ने राजा साहब से धीरे-धीरे कुछ कहा और रथ से उतरकर पैदल ही मैदान का रास्ता लिया और देखते-देखते न मालूम कहाँ चले गये। सवारी खास बाग के दरवाजे पर पहुँची और राजा साहब रथ से उतर कर भैरोंसिंह को साथ लिए हुए बाग के अन्दर चले गये।

8

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह तिलिस्म तोड़ने की धुन में लगे हुए थे। मगर उनके दिल से किशोरी और कमलिनी तथा कामिनी और लाड़िली की मुहब्बत एक सायत के लिए भी बाहर नहीं होती थी। जब दोनों कुमारों ने बाग के उत्तर की तरफ वाले मकान की खिड़की (छोटे दरवाजे) में से झाँकते हुए राजा गोपालसिंह की जुबानी किशोरी, कमलिनी, कामिनी और लाड़िली का सब हाल सुना और यह भी सुना कि अब वे सब बहुत जल्द जमानिया में लाई जायेंगी, तब बहुत खुश हुए और उन लोगों से जल्द मिलने के लिए तिलिस्म तोड़ने की फिक्र उन्हें बहुत ज्यादा हो गई। जब गोपालसिंह, इन्दिरा और इन्द्रदेव बातचीत करके चले गये, तब बड़े कुमार ने सरयू से कहा, "सरयू, हम लोग अब बहुत जल्द तुम्हें अपने साथ लिए हुए इस तिलिस्म के बाहर होंगे। हम लोगों को तिलिस्म तोड़ने और दौलत पाने का उतना खयाल नहीं है जितना तिलिस्म से बाहर निकलने का ध्यान है। इस तिलिस्म से हम लोगों को एक किताब मिलने वाली है जिसके लिए हम लोग जरूर उद्योग करेंगे, क्योंकि उसी किताब की बदौलत हम लोग चुनारगढ़ का वह भारी तिलिस्म तोड़ सकेंगे जिसे हमारे पिता ने हमारे लिए छोड़ रखा है और जिसका तोड़ना हम दोनों भाइयों को आवश्यक कहा जाता है।"

सरयू—मेरे दिल ने उम्मीदों से भरकर उसी समय विश्वास करा दिया कि अब तेरा दुर्दैव सदैव के लिए तेरा पीछा छोड़ देगा जब आप दोनों भाइयों के दर्शन हुए तथा आप लोगों का परिचय मिला। अब मैं अपना दुःख भूलकर बिल्कुल बेफिक्र हो रही हूँ और सिवाय आपकी आज्ञा मानने के कोई दूसरा खयाल मेरे दिल में नहीं है।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा, तो अब तुम हम लोगों के लिए फल तोड़ो और तब तक हम लोग इस बाग में घूम कर कोई दरवाजा ढूंढ़ते हैं। ताज्जुब नहीं कि हम दोनों को इस बाग में कई दिन रहना पड़े।

सरयू—जो आज्ञा।

इतना कहकर सरयू फल तोड़ने और नहर के किनारे छाया देखकर कुछ जमीन साफ करने के खयाल में पड़ी और दोनों कुमार बाग में इधर-उधर घूमकर दरवाजा खोजने का उद्योग करने लगे।

पहरभर से ज्यादा देर तक घूमने और पता लगाने के बाद जब कुमार उत्तर की तरफ वाली दीवार के नीचे पहुँचे, जिधर मकान था, तब उन्हें पूरब की तरफ के कोने की तरफ हटकर जमीन में एक हौज का निशान मालूम हुआ। उसी के पास दीवार में एक छोटे-से दरवाजे का भी चिन्ह भी दिखा जिससे निश्चय हो गया कि उन लोगों का काम इन्हीं दोनों निशानों से चलेगा। इतना सोचकर वे दोनों भाई वहाँ चले आये जहाँ सरयू फल तोड़ और जमीन साफ करके बैठी हुई दोनों भाइयों के आने का इन्तजार कर रही थी। सरयू ने अच्छे-अच्छे और पके फल दोनों भाइयों के लिए तोड़े और जल से धोकर साफ पत्थर की चट्टान पर रखे थे। दोनों भाइयों ने उन्हें खाकर नहर का जल

पिया और इसके बाद सरयू को भी खाने के लिए कह के उसी ठिकाने चले गये जहाँ हौज और दरवाजे का निशान पाया था। हौज में मिट्टी भरी हुई थी जिसे दोनों भाइयों ने खंजर से खोद-खोद के निकालना शुरू किया और थोड़ी देर में सरयू भी उनके पास पहुँच कर मिट्टी फेंकने में मदद करने लगी। संध्या हो जाने पर इन सभी ने उस काम से हाथ खींचा और नहर के किनारे जाकर आराम किया। उस हौज की सफाई में इन लोगों को चार दिन लग गये, पाचवें दिन दोपहर होते-होते वह हौज साफ हुआ और मालूम होने लगा कि यह वास्तव में एक फव्वारा है। वह हौज बढ़िया संगमरमर का बन हुआ था और फव्वारा सोने का। अब दोनों कुमारों ने खंजर के सहारे उस हौज की जमीन का पत्थर उखाड़ना शुरू किया और जब दो-तीन दिन की मेहनत में सब पत्थर उखड़ गये तब वह फव्वारा भी सहज ही में निकल गया और उसके नीचे एक दरवाजे का निशान दिखाई दिया। दरवाजे में पल्ला हटाने के लिए कड़ी एक लगी हुई थी और जिस जगह ताला लगा हुआ था। उसके मुँह पर लोहे की एक पतली चादर रखी हुई थी जिसे कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने हटा दिया और उसी तिलिस्मी ताली से ताला खोला जो पुतली के हाथ से उन्हें मिली थी।

दरवाजा हटाने पर नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ दिखाई पड़ीं। आनन्दसिंह तिलिस्मी खंजर हाथ में लेकर रोशनी करते हुए नीचे उतरे और उनके पीछे-पीछे इन्द्रजीतसिंह और सरयू भी गये। नीचे पहुँचकर उन्होंने अपने को एक छोटी-सी कोठरी में पाया जिसके बीचोंबीच में एक हौज बना हुआ था। उस हौज के चारों तरफ वाली दीवार कई तरह की धातुओं से बनी हुई थी और हौज के बीच में किसी तरह की राख भरी हुई थी। कोठरी के चारों तरफ की दीवारों में से ताँबे की बहुत-सी तारें आई थीं और वे सब एक साथ होकर उसी हौज के बीच में चली गई थीं। इन्द्रजीतसिंह ने सरयू से कहा, "जब ये सब तारें काट दी जायेंगी, तब बाग के चारों तरफ की दीवार करामात से खाली हो जायगी अर्थात् उसमें यह गुण न रहेगा कि उसके छूने से किसी को किसी तरह की तकलीफ हो, इसके बाद हम लोग उस दीवार वाले दरवाजे को साफ करके रास्ता निकालेंगे और इस बाग से निकलकर किसी दूसरी ही जगह जायेंगे। अस्तु तुम यहाँ से निकलकर ऊपर चली जाओ तब हम लोग तार काटने में हाथ लगावें।"

इन्द्रजीतसिंह की आज्ञानुसार सरयू उस कोठरी से बाहर निकल गई और तीनों कुमारों ने तिलिस्मी खंजर से शीघ्र ही उन तारों को काट डाला और बाहर निकल आये, दरवाजा पहले की तरह बन्द कर दिया और ऊपर से मिट्टी डाल दी। फिर नहर के किनारे आकर तीनों आदमी बैठ गये और बातचीत करने लगे।

सरयू—अब दीवार छूने से किसी तरह की तकलीफ नहीं नहीं सकती?

इन्द्रजीतसिंह—अभी नहीं। धीरे-धीरे दो पहर में उसका गुण जायगा और तब तक हम लोगों को व्यर्थ बैठे रहना पड़ेगा।

आनन्दसिंह—तब तक (सरयू की तरफ बताकर) इनका बचा हुआ किस्सा सुन लिया जाता तो अच्छा होता।

इन्द्रजीतसिंह—नहीं, अब इनका किस्सा पिताजी के सामने सुनेंगे।

सरयू—अब तो मैं आपके साथ ही रहूँगी, इसलिए तिलिस्म तोड़ते समय जो कुछ कार्रवाई आप करेंगे या जो तमाशा दिखाई देगा देखूँगी, मगर यदि आज के पहले का हाल भी जब से आप इस तिलिस्म में आये हैं, सुना देते तो बड़ी कृपा होती। मैं भी समझती कि आपकी बदौलत इस तिलिस्म का पूरा-पूरा तमाशा देख लिया।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छी बात है, (आनन्दसिंह से)तुम इस तिलिस्म का हाल इन्हें सुना दो।

थोड़ी देर आराम करने तथा जरूरी कामों से छुट्टी पाने के बाद भाई की आज्ञानुसार आनन्दसिंह ने अपना तिलिस्म का हाल तथा जिस ढंग से इन्दिरा से मुलाकात हुई थी, वह सब सरयू को कह सुनाया, इसके साथ ही साथ तिलिस्म के बाहर आजकल का जैसा जमाना हो रहा था, वह सब भी बयान किया। वह सब हाल कहते-सुनते रात आधी से कुछ ज्यादा चली गई और उस समय इन लोगों ने एक विचित्र तमाशा देखा।

इस बाग के उत्तर की तरफ जो सटा हुआ मकान बना था और जिसमें राजा गोपालसिंह और कुमार में बातचीत हुई थी, हम पहले लिख आये हैं कि उसमें आगे की तरफ सात खिड़कियाँ थीं। इस समय यकायक एक आवाज आने से दोनों कुमारों और सरयू की निगाह उस तरफ गई। देखा कि बीच वाली बड़ी खिड़की (दरवाजा) खुली है और अन्दर रोशनी मालूम होती है। इन लोगों को ताज्जुब हुआ और इन्होंने सोचा कि शायद राजा गोपालसिंह आये हैं और हम लोगों से बातचीत करने का इरादा है मगर ऐसा न था, थोड़ी ही देर बाद उसके अन्दर दो-तीन नकाबपोश चलते-फिरते दिखाई दिये और इसके बाद एक नकाबपोश खिड़की में कमन्द अड़ाकर नीचे उतरने लगा, पहले तो दोनों कुमारों ओर सरयू को गुमान हुआ कि खिड़की में राजा गोपालसिंह या इन्द्रदेव दिखाई देंगे या होंगे, मगर जब एक नकाबपोश कमन्द के सहारे नीचे उतरने लगा, तब उनका खयाल बदल गया और और वे सोचने लगे कि यह काम इन्द्रदेव या गोपालसिंह का नहीं है बल्कि किसी ऐसे आदमी का है जो इस तिलिस्म का हाल नहीं जानता, क्योंकि गोपालसिंह और इन्द्रदेव तथा इन्दिरा को यह भी मालूम है कि इस बाग की दीवार छूने या बदन के साथ लगाने लायक नहीं है, तभी तो इन्दिरा अपनी माँ के पास नहीं पहुँच सकी थी और सरयू ने यह बात इन्दिरा से कही होगी।

इन्द्रजीतसिंह ने इसी समय सरयू से पूछा कि "इस बाग की दीवार का हाल इन्दिरा को मालूम है ?" इसके जवाब में सरयू ने कहा, "जरूर मालूम है। मैंने खुद इन्दिरा से कहा था और इसी सबब से तो वह मेरे पास आज तक न आ सकी। निःसन्देह इन्दिरा ने यह बात राजा गोपालसिंह से कही होगी, बल्कि वह खुद जानते होंगे। इसी से मैं सोचती हूँ कि ये लोग कोई दूसरे ही हैं जो इस भेद को नहीं जानते, मगर अब तो इस दीवार का गुण जाता ही रहा।"

तीनों को ताज्जुब हुआ और तीनों आदमी टकटकी लगाकर उस तरफ देखने लगे। जब वह नकाबपोश कमन्द के सहारे नीचे उतर आया, तब दूसरे नकाबपोश ने वह कमन्द ऊपर खींच ली और उसी कमन्द में एक गठरी और बाँधकर नीचे लटकाई। दोनों कुमारों और सरयू को विश्वास हो गया कि इस गठरी में जरूर कोई आदमी है।

जो नकाबपोश नीचे आ चुका था, उसने गठरी थाम ली और खोलकर कमन्द खाली कर दी, मगर जिस कम्बल में वह गठरी बँधी थी, उसे इसी के साथ बाँध दिया और ऊपर वाले नकाबपोश ने खींच लिया। थोड़ी देर बाद ही दूसरी गठरी लटकाई गई और नीचे वाले नकाबपोश ने पहले की तरह उसे भी थाम लिया और खोलकर फिर कमन्द के साथ बाँध दिया।

इसी तरह बारी-बारी से सात गठरियाँ नीचे उतारी गयीं, इसके बाद वह नकाबपोश, जो सबसे पहले नीचे उतरा था, उसी कमन्द के सहारे ऊपर चढ़ गया और खिड़की बन्द हो गई।

9

जिस समय राजा गोपालसिंह खास बाग के दरवाजे पर पहुँचे, उस समय उनके दीवान साहब भी वहाँ हाजिर थे। नकली रामदीन अर्थात् लीला उनके हवाले कर दी गई। भैरोंसिंह के सवाल करने पर उन्होंने कहा कि "इस लीला ने चार आदमियों को खास बाग के अन्दर पहुँचाया है, मगर हम नहीं कह सकते कि वास्तव में वे कौन थे।" अब राजा साहब और भैरोंसिंह को यह तो मालूम हो गया कि चार आदमी भी इस बाग के अन्दर घुसे हैं जो हमारे दुश्मन ही होंगे, मगर उन्हें उन पाँच सौ फौजी सिपाहियों की शायद ही खबर हो जिन्हें मायारानी ने गुप्त रीति से बाग के अन्दर कर लिया था। पहली दफे जब मायारानी को गोपालसिंह ने छकाया था, तब वह खुले तौर पर बाग में रहती थी, मगर अबकी दफे तो वह उस भूलभूलैया बाग में जाकर ऐसा गायब हुई है कि उसका पता लगाना भी कठिन होगा। दीवान साहब ने पूछा भी कि "अगर हुक्म हो तो बाग में तलाशी ली जाय और उन आदमियों का पता लगाया जाय जिन्हें लीला ने इस बाग में पहुँचाया है।" मगर राजा साहब ने इसके जवाब में सिर हिलाकर जाहिर कर दिया कि यह बात उन्हें स्वीकार नहीं है।

कुछ दिन रहते ही राजा गोपालसिंह बाग के दूसरे दर्जे में केवल भैरोंसिंह को साथ लेकर गये और बाग के अन्दर चारों तरफ सन्नाटा पाया। इस समय भैरोंसिंह और राजा गोपालसिंह दोनों के ही हाथ में तिलिस्मी खंजर मौजूद थे।

खास बाग के दूसरे दर्जे में दो कुएँ थे जिनमें पानी बहुत ज्यादा रहता था, यहाँ तक कि इस बाग के पेड़-पत्तों को सींचने और छिड़काव का काम इन दोनों में से किसी एक कुएँ ही से चल सकता था, मगर सींचने के समय दूर और नजदीक का खयाल करके या शायद और किसी सबब से बनवाने वाले ने दो बड़े-बड़े जंगी कुएँ बनवाये थे, परन्तु ये दोनों कुएँ भी कारीगरी और ऐयारी से खाली न थे।

भैरोंसिंह और गोपालसिंह छिपते और घूमते हुए पूरब की तरफ वाले कुएँ पर पहुँचे जिसका घेरा बहुत बड़ा था और नीचे उतरने तथा चढ़ने के लिए कुएँ की दीवार

में लोहे की कड़ियाँ लगी हुई थीं। भैरोंसिंह और गोपालसिंह दोनों आदमी कड़ियों के सहारे इस कुएँ में उतर गये।

किसी ठिकाने पर छिपी हुई मायारानी इस तमाशे को देख रही थी। गोपालसिंह और भैरोंसिंह को आते देख वह बहुत खुश हुई और उसे निश्चय हो गया कि अब हम लोग गोपालसिंह को मार लेंगे। जिस जगह वह बैठी हुई थी। वहाँ पर माधवी कुबेरसिंह, भीमसेन और ऐयारों के अतिरिक्त बीस आदमी फौजी सिपाहियों में से भी मौजूद थे और बाकी फौजी सिपाही तहखानों में छिपाये हुए थे। पहले तो मायारानी ने चाहा कि केवल हम ही लोग बीस सिपाहियों के साथ जाकर गोपालसिंह को गिरफ्तार कर लें, मगर जब उसे कृष्ण जिन्न वाली बात याद आई और यह खयाल हुआ कि गोपालसिंह के पास वह तिलिस्मी खंजर और कवच जरूर होगा जो रोहतासगढ़ में उनके पास उस समय मौजूद था जब शेरअली और दारोगा के साथ हम लोग वहाँ गये थे, तब उसकी हिम्मत टूट गई और बिना कुछ फौजी सिपाहियों को साथ लिए गोपालसिंह के पास जाना उचित न जाना। इसी बीच में उसके देखते-देखते गोपालसिंह कुएँ भीत चले गये।

इस तिलिस्मी बाग के अन्दर आने तथा यहाँ से बाहर जाने वाला दरवाजा जिस तरह बन्द होता है, इसका हाल उस समय लिखा जा चुका है जब पहली दफा इस बाग में मायारानी के ऊपर आफत आई थी और मायारानी ने सिपाहियों के बागी हो जाने पर बाहर जाने का रास्ता बन्द कर दिया था, अब इस समय भी उसी ढंग से मायारानी ने बाग का दरवाजा बन्द कर दिया और इसके बाद कुल सिपाहियों को तहखाने में से निकालकर माधवी, भीमसेन और कुबेरसिंह तथा ऐयारों को साथ लिए उस कुएँ पर पहुंची जिसके अन्दर भैरोंसिंह को साथ लिए हुए राजा गोपालसिंह उतर गये थे।

मायारानी ने सोचा था कि आखिर गोपालसिंह उस कुएँ के बाहर निकलेंगे ही, उस समय हम लोग उन्हें सहज ही में मार लेंगे, बल्कि कुएँ से बाहर निकलने की मोहलत ही न देंगे—इत्यादि, मगर जब बहुत देर हो गई और रात हो जाने पर भी गोपालसिंह कुएँ के बाहर न निकले, तो उसे बड़ा ही ताज्जुब हुआ। वह खुद कुएँ के अन्दर झाँक कर देखने लगी और उसी समय चौंक कर माधवी से बोली—

मायारानी – क्यों बहिन, आज ही तुमने भी देखा था कि इस कुएँ में पानी कितना ज्यादा था!

माधवी—बेशक मैंने देखा था कि बीस हाथ से ज्यादा दूरी पर पानी नहीं है, तो क्या इस समय पानी कम जान पड़ता है?

मायारानी—कम क्या मैं तो समझती हूँ कि इस समय इसमें कुछ भी पानी नहीं है और कुआँ सूखा पड़ा है।

माधवी—(ताज्जुब से) ऐसा नहीं हो सकता। एक पत्थर इसमें फेंक कर देखो।

मायारानी—आओ, तुम ही देखो।

माधवी ने अपने हाथ से ईंट का टुकड़ा कुएँ के अन्दर फेंका और उसकी आवाज पर गौर करके बोली—

माधवी—बेशक इसमें पानी कुछ भी नहीं है, केवल कीचड़ मात्र है। तो क्या तुम नहीं जानतीं कि इसके अन्दर पानी के निकास का कोई रास्ता तथा आदमियों के आने जाने के लिए कोई सुरंग या दरवाजा है या नहीं ?

मायारानी—मुझे एक दफे गोपालसिंह ने कहा था कि इस कुएँ के नीचे एक तहखाना है, जिसमें तरह-तरह के तिलिस्मी हर्बे और ऐयारों के काम की अपूर्व चीजें हैं।

माधवी—बेशक, यही बात ठीक होगी और उन्हीं चीजों में से कुछ लाने के लिए गोपालसिंह गये होंगे।

मायारानी—शायद ऐसा ही हो !

माधवी—तो बस इससे बढ़कर और कोई तरकीब नहीं हो सकती कि यह कुआँ पाट दिया जाये, जिसमें गोपालसिंह को फिर दुनिया का मुँह देखना नसीब न हो।

मायारानी—निःसन्देह यह बहुत अच्छी राय है, अतः जहाँ तक हो सके इसे कर ही देना चाहिए।

इस समय कुबेरसिंह की फौज टिड्डियों की तरह इस बाग में सब तरफ फैली हुई हुक्म का इन्तजार कर रही थी। माधवी ने अपनी राय भीमसेन और कुबेरसिंह से कही और उनकी आज्ञानुसार फौजी आदमियों ने जमीन खोद कर मिट्टी निकालने और कुआँ पाटने में हाथ लगा दिया।

पहर रात जाते तक कुआँ बखूबी पट गया और उस समय मायारानी के दिल में यह बात पैदा हुई कि अब मुझे गोपालसिंह का कुछ भी डर न रहा।

फौजी सिपाहियों को खुले मैदान या बाग में पड़े रहने की आज्ञा देकर भीमसेन, कुबेरसिंह और माधवी तथा ऐयारों को साथ लिए हुए मायारानी अपने उस खास कमरे की छत पर बेफिक्री और खुशी के साथ चली गई, जिसमें आज के कुछ दिन पहले मालिकाना ढंग से रहती थी।

10

रात अनुमान दो पहर के जा चुकी है। खास बाग के दूसरे दर्जे में दीवानखाने की छत पर कुबेरसिंह, भीमसेन और उसके चारों तरफ ऐयार तथा माधवी के पास बैठी हुई मायारानी बड़ी प्रसन्नता से बातें कर रही है। चाँदनी खूब छिटकी हुई है और बाग की हर एक चीज जहाँ तक निगाह बिना ठोकर खाये जा सकती है, साफ दिखाई दे रही है। बातचीत का विषय अब यह था कि "राजा गोपालसिंह से तो छुट्टी मिल गई, अब राज्य तथा राजकर्मचारियों के लिए क्या प्रबन्ध करना चाहिए ?"

जिस छत पर ये लोग बैठे हुऐ थे, उसके दाहिनी तरफ वाली पट्टी में भी एक सुन्दर इमारत और उसके पीछे ऊँची दीवार के बाद तिलिस्मी बाग का तीसरा दर्जा पड़ता था। इस समय मायारानी का मुँह ठीक उसी इमारत और दीवार की तरफ था, और उस तरफ की चाँदनी दरवाजों के अन्दर घुसकर बड़ी बहार दिखा रही थी। बात

करते-करते मायारानी चौंकी और उस तरफ हाथ का इशारा करके बोली—"हैं ! उस छत पर कौन जा पहुँचा है ?"

माधवी—हाँ, एक आदमी हाथ में नंगी तलवार लेकर टहल तो रहा है।

भीमसेन—चेहरे पर नकाब डाले हुए है।

कुबेरसिंह—हमारे फौजी सिपाहियों में से शायद कोई ऊपर चला गया होगा, मगर उन्हें बिना हुक्म ऐसा नहीं करना चाहिए !

मायारानी—नहीं-नहीं, उस मकान में सिवा मेरे और कोई नहीं जा सकता।

माधवी—तो फिर वहाँ गया कौन ?

मायारानी—यही तो ताज्जुब है ! देखिए, एक और भी आ पहुँचा, यह तीसरा आया, मामला क्या है ?

अजायबसिंह—कहीं राजा गोपालसिंह कुएँ में घुसकर वहाँ न जा पहुँचे हों ! मगर वे तो केवल दो ही आदमी थे !

मायारानी—और ये तीन हैं ! (कुछ रुककर) लीजिए, अब पाँच हो गये।

मायारानी और उसके संगी-साथियों के देखते-देखते उस छत पर पचीस आदमी हो गये। उन सभी के हाथों में नंगी तलवारें थीं। जिस छत पर वे सब थे, वहाँ पर से ऊपर मायारानी के पास तक आने में यद्यपि कई तरह की रुकावटें थीं, मगर ऐयारों के लिए यह कोई मुश्किल बात न थी इसीलिए मायारानी के पक्ष वालों को भय हुआ और उन्होंने चाहा कि अपने फौजी आदमियों में से कुछ को ऊपर बुला लें और ऐसा करने के लिए अजायबसिंह को कहा गया।

अजायबसिंह फौजी सिपाहियों को लाने के लिए चला गया, मगर मकान के नीचे न जा सका और तुरन्त लौट आकर बोला, "जाने का हर दरवाजा बन्द है, कोई तरकीब मायारानी करें तो शायद वहाँ तक पहुँचने की नौबत आवे ?"

अजायबसिंह की इस बात ने सभी को चौंका दिया और साथ ही इसके सभी को अपनी-अपनी जान की फिक्र पड़ गई। मायारानी के दिलाये हुए भरोसे से जो कुछ उम्मीद की जड़ इन लोगों के दिलों में जमी थी, वह हिल गई और अब अपने किए पर पछताने की नौबत आई, मगर मायारानी अब भी बात बनाने से न चूकी, यह कहती हुई अपनी जगह से उठी कि "कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह इस तिलिस्म को तोड़ रहे हैं, इस-लिए ताज्जुब नहीं कि ये सब बातें कुछ उन्हीं से सम्बन्ध रखती हों।"

मायारानी स्वयं नीचे उतरी थी, मगर जा न सकी और अजायबसिंह की तरह लाचार होकर बैरंग लौट आई। उस समय उसके दिल में भी तरह-तरह के खुटके पैदा हुए और वह ताज्जुब की निगाह से उन लोगों की तरफ देखने लगी, जो उसके मुकाबले में एकाएक आकर अब गिनती में पचीस हो गये थे।

थोड़ी देर बाद वे ऊपर से कूदते-फाँदते मायारानी की तरफ आते हुए दिखाई दिए। उस समय मायारानी और उसके संगी-साथी सभी उठ खड़े हुए और अपनी-अपनी जान बचाने की नीयत से तलवारें खींच मुस्तैद हो गये।

बात-की-बात में वे पचीसों आदमी उस छत पर चले आये, जिस पर मायारानी

थी, मगर मायारानी या उसके साथियों से किसी ने कुछ भी न कहा, बल्कि उनकी तरफ आँख उठाकर देखा भी नहीं और मस्तानी चाल से चलते हुए छत के नीचे उतर गए। इन लोगों ने भी यह सोचकर कि वे लोग गिनती में हमसे ज्यादा हैं, रोक-टोक नहीं की, मगर इस बात का खयाल जरूर रहा कि नीचे जाने के रास्ते तो सब बन्द हैं, खुद माया-रानी भी न जा सकी और लौट आई, इनसभी को भी निःसन्देह लौट आना पड़ेगा, मगर थोड़ी देर में यह गुमान जाता रहा जब कि पचीसों नीचे उतर कर बाग के बीच में चलते हुए दिखाई दिए।

माधवी ने समझा कि हमारे फौजी सिपाही उन लोगों को जरूर टोकेंगे और वास्तव में बात ऐसी ही थी। उन पचीसों को बाग में देख फौजी सिपाहियों में खलबली मच गई और बहुतों ने उठकर उन लोगों को रोकना चाहा, मगर वे लोग देखते-ही-देखते पेड़ों की झुरमुट में घुसकर ऐसा गायब हुए कि किसी का पता भी न लगा और सब लोग आश्चर्य से देखते रह गए। उस समय माधवी ने मायारानी से कहा, "बहिन, यहाँ तो मामला बेढब नजर आता है!"

मायारानी—कुछ समझ में नहीं आता कि ये लोग कौन थे, यहाँ क्यों आये और हम लोगों को बिना रोके-टोके इस तरह क्यों और कहाँ गायब हो गये!

माधवी—यह तो ठीक ही है मगर मैं पूछती हूँ कि आप तिलिस्म की रानी कह-लाकर भी इस बाग का हाल क्या जानती हैं? मैं तो समझती हूँ कि कुछ भी नहीं जानतीं। खास अपने कमरे का मामूली दरवाजा भी आपसे नहीं खुलता और हम लोगों की जान मुफ्त में जाना चाहती है!

भीमसेन—अब आपकी कोई कार्रवाई हम लोगों को भरोसा नहीं दिला सकती।

मायारानी—इस समय मैं मजबूर हो रही हूँ इसलिए टेढ़ी-सीधी जो जी में आवे सुनाओ, लेकिन अगर इस मकान के नीचे उतरने की नौबत आयेगी, तो दिखा दूंगी कि मैं क्या कर सकती हूँ।

कुबेरसिंह—नीचे जाने की नौबत ही क्यों आवेगी! गैर लोग आवें, और चले जायें, मगर यहाँ की रानी होकर तुम कुछ न कर सको, यह बड़े शर्म की बात है।

मायारानी इसका जवाब कुछ देना ही चाहती थी कि सीढ़ी की तरफ से आवाज आई, "तुम लोगों के कलपने पर मुझे दया आती है, अच्छा आओ हम दरवाजा खोल देते हैं, तुम लोग नीचे उतरआओ और अपनी जानबचाओ!" इसके बाद सीढ़ी वाले दरवाजे के खुलने की आवाज आई।

सभी को ताज्जुब हुआ और सीढ़ी की तरफ जाते डर मालूम हुआ, मगर यह सोचकर कि यहाँ पड़े रहने से भी जान बचने की आशा नहीं है, सभी ने जी कड़ा करके नीचे उतरने का इरादा किया।

वास्तव में दरवाजे जो बन्द हो गये थे खुले हुए दिखाई दिये और सबकोई जल्दी के साथ नीचे उतर गये, उस समय मायारानी ने एक लम्बी साँस लेकर कहा, "अब कोई चिन्ता नहीं।"

बाक़रअली—मगर यह न मालूम हुआ कि दरवाजा खोलने वाला कौन था?

यारअली—अब उसने हम लोगों के साथ यह नेकी का बर्ताव क्यों किया ?

इतने ही में ऊपर से आवाज आई, "दरवाजा खोलने वाला मैं हूँ।"

सभी ने घबराकर ऊपर की तरफ देखा। एक आदमी मुँह पर नकाब डाले बरामदे से झाँकता हुआ दिखाई दिया। कुबेरसिंह ने उससे पूछा, "तुम कौन हो ?"

नकाबपोश—मैं इस तिलिस्म का दारोगा हूँ।

मायारानी—इस तिलिस्म का दारोगा तो राजा वीरेन्द्रसिंह के कब्जे में है।

नकाबपोश—वह तुम्हारा दारोगा था और मैं राजा गोपालसिंह का दारोगा हूँ, आज कल यह बाग मेरे ही कब्जे में है।

मायारानी—जिस समय हम लोग यहाँ आये, तुम कहाँ थे ?

नकाबपोश—इसी बाग में।

मायारानी—फिर हम लोगों को रोका क्यों नहीं ?

नकाबपोश—रोकने की जरूरत ही क्या थी ? मैं जानता ही था कि तुम लोग अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मार रहे हो। तुम लोगों की बेबकूफी पर मुझे हँसी आती है।

मायारानी—बेबकूफी काहे की ?

नकाबसिंह—एक तो यही कि तुम लोगों ने इतनी फौज को बाग के अन्दर घुसेड़ तो लिया, मगर यह न सोचा कि इतने आदमी यहाँ आकर खायेंगे क्या ? अगर घास और पेड़-पत्तों को भी खाकर गुजारा किया, चाहें तो भी दो-एक दिन से ज्यादा का काम नहीं चल सकता। क्या तुम लोगों ने समझा था कि बाग में पहुँचते ही राजा गोपालसिंह को मार लेंगे ?

मायारानी—गोपालसिंह को तो हम लोगों ने मार ही लिया, इसमें शक ही क्या है ? बाकी रही हमारी फौज, सो एक दिन का खाना अपने साथ रखती है, कल तो हम लोग इस बाग के बाहर हो ही जायेंगे।

नकाबपोश—दोनों बातें शेखचिल्ली की-सी हैं। न तो राजा गोपालसिंह का तुम लोग कुछ बिगाड़ सकते हो और न इस बाग के बाहर की हवा ही खा सकते हो।

मायारानी—तो क्या गोपालसिंह किसी दूसरी राह से निकल जायेंगे ?

नकाबपोश—बेशक।

मायारानी—और हम लोग बाहर न जा सकेंगे ?

नकाबपोश—कदापि नहीं, क्योंकि मैंने सब दरवाजे अच्छी तरह बन्द कर दिए हैं। तुम तो तिलिस्म की रानी बनने का दावा व्यर्थ ही कर रही हो ! तुम्हें तो यहाँ का हाल रुपये में एक पैसा भी नहीं मालूम है। अभी मैंने तुम लोगों के उतरने की राह रोक दी थी, सो तुम्हारे किये कुछ भी न बन पड़ा ! जब तुम लोग छत पर थे, पचीस आदमी तुम्हारे सामने से होकर नीचे चले आये, अगर तुम्हें तिलिस्म की रानी होने का दावा था तो उन्हें रोक लेतीं ! मगर राजा साहब के हौसले को देखो कि तुम लोगों के यहाँ आने की खबर पाकर भी अकेले सिर्फ भैरोंसिंह को साथ लेकर इस बाग में चले आए ?

मायारानी—उन्हें हमारे आने की खबर कैसे मिली ?

नकाबपोश—(जोर से हँसकर) इसके जवाब में तो इतना ही कहना काफी है कि

तुम्हारी लीला इस बाग में आने के पहले ही गिरफ्तार कर ली गई।

माधवी—तो क्या हम लोग किसी तरह अब इस बाग के बाहर नहीं जा सकते ?

नकाबपोश—जीते जी तो नहीं जा सकते, मगर जब तुम लोग मर जाओगे, तब सभी की लाशें जरूर फेंक दी जायेंगी !

जिस मकान में मायारानी उतरी थी, उसी के बरामदे में वह नकाबपोश टहल रहा था। बरामदे के आगे किसी तरह की आड़ या रुकावट न थी। मायारानी उससे बातें करती जाती और छिपे ढंग से अपने तिलिस्मी तमंचे को भी दुरुस्त करती जाती थी तथा रात होने के सबब यह बात उस नकाबपोश को मालूम न हुई। जब वह माधवी से बातें करने लगा, उस समय मौका पाकर मायारानी ने तिलिस्मी तमंचा उस पर चलाया। गोली उसकी छाती में लगकर फट गई और बेहोशी का धुआँ बहुत जल्द उसके दिमाग में चढ़ गया, साथ ही वह आदमी बेहोश होकर जमीन पर लुढ़कता हुआ माया-रानी के आगे आ पड़ा। भीमसेन ने झपट कर उसकी नकाब हटा दी और चौंककर बोल उठा, "वाह-वाह ! यह तो राजा गोपालसिंह हैं।"

11

कुँअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह और सरयू को बड़ा तब ही ताज्जुब हुआ जब उन्होंने एक-एक करके सात आदमियों को तिलिस्मी बाग में पहुँचाये जाते देखा। जब उस मकान की खिड़की बन्द हो गई और चारों तरफ सन्नाटा छा गया तब इन्द्रजीत-सिंह ने कहा, "उस तरफ चल कर देखना चाहिए कि ये लोग कौन हैं।"

आनन्दसिंह—जरूर चलना चाहिए।

सरयू—कहीं हम लोगों के दुश्मन न हों।

आनन्दसिंह—अगर दुश्मन भी होंगे तो हमें कुछ परवाह न करनी चाहिए, हम लोग हजारों में लड़ने वाले हैं।

इन्द्रजीत—अगर हम दस-बीस आदमियों से डरकर चलेंगे तो कुछ भी न कर सकेंगे।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह ने उस तरफ कदम बढ़ाया। आनन्दसिंह उनके पीछे-पीछे रवाना हुए, मगर सरयू को साथ आने की आज्ञा नहीं दी और वह उसी जगह रह गई।

पास पहुँचकर कुमारों ने देखा कि सात आदमी जमीन पर बेहोश पड़े हैं। सभी के बदन पर स्याह लबादा और चेहरों पर स्याह नकाब था। थोड़ी देर तक दोनों ताज्जुब की निगाह से उन सभी की ओर देखते रहे और इसके बाद एक के चेहरे पर से नकाब हटाने का इरादा किया, मगर उसी समय ऊपर से पुनः दरवाजा या खिड़की खुलने की आवाज आई।

आनन्दसिंह—मालूम होता है कि और भी दो-चार आदमी यहाँ उतारे जायँगे ।

इन्द्रजीतसिंह—शायद ऐसा ही हो, यहाँ से हटकर और आड़ में होकर देखना चाहिए ।

आनन्दसिंह—(सोतों बेहोशों की तरफ इशारा करके) यदि इन लोगों को इनके किसी दुश्मन ने यहाँ पहुँचाया हो और अबकी दफे कोई आकर इनकी जान…

इन्द्रजीतसिंह—नहीं-नहीं, अगर ये सब लोग मारे जाने लायक होते और जिन लोगों ने इन्हें नीचे उतारा है वे इनके जानी दुश्मन होते, तो धीरे से उतारने के बदले ऊपर से धक्का देकर नीचे गिरा देते । खैर ज्यादा बातचीत का मौका नहीं है, इस पेड़ की आड़ में हो जाओ, फिर देखो हम सब पता लगा लेते हैं । बस, हटो जल्दी करो ।

बेचारे आनन्दसिंह कुछ जवाब न दे सके और वहाँ से थोड़ी दूर हटकर एक पेड़ की आड़ में हो गए । इस समय चन्द्रदेव अपनी छावनी की तरफ जा रहे थे और पेड़ों की आड़ पड़ जाने के कारण उस जगह कुछ अन्धकार-सा छा गया था, जहाँ वे सातों बेहोश पड़े हुए थे और इन्द्रजीत खड़े थे ।

इन्द्रजीतसिंह हाथ में तिलिस्मी खंजर लेकर फुर्ती से इन सातों के बीच में छिपकर लेट रहे, दोनों तरफ से दो आदमियों के लबादे को भी अपने बदन पर ले लिया और पड़े-पड़े ऊपर की तरफ देखने लगे । एक आदमी कमन्द के सहारे नीचे उतरता हुआ दिखाई दिया । जब वह जमीन पर उतरकर उन सातों आदमियों की तरफ आया तो इन्द्रजीतसिंह ने फुर्ती से हाथ बढ़ाकर तिलिस्मी खंजर उसके पैर से लगा दिया, साथ ही वह आदमी काँपा और बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा । इन्द्रजीतसिंह पुनः उसी तरह लेट ऊपर की तरफ देखने लगे । थोड़ी देर बाद के और एक आदमी उसी कमन्द के सहारे नीचे उतरा जो घूम-घूम के गौर से उन सातों को देखने लगा । जब वह कुमार के पास आया, कुमार ने उसके पैर से भी तिलिस्मी खंजर लगा दिया और वह भी पहले की तरह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा । कुँअर इन्द्रजीत लेटे-लेटे और भी किसी के आने का इन्तजार करने लगे मगर कुछ देर हो जाने पर भी कोई तीसरा दिखाई न पड़ा । कुमार उठ खड़े हुए और आनन्दसिंह भी उनके पास चले आये ।

इन्द्रजीतसिंह—तुम इसी जगह मुस्तैद रहकर इन सभी की निगहबानी करो, हम इसी कमन्द के सहारे ऊपर जाकर देखते हैं कि वहाँ क्या है ।

आनन्दसिंह—आपका अकेले ऊपर जाना तो ठीक न होगा । कौन ठिकाना, वहाँ दुश्मनों की बारात लगी हो !

इन्द्रजीतसिंह—कोई हर्ज नहीं, जो कुछ होगा देखा जायगा मगर तुम यहाँ से मत हिलना ।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह उसी कमन्द के सहारे बहुत जल्द ऊपर चढ़ गये और खिड़की के अन्दर जाकर एक लम्बे-चौड़े कमरे में पहुँचे जहाँ यद्यपि बिल्कुल सन्नाटा था मगर एक चिराग जल रहा था । इस कमरे में दूसरी तरफ बाहर निकल जाने के लिए एक बड़ा-सा दरवाजा था, कुमार वहाँ चले गये और एक पैर दरवाजे के बाहर रख झाँकने लगे । एक दूसरा कमरा नजर पड़ा जिसमें चारों तरफ छोटे-छोटे कई दरवाजे

थे मगर सब बन्द थे और सामने की तरफ एक बड़ा-सा खुला हुआ दरवाजा था। कुंमार उस खुले हुए दरवाजे में चले गये और झाँककर देखने लगे। एक छोटा-सा नजर बाग दिखाई दिया जिसके चारों तरफ ऊँची-ऊँची इमारतें और बीच में एक छोटी-सी बावली थी। बाग में दो बीघे से ज्यादा जमीन न थी और फूल-पत्तों के पेड़ भी कम थे। बावली के पूरब तरफ एक आदमी हाथ में मशाल लिए खड़ा था और उस मशाल में से बिजली की तरह बहुत ही तेज रोशनी निकल रही थी। वह रोशनी एकदम स्थिर थी अर्थात् हवा लगने से हिलती न थी और उस एक ही रोशनी से तमाम बाग में ऐसा उजाला हो रहा था कि वहाँ का एक-एक पत्ता साफ-साफ दिखाई दे रहा था। कुँअर इन्द्रजीत-ने बड़े गौर से उस आदमी को देखा जिसके हाथ में मशाल थी और उनको निश्चय हो गया कि यह आदमी असली नहीं है बनावटी है। अस्तु ताज्जुब से कुछ देर तक वे उसकी तरफ देखते रहे, इसी बीच में बाग के उत्तर वाले दालान में से एक आदमी निकलकर बावली की तरफ आता हुआ दिखाई पड़ा और कुमार ने उसे देखते ही पहचान लिया कि यह राजा गोपालसिंह हैं। कुमार ने उन्हें पुकारने का इरादा किया ही था कि उसी दालान में से और चार आदमी आते हुए दिखाई दिए और इनकी सूरत-शक्ल भी पहले आदमी के समान ही थी अर्थात् ये चारों भी राजा गोपालसिंह ही मालूम पड़ते थे जिससे कुँअर इन्द्रजीतसिंह को बहुत आश्चर्य हुआ और वे बड़े गौर से इनकी तरफ देखने लगे।

वे चारों आदमी जो पीछे आये थे खाली हाथ न थे बल्कि दो आदमियों की लाशें उठाए हुए थे। धीरे-धीरे चलकर वे चारों आदमी उस बनावटी मूरत के पास पहुँचे जिसके हाथ में मशाल थी, वे दोनों लाशें उसी के पास जमीन पर रख दीं और तब पाँचों गोपालसिंह मिलकर बड़े धीरे-धीरे कुछ बातें करने लगे जिसे कुँअर इन्द्रजीतसिंह किसी तरह सुन नहीं सकते थे।

पहले आदमी को देखकर और गोपालसिंह समझकर कुमार ने आवाज देना चाहा था मगर जब और भी चार गोपालसिंह निकल आए तब उन्हें ताज्जुब मालूम हुआ और यह समझकर कि कदाचित इन पाँचों में से एक भी गोपालसिंह न हो, वे चुप रह गये। उन पाँचों गोपालसिंह की पोशाकें एक ही रंग-ढंग की थीं, बल्कि उन दोनों लाशों की पोशाक भी ठीक उन्हीं की तरह थी। यद्यपि उन लाशों का सिर कटा हुआ और वहाँ मौजूद न था मगर उन पाँचों गोपालसिंह की तरफ खयाल करके देखने वाला उन लाशों को भी गोपालसिंह बता सकता था।

कुमार को चाहे इस बात का खयाल हो गया हो कि इन सभी में से कोई भी असली गोपालसिंह न होंगे मगर फिर भी वे उन सभी को बड़े ताज्जुब और गौर की निगाह से देखते हुए सोच रहे थे कि कि इतने गोपालसिंह बनने की क्या जरूरत पड़ी और उन दोनों लाशों के साथ ऐसा बर्ताव क्यों किया गया या किसने किया!

जिस दरवाजे में कुँअर इन्द्रजीतसिंह खड़े थे उसी के आगे बाईं तरफ घूमती हुई छोटी सीढ़ियाँ नीचे उतर जाने के लिए थीं। कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने कुछ सोच-विचार कर चाहा कि इन सीढ़ियों की राह नीचे उतरकर पाँचों गोपालसिंह के पास जायँ और उन्हें जबर्दस्ती रोककर असल बात का पता लगावें मगर इसके पहले किसी के आने की

आहट मालूम हुई और पीछे घूमकर देखने से कुँअर आनन्दसिंह पर निगाह पड़ी ।

इन्द्रजीतसिंह—तुम क्यों चले आये ?

आनन्दसिंह—आपको मैंने कई दफे नीचे से पुकारा, मगर आपने कुछ जवाब न दिया तो लाचार यहाँ आना पड़ा।

इन्द्रजीत—क्यों ?

आनन्दसिंह—राजा गोपालसिंह की आज्ञा से ।

इन्द्रजीतसिंह—राजा गोपालसिंह कहाँ हैं ?

आनन्दसिंह—उन दोनों आदमियों में से जो नीचे उतरे थे और जिन्हें आपने बेहोश कर दिया था, एक राजा गोपालसिंह थे । जब आप ऊपर चढ़ आए तब मैंने एक का नकाब हटाया और तिलिस्मी खंजर की रोशनी में चेहरा देखा तो मालूम हुआ कि गोपालसिंह हैं। उस समय मुझे इस बात का अफसोस हुआ कि बेहोश करने के बाद आपने उनकी सूरत नहीं देखी, अगर देखते तो उन्हें छोड़कर यहाँ न आते । खैर जब मैंने उन्हें पहचाना तो होश में लाने के लिए उद्योग करना उचित जाना अस्तु तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अँगूठी उनके बदन में लगाई जिसके थोड़ी ही देर बाद वह होश में आये और उठ बैठे । होश में आने के बाद पहले-पहले जो कुछ उनके मुँह से निकला, वह यह था कि "कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने धोखा खाया, मुझे बेहोश करने की क्या जरूरत थी ? मैं तो खुद उनसे मिलने के लिए यहाँ आया था !" इतना कहकर उन्होंने मेरी तरफ देखा यद्यपि उस समय चाँदनी वहाँ से हट गई थी मगर उन्होंने मुझे बहुत जल्द पहचान लिया और पूछा कि 'तुम्हारे बड़े भाई कहाँ हैं ?' मैंने उनसे कुछ छिपाना उचित न जाना और कह दिया कि 'इसी कमन्द के सहारे ऊपर चले गए हैं।' सुन कर वे बहुत रंज हुए और क्रोध से बोले कि 'सब काम लड़कपन और नादानी का किया करते हैं । उन्हें बहुत जल्द ऊपर से बुला लो ।' मैंने आपको कई दफे पुकारा मगर आप न बोले तब उन्होंने घुड़क के कहा कि 'क्यों व्यर्थ देर कर रहो हो, तुम खुद ऊपर जाओ और जल्द बुला लाओ ।' मैंने कहा कि मुझे यहाँ से हटने की आज्ञा नहीं है आप खुद जाइये और बुला लाइये, मगर इतना सुनकर वे और भी रंज हुए और बोले, "अगर मुझमें ऊपर जाने की ताकत होती तो मैं तुम्हें इतना कहता ही नहीं ! बेहोशी के कारण मेरी रग-रग कमजोर हो रही है, तुम अगर उनको बुला लाने में विलम्ब करोगे तो पछताओगे, बस अब मैं इससे ज्यादा और कुछ न कहूँगा, जो ईश्वर की मर्जी होगी और जो कुछ तुम लोगों के भाग्य में लिखा होगा सो होगा ।" उनकी बातें ऐसी न थीं कि मैं सुनता और चुपचाप खड़ा रह जाता, आखिर लाचार होकर आपको बुलाने के लिए आना पड़ा । अब आप जल्द चलिए देर न कीजिए ।

आनन्दसिंह की बातें सुनकर इन्द्रजीतसिंह को बहुत रंज हुआ और उन्होंने क्रोध भरी आवाज में कहा—

इन्द्रजीतसिंह—आखिर तुमसे नादानी हो ही गई ?

आनन्दसिंह—(आश्चर्य से) सो क्या ?

इन्द्रजीतसिंह—तुमने उस दूसरे के चेहरे पर की भी नकाब हटाकर देखा कि

वह कौन था ?

आनन्दसिंह—जी नहीं ।

इन्द्रजीतसिंह—तब तुम्हें कैसे विश्वास हुआ कि यह राजा गोपालसिंह ही हैं ? जब चेहरे पर से नकाब हटाकर देखा ही था तो पानी से मुँह धोकर भी देख लेना था ? क्या तुम भूल गये कि राजा गोपालसिंह के पास भी इसी तरह का तिलिस्मी खंजर मौजूद है अतः उनके ऊपर इस खंजर का असर क्यों होने लगी थी ?

आनन्दसिंह—(सिर नीचा करके) बेशक मुझसे भूल हुई !

इन्द्रजीतसिंह—भारी भूल हुई ! (छोटे बाग की तरफ बताकर) देखो, यहाँ पाँच राजा गोपालसिंह हैं ! क्या तुम कह सकते हो कि ये पाँचों राजा गोपालसिंह हैं ?

आनन्दसिंह ने उस छोटे बगीचे की तरफ झाँककर देखा और कहा, "बेशक मामला गड़बड़ है !"

इन्द्रजीतसिंह—खैर, अब तो हमें लौटना ही पड़ेगा, हम चाहते थे इन सभी का कुछ भेद मालूम करें, मगर खैर।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह लौट पड़े और उस कमरे को लाँघकर दूसरे कमरे में पहुँचे जिसमें वे सातों खिड़कियाँ थीं । यकायक इन्द्रजीतसिंह की निगाह एक लिफाफे पर पड़ी जिसे उन्होंने उठा लिया और चिराग के पास ले जाकर पढ़ा । लिफाफा बन्द था और उस पर यह लिखा हुआ था—"इन्द्रजीतसिंह आनन्दसिंह जोग लिखी गोपालसिंह ।"

कुमार ने लिफाफा फाड़कर चिट्ठी निकाली और देखते ही कहा, "इस चिट्ठी पर किसी तरह का शक नहीं हो सकता, बेशक यह भाई साहब के हाथ की लिखी है और मामूली निशान भी है ।" इसके बाद वे चिट्ठी पढ़ने लगे ।

आनन्दसिंह ने देखा कि चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते इन्द्रजीतसिंह के चेहरे का रंग कई दफे बदला और जैसे-जैसे पढ़ते जाते थे रंज की निशानी बढ़ती जाती थी । वे जब कुल चिट्ठी पढ़ चुके तो एक लम्बी साँस लेकर बोले, "अफसोस, बहुत बड़ी भूल हुई ।" और वह चिट्ठी पढ़ने के लिए आनन्दसिंह के हाथ में दे दी ।

आनन्दसिंह ने चिट्ठी पढ़ी, यह लिखा हुआ था—

"किशोरी, कामिनी, लक्ष्मीदेवी, कमला, लाड़िली और इन्दिरा को आपके पास तिलिस्म में भेजते हैं । देखिये इन्हें सम्हालिए और एक क्षण के लिए भी इनसे अलग न होइए । मुन्दर हमारे तिलिस्मी बाग में घुसी हुई है, हम आठ आना उसके कब्जे में आ गये हैं । लीला ने धोखा देकर हमारे कुछ भेद मालूम कर लिए जिसका सबब और पूरा-पूरा हाल लक्ष्मीदेवी या कमलिनी की जुबानी आपको मालूम होगा जिन्हें हमने सब-कुछ बता और समझा दिया है । कई बातों के खयाल से सभी को बेहोश करके कमन्द द्वारा आपके पास पहुँचाते हैं, खबरदार, एक क्षण के लिए भी इन लोगों से अलग न हों और किसी बनावटी गोपालसिंह का विश्वास न करें । आज कम-से-कम बीस पच्चीस आदमी गोपालसिंह बने हुए कार्रवाई कर रहे हैं । हम जरा तरद्दुद में पड़े हुए हैं मगर

कोई चिन्ता नहीं, भैरोंसिंह हमारे साथ हैं। आप बाग के इस दर्जे को तोड़कर दूसरी जगह पहुँचिए और यह काम रात-भर के अन्दर होना चाहिए।

—'शिवरामे गोपाल मेरावशि शुलेख।"

चिट्ठी पढ़कर आनन्दसिंह को भी बड़ा अफसोस हुआ और अपने किए पर पछताने लगे। सच तो यों है कि दोनों ही भाइयों को इस बात का अफसोस हुआ कि किशोरी, कामिनी इत्यादि को अपने पास आ जाने पर भी देखे और होश में लाये बिना छोड़कर इधर चले आये और व्यर्थ की झंझट में पड़े, क्योंकि दोनों कुमार किशोरी और कामिनी की मुलाकात से बढ़कर दुनिया में किसी चीज को पसन्द नहीं करते थे।

दोनों कुमार जल्दी-जल्दी उस कमरे के बाहर हुए और उस खिड़की में पहुँचे जिसमें कमन्द लगा हुआ छोड़ आये थे मगर आश्चर्य और अफसोस की बात थी कि अब उन्होंने उस कमन्द को खिड़की में लगा हुआ न पाया जिसके सहारे वे नीचे उतर जाते, शायद किसी नीचे वाले ने उस कमन्द को हटा लिया था।

12

राजा गोपालसिंह ने जब रामदीन को चिट्ठी और अँगूठी देकर जमानिया भेजा था तो यद्यपि चिट्ठी में लिख दिया था कि परसों रविवार को शाम तक हम लोग वहाँ (पिपलिया घाटी) पहुँच जाएँगे, मगर रामदीन को समझा दिया था कि रविवार को पिपलिया घाटी पहुँचना हमने यों ही लिख दिया है, वास्तव में हम वहाँ सोमवार को पहुँचेंगे अस्तु तुम भी सोमवार को पिपलिया घाटी पहुँचना, जिसमें ज्यादा देर तक हमारे आदमियों को वहाँ ठहर कर तकलीफ न उठानी पड़े, और दो सौ सवारों की जगह केवल बीस सवार लाना। यह बात असली रामदीन को तो मालूम थी और वह मारा न जाता तो बेशक रथ और सवारों को लेकर राजा साहब की आज्ञानुसार सोमवार को ही पिपलिया घाटी पहुँचता, मगर नकली रामदीन अर्थात् लीला तो उन्हीं बातों को जान सकती थी जो चिट्ठी में लिखी हुई थीं। अस्तु वह रविवार ही को रथ और दो सौ फौज लेकर पिपलिया घाटी जा पहुँची और जब सोमवार को राजा साहब वहाँ पहुँचे, तो बोली, "आश्चर्य है कि आपके आने में पूरे आठ पहर की देर हुई!"

यह सुनते ही राजा साहब समझ गये कि यह असली रामदीन नहीं है, उसी समय से उन्होंने अपनी कार्रवाई का ढंग बदल दिया और लीला तथा मायारानी का सब बन्दोबस्त मिट्टी में मिल गया। वे उसी समय दो-चार बातें करके पीछे लौट गए और दूसरे दिन औरतों को अपने साथ न लाकर केवल भैरोंसिंह और इन्द्रदेव को साथ लिए हुए पिपलिया घाटी में आए।

इस जगह यह भी लिख देना उचित जान पड़ता है कि दूसरे दिन पिपलिया घाटी में पहुँच कर लीला के लाए हुए सवारों के साथ रथ पर चढ़ कर जमानिया पहुँचने वाले

गोपालसिंह असली न थे बल्कि नकली थे और भैरोंसिंह ने लीला के साथ जो सलूक किया वह असली राजा गोपालसिंह के इशारे से था। अब हमारे पाठक यह जानना चाहते होंगे कि यदि वह राजा गोपालसिंह नकली थे तो असली गोपालसिंह कहाँ गये, या वह किस सूरत में गये ? तो इसके जवाब में केवल इतना ही कह देना काफी होगा कि असली गोपालसिंह नकली गोपालसिंह के साथ इन्द्रदेव की सूरत बना कर रथ पर सवार हुए थे और जमानिया पहुँचने के पहले ही नकली गोपालसिंह को समझा-बुझा कर रथ से उतर किसी तरफ चले गये थे। यह सब हाल यद्यपि बयानों से पाठकों को मालूम हो गया होगा, परन्तु शक मिटाने के लिए यहाँ पुनः लिख दिया गया।

राजा गोपालसिंह के होशियार हो जाने के कारण मायारानी ने तिलिस्मी बाग में तरह-तरह के तमाशे देखे जिसका कुछ हाल तो लिखा जा चुका है और बाकी आगे चल कर लिखा जायगा क्योंकि इस समय हम इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का हाल लिखना उचित समझते हैं।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने जब खिड़की में कमन्द लगा हुआ न पाया तो उन्हें ताज्जुब और रंज हुआ। थोड़ी देर तक खड़े उसी बाग की तरफ देखते रहे और तब आनन्दसिंह से बोले, "क्या हम लोगों यहाँ से कूद नहीं सकते ?"

आनन्दसिंह—क्यों नहीं कूद सकते ! अगर इस बात का खयाल हो कि नीचा बहुत है तो कमरबन्द खोल कर इस दरवाजे के सींकचे में बाँध और उसके सहारे कुछ नीचे लटक कर कूदने में मालूम भी न पड़ेगा।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, तुमने यह बहुत ठीक कहा। कमरबन्दों के सहारे हम लोग आधी दूर तक तो जरूर ही लटक सकते हैं, मगर खराबी यह है कि दोनों कमरबन्दों से हाथ धोना पड़ेगा और इस तिलिस्म में नहाने-धोने की सुविधा इन्हीं की बदौलत है। खैर कोई चिन्ता नहीं लँगोटे से भी काम चल सकता है, अच्छा लाओ कमरबन्द खोलो।

दोनों भाइयों ने कमरबन्द खोलने के बाद दोनों को एक साथ जोड़ा और उसका एक सिरा दरवाजे से लगे हुए सींकचे के साथ बाँध कर दोनों भाई बारी-बारी से नीचे लटक गये।

कमरबन्द ने आधी दूर तक दोनों भाइयों को पहुँचा दिया। इसके बाद दोनों भाइयों को कूद जाना पड़ा। कूदने के साथ ही नीचे एक झाड़ी के अन्दर से आवाज आई, "शाबाश ! इतनी ऊँचाई से कूद पड़ना आप ही लोगों का काम है ! मगर अब किशोरी, कामिनी इत्यादि से मुलाकात नहीं हो सकती।"

जितने आदमी कमन्द के सहारे इस बाग में लटकाये गए थे और जिन सभी को यहाँ छोड़ आनन्दसिंह अपने भाई को बुलाने के लिए ऊपर गये थे, उन सभी को मौजूद न पाकर और इस शाबाशी देने वाली आवाज को सुन कर दोनों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। दोनों भाई चारों तरफ घूम-घूम कर देखने लगे। मगर किसी की सूरत नजर न पड़ी, हाँ, एक पेड़ के नीचे सरयू को बेहोश पड़ी हुई जरूर देखा जिससे उन दोनों का ताज्जुब और भी ज्यादा हो गया।

इन्द्रजीतसिंह—(आनन्दसिंह से) यह सब खराबी तुम्हारी जरा-सी भूल के सबब

से हुई !

आनन्दसिंह—निःसन्देह ऐसा ही है।

इन्द्रजीतसिंह—पहले सरयू को होश में की लाने फिक्र करो, शायद हमें इसकी जुबानी कुछ मालूम हो।

आनन्दसिंह—जो आज्ञा।

इतना कहकर आनन्दसिंह सरयू को होश में लाने का उद्योग करने लगे। थोड़ी देर में सरयू की बेहोशी जाती रही और इतने ही में सुबह की सफेदी ने भी अपनी सूरत दिखाई।

इन्द्रजीतसिंह—(सरयू से) तुम्हें किसने बेहोश किया ?

सरयू—एक नकाबपोश ने आकर एक चादर जबर्दस्ती मेरे ऊपर डाल दी जिससे मैं बेहोश हो गई। मैं दूर से सब तमाशा देख रही थी। जब आप कमन्द के सहारे ऊपर चढ़ गये और उसके कुछ देर बाद छोटे कुमार भी आपको कई दफे पुकारने के बाद उसी कमन्द के सहारे ऊपर चढ़ गये, तब उन्हीं में से एक नकाबपोश ने उन सभी को सचेत किया जो (हाथ का इशारा करके) उस जगह बेहोश पड़े हुए थे या जो ऊपर से लटकाए गए थे। इसके बाद सब कोई मिल कर उस (हाथ से बता कर) दीवार की तरफ गए और कुछ देर तक आपस में बातें करते रहे। इसी बीच में छिपकर उनकी बातें सुनने की नीयत से मैं भी धीरे-धीरे अपने को छिपाती हुई उस तरफ बढ़ी मगर अफसोस वहाँ तक पहुँचने भी न पाई थी कि एक नकाबपोश मेरे सामने आ पहुँचा और उसने उसी ढंग से मुझे बेहोश कर दिया जैसा कि मैं अभी कह चुकी हूँ। शायद उसी बेहोशी की अवस्था में मैं इस जगह पहुँचाई गई।

सरयू की बातें सुन कर दोनों कुमार कुछ देर तक सोचते रहे। इसके बाद सरयू को साथ लिए उसी दीवार की तरफ गये जिधर उन लोगों का जाना सरयू ने बताया था जो कमन्द के सहारे इस बाग में उतरे या उतारे गये थे। जब वहाँ पहुँचे तो देखा कि दीवार की लम्बाई के बीचोंबीच में एक दरवाजे का निशान बना हुआ है और उसके पास ही में नीचे की जमीन कुछ खुदी हुई है।

आनन्दसिंह—(इन्द्रजीतसिंह से) देखिए यहाँ की जमीन उन लोगों ने खोदी और तिलिस्म के अन्दर जाने का दरवाजा निकाला है, क्योंकि दीवार में अब वह गुण तो रहा नहीं जो उन लोगों को ऐसा करने से रोकता।

इन्द्रजीतसिंह—बेशक यह वही दरवाजा है जिस राह से हम लोग तिलिस्म के दूसरे दर्जे में जाने वाले थे ! मगर इससे तो यह जाना जाता है कि वे लोग तिलिस्म के अन्दर घुस गये ?

आनन्दसिंह—जरूर ऐसा ही है और यह काम सिवाय गोपाल भाई के दूसरा कोई नहीं कर सकता। अस्तु अब मैं जरूर यह कहने की हिम्मत करूँगा कि वह कोई दूसरा नहीं था, जिसके कहे मुताबिक मैं आपको बुलाने के लिए मकान के ऊपर चला गया था।

इन्द्रजीतसिंह—तुम्हारी बात मान लेने की इच्छा तो होती है। मगर क्या तुम

उस खास निशान को देख कर भी कह सकते हो कि वह चिट्ठी गोपाल भाई की नहीं थी जो मुझे उस मकान में कमरे के अन्दर मिली थी ?

आनन्दसिंह—जी नहीं, यह तो मैं कदापि नहीं कह सकता कि वह चिट्ठी किसी दूसरे की लिखी हुई थी, मगर यह खयाल भी मेरे दिल से दूर नहीं हो सकता कि उन्हीं (गोपालसिंह) की आज्ञा से आपको बुलाने गया था।

इन्द्रजीतसिंह—हो सकता है, तो क्या उन्होंने हम लोगों के साथ चालाकी की ?

आनन्दसिंह—जो हो।

इन्द्रजीतसिंह—यदि ऐसा ही है तो उनकी लिखावट पर भरोसा करके यही हम कैसे कह सकते हैं कि किशोरी, कामिनी इत्यादि इस बाग में पहुँच गई थीं।

आनन्दसिंह—क्या यह हो सकता है कि वह तिलिस्मी किताब जो गोपाल भाई के पास थी हमारे किसी दुश्मन के हाथ लग गई और वह उस किताब की मदद से अपने साथियों सहित यहाँ पहुँच कर हम लोगों को नुकसान पहुँचाने की नीयत से तिलिस्म के अन्दर चला गया है ?

इन्द्रजीतसिंह—यह तो हो सकता है कि उनकी किताब किसी दुश्मन ने चुरा ली हो, मगर यह नहीं हो सकता कि उसका मतलब भी हर कोई समझ ले। खुद मैं ही 'रिक्तगन्थ' का मतलब ठीक-ठीक नहीं समझ सकता था, आखिर जब उन्होंने बताया तब कहीं तिलिस्म के अन्दर जाने लायक हुआ। (कुछ रुककर) आज के मामले तो कुछ अजब बेढंगे दिखाई दे रहे हैं खैर कोई चिन्ता नहीं, आखिर हम लोगों को इस दरवाजे की राह तिलिस्म के अन्दर जाना ही है, चलो फिर जो कुछ होगा देखा जायगा !

आनन्दसिंह—यद्यपि सूर्योदय हो जाने के कारण प्रातः-कृत्य से छुट्टी पा लेना आवश्यक जान पड़ता है यह सोच कर कि क्या जाने कैसा मौका आ पड़े तथापि आज्ञा-नुसार तिलिस्म के अन्दर चलने के लिए मैं तैयार हूँ, चलिए।

आनन्दसिंह की बात सुन कर इन्द्रजीतसिंह कुछ गौर में पड़ गए और कुछ सोचने के बाद बोले, "कोई चिन्ता नहीं, जो कुछ होगा देखा जायगा।"

दीवार के नीचे जो जमीन खुदी हुई थी, उसकी लम्बाई-चौड़ाई चार-पाँच गज से ज्यादा न थी। मिट्टी हट जाने के कारण एक पत्थर की पटिया (ताज्जुब नहीं कि वह लोहे या पीतल की हो) दिखाई दे रही थी और उसे उठाने के लिए बीच में लोहे की कड़ी लगी हुई थी जिसका एक सिरा दीवार के साथ सटा हुआ था। इन्द्रजीतसिंह ने कड़ी में हाथ डाल कर जोर किया और उस पटिया (छोटी चट्टान) को उठा कर किनारे पर रख दिया। नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ दिखाई दीं और दोनों भाई सरयू को साथ लिए नीचे उतर गए।

लगभग बीस सीढ़ी के नीचे उतर जाने के बाद एक छोटी कोठरी मिली जिसकी जमीन किसी धातु की बनी हुई थी और खूब चमक रही थी। ऊपर दो-तीन सूराख (छेद) भी इस ढंग से बने हुए थे जिससे दिन-भर उस कोठरी में कुछ-कुछ रोशनी रह सकती थी। आनन्दसिंह ने चारों तरफ गौर से देखकर इन्द्रजीतसिंह से कहा, "भैया, रिक्त-गंथ में लिखा था कि यह कोठरी तुम्हें तिलिस्म के अन्दर पहुँचावेगी। मगर समझ में

नहीं आता कि यह कोठरी किस तरह से हम लोगों को तिलिस्म के अन्दर पहुँचावेगी क्योंकि इसमें न तो कहीं दरवाजा दिखाई देता है और न कोई ऐसा निशान ही मालूम पड़ता है जिसे हम लोग दरवाजा बनाने के काम में लावें।"

इन्द्रजीतसिंह—हम भी इसी सोच-विचार में पड़े हुए हैं, मगर कुछ समझ में नहीं आता है।

इसी बीच में दोनों कुमार और सरयू के पैरों में झुनझुनी और कमजोरी मालूम होने लगी और वह बात की बात में इतनी ज्यादा बढ़ी कि वे लोग वहाँ से हिलने लायक भी न रहे। देखते-देखते तमाम बदन में सनसनाहट और कमजोरी ऐसी बढ़ गई कि वे तीनों बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़े और फिर तन-बदन की सुध न रही।

घण्टे भर के बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह की बेहोशी जाती रही और वह उठ कर बैठ गए। मगर चारों तरफ घोर अंधकार छाया रहने के कारण यह नहीं जान सकते थे कि वे किस अवस्था में या कहाँ पड़े हुए हैं। सबसे पहले उन्हें तिलिस्मी खंजर की फिकर हुई, कमर में हाथ लगाने पर उसे मौजूद पाया। अस्तु उसे निकाल कर और उसका कब्जा दबा कर रोशनी पैदा की और ताज्जुब की निगाह से चारों तरफ देखने लगे।

जिस स्थान में इस समय कुमार थे, वह सुर्ख पत्थर से बना हुआ था और यहाँ की दीवारों पर पत्थरों पर गुलबूटों का काम बहुत खूबसूरती और कारीगरी का अनूठा नमूना दिखाने वाला बना हुआ था। चारों तरफ की दीवारों में चार दरवाजे थे, मगर उनमें किवाड़ के पल्ले लगे हुए न थे। पास ही कुँअर आनन्दसिंह भी पड़े हुए थे परन्तु सरयू का कहीं पता न था, जिससे कुमार को बहुत ही ताज्जुब हुआ। उसी समय आनन्दसिंह की बेहोशी भी जाती रही और वे उठ कर घबराहट के साथ चारों तरफ देखते हुए कुँअर इन्द्रजीतसिंह के पास आकर बोले—

आनन्दसिंह—हम लोग यहाँ क्योंकर आये?

इन्द्रजीतसिंह—मुझे मालूम नहीं, तुमसे थोड़ी ही देर पहले मैं होश में आया हूँ और ताज्जुब के साथ चारों तरफ देख रहा हूँ।

आनन्दसिंह—और सरयू कहाँ चली गई?

इन्द्रजीतसिंह—यह भी नहीं मालूम, तुम चारों तरफ की दीवारों में चार दरवाजे देख रहे हो। शायद वह हमसे पहले होश में आकर इन दरवाजों में से किसी एक के अन्दर चली गई हो।

आनन्दसिंह—शायद ऐसा ही हो, चल कर देखना चाहिए। रिक्तगंथ का कहा बहुत ठीक निकला, आखिर उसी कोठरी ने हम लोगों को यहाँ पहुँचा दिया। मगर किस ढंग से पहुँचाया सो मालूम नहीं होता! (छत की तरफ देख कर) शायद वह कोठरी इसके ऊपर हो और उसकी छत ने नीचे उतरकर हम लोगों को यहाँ लुढ़का दिया हो।

इन्द्रजीतसिंह—(कुछ मुस्करा कर) शायद ऐसा ही हो, मगर निश्चय नहीं कह सकते, हाँ, अब व्यर्थ न खड़े न रहकर हमें सरयू और नकाबपोशों का पता लगाना चाहिए।

इन्द्रजीतसिंह ने इतना कहा ही था कि दीवार वाले एक दरवाजे के अन्दर से आवाज आई, "बेशक, बेशक !"

13

"बेशक बेशक" की आवाज ने दोनों कुमारों को चौंका दिया। वह आवाज सरयू की न थी और न किसी ऐसे आदमी की थी जिसे कुमार पहचानते हों, यह सबब उनके चौंकने का और भी था। दोनों कुमारों को निश्चय हो गया कि यह आवाज उन्हीं नकाबपोशों में से किसी है जो तिलिस्म के अन्दर लटकाये गए थे और जिन्हें हम लोग खोज रहे हैं। ताज्जुब नहीं कि सरयू भी इन्हीं लोगों के सबब से गायब हो गई हो क्योंकि एक कमजोर औरत की बेहोशी हम लोगों की बनिस्बत जल्दी दूर नहीं हो सकती।

दोनों भाइयों के विचार एक से थे। अतएव दोनों ने एक दूसरे की तरफ देखा और इसके बाद इन्द्रजीतसिंह और उनके पीछे-पीछे आनन्दसिंह उस दरवाजे के अन्दर चले गये जिसमें किसी के बोलने की आवाज आई थी।

कुछ आगे जाने पर कुमार को मालूम हुआ कि रास्ता सुरंग के ढंग का बना हुआ है मगर बहुत छोटा और केवल एक ही आदमी के जाने लायक है अर्थात् इसकी चौड़ाई डेढ़ हाथ से ज्यादा नहीं है।

लगभग बीस हाथ जाने के बाद दूसरा दरवाजा मिला जिसे लाँघ कर दोनों भाई एक छोटे-से बाग में गये जिसमें सब्जी की बनिस्बत इमारत का हिस्सा बहुत ज्यादा था अर्थात् उसमें कई दालान; कोठरियाँ और कमरे थे जिन्हें देखते ही इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "इसके अन्दर थोड़े आदमियों का पता लगाना भी कठिन होगा।"

दोनों कुमार दो ही चार कदम आगे बढ़े थे कि पीछे से दरवाजे के बन्द होने की आवाज आई, घूमकर देखा तो उस दरवाजे को बन्द पाया जिसे लाँघ कर इस बाग में पहुँचे थे। दरवाजा लोहे का और एक ही पल्ले का था जिसने चूहेदानी की तरह ऊपर से गिर कर दरवाजे का मुँह बन्द कर दिया। उस दरवाजे के पल्ले पर मोटे-मोटे अक्षरों में यह लिखा हुआ था—

"तिलिस्म का यह हिस्सा टूटने लायक नहीं है, हाँ, तिलिस्म को तोड़ने वाला यहाँ तमाशा जरूर देख सकता है।"

इन्द्रजीतसिंह—यद्यपि तिलिस्मी तमाशे दिलचस्प होते हैं मगर हमारा यह समय बड़ा नाजुक है और तमाशा देखने योग्य नहीं, क्योंकि तरह-तरह के तरद्दुदों ने दुःखी कर रक्खा है। देखना चाहिए इस तमाशबीनी से छुट्टी कब मिलती है।

आनन्दसिंह—मेरा भी यही खयाल है बल्कि मुझे तो इस बात का अफसोस है कि इस बाग में क्यों आए, अगर किसी दूसरे दरवाजे के अन्दर गये होते तो अच्छा होता।

इन्द्रजीतसिंह—(कुछ आगे बढ़कर ताज्जुब से) देखो तो सही, उस पेड़ के नीचे

कौन बैठा है ! कुछ पहचान सकते हो ?

आनन्दसिंह—यद्यपि पोशाक में बहुत बड़ा फर्क है मगर सूरत भैरोंसिंह की सी मालूम पड़ती है !

इन्द्रजीतसिंह—मेरा भी यही खयाल है, आओ, उसके पास चलकर देखें।

आनन्दसिंह—चलिये।

इस बाग के बीचोंबीच में एक कदम का बहुत बड़ा पेड़ था जिसके नीचे एक आदमी गाल पर हाथ रक्खे बैठा हुआ कुछ सोच रहा था। उसी को देखकर दोनों कुमार चौंके थे और उस पर भैरोंसिंह के होने का शक हुआ था। जब दोनों भाई उसके पास पहुँचे तो शक जाता रहा और अच्छी तरह पहचान कर इन्द्रजीतसिंह ने पुकारा और कहा, "क्यों यार भैरोंसिंह, तुम यहाँ कैसे आ पहुँचे ?"

उस आदमी ने सिर उठाकर ताज्जुब से दोनों कुमारों की तरफ देखा और तब हलकी आवाज में जवाब दिया, "तुम दोनों कौन हो ? मैं तो सात वर्ष से यहाँ रहता हूँ मगर आज तक किसी ने भी मुझसे यह न पूछा कि तुम यहाँ कैसे आ पहुँचे ?"

आनन्दसिंह—कुछ पागल तो नहीं हो गये हो ?

इन्द्रजीतसिंह—क्योंकि तिलिस्म की हवा बड़े-बड़े चालाकों और ऐयारों को पागल बना देती है !

भैरोंसिंह—(शायद वह भैरोंसिंह ही हो) कदाचित् ऐसा ही हो मगर मुझे आज तक किसी ने यह भी नहीं कहा कि तू पागल हो गया है ! मेरी स्त्री भी यहाँ रहती है, वह भी मुझे बुद्धिमान ही समझती है।

आनन्दसिंह—(मुस्कुरा कर) स्त्री कहाँ है ? उसे मेरे सामने बुलाओ, मैं उससे पूछूंगा कि वह तुम्हें पागल समझती है या नहीं।

भैरोंसिंह—वाह-वाह, तुम्हारे कहने से मैं अपनी स्त्री को तुम्हारे सामने बुला लूं ! कहीं तुम उस पर आशिक हो जाओ या फिर वही तुम पर मोहित हो जाय तो फिर क्या होगा ?

इन्द्रजीतसिंह—(हँसकर) वह भले ही मुझ पर आशिक हो जाय मगर मैं वादा करता हूँ कि उस पर मोहित न होऊँगा।

भैरोंसिंह—सम्भव है कि मैं तुम्हारी बातों पर मैं विश्वास कर लूं मगर उसकी नौजवानी मुझे उस पर विश्वास नहीं करने देती। अच्छा ठहरो, मैं उसे बुलाता हूँ। अरी ए री मेरी नौजवान स्त्री भोली ई···ई···ई···!

एक तरफ से आवाज आई, "मैं आप ही चली आ रही हूँ, तुम क्यों चिल्ला रहे हो ? कम्बख्त को जब देखो 'भोली-भोली' करके चिल्लाया करता है !"

भैरोंसिंह—देखो कम्बख्त को ! साठ घड़ी में एक पल भी सीधी तरह से बात नहीं करती। खैर, नौजवान औरतें ऐसी हुआ ही करती हैं !

इतने में दोनों कुमारों ने देखा कि बाईं तरफ से एक नव्वै वर्ष की बुढ़िया छड़ी टेकती धीरे-धीरे चली आ रही है जिसे देखते ही भैरोंसिंह उठा और यह कहता हुआ उसकी तरफ बढ़ा, "आओ मेरी प्यारी भोली, तुम्हारी नौजवानी तुम्हें अकड़ कर चलने

नहीं देती तो मैं अपने हाथों का सहारा देने के लिए तैयार हूँ।"

भैरोंसिंह ने बुढ़िया को हाथ का सहारा देकर अपने पास ला बैठाया और आप भी उसी जगह बैठकर बोला, "मेरी प्यारी भोली, देखो ये दो नये आदमी आज यहाँ आये हैं जो मुझे पागल बताते हैं। तू ही बता कि क्या मैं पागल हूँ?"

बुढ़िया—राम-राम, ऐसा भी कभी हो सकता है? मैं अपनी नौजवानी की कसम खाकर कहती हूँ कि तुम्हारे ऐसे बुद्धिमान बुड्ढे को पागल कहने वाला स्वयं पागल है (दोनों कुमारों की तरफ देखकर) ये दोनों उजड्ड यहाँ कैसे आ पहुँचे? क्या किसी ने इन्हें रोका नहीं?

भैरोंसिह—मैंने इनसे अभी कुछ भी नहीं पूछा कि ये कौन हैं और यहाँ कैसे आ पहुँचे क्योंकि मैं तुम्हारी मुहब्बत में डूबा हुआ तरह-तरह की बातें सोच रहा था। अब तुम आई हो तो जो कुछ पूछना हो स्वयं पूछ लो।

बुढ़िया—(कुमारों से) तुम दोनों कौन हो?

भैरोंसिह—(कुमारों से) बताओ-बताओ, सोचते क्या हो? आदमी हो, जिन्न हो, भूत हो, प्रेत हो, कौन हो, कहते क्यों नहीं! क्या तुम देखते नहीं कि मेरी नौजवान स्त्री को तुमसे बात करने में कितना कष्ट हो रहा है?

भैरोंसिह और उस बुढ़िया की बातचीत और अवस्था पर दोनों कुमारों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ और कुछ सोचने के बाद इन्द्रजीतसिंह ने भैरोंसिंह से कहा, "अब मुझे निश्चय हो गया कि जरूर तुम्हें किसी ने इस तिलिस्म में ला फँसाया है और कोई ऐसी चीज खिलाई या पिलाई है कि जिससे तुम पागल और कोई हो गए हो, ताज्जुब नहीं कि यह सब बदमाशी इसी बुढ़िया की हो, अब अगर तुम होश में न आओगे तो मैं तुम्हें मार-पीट कर होश में लाऊँगा।" इतना कह कर इन्द्रजीतसिंह भैरोंसिंह की तरफ बढ़े, मगर उसी समय बुढ़िया ने यह कहकर चिल्लाना शुरू किया, "दौड़ियो-दौड़ियो, हाय रे, मारा रे, मारे रे, चोर-चोर, डाकू-डाकू, दौड़ो-दौड़ो, ले गया, ले गया, ले गया!"

बुढ़िया चिल्लाती रही मगर कुमार ने उसकी एक भी न सुनी और भैरोंसिंह का हाथ पकड़ के अपनी तरफ खींच ही लिया, मगर बुढ़िया का चिल्लाना भी व्यर्थ न गया। उसी समय चार-पाँच खूबसूरत लड़के दौड़ते हुए वहाँ आ पहुँचे जिन्होंने दोनों कुमारों को चारों तरफ से घेर लिया। उन लड़कों के गले में छोटी-छोटी झोलियाँ लटक रही थीं और उनमें आटे की तरह की कोई चीज भरी हुई थी। आने के साथ ही इन लड़कों ने अपनी झोली में से वह आटा निकाल कर दोनों कुमारों की तरफ फेंकना शुरू किया।

निसन्देह उस बुकनी में तेज बेहोशी का असर था जिसने दोनों कुमारों को बात की बात में बेहोश कर दिया और दोनों चक्कर खाकर जमीन पर लेट गये, जब आँख खुली तो दोनों ने अपने को एक सजे-सजाये कमरे में फर्श के ऊपर पड़े पाया।

14

जिस कमरे में दोनों कुमारों की बेहोशी दूर हो जाने के कारण आँख खुली थी वह लम्बाई में बीस और चौड़ाई में पन्द्रह गज से कम न था । इस कमरे की सजावट कुछ विचित्र ढंग की थी और दीवारों में भी एक तरह का अनूठापन था । रोशनी के शीशों (हांडी और कन्दीलों) की जगह उसमें दो-दो हाथ लम्बी तरह-तरह की खूबसूरत पुतलियाँ लटक रही थीं और दीवारगीरों की जगह पचासों किस्म के जानवरों के चेहरे दीवारों में लगे हुए थे। दीवारें इस कमरे की लहरदार बनी हुई थीं और उन पर तरह-तरह की चित्रकारी की हुई थी। ऊपर की तरफ छत से कुछ नीचे हट कर चारों तरफ छोटी-छोटी खिड़कियाँ थीं जिससे जान पड़ता था कि ऊपर की तरफ कोई गुलामगर्दिश या मकान है मगर इस समय सब खिड़कियाँ बन्द थीं और इस कमरे में से कोई रास्ता ऊपर जाने का नहीं दिखाई देता था।

कुंअर आनन्दसिंह ने इन्द्रजीतसिंह से कहा, "भैया, वह बुढ़िया तो अजब आफत की पुड़िया मालूम होती है। और उन लड़कों की तेजी भी भूलने योग्य नहीं है।"

इन्द्रजीतसिंह—बेशक ऐसा ही है ! ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए कि उन्होंने हम लोगों को जीता छोड़ दिया। मगर हमें भैरोंसिह की बातों पर आश्चर्य मालूम होता है ! क्या हम उसे वास्तव में कोई ऐयार समझें ?

आनन्दसिंह—यदि वह ऐयार होता तो निःसन्देह हम लोगों को धोखा देने के लिए भैरोंसिह बना होता और साथ ही इसके पोशाक भी वैसी ही रखता जैसी भैरोंसिह पहना करता है, इसके सिवाय वह स्वयं अपने को भैरोंसिह प्रकट करके हम लोगों का साथी बनता, ऐसा न कहता कि मैं भैरोंसिह नहीं हूँ। मगर उसकी नौजवान औरत (बुढ़िया) के विषय में···

इन्द्रजीतसिंह—उस बुढ़िया की बात जाने दो, अगर वह वास्तव में भैरोंसिह है तो ताज्जुब नहीं कि मसखरापन करता है या पागल हो गया है। और अगर वह पागल हो गया है तो निःसन्देह उस बुढ़िया की बदौलत जो उसकी आँखों में अभी तक नौजवान बनी हुई है ।

आनन्दसिंह—-उस बुढ़िया को जिस तरह हो गिरफ्तार करना चाहिए ।

इन्द्रजीतसिंह—मगर उसके पहले अपने को बेहोशी से बचाने का बन्दोबस्त कर लेना चाहिए क्योंकि लड़ाई-दंगे से तो हम लोग डरते ही नहीं ।

आनन्दसिंह—जी हाँ, जरूर ऐसा करना चाहिए । दवा तो हम लोगों के पास मौजूद ही है और ईश्वर की कृपा से कमरे का दरवाजा भी खुला है।

दोनों भाइयों ने कमर से एक डिबिया निकाली जिसमें किसी तरह की दवा थी और उसे खाने के बाद कमरे के बाहर निकलना ही चाहते थे कि ऊपर वाले छोटे-छोटे दरवाजों में से एक दरवाजा खुला और पुनः उसी नौजवान बुढ़िया के खसम भैरोंसिह की सूरत दिखाई दी। दोनों भाई रुक गये और आनन्दसिंह ने उसकी तरफ देखकर कहा,

"अब आप यहाँ क्यों आ पहुँचे ?"

भैरोंसिह—आपके हालचाल की खबर लेने और साथ ही इसके अपनी नौजवान औरत की तरफ से आपको ज्याफत का न्यौता देने आया हूँ । मालूम होता है कि वह तुम लोगों पर आशिक हो गई है तभी खातिरदारी का बन्दोबस्त कर रही है । उसने तुम लोगों के लिए कितनी अच्छी-अच्छी चीजें खाने को तैयार की हैं और अभी तक बनाती ही जाती है ।

आनन्दसिंह—(हँसकर) और उन चीजों में जहर कितना मिलाया है ?

भैरोंसिह—केवल डेढ़ छटाँक ! मैं उम्मीद करता हूँ कि इतने से तुम लोगों की जान न जायगी ।

आनन्दसिंह—आपकी इस कृपा के लिए मैं धन्यवाद देता हूँ और आपसे बहुत ही प्रसन्न होकर आपको कुछ इनाम भी देना चाहता हूँ । आप मेहरवानी करके जरा यहाँ आइये तो अच्छी बात है ।

भैरोंसिह—बहुत अच्छा, इनाम लेने में देर करना भले आदमियों का काम नहीं है ।

इतना कहकर भैरोंसिह वहाँ से हट गया और थोड़ी ही देर बाद सदर दरवाजे की राह से कमरे के अन्दर आता हुआ दिखाई दिया। जब कुँअर आनन्दसिंह के पास आया तो बोला. "लाइए, क्या इनाम देते हैं ।"

आनन्दसिंह ने फुर्ती से तिलिस्मी खंजर उसके हाथ पर रख दिया जिसके असर से वह एक दफा काँपा और बेहोश होकर जमीन पर लम्बा हो गया । तब आनन्दसिंह ने अपने भाई से कहा, "अब इसे अच्छी तरह जाँच कर देख लेना चाहिए कि यह भैरोंसिह ही है या कोई और ?"

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, अब बखूबी पता लग जायगा, पहले इसका दाहिनी बगल वाला मस्सा देखो ।

आनन्दसिंह—(भैरोंसिह की बगल देखकर) देखिये मस्सा मौजूद है । अब कमर वाला दाग देखिये—लीजिए यह भी मौजूद है। इसके भैरोंसिह होने में अब मुझे तो किसी तरह का सन्देह नहीं रहा ।

इन्द्रजीतसिंह—अब सन्देह हो ही नहीं सकता । मैंने इस मस्से को अच्छी तरह खींच कर भी देख लिया, अच्छा अब इसे होश में लाना चाहिए ।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह ने अपना वह हाथ जिसमें तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अँगूठी थी, भैरोंसिह के बदन पर फेरा । भैरोंसिह तुरन्त होश में आकर उठ बैठा और ताज्जुब से चारों तरफ देखता हुआ बोला, "वाह-वाह ! मैं यहाँ क्योंकर आ गया और आप लोगों ने मुझे कहाँ पाया ?"

आनन्दसिंह—मालूम होता है अब आपका पागलपन उतर गया ?

भैरोंसिह—(ताज्जुब से) पागलपन कैसा ?

इन्द्रजीतसिंह—इसके पहले तुम किस अवस्था में थे और क्या करते थे, कुछ याद है ?

भैरोंसिह—मुझे कुछ भी याद नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा बताओ कि तुम इस तिलिस्म के अन्दर कैसे आ पहुँचे ?

भैरोंसिह—केवल मुझी को नहीं बल्कि किशोरी, कामिनी, कमला, लक्ष्मीदेवी, लाड़िली, कमलिनी और इन्दिरा को भी राजा गोपालसिंह ने इस तिलिस्म के अन्दर पहुँचा दिया है, बल्कि मुझे तो सबके आखिर में पहुँचाया है। आपके नाम की एक चिट्ठी भी दी थी मगर अफसोस ! आपसे मुलाकात होने न पाई और मेरी अवस्था बदल गई।

इन्द्रजीतसिंह—वह चिट्ठी कहाँ है ?

भैरोंसिह—(इधर-उधर देखकर) जब मेरे बटुए ही का पता नहीं तो चिट्ठी के बारे में क्या कह सकता हूँ ?

आनन्दसिंह—मगर यह तो तुम्हें याद होगा कि उस चिट्ठी में क्या लिखा हुआ था ?

भैरोंसिह—क्यों नहीं, मेरे सामने ही तो वह लिखी गई थी। उसमें कोई विशेष बात न थी, केवल इतना ही लिखा था कि "उस गुप्त स्थान से किशोरी, कामिनी इत्यादि को लेकर मैं जमानिया जा रहा था मगर मायारानी की कुटिलता के कारण अपने इरादे में बहुत कुछ उलट-फेर करना पड़ा। जब यह मालूम हुआ हुआ कि मायारानी तिलिस्मी बाग के अन्दर घुस गई है तब लाचार सब औरतों को तिलिस्म के अन्दर पहुँचाता हूँ। बाकी हाल भैरोंसिह से सुन लेना"—बस इतना लिखा था। मालूम होता है कि पहले का हाल वह आपसे कह चुके हैं।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, पहले का बहुत-कुछ हाल वह हमसे कह चुके हैं।

भैरोंसिह—क्या यह भी कहा था कि कृष्ण जिन्न का रूप भी उन्हीं कृपानिधान ने धारण किया था ?

आनन्दसिंह—नहीं सो तो साफ नहीं कहा था, मगर उनकी बातों से हम लोग कुछ-कुछ समझ गये थे कि कृष्ण जिन्न वही बने थे। खैर, अब तुम खुलासा बताओ कि क्या हुआ ?

भैरोंसिह ने वह सब हाल दोनों कुमारों से कहा जो ऊपर के बयानों में लिखा जा चुका है और जिसमें का बहुत-कुछ हाल राजा गोपालसिंह की जुबानी दोनों कुमार सुन चुके थे। इसके बाद भैरोंसिह ने कहा—"जब राजा गोपालसिंह को मालूम हो गया कि मायारानी बहुत से आदमियों को लेकर तिलिस्मी बाग के अन्दर जा छिपी है तब वे एक गुप्त राह से छिप कर सब औरतों को साथ लिए हुए उस मकान में पहुँचे जिसमें से कमन्द के सहारे सभी को लटकाते हुए शायद आपने देखा होगा।"

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, देखा था, तो क्या उस समय वे औरतें बेहोश थीं ?

भैरोंसिह—जी हाँ, न मालूम किस खयाल से उन्होंने सब औरतों को बेहोश कर दिया था मगर इसके पहले यह कह दिया था तुम्हें तिलिस्म के अन्दर पहुँचा देते हैं जहाँ दोनों कुमार हैं, यद्यपि वहाँ पहुँचना बहुत कठिन था मगर अब एक दीवार वाले तिलिस्म को दोनों कुमार तोड़ चुके हैं इसलिए वहाँ तक पहुँचा देने में कोई कठिनता न रही !

इन्द्रजीतसिंह—तो क्या तुम भी उन सातों औरतों के साथ ही उस बाग में उतारे

गये थे ?

भैरोंसिह—सहले तो उन्होंने इन्द्रदेव को बहुत सी बातें समझाईं-बुझाईं, जिन्हें मैं समझ न सका। इसके बाद इन्द्रदेव को तो गोपालसिंह बनाया और इन्द्रदेव के एक ऐयार को भैरोंसिंह बनाकर दोनों को खास बाग के अन्दर भेजा। इस काम से छुट्टी पाकर सब औरतों को और मुझे साथ-साथ लिए उस मकान में आये। सभी को तो उस कमरे में बैठा दिया जिसमें से कमन्द के सहारे सबको लटकाया था और फिर मुझे उनकी हिफाजत के लिए छोड़ने के बाद कमलिनी को साथ लिए हुए कहीं चले गये और घण्टे भर के बाद वापस आये। उस समय कमलिनी के हाथ में एक छोटी-सी किताब थी जिसे उन्होंने कई दफा तिलिस्मी किताब के नाम से सम्बोधन किया था। इसके बाद उन्होंने सभी को बेहोश करके नीचे लटका दिया। इस काम से छुट्टी पाकर उन्होंने आपके नाम की दो चिट्ठियाँ लिखीं, एक तो उस कमरे में रक्खी और दूसरी चिट्ठी जिसका मैं अभी जिक्र कर चुका हूँ मुझे देकर कहा कि "जब कुमारों से तुम्हारी मुलाकात हो तो यह चिट्ठी उन्हें देना और सब काम कमलिनी की आज्ञानुसार करना, यहाँ तक कि यदि कमलिनी तुम्हें सामना हो जाने पर भी कुमारों से मिलने के लिए मना करे तो तुम कदापि न मिलना" इत्यादि कहकर मुझे नीचे उतर जाने के लिए कहा। (कुछ रुक कर) नहीं-नहीं, मैं भूलता हूँ, मुझे उन्होंने पहले ही नीचे उतार दिया था, क्योंकि सभी की गठरी मैंने ही नीचे से थामी थी, सभी को नीचे उतार देने के बाद जब मैं उनकी आज्ञानुसार पुनः ऊपर गया तब उन्होंने ये सब बातें मुझे समझाईं और आपके मित्र इन्द्रदेव भी वहाँ आ पहुँचे जो गोपालसिंह की सूरत बने हुए थे। इन्द्रदेव ने राजा गोपालसिंह से कुछ कहना चाहा, मगर उन्होंने रोक दिया और मुझसे कहा कि अब तुम भी कमंद के सहारे नीचे उतर जाओ और इन्द्रदेव के आने का इन्तजार करो। मैं उनकी आज्ञानुसार नीचे उतर आया। मैं अन्दाज से कहता हूँ कि उन बेहोशों में आप या छोटे कुमार छिपे थे और आप ही दोनों में से किसी ने मेरे बदन के साथ तिलिस्मी खंजर लगाया था जिससे मैं बेहोश हो गया।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, ठीक है ऐसा ही हुआ था।

भैरोंसिंह—फिर तो मैं बेहोश हो ही गया, मुझे कुछ भी नहीं मालूम कि इन्द्रदेव, जो गोपालसिंह की सूरत में थे, कब नीचे आये, क्या हुआ।

आनन्दसिंह—ठीक है, वह भी थोडी ही देर बाद नीचे उतरे और तुम्हारी तरह से वह भी बेहोश किए गए। (इन्द्रजीतसिंह से) अब मालूम हुआ कि इन्द्रदेव ही के कहे मुताबिक मैं आपको बुलाने के लिए ऊपर गया था।

भैरोंसिह—हाँ, जब हम लोगों को उन्होंने चैतन्य किया तो कहा था कि दोनों कुमार ऊपर गए हैं। आखिर इन्द्रदेव ने कमन्द खींच ली और हम लोगों को लिए हुए दूसरी दीवार की तरफ गये। वहाँ कमलिनी ने जमीन खोद कर एक दरवाजा पैदा किया। ताज्जुब नहीं कि उसी दरवाजे की राह से आप लोग भी यहाँ तक आये हों, और अगर ऐसा है तो उस कोठरी में भी अवश्य पहुँचे होंगे जहाँ की जमीन लोगों को बेहोश करके तिलिस्म के अन्दर पहुँचा देती है ?

आनन्दसिंह—हम लोग भी उसी रास्ते से यहाँ तक आये हैं, अच्छा तो क्या इन्द्र-

देव भी तुम लोगों के साथ यहाँ आये हैं ?

भैरोंसिह—जी नहीं, वह तो ऊपर ही रह गये, बोले कि मुझे तिलिस्म के अन्दर जाने की आज्ञा नहीं है। तुम लोग जाओ। मैं अब इसी बाग में छिप कर रहूंगा। जब दोनों कुमार यहाँ आ जायेंगे तब उनसे छिप कर पुनः कमन्द के सहारे ऊपर जाऊँगा और राजा गोपालसिंह के साथ मिलकर काम करूँगा।

आनन्दसिंह—(इन्द्रजीतसिंह से) तब ताज्जुब नहीं कि इन्द्रदेव ने ही सरयू को बेहोश किया हो ?

इन्द्रजीतसिंह—जरूर ऐसा ही है। (भैरों से) अच्छा तब क्या हुआ ?

भैरोंसिंह—नीचे उतर कर जब हम लोग उस कोठरी में पहुँचे जहाँ की जमीन थोड़ी ही देर में लोगों को बेहोश कर देती है तब नियमानुसार सभी के साथ मैं भी बेहोश हो गया। उस समय से इस समय तक का हाल मुझे कुछ भी मालूम नहीं है, मैं बिल्कुल नहीं जानता कि उसके बाद क्या हुआ और मैं किस अवस्था में होकर क्यों इस तरह अपने को यहाँ पाता हूँ।

15

भैरोंसिह की बातें सुनकर दोनों कुमार देर तक तरह-तरह की बातें सोचते रहे और तब उन्होंने अपना किस्सा भैरोंसिंह से कह सुनाया। बुढ़िया वाली बात को सुनकर भैरोंसिंह हँस पड़ा और बोला, "मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है कि वह बुढ़िया कौन है और कहाँ है, यदि अब मैं उसे पाऊँ तो जरूर उसकी बदमाशी का मजा उसे चखाऊँ। मगर अफसोस तो यह है कि मेरा ऐयारी का बटुआ मेरे पास नहीं है जिसमें बड़ी-बड़ी अनमोल चीजें थीं। हाय, वे तिलिस्मी फूल भी उसी बटुए में थे जिसके देने से मेरा बाप भी मुझे टाल बताना चाहता था मगर महाराज ने दिलवा दिया। इस समय बटुए का न होना मेरे लिए बड़ा दुखदायी है क्योंकि आप कह रहे हैं कि 'उन लड़कों ने एक तरह की बुकनी उड़ाकर हमें बेहोश कर दिया।' कहिए, अब मैं क्योंकर अपने दिल का हौसला निकाल सकता हूँ ?"

इन्द्रजीतसिंह—निःसन्देह उस बटुए का जाना बहुत ही बुरा हुआ। वास्तव में उसमें बड़ी अनूठी चीजें थीं, मगर इस समय उनके लिए अफसोस जाहिर करना फिजूल है। हाँ, इस समय मैं दो चीजों से तुम्हारी मदद कर सकता हूँ।

भैरोंसिह—वह क्या ?

इन्द्रदेव—एक तो वह दवा हम दोनों के पास मौजूद है जिसके खाने से बेहोशी असर नहीं करती और वह मैं तुम्हें खिला सकता हूँ। दूसरे हम लोगों के पास दो-दो हर्बे मौजूद हैं, बल्कि यदि तुम चाहो तो तिलिस्मी खंजर भी दे सकता हूँ।

भैरोंसिह—जी नहीं, तिलिस्मी खंजर मैं न लूंगा, क्योंकि आपके पास उसका

रहना तब तक बहुत ही जरूरी है जब तक आप तिलिस्म तोड़ने का काम समाप्त न कर लें। मुझे बस मामूली तलवार दे दीजिए, मैं अपना काम उसी से चला लूंगा और वह दवा खिला कर मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं उस बुढ़िया के पास से अपना बटुआ निकालने का उद्योग करूँ।

दोनों कुमारों के पास तिलिस्मी खंजर के अतिरिक्त एक-एक तलवार भी थी। इन्द्रजीतसिंह ने अपनी तलवार भैरोंसिंह को दी और डिबिया में से निकाल कर थोड़ी-सी दवा भी खिलाने के बाद कहा, ''मैं तुमसे कह चुका हूँ कि जब हम दोनों भाई इस बाग में पहुँचे तो चूहेदानी के पल्ले की तरह वह दरवाजा बन्द हो गया जिस राह से हम दोनों आये थे और उस दरवाजे पर लिखा हुआ था कि यह तिलिस्म टूटने लायक नहीं है।

भैरोंसिंह—हाँ, यह आप कह चुके हैं।

आनन्दसिंह—(इन्द्रजीतसिंह से) भैया, मुझे तो उस लिखावट पर विश्वास नहीं होता।

इन्द्रजीतसिंह—यही मैं भी कहने को था क्योंकि रिक्तगंथ की बातों से तिलिस्म का यह हिस्सा भी टूटने योग्य जान पड़ता है, (भैरोंसिंह से) इसी से मैं कहता हूँ कि इस बाग में जरा समझ-बूझ के घूमना।

भैरोंसिंह—खैर, इस समय तो मैं भी आपके साथ-साथ चलता हूँ। चलिए बाहर निकलिए।

आनन्दसिंह—(भैरोंसिंह से) तुम्हें याद है कि तुम ऊपर से उतरकर इस कमरे में किस राह से आए थे?

भैरोंसिंह—मुझे कुछ भी याद नहीं।

इतना कहकर भैरोंसिंह उठ खड़ा हुआ और दोनों कुमार भी उठकर कमरे के बाहर निकलने के लिए तैयार हो गये।

16

तीनों आदमी कमरे के बाहर निकल कर सहन में आये। उस समय कुमार को मालूम हुआ कि यह कमरा बाग के पूरब तरफ वाली इमारत के सब से निचले हिस्से में बना हुआ है, और इस कमरे के ऊपर और भी दो मंजिल की इमारत है, मगर वे दोनों मंजिलें बहुत छोटी थीं और उनके साथ ही दोनों तरफ इमारतों का सिलसिला बराबर चला गया था। दिन चढ़ आया था और नित्यकर्म न किए जाने के कारण कुमारों की तबीयत कुछ भारी हो रही थी।

जिस तरह इस तिलिस्म में पहले दूसरे बाग के अन्दर नहर की बदौलत पानी की कमी न थी उसी तरह इस बाग में भी नहर का पानी छोटी नालियों के जरिये चारों ओर घूमता हुआ आता था और दस-पाँच मेवों के पेड़ भी थे जिनमें बहुतायत के साथ

मेवे लगे हुए थे।

दोनों कुमार और भैरोंसिह टहलते हुए बाग के बीचोंबीच से उसी कदम्ब के पेड़ तले आए जिसके नीचे पहले-पहले भैरोंसिह के दर्शन हुए थे। बातचीत करने के बाद तीनों ने जरूरी कामों से छुट्टी पा हाथ-मुंह धोकर स्नान किया और संध्योपासन से छुट्टी पाकर वे बाग के मेवों और नहर के जल से संतोष करने के बाद वैठकर यों बातचीत करने लगे—

इन्द्रजीतसिंह—मैं उम्मीद करता हूँ कि कमलिनी, किशोरी और कामिनी वगैरह से इसी बाग में मुलाकात होगी।

आनन्दसिंह—निःसन्देह ऐसा ही है। इस बाग में अच्छी तरह घूमना और यहाँ की हरएक बात का पूरा-पूरा पता लगाना हम लोगों के लिए जरूरी है।

भैरोंसिह—मेरा दिल भी यही गवाही देता है कि वे सब जरूर इसी बाग में होंगी मगर कहीं ऐसा न हुआ हो कि मेरी तरह से उन लोगों का दिमाग भी किसी कारणविशेष से बिगड़ गया हो।

इन्द्रजीतसिंह—कोई ताज्जुब नहीं अगर ऐसा ही हुआ हो, मगर तुम्हारी जुबानी मैं सुन चुका हूँ कि राजा गोपालसिंह ने कमलिनी को बहुत-कुछ समझा-बुझाकर एक तिलिस्मी किताब भी दी है।

भैरोंसिह—हाँ, बेशक मैं कह चुका हूँ और ठीक कह चुका हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—तो यह भी उम्मीद कर सकता हूँ कि कमलिनी को इस तिलिस्म का कुछ हाल मालूम हो गया हो और वह किसी के फंदे में न फँसे।

भैरोंसिह—इस तिलिस्म में और है ही कौन जो उन लोगों के साथ दगा करेगा ?

आनन्दसिंह—बहुत ठीक ! शायद आप अपनी नौजवान स्त्री और उसके हिमायती लड़कों को बिल्कुल ही भूल गए, या हम लोगों की जुबानी सब हाल सुनकर भी आपको उसका कुछ खयाल न रहा।

भैरोंसिह—(मुस्कुराकर) आपका कहना ठीक है मगर उन सभी को···

इतना कहकर भैरोंसिह चुप हो गया और कुछ सोचने लगा। दोनों कुमार भी किसी बात पर गौर करने लगे और कुछ देर बाद भैरोंसिह ने इन्द्रजीतसिंह से कहा—

भैरोंसिह—आपको तो यह याद होगा कि लड़कपन में एक दफा मैंने पागलपन की नकल की थी।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, याद है। तो क्या आज भी तुम जान-बूझ कर पागल बने हुए थे ?

भैरोंसिह—नहीं-नहीं, मेरे कहने का मतलब यह नहीं है, बल्कि मैं यह कहता हूँ कि इस समय भी उसी तरह का पागल बन के शायद कोई काम निकाल सकूँ।

आनन्दसिंह—हाँ, ठीक तो है, आप पागल बन के अपनी नौजवान स्त्री को बुलाइए जिस ढंग से मैं बताता हूँ।

कुमार के बताये हुए ढंग से भैरोंसिह ने पागल बन के अपनी नौजवान स्त्री को कई दफा बुलाया मगर उसका नतीजा कुछ न निकला, न तो कोई उसके पास आया और

न किसी ने उसकी बात का जवाब ही दिया, आखिर इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "बस करो; उसे मालूम हो गया कि तुम्हारा पागलपन जाता रहा, अब हम लोगों को फँसाने के लिए वह जरूर कोई दूसरा ही ढंग काम में लावेगी।"

आखिर भैरोंसिंह चुप हो रहे और थोड़ी देर बाद तीनों आदमी इधर-उधर का तमाशा देखने के लिए यहाँ से रवाना हुए। इस समय दिन बहुत कम बाकी था।

तीनों आदमी बाग के पश्चिम की तरफ गये जिधर संगमरमर की एक बारहदरी थी। उसके दोनों तरफ दो इमारतें और थीं जिनके दरवाजे बन्द रहने के कारण यह नहीं जाना जाता था कि उसके अन्दर क्या है मगर बारहदरी खुले ढंग की बनी हुई थी अर्थात् उसके पीछे की तरफ दीवानखाना और आगे की तरफ केवल तेरह खम्भे लगे हुए थे जिनमें दरवाजा चढ़ाने की जगह न थी।

इस बारहदरी के मध्य में एक सुन्दर चबूतरा बना हुआ था जिस पर कम-से-कम पन्द्रह आदमी बखूबी बैठ सकते थे। उस चबूतरे के ऊपर बीचोंबीच में लोहे का चौखूंटा तख्ता था जिसमें उठाने के लिए कड़ी लगी हुई थी और चबूतरे के सामने की दीवार में एक छोटा-सा दरवाजा था जो इस समय खुला हुआ था और उसके अन्दर दो-चार हाथ के बाद अंधकार सा जान पड़ता था। भैरोंसिंह ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह से कहा, "यदि आज्ञा हो तो इस छोटे-से दरवाजे के अन्दर जाकर देखूँ कि इसमें क्या है?"

इन्द्रजीतसिंह—यह तिलिस्म का मुकाम है, खिलवाड़ नहीं है। कहीं ऐसा न हो कि तुम अन्दर जाओ और दरवाजा बन्द हो जाय! फिर तुम्हारी क्या हालत होगी, सो तुम्हीं सोच लो।

आनन्दसिंह—पहले यह तो देखो कि दरवाजा लकड़ी का है या लोहे का?

इन्द्रजीतसिंह—भला तिलिस्म बनाने वाले इमारत के काम में लकड़ी क्यों लगाने लगे जिसके थोड़े ही दिन में बिगड़ जाने का खयाल होता है, मगर शक मिटाने के लिए यदि चाहो तो देख लो।

भैरोंसिंह—(उस दरवाजे को अच्छी तरह जाँचकर) बेशक यह लोहे का बना हुआ है। इसके अन्दर कोई भारी चीज डालकर देखना चाहिए कि बन्द होता है या नहीं, यदि किसी आदमी के जाने से बन्द हो जाता होगा तो मालूम हो जायेगा।

आनन्दसिंह—(चबूतरे की तरफ इशारा करके) पहले इस तख्ते को उठाकर देखो कि इसके अन्दर क्या है!

"बहुत अच्छा" कहकर भैरोंसिंह चबूतरे के ऊपर चढ़ गया और कड़ी में हाथ डाल के उस तख्ते को उठाने लगा। तख्ता किसी कब्जे या पेंच के सहारे उसमें जड़ा हुआ न था बल्कि चारों तरफ से अलग था, इसलिए भैरोंसिंह ने उसे उठाकर चबूतरे के नीचे रख दिया, इसके बाद झाँककर देखने से मालूम हुआ कि नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं।

भैरोंसिंह ने नीचे उतरने के लिए आज्ञा माँगी मगर कुँअर इन्द्रजीतसिंह उसे रोककर स्वयं नीचे उतर गये और भैरोंसिंह तथा आनन्दसिंह को ऊपर मुस्तैद रहने के लिए ताकीद कर गये।

नीचे उतरने के लिए चक्करदार सीढ़ियाँ बनी हुई थीं और हर एक सीढ़ी के दोनों तरफ गेंदे के बनावटी पेड़ बने हुए थे जो सीढ़ी पर पैर रखने के साथ ही झुक जाते और पैर (या बोझ) हट जाने से पुनः ज्यों-के-त्यों खड़े हो जाते थे। इस तमाशे को देखते हुए इन्द्रजीतसिंह कई सीढ़ियाँ नीचे उतर गये और जब अँधेरे में पहुंचे तो बन्द दरवाजा मिला जिसे उस समय कुमार ने कुछ खुला हुआ देखा था जब तक वहाँ तक पहुँचने में तीन-चार सीढ़ियाँ बाकी थीं अर्थात् कुमार के देखते-देखते वह दरवाजा बन्द हो गया था।

कुमार को ताज्जुब मालूम हुआ और जब उद्योग करने पर भी दरवाजा न खुला तो कुमार ऊपर की तरफ लौटे। तीन सीढ़ियाँ ऊपर चढ़ने के बाद घूमकर देखा तो दरवाजे को पुनः कुछ खुला हुआ देखा मगर जब नीचे उतरे तो फिर बन्द हो गया।

इन्द्रजीतसिंह को विश्वास हो गया कि इस दरवाजे का खुलना और बन्द होना भी इन्हीं सीढ़ियों के अधीन है। आखिर लाचार होकर कुछ सोचते-विचारते चले आए। ऊपर आते समय भी सीढ़ियों के दोनों तरफ वाले पेड़ों की वही दशा हुई अर्थात् जिस सीढ़ी पर पैर रखा जाता, उसके दोनों तरफ वाले पेड़ झुक जाते और जब उस पर से पैर हट जाता तो फिर ज्यों-के-त्यों हो जाते।

ऊपर आकर इन्द्रजीतसिंह ने कुल हाल आनन्दसिंह और भैरोंसिंह से कहा और इस बात का विचार करने की आज्ञा दी कि 'हम नीचे उतरकर किस तरह उस दरवाजे को खुला हुआ पा सकते हैं।'

थोड़ी देर बाद भैरोंसिंह ने कहा, "मैं पेड़ों का मतलब समझ गया, यदि आप मुझे अपने साथ ले चलें तो मैं ऐसी तरकीब कर सकता हूँ कि वह दरवाजा आपको खुला मिले।"

इस समय संध्या हो चुकी थी इसलिए सब लोगों की राय नीचे उतरने की न हुई। कुमार की आज्ञानुसार भैरोंसिंह ने उस गड्ढे का मुँह ज्यों-का-त्यों ढाँक दिया और उस बारहदरी में निश्चिन्ती के साथ बैठ बातचीत करने लगे क्योंकि आज की रात इसी बारहदरी में होशियारी के साथ रहकर बिताने का निश्चय कर लिया था और भैरोंसिंह के जिद करने से यह बात भी तय पाई थी कि इन्द्रजीतसिंह आराम के साथ सोवें और भैरोंसिंह तथा आनन्दसिंह बारी-बारी से जागकर पहरा दें।

17

आधी रात का समय है। तिलिस्मी बाग में चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ है। इमारत के ऊपरी हिस्से पर चन्द्रमा की कुछ थोड़ी-सी चाँदनी जरा झलक मार रही है बाकी सब तरफ अन्धकार छाया हुआ है। कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह सोये हुए हैं और भैरोंसिंह एक खम्भे के सहारे बैठे हुए बारहदरी के सामने वाली इमारत को देख रहे हैं।

बारहदरी के सामने वाली इमारत दोमंजिली थी और उसकी लम्बाई तो बहुत ज्यादा मगर चौड़ाई बहुत कम थी। इमारत की ऊपर वाली मंजिल में बाग की तरफ छोटे-छोटे दरवाजे एक सिरे से दूसरे सिरे तक बराबर एक ही रंग-ढंग के बने हुए थे। दरवाजों के बीच में केवल एक खम्भे का फासला था और वे खम्भे भी सब एक ही ढंग के नक्काशीदार बने हुए थे जिसकी खूबी इस समय कुछ भी मालूम नहीं पड़ती थी मगर एक दरवाजे के अन्दर यकायक कुछ रोशनी की झलक पड़ जाने के कारण भैरोंसिह एकटक उसी तरफ देख रहे थे।

थोड़ी ही देर बाद ऊपर वाली मंजिल का एक दरवाजा खुला और पीठ पर गठरी लादे हुए एक आदमी बाईं तरफ से दाहिनी तरफ जाता हुआ दिखाई दिया। भैरोंसिह चैतन्य होकर सम्हलकर बैठ गये और वड़ी दिलचस्पी के साथ ध्यान देकर उस तरफ देखने लगे। कुछ देर बाद दरवाजा बन्द हो गया और उसके दाहिनी तरफ चार दरवाजे छोड़कर पाँचवाँ दरवाजा खुला जिसके अन्दर हाथ में चिराग लिए हुए एक और आदमी इस तरह खड़ा दिखाई दिया जैसे किसी के आने का इन्तजार कर रहा हो। थोड़ी ही देर में चार-पाँच औरतें मिलकर किसी लटकते बोझ को लिए हुए उसी आदमी के पास से निकल गईं जिसके हाथ में चिराग था और उन्हीं के पीछे-पीछे वह आदमी भी चिराग लिए चला गया। दरवाजा बन्द नहीं हुआ मगर उसके अन्दर अन्धकार हो गया।

भैरोंसिह ने यह समझकर कि शायद हम और भी कुछ तमाशा देखें दोनों कुमारों को चैतन्य कर दिया और जो कुछ देखा था, बयान किया।

हम कह आये है कि इस बारहदरी की पिछली दीवार के नीचे बीचोंबीच में अर्थात् चबूतरे के सामने एक छोटा दरवाजा था जिसके अन्दर भैरोंसिह ने जाने का इरादा किया था। इस समय यकायक उसी दरवाजे के अन्दर चिराग की रोशनी देखकर भैरोंसिह और दोनों कुमार चौंक पड़े और उठकर दरवाजे के सामने जा झाँककर देखने लगे। मालूम हुआ कि इस छोटे से दरवाजे के अन्दर एक बहुत बड़ा कमरा है जिसके दोनों तरफ की लोहे वाली शहतीरें (बड़ी धरनें) बड़े-बड़े चौखूंटे खम्भों के ऊपर हैं और उसकी छत लदाव की बनी हुई है। उस कमरे के दोनों तरफ के खम्भों के बाद भी एक दालान बना है और दालान की दीवारों में कई बड़े दरवाजे बने हैं जिनमें कुछ खुले और कुछ बन्द हैं।

दोनों कुमारों और भैरोंसिह ने देखा कि उसी कमरे के मध्य में एक आदमी जिसके चेहरे पर नकाब पड़ी थी, हाथ में चिराग लिए हुए खड़ा छत की तरफ देख रहा है। कुछ देर तक देखने के बाद वह आदमी एक खम्भे के सहारे चिराग रखकर पीछे की तरफ लौट गया।

भैरोंसिह और दोनों कुमार आड़ में खड़े होकर सब तमाशा देख रहे थे और जब वह आदमी चिराग रखकर हट गया तब भी यह सोचकर खड़े ही रहे कि जब चिराग रखकर गया है तो पुन. आवेगा।

उस नकाबपोश को चिराग रखकर गये हुए दस-बारह पल से ज्यादा न बीते होंगे कि दूसरी तरफ वाले दरवाजे के अन्दर से कोई दूसरा आदमी निकलकर तेजी से साथ इस कमरे के मध्य में आ पहुँचा और हाथ की हवा देकर उस चिराग को बुझा दिया जिसे

पहला आदमी एक खम्भे के सहारे रखकर चला गया था, और इसके बाद कमरे में अन्धकार हो जाने के कारण कुछ मालूम न हुआ कि यह दूसरा आदमी चिराग बुझाकर चला गया या उसी जगह कहीं आड़ देकर छिप रहा।

यह दूसरा आदमी भी जिसने कमरे में आकर चिराग बुझा दिया था, अपने चेहरे पर स्याह नकाब डाले हुए था, केवल नकाब ही नहीं, उसका तमाम बदन भी स्याह कपड़े से ढँका हुआ था और कद में छोटा होने के कारण इसका पता नहीं लग सकता था कि वह मर्द है या औरत।

थोड़ी ही देर बाद दोनों कुमार और भैरोंसिंह के कान में किसी के बोलने की आवाज सुनाई दी जैसे किसी ने उस अँधेरे में आकर ताज्जुब के साथ कहा हो कि "हैं! चिराग कौन बुझा गया?"

इसके जवाब में किसी ने कहा, "अपने को सम्हाले रहो और जल्दी से हट जाओ, कोई दुश्मन न आ पहुँचा हो।"

इसके बाद चौथाई घड़ी तक न तो किसी तरह की आवाज ही सुनाई दी और न कोई दिखाई ही पड़ा मगर दोनों कुमार और भैरोंसिंह अपनी जगह से न हिले।

आधी घड़ी के बाद वह पुनः हाथ में चिराग लिए हुए आया जो पहले खम्भे के सहारे चिराग रखकर चला गया था। इस आदमी का बदन गठीला और फुर्तीला मालूम पड़ता था। इसका पायजामा, अंगा; पटूका, मुँडासा और नकाब ढीले कपड़े का बना हुआ था। अबकी दफे वह बायें हाथ में चिराग और दाहिने हाथ में नंगी तलवार लिए हुए था, शायद उसे पहले दुश्मन का खयाल था जिसने चिराग बुझा दिया था, इसलिए उसने चिराग जमीन पर रख दिया और तलवार लिए चारों तरफ घूमकर किसी को ढूँढ़ने लगा। वह आदमी जिसने चिराग बुझा दिया था एक खम्भे की आड़ में छिपा हुआ था। जब पीले कपड़े वाला उस खम्भे के पास पहुँचा तो उस आदमी पर निगाह पड़ी, उसी समय वह नकाबपोश भी सम्हल गया और तलवार खींचकर सामने खड़ा हो गया। पीले कपड़े वाले ने तलवार वाला हाथ ऊँचा करके पूछा, "सच बता, तू कौन है?"

इसके जवाब में स्याह नकाबपोश ने यह कहते हुए उस पर तलवार का वार किया कि "मेरा नाम इसी तलवार की धार पर लिखा हुआ है।"

पीले कपड़े वाले ने बड़ी चालाकी से दुश्मन का वार बचाकर अपना वार किया और इसके बाद दोनों में अच्छी तरह लड़ाई होने लगी।

दोनों कुमार और भैरोंसिंह लड़ाई के बड़े ही शौकीन थे, इसलिए बड़ी चाह से ध्यान देकर उन दोनों की लड़ाई देखने लगे। निःसन्देह दोनों नकाबपोश लड़ने में होशियार और बहादुर थे, एक-दूसरे के वार को बड़ी खूबी से बचाकर अपना वार करता था जिसे देख इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "दोनों अच्छे हैं, चिराग की रोशनी एक ही तरफ पड़ती है दूसरी तरफ सिवाय तलवार की चमक के और कोई सहारा वार बचाने के लिए नहीं हो सकता, ऐसे समय में इस खूबी के साथ लड़ना मामूली काम नहीं है!"

इसी बीच यकायक स्याह नकाबपोश ने अपने हाथ की तलवार जमीन पर फेंक दी और एक खम्भे की आड़ में घूमता हुआ खंजर खींच और उसका कब्जा दबाकर बोला,

"अब तू अपने को किसी तरह नहीं बचा सकता ।"

निःसन्देह वह तिलिस्मी खंजर था जिसकी चमक से उस कमरे में दिन की तरह उजाला हो गया । मगर पीले नकाबपोश ने भी उसका जवाब तिलिस्मी खंजर ही से दिया क्योंकि उसके पास भी तिलिस्मी खंजर मौजूद था । तिलिस्मी खंजरों से लड़ाई अभी पूरी तौर से होने भी न पाई थी कि एक तरफ से आवाज आई, "पीले मरकंद, लेना जाने न पावे ! अब मुझे मालूम हो गया कि भैरोंसिह के तिलिस्मी खंजर और बटुए का चोर यही है, देखो इसकी कमर से वह बटुआ लटक रहा है ! अगर तुम इस बटुए के मालिक बन जाओगे तो फिर इस दुनिया में तुम्हारा मुकाबला करने वाला कोई भी न रहेगा क्योंकि यह तुम्हारे ही ऐसे ऐयारों के पास रहने योग्य है !"

यह एक ऐसी बात थी जिसने सबसे ज्यादा भैरोंसिह को चौंका ही नहीं दिया बल्कि बेचैन कर दिया । उसने कुँअर इन्द्रजीतसिंह से कहा, "बस आप कृपा करके अपना तिलिस्मी खंजर मुझे दीजिए, मैं स्वयं इसके पास जाकर अपनी चीज ले लूँगा, क्योंकि यहाँ पर तिलिस्मी खंजर के बिना काम न चलेगा और यह मौका भी हाथ से गंवा देने के लायक नहीं है ।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, बेशक ऐसा ही है, अच्छा चलो, मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ ।

आनन्दसिंह—और मैं ?

इन्द्रजीतसिंह—तुम इसी जगह खड़े रहो, दोनों भाइयों का एक साथ वहाँ चलना ठीक नहीं, अकेला मैं ही उन दोनों के लिए काफी हूँ ।

आनन्दसिंह—फिर भैरोंसिह जाकर क्या करेंगे ? तिलिस्मी खंजर की चमक में इनकी आँख खुली नहीं रह सकती ।

इन्द्रजीतसिंह—सो तो ठीक है ।

भैरोंसिह—अजी, आप इस समय ज्यादा सोच-विचार न कीजिए ! आप अपना खंजर मुझे दीजिये, बस मैं निपट लूँगा ।

इन्द्रजीत ने खंजर जमीन पर रख दिया और उसके जोड़ की अँगूठी भैरोंसिह की उँगली में पहना देने के बाद खंजर उठा लेने के लिए कहा । भैरोंसिह ने तिलिस्मी खंजर उठा लिया और उस छोटे दरवाजे के अन्दर जाकर बोला, "मैं भैरोंसिह स्वयं आ पहुँचा !"

भैरोंसिह के अन्दर जाते ही दरवाजा आप-से-आप बन्द हो गया और दोनों कुमार ताज्जुब से एक-दूसरे की तरफ देखने लगे ।

चन्द्रकान्ता सन्तति

अठारहवाँ भाग

1

कह सकते हैं कि तारासिंह के हाथ में नानक का मुकदमा दे ही दिया गया। राजा वीरेन्द्रसिंह ने तारासिंह को इस काम पर मुकर्रर किया था कि वह नानक के घर जाय और उसकी चालचलन तथा उसके घर के सच्चे-सच्चे हाल की तहकीकात करके लौट आवे मगर इसके पहले कि तारासिंह नानक की चालचलन और उसकी नीयत का हाल जाने, उसने नानक के घर ही की तहकीकात शुरू कर दी और उसकी स्त्री का भेद जानने के लिए उद्योग किया। जब नानक की स्त्री सहज ही में तारासिंह के पास आ गई तो उसे उसकी बदचलनी का विश्वास हो गया और उसने चाहा कि किसी तरह नानक की स्त्री को टाल दे और इसके बाद नानक की नीयत का अन्दाजा करे मगर उसकी कार्रवाई में उस समय विघ्न पड़ गया जब नानक की स्त्री तारासिंह के सामने जा बैठी और उसी समय बाहर से किसी के चिल्लाने की आवाज आई।

हम कह चुके हैं कि नानक के यहाँ एक मजदूरनी थी। वह नानक के काम की चाहे न हो मगर उसकी स्त्री के लिए उपयुक्त पात्र थी और उसके द्वारा नानक की स्त्री का सब काम चलता था। मगर इस तारासिंह वाले मामले में नानक की स्त्री श्यामा की बातचीत हनुमान छोकरे की मार्फत हुई थी, इसलिए बीच वाले मुनाफे की रकम में उस मजदूरनी के हाथ झंझी कौड़ी भी न लगी थी जिसका उसे बहुत रंज हुआ और वह दोस्ती के बदले में दुश्मनी करने पर उतारू हो गई। इसलिए कि श्यामारानी को उससे किसी तरह का पर्दा तो था ही नहीं, उसने मजदूरनी से अपना भेद तो सब कह दिया मगर उसके हानि-लाभ पर ध्यान न दिया। इसलिए वह मजदूरनी चुपचाप सब कार्रवाई देखती-सुनती और समझती रही, मगर जब श्यामारानी तारासिंह के यहाँ चली गई और कुछ देर बाद नानक घर में आया तो उसने अपना नाम प्रकट न करने का वादा कराके सब हाल नानक से कह दिया और तारासिंह का मकान दिखा देने के लिए भी तैयार हो गई क्योंकि उसे पता-ठिकाना तो मालूम हो ही चुका था।

नानक ने जब सुना कि उसकी स्त्री किसी परदेशी के घर गई है, तब उसे बड़ा

ही क्रोध आया और उसने ऐयारी के सामान से लैस होकर अकेले ही अपनी स्त्री का पीछा किया।

नानक ने यद्यपि किसी कारण से लोकलाज को तिलांजलि दे दी थी मगर ऐयारी को नहीं। उसे अपनी ऐयारी पर बहुत भरोसा था और वह दस-पाँच आदमियों में अकेला घुस कर लड़ने की हिम्मत भी रखता था। यही सबब था कि उसने किसी संगी-साथी का खयाल न करके अकेले ही श्यामारानी का पीछा किया. हाँ यदि उसे यह मालूम होता कि श्यामारानी का उपपति तारासिंह है तो कदापि अकेला न जाता।

नानक औरत के वेष में घर से बाहर निकला और जब उस मकान के पास पहुँचा जिसमें तारासिंह ने डेरा डाला था, तो कमन्द लगा कर मकान के ऊपर चढ़ गया और धीरे-धीरे उस कोठरी के पास जा पहुँचा जिसके अन्दर तारासिंह और श्यामारानी थी और बाहर तारासिंह का चेला और नानक का नौकर हनुमान हिफाजत कर रहा था। वहाँ पहुँचते ही उसने एक लात अपने नौकर की कमर में ऐसी जमाई कि वह तिलमिला गया और जब वह चिल्लाया तो उसे चिढ़ाने की नीयत से नानक स्वयं भी औरतों ही की तरह चिल्ला उठा।

यही वह चिल्लाने की आवाज थी जिसे कोठरी के अन्दर बैठे हुए तारासिंह और श्यामा ने सुना था। चिल्लाने की आवाज सुनते ही तारासिंह उठ खड़ा हुआ और हाथ में खंजर लिए कोठरी के बाहर निकला। वहाँ अपने चेले और हनुमान के अतिरिक्त एक औरत को खड़ा देख वह ताज्जुब करने लगा और उसने औरत अर्थात् नानक से पूछा, "तू कौन है ?"

नानक—पहले तू ही बता कि तू कौन है जिसमें तुझे मार डालने के बाद यह तो मालूम रहे कि मैंने फलाने को मारा था।

तारासिंह—तेरी ढिठाई पर मुझे ताज्जुब ही नहीं होता, बल्कि यह भी मालूम होता है कि तू औरत नहीं, कोई ऐयार है !

नानक—(गम्भीरता के साथ) बेशक मैं ऐयार हूँ तभी तो अकेले तेरे घर में घुस आया हूँ ! शैतान, तू नहीं जानता कि बुरे कर्मों का फल क्योंकर मिलता है और वह कितना बड़ा ऐयार है जिसकी स्त्री को तूने धोखा देकर बुला लिया है !

तारासिंह—(जोर से हँस कर) अ ह ह ह ! अब मुझे पूरा विश्वास हो गया कि बेहया नानक तू ही है और शायद अपनी पतिव्रता की आमदनी गिनने के लिए यहाँ आ पहुँचा है। अच्छा तो अब तुझे यह भी जान लेना चाहिए कि जिसका तू मुकाबला कर रहा है उसका नाम तारासिंह है और वह राजा वीरेन्द्रसिंह की आज्ञानुसार तेरे चालचलन की तहकीकात करने आया है।

तारासिंह और राजा वीरेन्द्रसिंह का नाम सुनते ही नानक सन्न हो गया। उधर उसकी स्त्री ने जब यह जाना कि इस कोठरी के बाहर उसका पति खड़ा है, तो वह नखरे से रोने और पीटने लगी तथा यह कहती हुई कोठरी के बाहर निकल कर नानक के पैरों पर गिर पड़ी कि मुझे तो तुम्हारा नाम लेकर हनुमान यहाँ ले आया है।

नानक थोड़ी देर तक तो सन्नाटे में रहा, इसके बाद तारासिंह की तरफ देख के बोला।

नानक—क्या ऐयारों का यही धर्म है कि दूसरों की औरतों को खराब करें और बदकारी का धब्बा अपने नाम के साथ लगावें !

तारासिंह—नहीं-नहीं, ऐयारों का यह काम नहीं है, और ऐयारों को यह भी उचित नहीं है कि सब तरफ का खयाल छोड़ केवल औरत की कमाई पर गुजारा करें। मैंने तेरी औरत को किसी बुरी नीयत से नहीं बुलाया बल्कि चालचलन का हाल जानने के लिए ऐसा किया है। जो बातें तेरे बारे में सुनी गई हैं और जो कुछ यहाँ आने पर मैंने मालूम की हैं उनसे जाना जाता है कि तू बड़ा ही कमीना और नमकहराम है। नमकहराम इसलिए कि मालिक के काम की तुझे कुछ भी फिक्र नहीं है और इसका सबूत केवल मनोरमा ही बहुत है जिसके साथ तू शादी किया चाहता था और जिसने जूतियों से तेरी पूजा ही नहीं की बल्कि तिलिस्मी खंजर भी तुझसे ले लिया।

नानक—यह कोई आवश्यक नहीं है कि ऐयारों का काम सदैव पूरा ही उतरा करे, कभी धोखा खाने में न आवे ! यदि मनोरमा की ऐयारी मुझ पर चल गई तो इसके बदले में कमीना और नमकहराम कहे जाने लायक मैं नहीं हो सकता। क्या तुमने और तुम्हारे बाप ने कभी धोखा नहीं खाया ? और मेरी स्त्री को जो तुम बदनाम कर रहे हो, वह तुम्हारी भूल है। वह तो खुद कह रही है कि 'मुझे तो तुम्हारा नाम लेकर हनुमान यहाँ ले आया है।' मेरी स्त्री बदकार नहीं है बल्कि वह साध्वी और सती है, असल में बदमाश तू है जो इस तरह धोखा देकर पराई स्त्री को अपने घर में बुलाता है और मुझे यहाँ पर अकेला जान कर गालियाँ देता है, नहीं तो मैं तुझसे किसी बात में कम नहीं हूँ।

तारासिंह—नहीं-नहीं, तू बहुत बातों में मुझसे बढ़ के है, और मैं भी अकेला समझ के तुझे गालियाँ नहीं देता बल्कि दोषी जान कर गालियाँ देता हूँ। तू अपनी स्त्री को साध्वी सती छोड़ के चाहे माता से भी बढ़ कर समझ ले, मेरी कोई हानि नहीं है। मैं वास्तव में जिस काम के लिए आया था उसे कर चुका, अब यहाँ से जाकर मालिक से सब कह दूंगा और तेरे गम्भीर स्वभाव की प्रशंसा भी करूँगा, जिसे सुनकर तेरा बाप बहुत ही प्रसन्न होगा जो अपनी एक भूल के कारण हद से ज्यादे पछता रहा है और बदनामी का टीका मिटाने के लिए जी-जान से उद्योग कर रहा है मगर तुझ कपूत के मारे कुछ भी करने नहीं पाता। (हँस कर) ऐसी कुलटा स्त्री को सती और साध्वी समझने वाला अपने को ऐयार कहे, यही आश्चर्य है।

नानक—मेरे ऐयार होने में तुम्हें कुछ शक है ?

तारासिंह—कुछ ? अजी, बिल्कुल शक है !

नानक—यदि तुम ऐसा समझ भी लो तो इसमें मेरी कुछ हानि नहीं है, इससे ज्यादा तुम और कुछ भी नहीं कर सकते कि यहाँ से जाकर राजा वीरेन्द्रसिंह से मेरी झूठी शिकायतें करो मगर इस बात को भी समझ लो कि मैं किसी का ताबेदार नहीं हूँ।

तारासिंह—(क्रोध से) तू किसी का ताबेदार नहीं है ?

तारासिंह को क्रोधित देखकर नानक डर गया, केवल इसलिए कि इस जगह

वह अकेला था और अकेले ही इस मकान में तारासिंह का मुकाबला करना अपनी ताकत से बाहर समझता था जिसके दो चेले भी यहाँ मौजूद थे, अस्तु, समय पर ध्यान देकर वह चुप हो गया मगर दिल में वह तारासिंह का जानी दुश्मन हो गया। उसने मन में निश्चय कर लिया कि तारासिंह को किसी-न-किसी ढंग से अवश्य नीचा दिखाना बल्कि मार डालना चाहिए।

नानक ने और भी न मालूम क्या सोचकर अपनी जुबान को रोका और सिर नीचा करके चुपचाप खड़ा रह गया। तारासिंह ने कहा, "बस, अब तू जा और अपनी सती-साध्वी स्त्री तथा नौकर को भी अपने साथ लेता जा!"

नानक ने इस आज्ञा को गनीमत समझा और चुपचाप वहाँ से रवाना हो गया। उसकी स्त्री और नौकर भी उसके पीछे चल पड़े।

उसी समय तारासिंह ने भी अपना डेरा कूच कर दिया और शहर के बाहर हो चुनार का रास्ता लिया, मगर दिल में सोच लिया कि कम्बख्त नानक अवश्य मेरा पीछा करेगा, बल्कि ताज्जुब नहीं कि धोखा देकर जान लेने की फिक्र भी करे।

2

संध्या होना ही चाहती है। पटने की बहुत बड़ी सराय के दरवाजे पर मुसाफिरों की भीड़ हो रही है। कई भटियारे भी मौजूद हैं जो तरह-तरह के आराम की लालच दे अपनी-अपनी तरफ मुसाफिरों को ले जाने का उद्योग कर रहे हैं, और मुसाफिर लोग भी अपनी-अपनी इच्छानुसार उनके साथ जाकर डेरा डाल रहे हैं। मुसाफिरों को भटियारी के सुपुर्द करके भटियारे पुनः सराय के फाटक पर लौट आते और नये मुसाफिरों को अपनी तरफ ले जाने का उद्योग करते हैं।

यह सराय बहुत बड़ी और इसका फाटक मजबूत तथा बड़ा था। फाटक के दोनों तरफ (मगर दरवाजे के अन्दर) बारह सिपाही और एक जमादार का डेरा था जो इस सराय में रहने वाले मुसाफिरों की हिफाजत के लिए राजा की तरफ से मुकर्रर थे, उनकी तनखाह सराय के भटियारों से वसूल की जाती थी। ये ही सिपाही बारी-बारी से घूमकर सराय के अन्दर पहरा दिया करते थे और जब मुसाफिरों को किसी तरह की तकलीफ होती तो सीधे राजदीवान के पास जाकर रपट किया करते थे।

थोड़ी देर बाद जब सब मुसाफिरों के टिकने का बन्दोबस्त हो गया और सराय के फाटक पर कुछ सन्नाटा हुआ तो उन सिपाहियों का जमादार अपनी जगह से उठकर सराय के अन्दर इसलिए घूमने लगा कि देखें सब मुसाफिरों का ठीक-ठीक बन्दोबस्त हो गया या नहीं। वह जमादार केवल घूमता ही न था, बल्कि भटियारों से भी तरह-तरह के सवाल करके मुसाफिरों का हाल दरियाफ्त करता जाता था।

जमादार घूमता हुआ जब उत्तर की तरफ वाले उस कमरे के पास पहुँचा जो

इस सराय में सबसे अच्छा, ऊँचा, दो-मंजिला और अमीरों के रहने लायक बना और सजा हुआ था तो कुछ देर के लिए अटक गया और उस कमरे तथा उसमें रहने वालों की तरफ ध्यान देकर देखने लगा, क्योंकि उसमें एक जौहरी का डेरा पड़ा हुआ था जो बहुत मालदार मालूम होता था। वह जवहरी भी जमादार को देखकर कमरे के बाहर निकल आया और इशारे से जमादार को अपने पास बुलाया।

पास पहुँचने पर जमादार ने उस जौहरी को एक रोआबदार और अमीर आदमी पाकर सलाम किया और सलाम का जवाब पाने के बाद बोला, "कहिए, क्या है ?"

जौहरी—मालूम होता है किस इस सराय की हिफाजत महाराज की तरफ से तुम्हारे सुपुर्द है और वे फाटक पर रहने वाले सिपाही सब तुम्हारे ही अधीन हैं।

जमादार—जी हाँ।

जौहरी—तो पहरे का इन्तजाम क्या है ? किस ढंग से पहरा दिया जाता है ?

जमादार—मेरे पास बारह सिपाही हैं जिनके तीन हिस्से कर देता हूँ, चार-चार आदमी एक-एक दफे घूमकर पहरा देते हैं।

जौहरी—एक साथ रहकर ?

जमादार—जी नहीं, चारों अलग-अलग रहते हैं, घूमते समय थोड़ी-थोड़ी देर में मुलाकात हुआ करती है।

जौहरी—मगर ऐसा तो··· (कुछ रुककर) यों खड़े-खड़े बातें करना मुनासिब न होगा, आओ, कमरे में जरा बैठ जाओ, हमें तुमसे कई जरूरी बातें करनी हैं।

इतना कहकर जौहरी कमरे के अन्दर चला गया और उसके पीछे-पीछे जमादार भी यह कहता हुआ चला गया कि "कुछ देर तक आपके पास ठहरने में हर्ज नहीं है मगर ज्यादा देर तक···"

वह कमरा कुछ तो पहले ही से दुरुस्त था और कुछ जौहरी साहब ने अपने सामान से उसे रौनक दे दी थी। फर्श के एक तरफ बड़ा-सा ऊनी गलीचा बिछा हुआ था, उसी पर जाकर जौहरी साहब बैठ गये और जमादार भी उन्हीं के पास, मगर गलीचे के नीचे बैठ गया। बैठने के साथ ही जौहरी साहब ने जेब में से पाँच अशर्फियाँ निकालीं और जमादार की तरफ बढ़ा के कहा, "अपने फायदे के लिए मैं तुम्हारा समय नष्ट कर रहा हूँ और करूँगा तब उसका हर्जाना पहले ही दे देना उचित है।"

जमादार—नहीं-नहीं, इसकी क्या जरूरत है। इतने समय में मेरा कोई हर्ज न होगा !

जौहरी—समय का व्यर्थ नष्ट होना ही हर्ज कहलाता है, मैं जिस तरह अपने समय की प्रतिष्ठा करता हूँ, उसी तरह दूसरे के समय की भी।

जमादार—हाँ, ठीक है। मगर···मैं तो···आपका···

जौहरी—नहीं-नहीं, इसे अवश्य लेना होगा।

यों तो जमादार ऊपर के मन से चाहे जो कहे, मगर अशर्फी देखकर उसके मुँह में पानी भर आया था। उसने सोचा कि यह जौहरी एक मामूली बात के लिए जब पाँच

अशर्फियाँ देता है तो अगर मैं इसका काम करूंगा तो बेशक बहुत बड़ी रकम मुझे देगा। ऐसा देने वाला तो आज तक मैंने देखा ही नहीं। अब इस रकम को हाथ से न जाने देना चाहिए।

जमादार—(अशर्फियाँ लेकर) कहिये, क्या आज्ञा होती है?

जौहरी—हाँ, तो चार आदमी का पहरा बँधा है?

जमादार—जी हाँ।

जौहरी—तो तुम्हें तो न घूमना पड़ता होगा?

जमादार—जी नहीं, मैं अपने ठिकाने उसी फाटक पर बैठा रहता हूँ और बाकी के आठ आदमी भी मेरे पास ही सोये रहते हैं। जब पहरा बदलने का समय होता है तो घण्टे की आवाज से होशियार करके दूसरे चार को पहरे पर भेज देता हूँ और उन चारों को बुलाकर आराम करने की आज्ञा देता हूँ। आप अपना मतलब तो कहिए!

जौहरी—मेरा मतलब केवल इतना ही है कि मैं आज चार दिन का जागा हुआ हूँ, सफर में आराम करने की नौबत नहीं आई, मगर आज सब दिन की कसर मिटाना अर्थात् अच्छी तरह सोना चाहता हूँ।

जमादार—तो आप आराम से सोइये, कोई हर्ज नहीं।

जौहरी—मैं क्योंकर बेफिक्री के साथ सो सकता हूँ! मेरे साथ बहुत बड़ी रकम है। (कमरे में रखे हुए सन्दूकों की तरफ इशारा करके) इन सभी में जवाहरात की चीजें भरी हुई हैं। जब तक मेरे मन के माफिक इनकी हिफाजत का बन्दोबस्त न हो जायगा, तब तक मुझे नींद आ ही नहीं सकती।

जमादार—आप इन्हें बहुत बड़ी हिफाजत के अन्दर समझिए, क्योंकि इस सराय के अन्दर से चोरी करके कोई बाहर नहीं निकल सकता, इसलिए कि फाटक बन्द करके ताली मैं अपने पास रखता हूँ और सिवाय फाटक के दूसरे किसी तरफ से किसी के निकल जाने का रास्ता ही नहीं है।

जौहरी—ठीक है, मगर आखिर बहुत सवेरे फाटक खुलता ही होगा। कौन ठिकाना मैं कई दिनों का जागा हुआ गहरी नींद में सो जाऊँ और मेरे आदमी भी मुझे बेफिक्र देख खुर्राटे लेने लगें और दिन चढ़े तक किसी की आँख ही न खुले, तो ऐसी हालत में कोई चोरी करेगा भी तो प्रातः समय में फाटक खुलने पर उसका निकल जाना कोई बड़ी बात न होगी।

जमादार—ठीक है, मगर मैं वादा करता हूँ कि सुबह मैं आपसे पूछकर फाटक खोलूंगा।

जौहरी—हो सकता है, परन्तु कदाचित चोरी हो ही जाय और चोर पकड़ा भी जाय तो मुझे राजा या किसी राजकर्मचारी के पास सबूत देने के लिए जाना पड़ेगा और ऐसा होने से मेरा बहुत बड़ा हर्ज होगा, ताज्जुब नहीं कि राजा साहब या राजकर्मचारी मुझे ठहरने की आज्ञा दें, मगर मैं एक दिन भी नहीं रुक सकता, इत्यादि बहुत-सी बातों को सोचकर मैं चाहता हूँ कि चोरी होने का शक ही न रहे और मैं आराम के साथ टाँगें फैलाकर सोऊँ और यह बात यदि तुम चाहो तो सहज ही में हो सकती है, इसके बदले

में मैं तुम्हें अच्छी तरह खुश कर दूंगा।

जमादार—कोई चिन्ता नहीं मैं अपने सिपाहियों को हुक्म दे दूँगा कि चार में से एक आदमी सिर्फ आपके दरवाजे पर और तीन आदमी तमाम सराय में घूम-घूमकर पहरा दिया करें।

जौहरी—बस-बस, इतने ही से मैं बेफिक्र हो जाऊँगा। अपने सिपाहियों को यह भी ताकीद कर देना कि मेरे सिपाहियों को सोने न दें ! यद्यपि मैं भी अपने आदमियों को जागने के लिए सख्त ताकीद कर दूँगा, मगर वे कई दिन के जागे हुए हैं, नींद आ जाय तो कोई ताज्जुब की बात नहीं है। हाँ, एक तरकीब मुझे और मालूम है जो इससे भी सहज में हो सकती है। अर्थात् तुम स्वयं अकेले भी यदि यहाँ अपने सोने का बन्दोबस्त रखोगे तो तमाम रात यहाँ अमन-चैन बना रहेगा, पहरा बदलने के समय···

जमादार—मैं आपका मतब समझ गया, मगर नहीं, ऐसा करने से मेरी बदनामी हो जायगी, मुझे हरदम फाटक पर मौजूद ही रहना चाहिए, क्योंकि रात भर में पचासों दफे लोग फाटक पर मेरे पास तरह-तरह की फरियाद करने आया करते हैं। खैर, आप इस बारे में चिन्ता न कीजिए, मैं आपके माल-असबाब की निगहबानी का पूरा इन्तजाम कर दूंगा, अगर आपका कुछ नुकसान हो तो मेरा जिम्मा।

कुछ और बातचीत करने के बाद जमादार अपने स्थान पर चला गया और थोड़ी देर बाद प्रतिज्ञानुसार उसने पहरे का बन्दोबस्त भी कर दिया।

पाठक, यह सौदागर महाराज हमारे उपन्यास का कोई नवीन पात्र नहीं है, बल्कि बहुत प्राचीन पात्र तारासिंह है जो नानक की चालचलन का पता लगाके चुनारगढ़ लौट जा रहा है। इसे इस बात का विश्वास हो गया कि नानक मेरा पीछा करेगा और ऐयारी के कायदे को छप्पर पर रख के जहाँ तक हो सकेगा, मुझे नुकसान पहुँचाने की कोशिश करेगा, इसलिए वह इस ढंग से सफर कर रहा है। हकीकत में तारासिंह का खयाल बहुत ठीक था। नानक, तारासिंह को नुकसान पहुँचाने, बल्कि जान से मार डालने की कसम खा चुका था। केवल इतना ही नहीं, बल्कि वह अपने बाप का तथा राजा वीरेन्द्रसिंह का भी विपक्षी बन गया था, क्योंकि अब उसे किसी तरफ से किसी तरह की उम्मीद न रही थी। अब वह (नानक) भी अपने शागिर्दों को साथ लिए हुए तारासिंह के पीछे-पीछे सफर कर रहा है और आज उसका भी डेरा इसी सराय में पड़ा है क्योंकि पहले ही से पता लगाए रहने के कारण वह तारासिंह की पूरी खबर रखता है और जानता है कि तारासिंह सौदागर बनकर इसी सराय में उतरा हुआ है। नानक यद्यपि तारासिंह को फँसाने का उद्योग कर रहा है, मगर उसे इस बात की खबर कुछ भी नहीं है कि तारासिंह भी मेरी तरफ से गाफिल नहीं है और उसे मेरा रत्ती-रत्ती हाल मालूम है। अब देखना चाहिए, कि किसकी चालाकी कहाँ तक चलती है।

रात आधी से ज्यादा जा चुकी है। सराय के अन्दर बिलकुल सन्नाटा तो नहीं है, मगर पहरा देने वालों के अतिरिक्त बहुत कम आदमी ऐसे हैं जिन्हें अपनी कोठरी के बाहर की खबर हो। सराय का बड़ा फाटक बन्द है, पहरे के सिपाहियों में से एक तो तारासिंह (सौदागर) के दरवाजे पर टहल रहा है और बाकी के तीन घूम-घूमकर इस

बहुत बड़ी सराय के अन्दर पहरा दे रहे हैं।

तारासिंह के साथ दो आदमी तो इसके शागिर्द ही हैं और दो नौकर ऐसे भी हैं जिन्हें तारासिंह ने रास्ते ही में तनख्वाह मुकर्रर करके रख लिया था, मगर ये दोनों नौकर तारासिंह के सच्चे हाल को कुछ भी नहीं जानते, इन्हें केवल इतना ही मालूम है कि तारासिंह एक अमीर सौदागर है। इस समय ये दोनों नौकर कमरे के बाहर दालान में पड़े खुर्राटे ले रहे हैं और तारासिंह तथा उसके शागिर्द कमरे के अन्दर बैठे आपस में कुछ बातचीत कर रहे हैं। कमरे का दरवाजा भिड़काया हुआ है।

तारासिंह का एक शागिर्द कमरे के बाहर निकला और उसने चारों तरफ निगाह दौड़ाने के बाद पहरे वाले सिपाही से कहा, "तुम्हें सौदागर साहब बुला रहे हैं। जाओ सुन आओ, तब तक तुम्हारे बदले मैं पहरा देता हूँ। अन्दर जाकर दरवाजा भिड़का देना, खुला मत रखना।"

हुक्म पाते ही लालची सिपाही, जिसे विश्वास था कि हमारे जमादार को कुछ मिल चुका है और मुझे भी अवश्य मिलेगा, कमरे के अन्दर घुस गया और बहुत देर तक तारासिंह का शागिर्द इधर-उधर टहलता रहा। इसी बीच में उसने देखा कि एक आदमी कई दफे इस तरफ आया, मगर किसी को टहलता देखकर लौट गया।

बहुत देर के बाद कमरे के अन्दर से दो आदमी बाहर निकले, एक तो तारासिंह का दूसरा शागिर्द और दूसरा स्वयं सौदागर-भेषधारी तारासिंह। तारासिंह के हाथ में सिपाही का ओढ़ना मौजूद था जिसे अपने शागिर्द को, जो पहरा दे रहा था, देखकर उसने कहा, "इसे ओढ़कर तुम एक किनारे सो जाओ, अगर कोई तुम्हारे पास आकर बेहोशी की दवा भी सुँघावे तो बेखटके सूँघ लेना और मुझको अपने से दूर न समझना।"

तारासिंह के शागिर्द ने ओढ़ना ले लिया और कहा—"जब से मैं टहल रहा हूँ तब से दो-तीन दफे दुश्मन आया, मगर मुझे होशियार देखकर लौट गया।"

तारासिंह--हाँ, काम में कुछ देर जरूर हो गई है। मैं उस सिपाही को बेहोश करके अपनी जगह सुला आया हूँ और चिराग गुल कर आया हूँ। (हाथ से इशारा करके) अब तुम इस खम्भे के पास लेट जाओ (दूसरे शागिर्द से) और तुम उस दरवाजे के पास जा लेटो। मैं भी किसी ठिकाने छिपकर तमाशा देखूँगा।" तारासिंह की आज्ञानुसार उसके दोनों शागिर्द बताए हुए ठिकाने पर जाकर लेट गये और तारासिंह अपने दरवाजे से कुछ दूर एक मुसाफिर की कोठरी के आगे जाकर लेट रहा, मगर इस ढंग से कि अपनी तरफ की सब कार्रवाई अच्छी तरह देख सके।

आधे घण्टे के बाद तारासिंह ने देखा कि दो आदमी उसके दरवाजे पर आकर खड़े हो गए हैं जिनकी सूरत अँधेरे के सबब दिखाई नहीं देती और यह भी नहीं जान पड़ता कि वे दोनों अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए हैं या नहीं। कुछ अटककर उन दोनों आदमियों ने तारासिंह के आदमियों को देखा-भाला, इसके बाद एक आदमी कमरे का दरवाजा खोलकर अन्दर घुस गया और आधी घड़ी के बाद जब वह कमरे के बाहर निकला तो उसकी पीठ पर एक बड़ी-सी गठरी भी दिखाई पड़ी। गठरी पीठ पर लादे हुए अपने साथी को लेकर वह आदमी सराय के दूसरे भाग की तरफ चला गया। जब

वह दूर निकल गया तो तारासिंह अपने दरवाजे पर आया और शागिर्दों को चैतन्य पाने पर समझ गया कि दुश्मन ने उसके आदमी को बेहोशी की दवा नहीं सुँघाई थी। तारासिंह के दोनों शागिर्द उठे, मगर तारासिंह उन्हें उसी तरह लेटे रहने की आज्ञा देकर अपने कमरे के अन्दर चला गया और भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया। रोशनी करने के बाद तारासिंह ने देखा कि दुश्मन ने उसकी कोई चीज नहीं चुराई है, वह केवल उस सिपाही को उठाकर ले गया है जिसे तारासिंह अपनी सूरत का सौदागर बनाकर अपनी जगह लिटा आया था। तारासिंह अपनी कार्रवाई पर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने कमरे के बाहर निकलकर अपने शागिर्दों को उठाया और कहा, 'हमारा मतलब सिद्ध हो गया, अब इसमें कोई सन्देह नहीं कि कम्बख्त नानक अपनी मुराद पूरी हो गई समझ के इसी समय सराय का फाटक खुलवाकर निकल जायगा और मैं भी ऐसा ही चाहता हूँ, अस्तु अब उचित है कि तुम दोनों में से एक आदमी तो यहाँ पहरा दे और एक आदमी सराय के फाटक की तरफ जाय और छिपकर मालूम करे कि नानक कब सराय के बाहर निकलता है। जिस समय वह सराय के बाहर हो उसी समय मुझे इत्तिला मिले।''

इतना कहकर तारासिंह कमरे के अन्दर चला गया और भीतर से दरवाजा बन्द कर लेने के बाद कमरे की छत पर चढ़ गया, इसलिए कि वह कमरे के ऊपर से अपने मतलब की बात बहुत-कुछ देख सकता था।

इस समय नानक की खुशी का कोई ठिकाना न था। वह समझे हुए था कि हमने तारासिंह को गिरफ्तार कर लिया, अस्तु जहाँ तक जल्द हो सके सराय के बाहर निकल जाना चाहिए। इसी खयाल से उसने अपना डेरा कूच कर दिया और सराय के फाटक पर आकर जमादार को बहुत-कुछ कह-सुनकर याद दिला के दरवाजा खुलवाया और बाहर हो गया।

तारासिंह को जब मालूम हुआ कि नानक सराय के बाहर निकल गया तब उसने यहाँ चोरी हो जाने की खबर मशहूर करने का बन्दोबस्त किया। उसके पास जो सन्दूक थे, जिनमें कीमती माल होने का लोगों या जमादार को गुमान था, उनका ताला तोड़कर खोल दिया क्योंकि वास्तव में सन्दूक बिल्कुल खाली केवल दिखाने के लिए थे। इसके बाद अपने नौकरों को होशियार किया और खूब रोशनी करके 'चोर'-'चोर' का हल्ला मचाया और जाहिर किया कि हमारी लाखों रुपये की चीज (जवाहिरात) चोरी हो गई।

चोरी की खबर सुन बेचारा जमादार दौड़ा हुआ तारासिंह के पास आया जिसे देखते ही तारासिंह ने रोनी सूरत बनाकर कहा, ''देखो जमादार, मैं पहले ही कहता था कि मेरे असबाब की खूब हिजाजत होनी चाहिए! आखिर मेरे यहाँ चोरी हो ही गयी! मालूम होता है कि तुम्हारे सिपाही ने मिलकर चोरी करवा दी क्योंकि तुम्हारा सिपाही दिखायी नहीं देता। कहो, अब हम अपने लाखों रुपये के माल का दावा किस पर करें?''

तारासिंह की बात सुनते ही जमादार के तो होश उड़ गए। उसने टूटे हुए सन्दूकों को भी अपनी आँखों से देख लिया और खोज करने पर उस सिपाही को भी न पाया जिसका इस समय पहरे पर मौजूद रहना वाजिब था। यद्यपि जमादार ने उसी समय सिपाहियों को फाटक पर होशियार रहने का हुक्म दे दिया मगर इस बात का उसे बहुत

रंज हुआ कि उसने थोड़ी ही देर पहले एक आदमी को डेरा उठाकर सराय के बाहर चले जाने दिया था। उसने तुरन्त ही कई सिपाहियों को उसकी गिरफ्तारी के लिए रवाना किया और तारासिंह से कहा, "मैं इसी समय इस मामले की इत्तिला करने राज-दीवान के पास जाता हूँ।"

तारासिंह—तुम जहाँ चाहो वहाँ जाओ मगर हमारा तो नुकसान हो ही गया। अस्तु, हम भी अपने मालिक के पास इस बात की इत्तिला करने जाते हैं।

जमादार—(ताज्जुब से) तो क्या आप स्वयं मालिक नहीं हैं?

तारासिंह—नहीं, हम मालिक नहीं हैं, बल्कि मालिक के गुमाश्ते हैं। हमें इस बात का बहुत रंज है कि तुमने हमसे पूछे बिना सराय का फाटक खोल दिया और चोर को सराय के बाहर निकल जाने की इजाजत दे दी, यद्यपि तुम मुझसे कह चुके थे कि आपसे पूछे बिना सराय का फाटक न खोलेंगे और इसी हिफाजत के लिए हमने अपनी जेब की अशर्फियाँ तुम्हारी जेब में डाल दी थीं, मगर अफसोस, मुझे बात की बिल्कुल खबर न थी कि तुम हद से ज्यादा लालची हो, हमारा माल चोरी करवा दोगे और चोर से गहरी रकम रिश्वत लेकर उसे फाटक के बाहर निकल जाने की आज्ञा दे दोगे, और मैं यह भी नहीं जानता था कि इस सराय की हिफाजत करन वाले इस किस्म का रोजगार करते हैं, अगर जानता तो ऐसी सराय में कभी थूकने भी न आता।

तारासिंह ने धमकी के ढंग पर ऐसी-ऐसी बातें जमादार से कहीं कि वह डर गया और सोचने लगा कि नाहक मैंने इनसे पूछे बिना सराय का फाटक खोलकर किसी को जाने दिया, अगर किसी को जाने न देता तो बेशक इनका माल सराय के अन्दर से ही निकल आता, अब बेशक मैं दोषी ठहरता हूँ, ताज्जुब नहीं कि सौदागर की बातों पर दीवान साहब को भी यह शक हो जाय कि जमादार ने रिश्वत ली है। अगर ऐसा हुआ तो मैं कहीं का भी न रहूँगा, मेरी बड़ी दुर्गति की जायगी। चोरी भी ऐसी नहीं है कि जिसे मैं अपने से पूरी कर सकूँ—इत्यादि बातें सोचता हुआ जमादार बहुत ही घबरा गया और बड़ी नर्मी और आजिजी के साथ तारासिंह से माफी माँगकर बोला, "निःसंदेह मुझसे बड़ी भूल हो गई, मगर मैं आपसे वादा करता हूँ कि उस चोर को जो मुझे धोखा देकर और फाटक खुलवाकर चला गया है, अभी गिरफ्तार कर लूँगा, परन्तु मेरी जिन्दगी आपके हाथ में है, अगर आप मुझ पर दया करके फाटक खोल देने वाले मेरे कसूर को छिपावेंगे तो मेरी जान बच जायगी, नहीं तो राजा साहब मेरा सिर कटवा डालेंगे और इससे आपका कुछ लाभ न होगा। मैं कसम खाकर कहता हूँ कि मैंने उससे एक कौड़ी भी रिश्वत में नहीं ली है! मुझे उस कम्बख्त ने पूरा धोखा दिया है, मगर मैं उसे निःसन्देह गिरफ्तार करूँगा और आपकी रकम को जाने न दूँगा। यदि आपको मुझ पर शक हो और आप समझते हों कि मैंने रिश्वत ली है तो फाटक पर चलकर मेरी कोठरी की तलाशी ले लीजिए और जो कुछ निकले, चाहे वह आपका दिया हो या मेरा खास हो, वह सब आप ले लीजिए मगर आप मेरी जान बचाइये!"

जमादार ने तारासिंह की हद से ज्यादा खुशामद की और यहाँ तक गिड़गिड़ाया कि तारासिंह का दिल हिल गया मगर अपना काम निकालना भी बहुत जरूरी था इस-

लिए चालबाजी के साथ उसने जमादार का कसूर माफ करके कहा, "अच्छा मैं कसूर तो तुम्हारा माफ कर देता हूँ मगर इस समय जो कुछ मैं तुमसे कहता हूँ उसे बड़ी होशियारी के साथ करना होगा, अगर कसर करोगे तो तुम्हारे हक में अच्छा न होगा।"

जमादार—नहीं-नहीं, मैं जरा भी कसर न करूँगा, जो कुछ आप हुक्म देंगे, वही करूँगा, कहिये क्या आज्ञा होती है ?

तारासिंह—एक तो मैं अपनी जुबान से झूठ कदापि न बोलूंगा।

जमादार—(काँपकर) तब मेरी जान कैसे बचेगी ?

तारासिंह—तुम मेरी बात पूरी हो लेने दो—दूसरे यहाँ से तुरन्त चले जाने की जरूरत भी है, इसलिए मैं अपने इन (अपने शागिर्दों की तरफ इशारा करके) दोनों साथियों को यहाँ छोड़ जाता हूँ, तुम जब चोर को गिरफ्तार करके अपने राजदीवान या राजा के पास जाना तो इन्हीं दोनों को ले जाना, ये दोनों आदमी अपने को मेरा नौकर कहकर चोरी गई हुई चीजों को बखूबी पहचान लेंगे और ये चोरी के समय मेरा यहाँ मौजूद रहना तथा तुम्हारा कसूर कुछ भी जाहिर न करेंगे और तुम भी इस बात को जाहिर मत करना कि सौदागर का गुमाश्ता भी यहाँ मौजूद था। ये दोनों आदमी अपने काम को पूरी तरह से अंजाम दे लेंगे। हाँ एक बात कहना तो भूल गया, इस सराय के अन्दर जितने आदमी हैं उन सभी की भी तलाशी ले लेना।

जमादार—(दिल में खुश होकर) जरूर उन सभी की तलाशी ले ली जायगी और जो कुछ आपने आज्ञा दी है वह सब किया जायगा। आप अपना हर्ज न कीजिए और जाइए, यहाँ मैं किसी तरह का नुकसान होने न दूँगा।

सौदागर (तारासिंह) चला जायगा, यह जानकर जमादार अपने दिल में बहुत प्रसन्न हुआ क्योंकि इनके रहने से उसे अपना कसूर प्रकट हो जाने का डर भी था।

जमादार से और भी कुछ बातें करने के बाद तारासिंह अपने दोनों शागिर्दों को एकान्त में ले गया और हर तरह की बातें समझाने के बाद यह भी कहा, "तुम लोग मेरे चले जाने के बाद किसी तरह घबराना नहीं और मुझे हर वक्त अपने पास मौजूद समझना।"

इन सब बातों से छुट्टी पाकर तारासिंह अकेले ही वहाँ से रवाना हो गया।

3

तारासिंह के चले जाने बाद सराय में चोरी की खबर बड़ी तेजी के साथ फैल गई। जितने मुसाफिर उसमें उतरे हुए थे, सब रोके गये। राजदीवान को भी खबर हो गई, वह भी बहुत से सिपाहियों को साथ लेकर सराय में आ मौजूद हुआ। खूब होहल्ला मचा, चारों तरफ तरफ तलाशी और तहकीकात की कार्रवाई होने लगी, मगर सभी को निश्चय इसी बात का था कि चोर सिवाय उसके और कोई नहीं है जो रात रहते

ही फाटक खुलवाकर सराय के बाहर निकल गया है। पहरे वाले सिपाही के गायब हो जाने से और भी परेशानी हो रही थी। चोर की गिरफ्तारी में कई सिपाही तो जा ही चुके थे मगर दीवान साहब के हुक्म से और भी बहुत से सिपाही भेजे गये, आखिर नतीजा यह निकला कि दोपहर के पहले ही हजरत नानक प्रसाद गिरफ्तार होकर सराय के अन्दर आ पहुँचे जो अपने खयाल में तारासिंह को गिरफ्तार कर ले गये थे और अभी तक सौदागर का चेहरा धोकर देखने भी न पाये थे, मगर उन कृपानिधान को ताज्जुब था तो इस बात का कि वे चोरी के कसूर में गिरफ्तार किए गये थे।

अभी तक दीवान साहब सराय के अन्दर मौजूद थे। नानक के आते ही चारों तरफ से मुसाफिरों की भीड़ आ जुटी और हर तरफ से नानक पर गालियों की बौछार होने लगी। जिस कमरे में तारासिंह उतरा हुआ था, उसी के आगे वाले दालान में सुन्दर फर्श के ऊपर दीवान साहब विराज रहे थे और उनके पास ही तारासिंह के दोनों शागिर्द भी अपनी असली सूरत में बैठे हुए थे। सामने आते ही दीवान साहब ने क्रोधभरी आवाज में नानक से कहा, "क्यों बे! तेरा इतना बड़ा हौसला हो गया कि तू हमारी सराय में आकर इतनी बड़ी चोरी करे!"

नानक—(अपने को बेतरह फँसा हुआ देख हाथ जोड़ के) मुझ पर चोरी का इलजाम किसी तरह नहीं लग सकता। मुझे यह मालूम होना चाहिए कि यहाँ किसकी चोरी हुई है और मुझ पर चोरी का इलजाम कौन लगा रहा है?

दीवान—(तारासिंह के दोनों शागिर्दों की तरफ इशारा करके) इनका माल चोरी गया है और यहाँ के सभी आदमी तुझे चोर कहते हैं।

नानक—झूठ, बिल्कुल झूठ।

तारासिंह का एक शागिर्द—(दीवान से) यदि हर्ज न हो तो पहले इसका चेहरा धुलवा दिया जाय।

दीवान—क्या तुम्हें कुछ दूसरे ढंग का भी शक है? अच्छा (जमादार से) पानी मँगा कर इस चोर का चेहरा धुलवाओ।

जमादार—जो हुक्म।

नानक—चेहरा धुलवा कर क्या कीजिएगा? हम ऐयारों की सूरत हरदम बदली ही रहती है, खास कर सफर में।

दीवान—तू ऐयार है! ऐयार लोग भी कहीं चोरी करते हैं?

नानक—जी मैं कह चुका हूँ कि चोरी का इलजाम मुझ पर नहीं लग सकता।

तारा का एक शागिर्द—चोरी तो अच्छी तरह साबित हो जायगी, जरा अपने माल-असबाब की तलाशी तो होने दो! (दीवान से) लीजिए, पानी भी आ गया, अब इसका चेहरा धुलवाइये।

जमादार—(पानी की गगरी नानक के सामने धर कर) लो, अब पहले अपना चेहरा साफ कर डालो।

नानक—मैं अभी अपना चेहरा साफ कर डालता हूँ। चेहरा धोने में मुझे कोई उज्र नहीं है, क्योंकि मैं पहले ही कह चुका हूँ कि ऐयारों की सूरत प्रायः बदली रहती है

और मैं भी एक ऐयार हूँ।

इतना कह कर नानक ने अपना चेहरा साफ कर डाला और दीवान साहब से कहा, "कहिए, अब क्या हुक्म होता है ?"

दीवान—अब तुम्हारी तलाशी ली जायगी।

नानक—तलाशी देने में भी मुझे कुछ उज्र न होगा, मगर मुझे पहले उन चीजों की फेहरिस्त मिल जानी चाहिए जो चोरी गई हैं। कहीं ऐसा न हो कि मेरी कुछ चीजों को ये नकली सौदागर साहब अपनी ही चीज बतावें, उस समय ताज्जुब नहीं कि मैं अपनी ही चीजों का चोर बन जाऊँ।

दीवान—चीजों की फेहरिस्त जमादार के पास मौजूद है, तुम्हारी चीजों का तुम्हें कोई चोर नहीं बना सकता। हाँ, तुमने इन्हें नकली सौदागर क्यों कहा ?

नानक—इसलिए कि ये दोनों भी मेरी तरह से ऐयार हैं और इसके मालिक तारासिंह को मैंने गिरफ्तार कर लिया है, दुश्मनी से नहीं बल्कि आपस की दिल्लगी से, क्योंकि हम दोनों एक ही मालिक अर्थात् राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयार हैं, धोखा देने की शर्त लग गई थी।

राजा वीरेन्द्रसिंह का नाम सुनते ही दीवान साहब के कान खड़े हो गए और वे ताज्जुब के साथ तारासिंह के दोनों शागिर्दों की तरफ देखने लगे। तारासिंह के एक शागिर्द ने कहा, "इसने तो झूठ बोलने पर कमर बाँध रखी है ! यह चाहे राजा वीरेन्द्रसिंह का ऐयार हो, मगर हम लोगों को उनसे कोई सरोकार नहीं है। हम लोग न तो ऐयार हैं और न हम लोगों का कोई मालिक ही हमारे साथ था, जिसे इसने गिरफ्तार कर लिया हो। यह तो अपने को ऐयार बताता ही है फिर अगर झूठ बोल कर आपको धोखा देने का उद्योग करे तो ताज्जुब ही क्या है ? इसकी झुठाई-सचाई का हाल तो इतने ही से खुल जायगा कि एक तो इसकी तलाशी ले ली जाय, दूसरे इससे ऐयारी की सनद माँगी जाय जो राजा वीरेन्द्रसिंह की तरफ से नियमानुसार इसे मिली होगी।

दीवान—तुम्हारा कहना बहुत ठीक है, ऐयारों के पास उनके मालिक की सनद जरूर हुआ करती है। अगर यह प्रतापी महाराज वीरेन्द्रसिंह का ऐयार होगा तो इसके पास सनद जरूर होगी और तलाशी लेने पर यह भी मालूम हो जायगा कि इसने जिसे गिरफ्तार किया है, वह कौन है। (नानक से) अगर तुम राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयार हो तो उनकी सनद हमको दिखाओ। हाँ, और यह भी बताओ कि अगर तुम ऐयार हो तो इतनी जल्दी गिरफ्तार क्यों हो गए क्योंकि ऐयार लोग जहाँ कब्जे के बाहर हुए तहाँ उनका गिरफ्तार होना कठिन हो जाता है।

नानक—मैं गिरफ्तार कदापि न होता मगर अफसोस, मुझे यह बात बिल्कुल मालूम न थी कि तारासिंह को मेरी पूरी खबर है और वह मेरी तरफ से होशियार है तथा उसने पहले ही से मुझे गिरफ्तार करा देने का बन्दोबस्त कर रखा है।

दीवान—खैर, तुम ऐयारी की सनद दिखाओ।

नानक—(कुछ लाजवाब-सा होकर) सनद मुझे अभी नहीं मिली है।

तारासिंह का शागिर्द—(दीवान से) देखिए, मैं कहता था न कि यह झूठा है !

दीवान—(क्रोध से) बेशक झूठा है और चोर भी है। (जमादार से) हाँ, अब इसकी तलाशी ली जाय।

जमादार—जो आज्ञा।

नानक की तलाशी ली गई और दो ही तीन गठरियों बाद वह बड़ी गठरी खोली गई, जिसमें सराय का सिपाही बेचारा बँधा हुआ था।

नानक ने उस बेहोश सिपाही की तरफ इशारा करके कहा, "देखिए यही तारासिंह है जो सौदागर बना हुआ सफर कर रहा था।"

तारासिंह का शागिर्द—(दीवान से) यह बात भी इसकी झूठ निकलेगी, आप पहले इस बेहोश का चेहरा धुलवाइए।

दीवान—हाँ, मेरा भी यही इरादा है। (जमादार से) इसका चेहरा तो धोकर साफ करो।

नानक—मैं खुद इसका चेहरा धोकर साफ किये देता हूँ और तब आपको मालूम हो जायगा कि मैं झूठा हूँ या सच्चा।

नानक ने उस सिपाही का चेहरा धोकर साफ किया। मगर अफसोस, नानक की मुराद पूरी न हुई और वह सिर से पैर तक झूठा साबित हो गया। अपने यहाँ के सिपाही को ऐसी अवस्था में देख कर जमादार और दीवान साहब को क्रोध चढ़ आया। जमादार ने किसी तरह का खयाल न करके एक लात नानक की कमर पर ऐसी जमाई कि वह लुढ़क गया। मगर बहुत जल्दी सम्हल कर जमादार को मारने के लिए तैयार हुआ। नानक का हर्बा पहले ही ले लिया गया था और अगर इस समय उसके पास कोई हर्बा मौजूद होता तो बेशक वह जमादार की जान ले लेता। मगर वह कुछ भी न कर सका, उल्टा उसे जोश में आया हुआ देख सभी को क्रोध चढ़ आया। सराय में उतरे हुए मुसाफिर भी उसकी तरफ से चिढ़े हुए थे। क्योंकि वे बेचारे बेकसूर रोके गये थे और उन पर शक भी किया गया था, अतएव एकदम से बहुत से आदमी नानक पर टूट पड़े और मनमानी पूजा करने के बाद उसे हर तरह से बेकार कर दिया। इसके बाद दीवान साहब की आज्ञानुसार उसकी और उसके साथियों की मुश्कें कस दी गईं।

दीवान साहब ने जमादार को आज्ञा दी कि—यह शैतान (नानक) बेशक झूठा और चोर है, इसने बहुत ही बुरा किया कि सरकारी नौकर को गिरफ्तार कर लिया। तुम कह चुके हो कि उस समय यही सिपाही सौदागर के दरवाजे पर पहरा दे रहा था। बेशक चोरी करने के लिए ही इस सिपाही को इसने गिरफ्तार किया होगा। अब इसका मुकदमा थोड़ी देर में निपटने वाला नहीं है और इस समय बहुत देर भी हो गई है। अस्तु, तुम इसे और इसके साथियों को कैदखाने में भेज दो तथा इसका माल-असबाव इसी सराय की किसी कोठरी में बन्द करके ताली मुझे दे दो और सराय के सब मुसाफिरों को छोड़ दो। (तारासिंह के शागिर्दों की तरफ देख कर) क्यों साहब, अब मुसाफिरों को रोकने की तो कोई जरूरत नहीं है?

तारासिंह का शागिर्द—बेशक बेचारे मुसाफिरों को छोड़ देना चाहिए, क्योंकि उनका कोई कसूर नहीं। मेरा माल इसी ने चुराया है। अगर इसके असबाब में से कुछ

भी न निकलेगा तो भी हम यही समझेंगे कि सराय से बाहर दूर जाकर इसने किसी ठिकाने चोरी का माल गाड़ दिया है।

दीवान—बेशक, ऐसा ही है ! (जमादार से) अच्छा जो कुछ हुक्म दिया गया है उसे जल्द पूरा करो।

जमादार—जो आज्ञा।

बात की बात में वह सराय मुसाफिरों से खाली हो गई। नानक हवालात में भेज दिया गया और उसका असबाब एक कोठरी में रखकर ताली दीवान साहब को दे दी गई। उस समय तारासिंह के दोनों शागिर्दों ने दीवान साहब से कहा—"इस शैतान का मामला दो-एक दिन में निपटता नजर नहीं आता, इसलिए हम लोग भी चाहते हैं कि यहाँ से जाकर अपने मालिक को इस मामले की खबर दें और उन्हें भी सरकार के पास ले आवें, अगर ऐसा न करेंगे तो मालिक की तरफ से हम लोगों पर बड़ा दोष लगाया जायगा। यदि आप चाहें तो जमामत में हमारा माल-असबाब रख सकते हैं।"

दीवान—तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। हम खुशी से इजाजत देते हैं कि तुम लोग जाओ और अपने मालिक को ले आओ, जमानत में तुम लोगों का माल-असबाब रखना हम मुनासिब नहीं समझते, इसे तुम लोग साथ ही ले जाओ।

तारासिंह के दोनों शागिर्द—(दीवान साहब को सलाम करके) आपने बड़ी कृपा की जो हम लोगों को जाने का आज्ञा दे दी। हम लोग बहुत ही जल्द अपने मालिक को लेकर हाजिर होंगे।

तारासिंह के दोनों शागिर्दों ने भी डेरा कूच कर दिया और बेचारे नानक को खटाई में डाल गए। देखना चाहिए अब उस पर क्या गुजरती है। वह भी इन लोगों से बदला लिए बिना रहता नजर नहीं आता।

4

भैरोंसिह के चले जाने के बाद दरवाजा बन्द हो जाने से दोनों कुमारों को ताज्जुब ही नहीं हुआ बल्कि उन्हें भैरोंसिह की तरफ से एक प्रकार की फिक्र लग गई। आनन्दसिह ने अपने बड़े भाई की तरफ देखकर कहा, "अब इस रात के समय भैरोंसिह के लिए हम लोग क्या कर सकते हैं ?"

इन्द्रजीतसिह—कुछ भी नहीं। मगर भैरोंसिह के हाथ में तिलिस्मी खंजर है, वह यकायक किसी के कब्जे में न आ सकेगा।

आनन्दसिह--पहले भी तो उनके पास तिलिस्मी खंजर था, बल्कि ऐयारी का बटुआ भी मौजूद था, तब उन्होंने क्या कर लिया था ?

इन्द्रजीतसिह—सो तो ठीक कहते हो, तिलिस्म के अन्दर हर तरह से बचे रहना मामूली काम नहीं है, मगर रात के समय अब हो ही क्या सकता है ?

आनन्दसिंह—मेरी राय है कि तिलिस्मी खंजर से इस छोटे से दरवाजे को काटने का उद्योग किया जाये, शायद···

इन्द्रजीतसिंह—अच्छी बात है, कोशिश करो।

आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खंजर का वार उस छोटे से दरवाजे पर किया; मगर कोई नतीजा न निकला, आखिर दोनों भाई लाचार होकर वहाँ से हटे और किसी दालान में एक किनारे बैठकर बातचीत में रात बिताने का उद्योग करने लगे।

रात के साथ-ही-साथ दोनों कुमारों की उदासी भी कुछ-कुछ जाती रही और फूलों की महक से बसी हुई सुबह की ठण्डी हवा ने उद्योग और उत्साह का संचार किया। दोनों के पराधीन और चुटीले दिलों में किसी की याद ने गुदगुदी पैदा कर दी और बारह पर्दे के अन्दर से भी खुशबू फैलाने वाली, मगर कुछ दिनों तक नाउम्मीदी के पाले से गन्धहीन हो गई कलियों पर आशारूपी वायु के झपेटे से बहक कर आए हुए शृंगार-रूपी भ्रमर इस समय पुनः गुंजार करने लग गये।

क्या आज दिन भर की मेहनत से भी अपने प्रेमी का पता न लगा सकेंगे? क्या आज दिन भर के उद्योग की सहायता से भी इस छोटी-सी मगर अनूठी रंगशाला के नेपथ्य में से किसी की खोज निकालने में सफल मनोरथ न होंगे? क्या आज दिन भर की कार्र-वाई भी हमें विश्वास न दिला सकेगी कि इस जानोदिल का मालिक इसी स्थान में आ पहुँचा है जैसा कि सुन चुके हैं और क्या आज दिन भर की उपासना का फल भी जुदाई की उस काली घटा को दूर न कर सकेगा, जिसने इन चकोरों को जीवन-दान देने वाले पूर्णचन्द्र को छिपा रखा है? नहीं-नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता, आज दिन भर में हम बहुत-कुछ कर सकेंगे और उनका पता अवश्य लगावेंगे, जिन पर अपनी जिन्दगी का भरोसा समझते हैं और जिनके मिलाप से बढ़कर इस दुनिया में और किसी चीज को नहीं मानते।

इसी तरह की बातें सोचते हुए दोनों कुमार खड़े हो गये। नहर के किनारे आकर हाथ-मुँह धोने के बाद घड़ी भर के अन्दर ही जरूरी कामों से छुट्टी पाकर वे बाग में घूमने और वहाँ की हर एक चीज को गौर से देखने लगे और थोड़ी ही देर में बारहदरी के सामने वाली उस दोमंजिली इमारत के नीचे जा पहुँचे, जिसके ऊपर वाली मंजिल में रात को कोई काम करते हुए भैरोंसिंह ने कई आदमियों को देखा था।

इस इमारत के नीचे वाला भाग ऊपर वाले हिस्से के विपरीत दरवाजे बल्कि दरवाजे के किसी नामोनिशान तक से भी खाली था। बाग की तरफ वाली नीचे की दीवार साफ तथा चिकने संगमर्मर की बनी हुई थी और बीचोंबीच चार हाथ ऊँचा और दो हाथ चौड़ा स्याह पत्थर का एक टुकड़ा लगा हुआ था। उसमें नीचे लिखे मोटे छत्तीस अक्षर खुदे हुए थे, जिन्हें दोनों कुमार बड़े गौर से देखने और उनका मतलब जानने के लिए उद्योग करने लगे।

वे अक्षर ये थे—

ने	ए	ती	के	स्म	स्सों
हि	को	ड़	की	उ	ति
स्से	का	स	लि	हि	न
या	से	न	न	टू	र
य	क	ल	सैं	जो	गे
रो	ख	हाँ	टें	क	रो

दो घड़ी तक गौर करने पर कुँअर इन्द्रजीतसिंह उनका मतलब समझ गये और अपने छोटे भाई कुँअर आनन्दसिंह को भी समझाया। इसके बाद दोनों भाइयों ने जोर करके उस पत्थर को दबाया, तो वह अन्दर की तरफ घुसकर जमीन के बराबर हो गया और अन्दर जाने लायक एक खासा दरवाजा दिखाई देने लगा, साथ ही इसके भीतर की तरफ अन्धकार भी मालूम हुआ। इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खंजर की रोशनी करके आगे चलने के लिए आनन्दसिंह से कहा।

तिलिस्मी खंजर की रोशनी के सहारे दोनों भाई उस दरवाजे के अन्दर चले गये और एक छोटे से कमरे में पहुँचे जिसके बीचोंबीच से ऊपर की मंजिल में जाने के लिए छोटी-छोटी चक्करदार सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। उन्हीं सीढ़ियों की राह से दोनों कुमार ऊपर वाली मंजिल पर चढ़ गए और एक ऐसी कोठरी में पहुँचे, जिसकी बनावट अर्ध-चन्द्र के ढंग की थी और तीन दरवाजे बाग की तरफ उस बारहदरी के ठीक सामने थे, जिसमें रात को दोनों कुमारों ने आराम किया था।

बाग की तरफ वाले तीनों दरवाजे खोल देने से उस कोठरी के अन्दर अच्छी तरह उजाला हो गया, उस समय आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खंजर की रोशनी बन्द की और उसे कमर में रखने के बाद अपने भाई से कहा—

आनन्दसिंह—इसी कोठरी में रात को भैरोंसिंह ने कई आदमियों को चलते-फिरते तथा काम करते देखा था, और मालूम होता है कि इसके दोनों तरफ की कोठरियों का सिलसिला एक-दूसरे से लगा हुआ है और सभी का एक-दूसरे से सम्बन्ध है।

इन्द्रजीतसिंह—मैं भी ऐसा ही विश्वास करता हूँ, इस दाहिने बगल वाली दूसरी कोठरी का दरवाजा खोलो और देखो कि उसके अन्दर क्या है।

बड़े कुमार की आज्ञानुसार आनन्दसिंह ने बगल वाली दूसरी कोठरी का दरवाजा खोला, उसी समय दोनों कुमारों को ऐसा मालूम हुआ कि कोई आदमी तेजी के साथ कोठरी में से निकलकर इसके बाद वाली दूसरी कोठरी में चला गया। दोनों कुमारों ने तेजी के साथ उसका पीछा किया और उस दूसरी कोठरी में गए, जिसका दरवाजा मजबूती के साथ बन्द न था तो नानक पर निगाह पड़ी। यद्यपि उस कोठरी के वे दरवाजे जो बाग की तरफ पड़ते थे, बन्द थे, मगर दिन का समय होने के कारण झिलमिलियों की दरारों में से पड़ने वाली रोशनी ने उसमें इतना उजाला जरूर कर रखा था कि आदमी की सूरत-शक्ल बखूबी दिखाई दे जाये, यही सबब था कि निगाह पड़ते ही दोनों कुमारों ने नानक को पहचान लिया, इसी तरह नानक ने भी दोनों कुमारों को पहचान कर प्रणाम

किया और कहा, "मैं किसी दुश्मन का होना अनुमान करके भागा था, मगर जब आवाज सुनी, तो पहचान कर रुक गया। मैं कल से आप दोनों भाइयों को खोज रहा हूँ, मगर पता न लगा सका क्योंकि तिलिस्मी खारखाने में बिना समझे-बूझे दखल देना उचित न जानकर अपनी बुद्धिमानी या जबर्दस्ती से किसी दरवाजे को खोल न सका और इसीलिए बाग में भी पहुँचने की नौबत न आई। कहिए, आप लोग कुशल से तो हैं!"

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, हम लोग बहुत अच्छी तरह हैं। तुम बताओ कि यहां कब, कैसे, क्यों और किस तरह से आये?

नानक—कमलिनीजी से मिलने के लिएं घर से निकला था, मगर जब मालूम हुआ कि वे राजा गोपालसिंह के साथ जमानिया गईं, तब मैं राजा गोपालसिंह के पास आया और उन्हीं की आज्ञानुसार यहाँ आपके पास आया हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—किनकी आज्ञानुसार? राजा गोपालसिंह की या कमलिनी की?

नानक—कमलिनीजी की आज्ञानुसार।

नानक की बात सुनकर आनन्दसिंह ने एक भेद की निगाह इन्द्रजीतसिंह पर डाली और इन्द्रजीतसिंह ने कुछ मुस्कुराहट के साथ आनन्दसिंह की तरफ देखकर कहा—"बाग की तरफ जो दरवाजे पड़ते हैं, उन्हें खोल दो, चाँदनी हो जाये।"

आनन्दसिंह ने दरवाजे खोल दिए और फिर नानक के पास आकर पूछा, "हाँ, तो कमलिनीजी की आज्ञानुसार तुम यहाँ आए?"

नानक—जी हाँ।

आनन्दसिंह—कमलिनी को कहाँ छोड़ा?

नानक—राजा गोपालसिंह के तिलिस्मी बाग में।

इन्द्रजीतसिंह—वह अच्छी तरह से तो हैं न?

नानक—जी हाँ, बहुत अच्छी तरह से हैं।

आनन्दसिंह—घोड़े पर से गिरने के कारण उनकी टाँग जो टूट गई थी, वह अच्छी हुई?

नानक—यह खबर आपको कैसे मालूम हुई?

आनन्दसिंह—अजी वाह, मेरे सामने ही तो घोड़े पर से गिरी थीं, भैरोंसिंह ने उनका इलाज किया, अच्छी हो गई थीं, मगर कुछ दर्द बाकी था, जब मैं इधर चला आया।

नानक—जी हाँ, अब तो वह बहुत अच्छी हैं।

आनन्दसिंह—(हँस कर) अच्छा, यह तो बताओ कि तुम किस रास्ते से यहाँ आये हो?

नानक—उसी बुर्ज वाले रास्ते से आया हूँ।

आनन्दसिंह—मुझे अपने साथ ले चलकर वह रास्ता बता तो दो।

नानक—बहुत अच्छा, चलिए मैं बता देता हूँ, मगर मुझसे कमलिनीजी ने कहा था कि जब तुम बाग में जाओगे, तो लौटने का रास्ता बन्द हो जाएगा।

आनन्दसिंह—यह तो उन्होंने ठीक कहा था। हम दोनों भाइयों को भी उन्होंने

यही कहला भेजा था कि मैं नानक को तुम्हारे पास भेजूँगी, तुम उसकी जुबानी सब हाल सुनकर हिफाजत के साथ उसे तिलिस्म के बाहर कर देना।

नानक—(कुछ शर्मीला-सा होकर) जी ई ई ई, आप तो दिल्लगी करते हैं, मालूम होता है आपको मुझ पर कुछ शक है और आप समझते हैं कि मैं आपके दुश्मन का ऐयार हूँ और नानक की सूरत बनाकर आया हूँ, अतः आप जिस तरह चाहें मेरी आजमाइश कर सकते हैं।

इतने में ही एक तरफ से आवाज आई, "जब तुम कमलिनीजी के भेजे हुए आए हो, तो आजमाइश करने की जरूरत ही क्या है ? थोड़ी देर में कमलिनी का सामना आप ही हो जायेगा !"

इस आवाज ने दोनों कुमारों को तो कम, मगर नानक को हद से ज्यादा परेशान कर दिया। उसके चेहरे पर हवाई-सी उड़ने लगी और वह घबड़ाकर पीछे की तरफ देखने लगा। इस कोठरी में से दूसरी कोठरी में जाने के लिए जो दरवाजा था, वह इस समय मामूली तौर पर बन्द था, इसलिए किसी गैर पर उसकी निगाह न पड़ी, अतएव उस दरवाजे को खोलकर नानक अपनी कोठरी में चला गया, मगर साथ ही आनन्दसिंह ने भी वहाँ पहुँच कर उसकी कलाई पकड़ ली और कहा, "बस इतने ही में घबड़ा गए ! इसी हौसले पर तिलिस्म के अन्दर आये थे ! आओ-आओ, हम तुम्हें बाग में ले चलते हैं जहाँ निश्चिन्ती से बैठकर अच्छी तरह बातें कर सकेंगे।"

इसी समय दो दरवाजे खुले और स्याह लबादा ओढ़े हुए चार-पाँच आदमी उसके अन्दर से निकल आए, जो नानक को जबर्दस्ती घसीट कर ले गए, साथ ही वे दरवाजे भी उसी तरह बन्द हो गए, जैसे पहले थे। दोनों कुमारों ने भी कुछ सोचकर आपत्ति न की और उसे ले जाने दिया।

और कोठरियों की बनिस्बत इस कोठरी में दरवाजे ज्यादा थे, अर्थात् दो दरवाजे दोनों तरफ तो थे ही, मगर बाग की तरफ चार और पिछली तरफ दो दरवाजे और थे तथा उसी पिछली तरफ वाले दोनों दरवाजों में से वे लोग आये थे, जो नानक को घसीट कर ले गए थे। नानक को ले जाने के बाद आनन्दसिंह ने उन्हीं पिछली तरफ वाले दरवाजों में से एक दरवाजा खोला और अन्दर की तरफ झाँककर देखा। भीतर बहुत लम्बा-चौड़ा एक कमरा नजर आया, जिसमें अन्धकार का नाम-निशान भी न था, बल्कि अच्छी तरह उजाला था। दोनों कुमार उस कमरे में चले गए और तब मालूम हुआ कि वे दरवाजे एक ही कमरे में जाने के लिए हैं। इस कमरे में दोनों कुमारों ने एक बहुत बूढ़े आदमी को देखा, जो चारपाई के ऊपर लेटा हुआ कोई किताब पढ़ रहा था। कुमारों को देखते ही वह चारपाई के नीचे उतर कर खड़ा हो गया और सलाम करके बोला, "आज कई दिनों से मैं आप दोनों भाइयों के आने का इन्तजार कर रहा हूँ।"

इन्द्रजीतसिंह—तुम कौन हो ?

बुड्ढा—जी, मैं इस बाग का दारोगा हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—तुम हम लोगों का इन्तजार क्यों कर रहे थे ?

दारोगा—इसलिए कि आप लोगों को यहाँ की इमारतों और अजायबातों की

सैर करा के अपने सिर से एक भारी बोझ उतार दूं।

इन्द्रजीतसिंह—क्या इधर दो-तीन दिन के बीच में कोई और भी इस बाग में आया है?

दारोगा—जी हाँ, दो मर्द और कई औरतें आई हैं।

इन्द्रजीतसिंह—क्या उन लोगों के नाम बता सकते हो?

दारोगा—नानक और भैरोंसिंह के सिवाय मैं और किसी का नाम नहीं जानता (कुछ सोचकर) हाँ, एक औरत का भी नाम जानता हूँ, शायद उसका नाम कमलिनी है, क्योंकि वह दो-एक दफे इसी नाम से पुकारी गई थी, बड़ी ही धूर्त और चालाक है, अपनी अक्ल के सामने किसी को कुछ समझती ही नहीं, बिना धोखा खाये नहीं रह सकती।

इन्द्रजीतसिंह—क्या यह बता सकते हो कि वे सब इस समय कहाँ हैं और उनसे मुलाकात क्योंकर हो सकती है?

दारोगा—जी मुझे उन लोगों का पता मालूम नहीं, क्योंकि कमलिनी ने उन सभी को मेरी बात मानने न दी और अपनी इच्छानुसार उन सभी को लिए हुए चारों तरफ घूमती रहीं, इसी से मुझे रंज हुआ और मैंने उनकी खबरगीरी छोड़ दी।

इन्द्रजीतसिंह—अगर तुम यहाँ के दारोगा हो, तो खबरदारी न रखने पर भी यह तो जरूर जानते ही होगे कि वे सब कहाँ हैं!

दारोगा—मुझे यहाँ का दारोगा समझने और न समझने का तो आपको अख्तियार है, मगर मैं यह जरूर कहूँगा कि मुझे उन सभी का पता नहीं मालूम है।

आनन्दसिंह—(हँस कर) यही हाल है तो यहाँ की हिफाजत क्या करते हो?

दारोगा—इसका हाल तो तभी मालूम होगा जब आप मेरे साथ चलकर यहाँ की सैर करेंगे।

आनन्दसिंह—अच्छा, यह बताओ कि अभी हमारे देखते-ही-देखते जो लोग नानक को ले गए, वे कौन थे?

दारोगा—वे सब मेरे ही नौकर थे। वह झूठा और शैतान है, तथा आपको नुकसान पहुँचाने की नीयत से धोखा देकर यहाँ घुस आया है, सिर्फ इसीलिए मैंने उसे गिरफ्तार करने का हुक्म दिया।

आनन्दसिंह—तुम्हारे आदमी लोग कहाँ रहते हैं? यहाँ तो मैं तुमको अकेला ही देखता हूँ।

दारोगा—यह कमरा तो मेरा एकान्त स्थान है, जब पढ़ने या किसी विषय पर गौर करने की जरूरत पड़ती है तब मैं इस कमरे में आकर बैठता या लेटता हूँ। मगर यहाँ खड़े-खड़े बातें करने में तो आपको तकलीफ होगी। आप मेरे स्थान पर चलें, तो उत्तम हो, या बाग ही में चलिए जहाँ और भी कई···

इन्द्रजीतसिंह—खैर, यह सब तो होता रहेगा, पहले हम लोगों को यह मालूम होना चाहिए कि तुम हमारे दोस्त हो, दुश्मन नहीं और तुम्हारी यह सूरत असली है बनावटी नहीं। इसके बाद मैं तुससे दिल खोल कर बातें कर सकूंगा।

दारोगा—इस बात का पता तो आपको मेरी कार्रवाई से ही लग सकेगा, मेरे

कहने का आपको ऐतबार कब होगा, मगर इस बात को खूब समझ···

दारोगा की बात पूरी न होने पाई थी, कि एक तरफ से आवाज आई, "अजी, तुम्हें कुछ खाने-पीने की भी सुध है या यों ही बकवाद किया करोगे !"

दोनों कुमार ताज्जुब के साथ उस तरफ देखने लगे जिधर से आवाज आई थी। उसी समय एक बुढ़िया उसी तरफ से कमरे के अन्दर आती दिखाई पड़ी और वह दारोगा के पास आकर फिर बोली, "मैं बड़ी ही बदकिस्मत थी जो तुम्हारे साथ ब्याही गई ! मैंने जो कहा, तुमने कुछ सुना या नहीं ?"

दारोगा—(क्रोध से) आ गई शैतान की नानी !

दोनों कुमारों ने देखते ही उस बुढ़िया को पहचान लिया कि यह वही बुढ़िया है, जो भैरोंसिंह की जोरू उस समय बनी हुई थी, जब भैरोंसिंह पागल हुआ इसी बाग में हम लोगों को दिखाई दिया था।

इन्द्रजीतसिंह ने ताज्जुब और दिल्लगी की निगाह से उस बुढ़िया की तरफ देखा और कहा, "अभी कल की बात है कि तू भैरोंसिंह पागल की जोरू बनी हुई थी और आज इस दारोगा को अपना मालिक बता रही है।"

5

कुँअर इन्द्रजीतसिंह की बात सुनकर वह बुढ़िया चमक उठी और नाक-भौं चढ़ा कर बोली, "बुड्ढी औरतों से दिल्लगी करते तुम्हें शर्म नहीं मालूम होती।"

इन्द्रजीतसिंह—क्या मैं झूठ कहता हूँ ?

बुढ़िया—इससे बढ़कर झूठ और क्या हो सकता है ? लोग किसी के पीछे झूठ बोलते हैं, मगर आप मुँह पर झूठ बोल कर अपने को सच्चा बनाने का उद्योग करते हैं ! भला इस तिलिस्म में दूसरा आ ही कौन सकता है ? और वह भैरोंसिंह कौन है जिसका नाम आपने लिया ?

इन्द्रजीतसिंह—बस-बस, मालूम हो गया। मैं अपने को तुम्हारी जबान से···

बुड्ढा—(इन्द्रजीतसिंह को रोक कर) अजी आप किससे बातें कर रहे हैं ? यह तो पागल है। इसकी बातों पर ध्यान देना आप ऐसे बुद्धिमानों का काम नहीं है। (बुढ़िया से) तुझे यहाँ किसने बुलाया जो चली आई ? तेरे ही दुःख से तो भाग कर मैं यहाँ एकांत में आ बैठा हूँ, मगर तू ऐसी शैतान की नानी है कि यहाँ भी आए बिना नहीं रहती। सवेरा हुआ नहीं और खाने की रट लग गई !

बुड्ढी—अजी तो क्या तुम खाओ, पीओगे नहीं ?

बुड्ढा—जब मेरी इच्छा होगी, तब खा लूँगा, तुम्हें इससे मतलब ? (दोनों कुमारों से) आप इस कम्बख्त का खयाल छोड़िए और मेरे साथ चले आइए। मैं आपको ऐसी जगह ले चलता हूँ, जहाँ इसकी आतमा भी न जा सके। उसी जगह हम लोग बातचीत

करेंगे, फिर आप जैसी मुनासिब समझिएगा, आज्ञा दीजिएगा।

यह बात उस बुड्ढे ने ऐसे ढंग से कही और इस तरह पलटा खाकर चल पड़ा कि दोनों कुमारों को उसकी बातों का जवाब देने या उस पर शक करने का मौका न मिला और वे दोनों भी उसके पीछे-पीछे रवाना हो गए।

उस कमरे के बगल ही में एक कोठरी थी और उस कोठरी में ऊपर छत पर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। वह बुड्ढा दोनों कुमारों को साथ-साथ लिए हुए उस कोठरी में और वहाँ से सीढ़ियों की राह चढ़कर उसके ऊपर वाली छत पर ले गया। उस मंजिल में भी छोटी-छोटी कई कोठरियाँ और कमरे थे। बुड्ढे के कहे मुताबिक दोनों ने एक कमरे की जालीदार खिड़की में से झाँक कर देखा तो इस इमारत के पिछले हिस्से में एक और छोटा-सा बाग दिखाई दिया, जो बनिस्बत इस बाग के जिसमें कुमार एक दिन और रात रह चुके थे, ज्यादा खूबसूरत और सरसब्ज नजर आता था। उसमें फूलों के पेड़ बहुतायत से थे और पानी का एक छोटा-सा साफ झरना भी बह रहा था, जो इस मकान की दीवार से दूर और उस बाग के पिछले हिस्से की दीवार के पास था, और उसी चश्मे के किनारे पर कई औरतों को भी बैठे हुए दोनों कुमारों ने देखा।

पहले तो कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को यही गुमान हुआ कि ये औरतें किशोरी, कामिनी और कमलिनी इत्यादि होंगी, मगर जब उनकी सूरत पर गौर किया, तो दूसरी ही औरतें मालूम हुईं जिन्हें आज के पहले दोनों कुमारों ने कभी नहीं देखा था।

इन्द्रजीतसिंह—(बुड्ढे से) क्या ये वे ही औरतें हैं, जिनका जिक्र तुमने किया था और जिनमें से एक औरत का नाम तुमने कमलिनी बताया था?

बुड्ढा—जी नहीं, उनकी तो मुझे कुछ भी खबर नही कि वे कहाँ गईं और क्या हुईं।

आनन्दसिंह—फिर ये सब कौन हैं?

बुड्ढा— इन सभी के बारे में इससे ज्यादा और मैं कुछ नहीं जानता कि ये सब राजा गोपालसिंह की रिश्तेदार हैं और किसी खास सबब से राजा गोपालसिंह ने इन लोगों को यहाँ रख छोड़ा है।

इन्द्रजीतसिंह—ये सब यहाँ कब से रहती हैं?

बुड्ढा—सात वर्ष से।

इन्द्रजीतसिंह—इनकी खबरगीरी कौन करता है और खाने-पीने तथा कपड़े-लत्ते का इन्तजाम क्योंकर होता है?

बुड्ढा—इसकी मुझे भी खबर नहीं। यदि मैं इन सभी से कुछ बातचीत करता या इनके पास जाता तो कदाचित् कुछ मालूम हो जाता, मगर राजा साहब ने मुझे सख्त ताकीद कर दी है कि इन सभी से कुछ बातचीत न करूँ बल्कि इनके पास भी न जाऊँ।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, यह बताओ कि हम लोग इनके पास जा सकते हैं या नहीं?

बुड्ढा—इन सभी के पास जाना न जाना आपकी इच्छा पर है- मैं किसी तरह की रुकावट नहीं डाल सकता और न कुछ राय ही दे सकता हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा इस बाग में जाने का रास्ता तो बता सकते हो?

बुड्ढा—हाँ, मैं खुशी से आपको रास्ता बता सकता हूँ, मगर स्वयं आपके साथ वहाँ तक नहीं जा सकता, इसके अतिरिक्त यह कह देना भी उचित जान पड़ता है कि यहाँ से उस बाग में जाने का रास्ता बहुत पेचीदा और खराब है, इसलिए वहाँ जाने में कम-से कम एक पहर तो जरूर लगेगा। इससे यही बेहतर होगा कि यदि आप उस बाग में या उन सभी के पास जाना चाहते हैं, तो कमन्द लगाकर इस खिड़की की राह से नीचे उतर जायें। ऐसा आप करना चाहें तो आज्ञा दें मैं एक कमन्द आपको ला दूँ।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ यह बात मुझे पसन्द है, यदि एक कमन्द ला दो, तो हम दोनों भाई उसी के सहारे नीचे उतर जायें।

वह बुड्ढा दोनों कुमारों को उसी तरह उसी जगह छोड़ कर कहीं चला गया और थोड़ी ही देर में बहुत बड़ी कमन्द हाथ में लिए हुए आकर बोला, "लीजिए, यह कमन्द हाजिर है।"

इन्द्रजीतसिंह—(कमन्द लेकर) अच्छा, तो अब हम दोनों इस कमन्द के सहारे उस बाग में उतर जाते हैं।

बुड्ढा—जाइये, मगर यह बताते जाइए कि आप लोग वहाँ से लौटकर कब आवेंगे और मुझे आपको यहाँ की सैर कराने का मौका कब मिलेगा?

इन्द्रजीतसिंह—सो तो मैं ठीक नहीं कह सकता, मगर तुम यह बता दो कि अगर हम लौटें तो यहाँ किस राह से आवें!

बुड्ढा—इसी कमन्द के जरिये इसी राह से आ जाइयेगा, मैं यह खिड़की आपके लिए खुली छोड़ दूँगा।

आनन्दसिंह—अच्छा यह बताओ कि भैरोंसिंह की भी कुछ खबर है?

बुड्ढा—कुछ नहीं।

इसके बाद दोनों कुमारों ने उस बुड्ढे से कुछ भी न पूछा और खिड़की खोलने के बाद कमन्द लगाकर उसी के सहारे दोनों नीचे उतर गये।

दोनों कुमारों ने यद्यपि उन औरतों को ऊपर से बखूबी देख लिया था, क्योंकि वह बहुत दूर नहीं पड़ती थीं, मगर इस बात का गुमान न हुआ कि उन औरतों ने भी उन्हें उस समय या कमन्द के सहारे नीचे उतरते समय देखा या नहीं।

जब दोनों कुमार नीचे उतर गये तो कमन्द को भी खींच कर साथ ले लिया और टहलते हुए उस तरफ रवाना हुए जिधर चश्मे के किनारे बैठी हुई वे औरतें कुमार ने देखी थीं। थोड़ी देर में कुमार उस चश्मे के पास जा पहुँचे और उन औरतों को उसी तरह बैठे हुए पाया। कुमार चश्मे के इस पार थे और वे सब औरतें जो गिनती में सात थीं, चश्मे के उस पार सब्ज घास के ऊपर बैठी हुई थीं।

किसी गैर को अपनी तरफ आते देख वे सब औरतें चौकन्नी होकर उठ खड़ी हुईं और बड़े गौर के साथ मगर क्रोध-भरी निगाहों से कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की तरफ देखने लगीं।

जिस जगह वे औरतें बैठी थीं, उससे थोड़ी ही दूर पर दक्खिन तरफ बाग की दीवार के साथ ही एक छोटा-सा मकान बना हुआ था जो पेड़ों की आड़ में होने के कारण

दोनों कुमारों को ऊपर से दिखाई नहीं दिया था मगर अब नहर के किनारे आ जाने पर बखूबी दिखाई दे रहा था।

वे औरतें जिन्हें नहर के किनारे कुमार ने देखा था, सबकी-सब नौजवान और हसीन थीं। यद्यपि इस समय से वे सब बनाव-श्रृंगार और जेवरों के ढकोसलों से खाली थीं मगर उनका कुदरती हुस्न ऐसा न था जो किसी तरह की खूबसूरती को अपने सामने ठहरने देता। यहाँ पर यदि ऐसी एक औरत होती तो हम उसकी खूबसूरती के बारे में कुछ लिखते भी मगर एकदम से सात ऐसी औरतों की तारीफ में कलम चलाना हमारी ताकत के बाहर है जिन्हें प्रकृति ने खूबसूरत बनाने के समय हर तरह पर अपनी उदारता का नमूना दिखाया हो।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने जब उन औरतों को अपनी तरफ क्रोध-भरी निगाहों से देखते देखा तो एक औरत से मुलायम और गम्भीर शब्दों में कहा, "हम लोग तुम्हारे पास किसी तरह की तकलीफ देने की नीयत से नहीं आए हैं, बल्कि यह कहने के लिए आए हैं कि किस्मत ने हम लोगों को अकस्मात् यहाँ पहुँचाकर तुम लोगों का मेहमान बनाया है। हम लोग लाचार और राह भूले हुए मुसाफिर हैं और तुम लोग यहाँ की रहने वाली और दयावान् हो, क्योंकि जिस ईश्वर ने तुम्हें इतना सुन्दर बनाकर अपनी कारीगरी का नमूना दिखाया है उसने तुम्हारे दिल को कठोर बनाकर अपनी भूल का परिचय कदापि न दिया होगा, अतएव उचित है कि तुम लोग ऐसे समय में हमारी सहायता करो और बताओ कि अब हम दोनों भाई क्या करें और कहाँ जायें ?"

औरतें खुशामद-पसन्द तो होती ही हैं! कुँअर इन्द्रजीतसिंह की मीठी और खुशामद भरी बातें सुनकर उन सभी की चढ़ी हुई त्यौरियाँ उतर गईं और होंठों पर कुछ मुस्कराहट दिखाई देने लगी। एक ने जो सबसे चतुर चंचल और चालाक जान पड़ती थी, आगे बढ़कर कुँअर इन्द्रजीतसिंह से कहा, "जब आप हमारे मेहमान बनते हैं और इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि हमारे साथ दगा न करेंगे तो हम लोग भी निःसन्देह आपको अपना मेहमार स्वीकार करके जहाँ तक हो सकेगा आपकी सहायता करेंगी, अच्छा ठहरिए हम लोग जरा आपस में सलाह कर लें!"

इतना कहकर वह चुप हो गईं। उन लोगों ने आपस में धीरे-धीरे कुछ बातें कीं, और इसके बाद फिर उसी औरत ने इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखकर कहा—

औरत—(हाथ का इशारा करके) उस तरफ एक छोटा-सा पुल बना हुआ है, उसी पर से होकर आप इस पार चले आइए।

इन्द्रजीतसिंह—क्या इस नहर में पानी बहुत ज्यादा है ?

औरत—पानी तो ज्यादा नहीं है, मगर इसमें लोहे के तेज नोक वाले गोखरू बहुत पड़े हैं इसलिए इस राह से आपका आना सम्भव नहीं है।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा, तो हम पुल पर से होकर आयेंगे।

इतना कह कुमार उस तरफ रवाना हुए जिधर उस औरत ने हाथ के इशारे से पुल को बताया था। थोड़ी दूर जाने के बाद एक गुंजान और खुशनुमा झाड़ी के अन्दर वह छोटा-सा पुल दिखाई दिया। इस जगह नहर के दोनों तरफ पारिजात के कई पेड़ थे

जिनकी डालियाँ ऊपर से मिली हुई थीं कि उनकी सुन्दर छाया में छिपा हुआ वह छोटा-सा पुल बहुत खूबसूरत और स्थान बड़ा रमणीक मालूम होता था। इस जगह से न तो दोनों कुमार उन औरतों को देख सकते थे और न उन औरतों की निगाह इन पर पड़ सकती थी।

जब दोनों कुमार पुल की राह पार उतरकर और घूम-फिरकर उस जगह पहुँचे जहाँ उन औरतों को छोड़ आये थे, केवल दो औरतों को मौजूद पाया, जिनमें से एक तो वही थी जिससे कुँअर इन्द्रजीतसिंह से बातचीत हुई थी और दूसरी उससे उम्र में कुछ कम मगर खूबसूरती में कुछ ज्यादा थी। बाकी औरतों का पता न था कि क्या हुईं और कहाँ गईं। कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने ताज्जुब में आकर उस औरत से, जिसने पुल की राह इधर आने का उपदेश किया था पूछा "यहाँ तुम दोनों के सिवाय और कोई नहीं दिखाई देता, सब कहाँ चली गईं?"

औरत—आपको उन औरतों से क्या मतलब ?

इन्द्रजीतसिंह—कुछ नहीं, यों ही पूछता हूँ।

औरत—(मुस्कराती हुई)वे सब आप दोनों भाइयोंकी मेहमानदारी का इन्तजाम करने चली गईं, अब आप मेरे साथ चलिए।

इन्द्रजीतसिंह—कहाँ ले चलोगी ?

औरत—जहाँ मेरी इच्छा होगी। जब आपने मेरी मेहमानी कबूल ही कर ली तब···।"

इन्द्रजीतसिंह—खैर, अब इस किस्म की बातें न पूछूंगा और जहाँ ले चलोगी चला चलूंगा।

औरत—(मुस्कराकर) अच्छा तो आइए।

दोनों कुमार उन दोनों औरतों के पीछे-पीछे रवाना हुए। हम कह चुके हैं कि जहाँ ये औरतें बैठी थीं वहाँ से थोड़ी ही दूर पर एक छोटा-सा मकान बना हुआ था। वे दोनों औरतें कुमारों को लिए उसी मकान के दरवाजे पर पहुँचीं जो इस समय बन्द था मगर कोई जंजीर कुण्डा या ताला उसमें दिखाई नहीं देता था। कुमारों को यह भी मालूम न हुआ कि किस खटके को दबाकर या क्योंकर उसने वह दरवाजा खोला। दरवाजा खुलने पर उस औरत ने पहले दोनों कुमारों को उसके अन्दर जाने के लिए कहा, जब दोनों कुमार उसके अन्दर चले गए तब उन दोनों ने भी दरवाजे के अन्दर पैर रखा और इसके बाद हलकी आवाज के साथ वह दरवाजा आप-से-आप बन्द हो गया। इस समय दोनों कुमारों ने अपने को एक सुरंग में पाया जिसमें अन्धकार के सिवाय और कुछ दिखाई नहीं देता था और जिसकी चौड़ाई तीन हाथ और ऊँचाई चार हाथ से किसी तरह ज्यादा न थी। इस जगह कुमार को इस बात का खयाल हुआ कि कहीं इन औरतों ने मुझे धोखा तो नहीं दिया मगर यह सोचकर चुप रह गये कि अब तो जो कुछ होना था हो ही गया और ये औरतें भी तो आखिर हमारे साथ ही हैं जिनके पास किसी तरह का हर्बा देखने में नहीं आया था।

दोनों कुमारों ने अपना हाथ पसारकर दीवार को टटोला और मालूम किया कि

यह सुरंग है, उसी समय पीछे से उस औरत की यह आवाज आई, "आप दोनों भाई किसी तरह का अन्देशा न कीजिए और सीधे चले चलिए। इस सुरंग में बहुत दूर तक जाने की तकलीफ आप लोगों को न होगी !"

वास्तव में यह सुरंग बहुत बड़ी न थी, चालीस-पचास कदम से ज्यादा कुमार न गए होंगे कि सुरंग का दूसरा दरवाजा मिला और उसे लाँघकर कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने अपने को एक-दूसरे ही बाग में पाया जिसकी जमीन का बहुत बड़ा हिस्सा मकान कमरा बारहदरियों तथा और इमारतों के काम में लगा हुआ था और थोड़े हिस्से में मामूली ढंग का एक छोटा-सा बाग था। हाँ, उस बाग के बीचोंबीच में एक छोटी-सी खूबसूरत बावली जरूर थी जिसकी चार अंगुल ऊँची सीढ़ियाँ सफेद लहरदार पत्थरों से बनी हुई थीं। इसके चारों कोनों पर कदम्ब के चार पेड़ लगे हुए थे और एक पेड़ के नीचे एक चबूतरा संगमरमर का इस लायक था कि बीस-पच्चीस आदमी खुले तौर पर बैठ सकें। इमारत का हिस्सा जो कुछ बाग में था वह सब बाहर से तो देखने में बहुत ही खूबसूरत था मगर अन्दर से वह कैसा और किस लायक था सो नहीं कह सकते।

बावली से पास पहुँचकर उस औरत ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह से कहा, "यद्यपि इस समय धूप बहुत तेज हो रही है मगर इस पेड़ (कदम्ब)की घनी छाया में इस संगमरमर के चबूतरे पर थोड़ी देर तक बैठने में आपको किसी तरह की तकलीफ न होगी, मैं बहुत जल्द (सामने की तरफ इशारा करके)इस कमरे को खुलवाकर आपके आराम करने का इन्तजाम करूँगी, केवल आधी घड़ी के लिए आप मुझे विदा करें।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, जाओ मगर इतना बताती जाओ कि तुम दोनों का नाम क्या है जिसमें यदि कोई आवे और कुछ पूछे तो कह सकें कि हम लोग फलाँ लोगों के मेहमान हैं।

औरत—(हँसकर)जरूर जानना चाहिए, केवल इसलिए नहीं बल्कि कई कामों के लिए हम दोनों बहिनों का नाम जान लेना आपके लिए आवश्यक है ! मेरा नाम 'इन्द्रानी'(दूसरी की तरफ इशारा करके)और इसका नाम 'आनन्दी' है। यह मेरी सगी छोटी बहिन है।

इतना कहकर वे औरतें तेजी के साथ एक तरफ चली गई और इस बात का कुछ भी इन्तजार न किया कि कुमार कुछ जवाब देंगे या और कोई बात पूछेंगे। उन दोनों औरतों के चले जाने के बाद कुँअर आनन्दसिंह ने अपने भाई से कहा, "इन दोनों औरतों के नाम पर आपने कुछ ध्यान दिया ?"

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, यदि इनका नाम इनके बुजुर्गों का रखा हुआ है। और इनके शरीर का सबसे पहला साथी नहीं है तो कह सकते हैं कि हम दोनों ने धोखा खाया।

आनन्दसिंह—जी, मेरा भी यही खयाल है, मगर साथ ही इसके मैं यह भी खयाल करता हूँ कि अब हम लोगों को चालाक बनना···।

इन्द्रजीतसिंह—(जल्दी से) नहीं-नहीं, अब हम लोगों को जब तक छुटकारे की साफ सूरत दिखाई न दे जाये प्रकट में नादान बने रहना ही लाभदायक होगा।

आनन्दसिंह—निःसन्देह मगर इतना तो मेरा दिल अब भी कह रहा है कि ये

सब हमारी जिन्दगी के धागे में किसी तरह का खिंचाव पैदा न करेंगी ।

इन्द्रजीतसिंह—मगर उसमें लंगर की तरह लटकने के लिए इतना बड़ा बोझ जरूर लाद देंगी कि जिसका सहन करना सम्भव नहीं तो असह्य अवश्य होगा ।

आनन्दसिंह—हाँ, अब यदि हम लोगों को कुछ सोचना तो है इसी विषय में···

इन्द्रजीतसिंह—अफसोस ऐसे समय में भैरोंसिंह को भी इत्तिफाक ने हम लोगों से अलग कर दिया । ऐसे मौकों पर उसकी बुद्धि अनूठा काम किया करती है । (कुछ रुककर) देखो तो, सामने से वह कौन आ रहा है !

आनन्दसिंह—(खुशी-भरी आवाज में ताज्जुब के साथ) यह तो भैरोंसिंह ही है ! अब कोई परवाह की बात नहीं है अगर यह वास्तव में भैरोंसिंह ही है ।

अपने से थोड़ी ही दूर पर दोनों कुमारों ने भैरोंसिंह को देखा जो एक कोठरी के अन्दर से निकलकर इन्हीं की तरफ आ रहा था । दोनों कुमार उठ खड़े हुए और मिलने के लिए खुशी-खुशी भैरोंसिंह की तरफ रवाना हुए । भैरोंसिंह ने भी इन्हें दूर से देखा और तेजी के साथ चलकर इन दोनों भाइयों के पास आया । दोनों भाइयों ने खुशी-खुशी भैरों-सिंह को गले लगाया और उसे साथ लिए हुए उसी चबूतरे पर आए जिस पर इन्द्रानी उनको बैठा गई थी ।

इन्द्रजीतसिंह—(चबूतरे पर बैठकर)भैरोंसिंह भाई, यह तिलिस्म का कारखाना है, यहाँ फूंक-फूंक के कदम रखना चाहिए, अतः यदि मैं तुम पर शक करके तुम्हें जाँचने का उद्योग करूँ तो तुम्हें खफा न होना चाहिए ।

भैरोंसिंह—नहीं-नहीं, मैं ऐसा बेवकूफ नहीं हूँ कि आप लोगों की चालाकी और वुद्धिमानी की बातों से खफा हो जाऊँ, तिलिस्म और दुश्मन के घर में दोस्तों की जाँच बहुत जरूरी है । बगल वाला लसा और कमर का दाग दिखलाने के अतिरिक्त बहुत-सी बातें ऐसी हैं जिन्हें सिवाय मेरे और आपके दूसरा कोई भी नहीं जानता जैसे 'लड़कपन वाला मजनूँ ।'

इन्द्रजीतसिंह—(हँसकर)बस-बस, मुझे जाँच करने की कोई जरूरत नहीं रही, अब यह बताओ कि तुम्हारा बटुआ तुम्हें मिला या नहीं ?

भैरोंसिंह—(ऐयारी का बटुआ कुमार के आगे रखकर) आपके तिलिस्मी खंजर की बदौलत मेरा यह बटुआ मुझे मिल गया । शुक्र है कि इसमें की कोई चीज नुकसान में नहीं गई सब ज्यों-की-त्यों मौजूद हैं । (तिलिस्मी खंजर और उसके जोड़ की अँगूठी देकर) लीजिए अपना तिलिस्मी खंजर, अब मुझे इसकी कोई जरूरत नहीं, मेरे लिए मेरा बटुआ काफी है ।

इन्द्रजीतसिंह—(अँगूठी और तिलिस्मी खंजर लेकर) अब यद्यपि तुम्हारा किस्सा सुनना बहुत जरूरी है क्योंकि हम लोगों ने एक आश्चर्यजनक घटना के अन्दर तुम्हें छोड़ा था, मगर इस सबके पहले अपना हाल तुम्हें सुना देना हमें उचित जान पड़ता है क्योंकि एकान्त का समय बहुत कम है और उन दोनों औरतों के आ जाने में बहुत विलम्ब नहीं है जिनकी बदौलत हम लोग यहाँ आए हैं और जिनके फेर में अपने को पड़ा हुआ समझते हैं ।

भैरोंसिंह—क्या किसी औरत ने आप लोगों को धोखा दिया ?

इन्द्रजीतसिंह—निश्चय तो नहीं कह सकता कि धोखा दिया मगर जो कुछ हाल है उसे सुनकर राय दो कि हम लोग अपने को धोखे में फँसा हुआ समझें या नहीं।

इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने अपना कुल हाल भैरोंसिंह से जुदा होने के बाद से इस समय तक का कह सुनाया। इसके जवाब में अभी भैरोंसिंह ने कुछ कहा भी न था कि सामने वाले कमरे का दरवाजा खुला और उसमें से इन्द्रानी को निकलकर अपनी तरफ आते देखा।

इन्द्रजीतसिंह—(भैरोंसिंह से)लो वह आ गई, एक तो यही औरत है, इसी का नाम इन्द्रानी है, मगर इस समय वह दूसरी औरत इसके साथ नहीं है जिसे यह अपनी सगी छोटी बहिन बताती है।

भैरोंसिंह—(ताज्जुब से उस औरत की तरफ देखकर) इसे तो मैं पहचानता हूँ मगर यह नहीं जानता था कि इसका नाम 'इन्द्रानी' है।

इन्द्रजीतसिंह—तुमने इसे कब देखा ?

भैरोंसिंह—तिलिस्मी खंजर लेकर आपसे जुदा होने के बाद बटुआ पाने के सम्बन्ध में इसने मेरी मदद की थी। जब मैं अपना हाल सुनाऊँगा तब आपको मालूम होगा कि यह कैसी नेक औरत है, मगर इसकी छोटी बहिन को मैं नहीं जानता, शायद उसे भी देखा हो।

इतने ही में इन्द्रानी वहाँ आ पहुँची जहाँ भैरोंसिंह और दोनों कुमार बैठे बातचीत कर रहे थे। जिस तरह भैरोंसिंह ने इन्द्रानी को देखते ही पहचान लिया था उसी तरह इन्द्रानी ने भी भैरोंसिंह को पहचान लिया और कहा, "क्या आप भी यहाँ आ पहुँचे ? अच्छा हुआ, क्योंकि आपके आने से दोनों कुमारों का दिल बहलेगा, इसके अतिरिक्त मुझ पर भी किसी का शक-शुब्हा न रहेगा।"

भैरोंसिंह—जी हाँ, मैं भी यहाँ आ पहुँचा और आपको दूर से देखते ही पहचान लिया बल्कि कुमार से कह भी दिया कि इन्होंने मेरी बड़ी सहायता की थी।

इन्द्रानी—यह तो बताओ कि स्नान संध्या से छुट्टी पा चुके हो या नहीं ?

भैरोंसिंह—हाँ, मैं स्नान संध्या से छुट्टी पा चुका हूँ और हर तरह निश्चिन्त हूँ।

इन्द्रानी—(दोनों कुमारों से) और आप लोग ?

इन्द्रजीतसिंह—हम दोनों भाई भी।

इन्द्रानीं—अच्छा तो अब आप लोग कृपा करके उस कमरे में चलिए।

भैरोंसिंह—बहुत अच्छी बात है, (दोनों कुमारों से) चलिए।

भैरोंसिंह को लिए हुए कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह उस कमरे में आए जिसे इन्द्रानी ने इनके लिए खोला था। कुमार ने इस कमरे को देखकर बहुत पसन्द किया क्योंकि यह कमरा बहुत बड़ा और खूबसूरती के साथ सजाया हुआ था। इसकी छत बहुत ऊँची और रंगीन थी, तथा दीवारों पर भी मुसौवर ने अनोखा काम किया था। कुछ दीवारों पर जंगल, पहाड़, खोह, कंदराकाघाटी और शिकारगाह तथा बहते हुए चश्मे का अनोखा दृश्य ऐसे अच्छे ढंग से दिया गया था कि देखने वाला नित्य पहरों देखा करे और उसका चित्त न भरे। मौके-मौके से जंगली जानवरों की तस्वीरें भी ऐसी बनी थीं कि

देखने वालों को उसके असली होने का धोखा होता था। दीवारों पर बनी हुई तस्वीरों के अतिरिक्त कागज और कपड़ों पर बनी हुई तथा सुन्दर चौखटों में जड़ी हुई तस्वीरों की भी इस कमरे में कमी न थी। ये तस्वीरें केवल ऐसी हसीन और नौजवान औरतों की थीं जिनकी खूबसूरती और भाव को वेखकर देखने वाला प्रेम से दीवाना हो सकता था। इन्हीं तस्वीरों में इन्द्रानी और आनन्दी की तस्वीरें भी थीं, जिन्हें देखते ही कुँअर इन्द्रजीत हँस पड़े और भैरोंसिह की तरफ देख के बोले, "देखो, यह तस्वीर इन्द्रानी की और यह उनकी बहिन आनन्दी की है। उन्हें तुमने न देखा होगा!"

भैरोंसिह—जी, इनकी छोटी बहिन को तो मैंने नहीं देखा।

इन्द्रजीतसिंह—स्वयं जैसी खूबसूरत है वैसी ही तस्वीर भी बनी है। (इन्द्रानी की तरफ देखकर) मगर अब हमें इस तस्वीर के देखने की कोई जरूरत नहीं!

इन्द्रानी—(हँसकर) बेशक, क्योंकि अब आप स्वतन्त्र और लड़के नहीं रहे।

इन्द्रानी का जवाब सुन भैरोंसिह तो खिलखिलाकर हँस पड़ा, मगर आनन्दसिंह ने मुश्किल से हँसी रोकी।

इस कमरे में रोशनी का सामान (दीवारगीर डोल हांडी इत्यादि) भी बेशकीमत खूबसूरत और अच्छे ढंग से लगा हुआ था। सुन्दर बिछावन और फर्श के अतिरिक्त चाँदी और सोने की कई कुर्सियाँ भी उस कमरे में मौजूद थी जिन्हें देखकर कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने एक सोने की कुर्सी पर बैठने का इरादा किया मगर इन्द्रानी ने सभ्यता के साथ रोककर कहा—"पहले आप लोग भोजन कर लें, क्योंकि भोजन का सब सामान तैयार है और ठण्डा हो रहा है।"

इन्द्रजीतसिंह—भोजन करने की तो इच्छा नहीं है।

इन्द्रानी—(चेहरा उदास बनाकर) तो फिर आप हमारे मेहमान ही क्यों बने थे? क्या आप अपने को बेमुरौवत और झूठा बनाना चाहते हैं?

इन्द्रानी ने कुमार को हर तरह से कायल और मजबूर करके भोजन करने के लिए तैयार किया। इस कमरे में छोटा-सा दरवाजा दूसरे कमरे में जाने के लिए बना हुआ था, इसी राह से दोनों कुमार और भैरोंसिह को लिए हुए इन्द्रानी कमरे में पहुँची। यह कमरा बहुत ही छोटा और राजाओं के पूजा-पाठ तथा भोजन इत्यादि ही के योग्य बना हुआ था। कुमार ने देखा कि दोनों भाइयों के लिए उत्तम-से-उत्तम भोजन का सामान चाँदी और सोने के बर्तनों में तैयार है और हाथ में सुन्दर पंखा लिए आनन्दी उसकी हिफाजत कर रही है। इन्द्रानी ने आनन्दी के हाथ से पंखा ले लिया और कहा, "भैरोंसिह भी आ पहुँचे हैं, इनके वास्ते भी सामान ब्हुत जल्द ले आओ।"

आज्ञा पाते ही आनन्दी चली गई और थोड़ी देर में कई औरतों के साथ भोजन का सामान लिए लौट आई। करीने से सब सामान लगाने के बाद उसने उन औरतों को बिदा किया जिन्हें अपने साथ लाई थी।

दोनों कुमार और भैरोंसिह भोजन करने के लिए बैठे, उस समय इन्द्रजीतसिंह ने भेद भरी निगाह से भैरोंसिह की तरफ देखा और भैरोंसिह ने भी इशारे में ही लापरवाही दिखा दी। इस बात को इन्द्रानी और आनन्दी ने ताड़ लिया कि कुमार को इस भोजन में

बेहोशी की दवा का शक हुआ मगर कुछ बोलना मुनासिब न समझकर चुप रह गई। जब तक दोनों कुमार भोजन करते रहे तब तक आनन्दी पंखा हाँकती रही। दोनों कुमार इन दोनों औरतों का बर्ताव देखकर बहुत खुश हुए और मन में कहने लगे कि ये औरतें जितनी खूबसूरत हैं उतनी ही नेक भी हैं, जिनके साथ ब्याही जायेंगी उनके बड़भागी होने में कोई सन्देह नहीं (क्योंकि ये दोनों कुमारी मालूम होती थीं)।

भोजन समाप्त होने पर आनन्दी ने दोनों कुमारों और भैरोंसिंह के हाथ धुलाये और इसके बाद फिर दोनों कुमार और भैरोंसिंह इन्द्रानी और आनन्दी के साथ उसी पहले वाले कमरे में आये। इन्द्रानी ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह से कहा, "अब थोड़ी देर आप लोग आराम करें और मुझे इजाजत दें तो··· ।"

इन्द्रजीतसिंह—मेरा जी तुम लोगों का हाल जानने के लिए बेचैन हो रहा है, इसलिए मैं नहीं चाहता कि तुम एक पल के लिए भी कहीं जाओ जब तक कि मेरी बातों का पूरा-पूरा जवाब न दे लो। मगर यह बताओ कि तुम लोग भोजन कर चुकी हो या नहीं ?

इन्द्रानी—अभी तो हम लोगों ने भोजन नहीं किया है, जैसी मर्जी हो··

इन्द्रजीतसिंह—तब मैं इस समय नहीं रोक सकता। मगर इस बात का वादा जरूर ले लूँगा, कि तुम घण्टे से ज्यादा न लगाओगी, और मुझे अपने इन्तजार का दुःख न दोगी।

इन्द्रानी—जी मैं वादा करती हूँ कि घण्टे भर के अन्दर ही आपकी सेवा में लौट आऊँगी।

इतना कहकर आनन्दी को साथ लिए हुए इन्द्रानी चली गई और दोनों कुमार तथा भैरोंसिंह को बातचीत करने का मौका दे गई।

6

इन्द्रानी और आनन्दी के चले जाने के बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह आनन्दसिंह और भैरोंसिंह में यों बातचीत होने लगी—

इन्द्रजीतसिंह—(भैरोंसिंह से) असल बात जो मैं इन्द्रानी से पूछना चाहता था उसका मौका तो अभी तक मिला ही नहीं।

भैरोंसिंह—यही कि तुम कौन और कहाँ की रहने वाली हो, इत्यादि···!

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, और किशोरी, कामिनी, कमलिनी इत्यादि कहाँ हैं तथा उनसे मुलाकात क्योंकर हो सकती है ?

आनन्दसिंह—(भैरोंसिंह से)इस बात का कुछ पता तो शायद तुम भी दे सकोगे, क्योंकि हम लोगों के पहले तुम इन्द्रानी को जान चुके हो और कई ऐसी जगहों में भी घूम चुके हो जहाँ हम लोग अभी तक नहीं गए हैं।

इन्द्रजीतसिंह—हां, पहले तुम अपना हाल तो कहो !

भैरोंसिंह—सुनिए—अपना बटुआ पाने की उम्मीद में जब मैं उस दरवाजे के अन्दर गया तो जाते ही मैंने उन दोनों को ललकार के कहा, "मैं भैरोंसिंह स्वयं आ पहुँचा।" इतने ही में वह दरवाजा जिस राह से मैं उस कमरे में गया था बन्द हो गया। यद्यपि उस समय मुझे एक प्रकार का भय मालूम हुआ परन्तु बटुए की लालच ने मुझे उस तरफ देर तक ध्यान न देने दिया और मैं सीधा उस नकाबपोश के पास चला गया जिसकी कमर में मेरा बटुआ लटक रहा था।

मैं समझे हुए था कि 'पीला मकरन्द' अर्थात् पीली पोशाक वाला नकाबपोश स्याह नकाबपोश का दुश्मन तो है ही, अतएव स्याह नकाबपोश का मुकाबला करने में पीले मकरन्द से मुझे कुछ मदद अवश्य मिलेगी मगर मेरा खयाल गलत था मेरा नाम सुनते ही वे दोनों नकाबपोश मेरे दुश्मन हो गए और यह कहकर मुझसे लड़ने लगे कि "यह ऐयारी का बटुआ अब तुम्हें नहीं मिल सकता, यह रहेगा तो हम दोनों में से किसी एक के पास ही रहेगा।"

परन्तु मैं इस बात से भी हताश न हुआ। मुझे उस बटुए की लालच ऐसी कम न थी कि उन दोनों के धमकाने से डर जाता और अपने बटुए के पाने से नाउम्मीद होकर अपने बचाव की सूरत देखता। इसके अतिरिक्त आपका तिलिस्मी खंजर भी मुझे हताश नहीं होने देता था, अतः मैं उन दोनों के वारों का जवाब उन्हें देने और दिल खोलकर लड़ने लगा और थोड़ी ही देर में विश्वास करा दिया कि राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों का मुकाबला करना हँसी-खेल नहीं है।[1]

थोड़ी देर तक तो दोनों नकाबपोश मेरा वार बहुत अच्छी तरह बचाते चले गये मगर इसके बाद जब उन दोनों ने देखा कि अब उनमें वार बचाने की कुदरत नहीं रही और तिलिस्मी खंजर जिस जगह बैठ जायेगा दो टुकड़े किए बिना न रहेगा, तब पीले मकरन्द ने ऊँची आवाज में कहा, "भैरोंसिंह ठहरो-ठहरो, जरा मेरी बात सुन लो तब लड़ना। ओ स्याह नकाब वाले, क्यों अपनी जान का दुश्मन बन रहा है? जरा ठहर जा और मुझे भैरोंसिंह से दो-दो बातें कर लेने दे।"

पीले मकरन्द की बात सुनकर स्याह नकाबपोश ने और साथ ही मैंने भी लड़ाई से हाथ खींच लिया, मगर तिलिस्मी खंजर की रोशनी को कम न होने दिया।

मैं—(स्याह नकाबपोश की तरफ बताकर) इसके पास मेरा ऐयारी का बटुआ है जिसे मैं लिया चाहता हूँ।

पीला मकरन्द—तो मुझसे क्यों लड़ रहे हो?

मैं—मैं तुमसे नहीं लड़ता बल्कि तुम खुद मुझसे लड़ रहे हो!

पीला मकरन्द—(स्याह नकाबपोश से) क्यों अब क्या इरादा है, इनका बटुआ खुशी से इन्हें दे दोगे या लड़कर अपनी जान दोगे?

स्याह नकाबपोश—जब बटुए का मालिक स्वयं आ पहुँचा है, बटुआ देने में मुझे

---

1. बहुत ठीक, सत्य वचन !

क्योंकर इनकार हो सकता है ? हाँ यदि ये न आते तो बटुआ कदापि न देता।

पीला मकरन्द—जब ये न आते मैं भी देख लेता कि तुम वह बटुआ मुझे कैसे नहीं देते। खैर अब इनका बटुआ इन्हें दे दो और पीछा छुड़ाओ !

स्याह नकाबपोश ने बटुआ खोलकर मेरे आगे रख दिया और कहा, "अब तो मुझे छुट्टी मिली ?" इसके जवाब में मैंने कहा, "नहीं, पहले मुझे देख लेने दो कि मेरी अनमोल चीजें इसमें हैं या नहीं।"

मैंने उस बटुए के बन्धन पर निगाह पड़ते ही पहचान लिया कि मेरे हाथ की दी हुई गिरह ज्यों की त्यों मौजूद है तथापि होशियारी के तौर पर बटुआ खोल कर देख लिया और जब निश्चय हो गया कि मेरी सब चीजें इसमें मौजूद हैं तो खुश होकर बटुआ कमर में लगाकर स्याह नकाबपोश से बोला, "अब मेरी तरफ से तुम्हें छुट्टी है, मगर यह तो बता दो कि कुमार के पास किस राह से जा सकता हूँ ?" इसका जवाब स्याह नकाबपोश ने यह दिया कि "यह सब हाल मैं नहीं जानता, तुम्हें जो कुछ पूछना है पीले मकरन्द से पूछ लो।"

इतना कहकर स्याह नकाबपोश न मालूम किधर चला गया और मैं पीले मकरन्द का मुँह देखने लगा। पीले मकरन्द ने मुझसे पूछा, "अब तुम क्या चाहते हो ?"

मैं—अपने मालिक के पास जाना चाहता हूँ !

पीला मकरन्द—तो जाते क्यों नहीं ?

मैं—क्या उस दरवाजे की राह जा सकूँगा जिधर से आया था ?

पीला मकरन्द—क्या तुम देखते नहीं कि वह दरवाजा बन्द हो गया है और अब तुम्हारे खोलने से नहीं खुल सकता !

मैं—तब मैं क्योंकर बाहर जा सकता हूँ ?

इसके जवाब में पीले मकरन्द ने कहा, "तुम मेरी सहायता के बिना यहाँ से निकलकर बाहर नहीं जा सकते क्योंकि रास्ता बहुत कठिन और चक्करदार है। खैर तुम मेरे पीछे-पीछे चले आओ, मैं तुम्हें यहाँ से बाहर कर दूँगा।"

पीले मकरन्द की बात सुनकर मैं उसके साथ-साथ जाने के लिए तैयार हो गया, मगर फिर भी अपना दिल भरने के लिए मैंने एक दफे उस दरवाजे को खोलने का उद्योग किया जिधर से उस कमरे में गया था। जब वह दरवाजा न खुला तब लाचार होकर मैंने पीले मकरन्द का सहारा लिया मगर दिल में इस बात का खयाल जमा रहा कि कहीं वह मेरे साथ दगा न करे।

पीले मकरन्द ने चिराग उठा लिया और मुझे अपने पीछे-पीछे आने के लिए कहा तथा मैं तिलिस्मी खंजर हाथ में लिये हुए उसके साथ रवाना हुआ। पीले मकरन्द ने विचित्र ढंग से कई दरवाजे खोले और मुझे कई कोठरियों में घुमाता हुआ मकान के बाहर ले गया। मैं तो समझे हुए था कि अब आपके पास पहुँचा चाहता हूँ मगर जब बाहर निकलने पर देखा तो अपने को किसी और ही मकान के दरवाजे पर पाया। चारो तरफ सुबह की सुफेदी अच्छी तरह फैल चुकी थी और मैं ताज्जुब की निगाहों से चारों तरफ देख रहा था। उस समय पीले मकरन्द ने मुझे उस मकान के अन्दर चलने के

लिए कहा मगर इस जगह वह स्वयं पीछे हो गया और मुझे आगे चलने के लिए बोला। उसकी इस बात से मुझे शक पैदा हुआ, मैंने उससे कहा कि "जिस तरह अभी तक तुम मेरे आगे-आगे चलते आये हो उसी तरह अब भी इस मकान के अन्दर क्यों नहीं चलते ? मैं तुम्हारे पीछे-पीछे चला चलूंगा।" इसके जवाब में पीले मकरन्द ने सिर हिलाया और कुछ कहा ही चाहता था कि मेरे पीछे की तरफ से आवाज आई, "ओ भैरोसिंह, खबरदार ! इस मकान के अन्दर पैर न रखना, और इस पीले मकरन्द को पकड़ रखना, भागने न पावे !"

मैं घूमकर पीछे की तरफ देखने लगा कि यह आवाज देने वाला कौन है। इतने ही में इस इन्द्रानी पर मेरी निगाह पड़ी जो तेजी के साथ चलकर मेरी तरफ आ रही थी। पलट कर मैंने पीले मकरन्द की तरफ देखा तो उसे मौजूद न पाया, न मालूम वह यकायक क्योंकर गायब हो गया। जब इन्द्रानी मेरे पास पहुँची तो उसने कहा, "तुमने बड़ी भूल की जो उस शैतान मकरन्द को पकड़ न लिया। उसने तुम्हरे साथ धोखेबाजी की। बेशक वह तुम्हारे बटुए की लालच में तुम्हारी जान लिया चाहता था। ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए कि मुझे खबर लग गई और मैं दौड़ी हुई यहाँ तक चली आई। वह कम्बख्त मुझे देखते ही भाग गया।"

इन्द्रानी की बात सुनकर मैं ताज्जुब में आ गया और उसका मुँह देखने लगा। सबसे ज्यादा ताज्जुब तो मुझे इस बात का था कि इन्द्रानी जैसी खूबसूरत और नाजुक औरत को देखते ही वह शैतान मकरन्द भाग क्यों गया ? इसके अतिरिक्त देर तक तो मैं इन्द्रानी की खूबसूरती ही को देखता रह गया। (मुस्कुरा कर) माफ कीजिए, बुरा न मानियेगा, क्योंकि मैं सच कहता हूँ कि इन्द्रानी को मैंने किशोरी से भी बढ़कर खूबसूरत पाया। सुबह के सुहावने समय में उसका चेहरा दिन की तरह दमक रहा था !

इन्द्रजीतसिंह—यह तुम्हारी खुशनसीबी थी कि सुबह के वक्त ऐसी खूबसूरत औरत का मुँह देखा।

भैरोंसिंह – उसी का यह फल मिला कि जान बच गई और आपसे मिल सका।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, तब क्या हुआ ?

भैरोंसिंह – मैंने धन्यवाद देकर इन्द्रानी से पूछा कि "तुम कौन हो और यह मकरन्द कौन था ?" इसके जवाब में इन्द्रानी ने कहा कि "यह तिलिस्म है, यहाँ के भेदों को जानने का उद्योग न करो। जो कुछ आप-से-आप मालूम होता जाय, उसे समझते जाओ। इस तिलिस्म में तुम्हारे दोस्त और दुश्मन बहुत हैं, अभी तो आए हो, दो-चार दिन में बहुत सी बातों का पता लग जाएगा, हाँ, अपने बारे में मैं इतना जरूर कहूँगी कि इस तिलिस्म की रानी हूँ और तुम्हें तथा दोनों कुमारों को अच्छी तरह जानती हूँ।"

इन्द्रानी इतना कहके चुप हो गई और पीछे की तरफ देखने लगी। उसी समय और भी चार-पाँच औरतें वहाँ आ पहुँचीं जो खूबसूरत कमसिन और अच्छे गहने-कपड़े पहने हुए थीं। मैंने किशोरी कामिनी वगैरह का हाल इन्द्रानी से पूछना चाहा, मगर उसने बात करने की मोहलत न दी और यह कहकर मुझे एक और के सुपुर्द कर दिया दि "यह तुम्हें कुंअर इन्द्रजीतसिंह के पास पहुँचा देगी।" इतना कहकर बाकी औरतों

को साथ लिए हुए इन्द्रानी चली गई और मुझे पीछे तरद्दुद में छोड़ गई। अन्त में उसी औरत की मदद से मैं यहाँ तक पहुँचा।

इन्द्रजीतसिंह—आखिर उस औरत से भी तुमने कुछ पूछा या नहीं ?

भैरोंसिंह—पूछा तो बहुत कुछ, मगर उसने जवाब एक बात का भी न दिया मानो वह कुछ सुनती ही न थी। हाँ, एक बात कहना तो मैं भूल ही गया।

इन्द्रानी—वह क्या ?

भैरोंसिंह—इन्द्रानी के चले जाने के बाद जब मैं उस औरत के साथ इधर आ रहा था तब रास्ते में एक लपेटा हुआ कागज मुझे मिला जो जमीन पर इस तरह पड़ा हुआ था जैसे किसी राह-चलते की जेब से गिर गया हो। (कमर से कागज निकाल कर और कुँअर इन्द्रजीतसिंह के हाथ में देकर) लीजिए पढ़िए, मैं तो इसे पढ़कर पागल सा हो गया था।

भैरोंसिंह के हाथ से कागज लेकर कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने पढ़ा और उसे अच्छी तरह देखकर भैरोंसिंह से कहा, "बड़े आश्चर्य की बात है, मगर यह हो नहीं सकता, क्योंकि हमारा दिल हमारे कब्जे में नहीं है और न हम किसी के आधीन हैं।"

आनन्दसिंह—भैया, जरा मैं भी तो देखूँ, यह कागज कैसा है और इसमें क्या लिखा है ?

इन्द्रजीतसिंह—(वह कागज देकर) लो देखो।

आनन्दसिंह—(कागज को पढ़कर और उसे अच्छी तरह देखकर) यह तो अच्छी जबर्दस्ती है, मानो हम लोग कोई चीज ही नहीं हैं। (भैरोंसिंह से) जिस समय यह चिट्ठी तुमने जमीन पर से उठाई थी उस समय उस औरत ने भी देखा या तुमसे कुछ कहा था कि नहीं जो तुम्हारे साथ थी ?

भैरोंसिंह—उसे इस बात की कुछ भी खबर नहीं थी क्योंकि वह मेरे आगे-आगे चल रही थी। मैंने जमीन पर से चिट्ठी उठाई भी और पढ़ी भी मगर, उसे कुछ भी मालूम न हुआ। मुझे तो शक होता है कि वह गूंगी और बहरी अथवा हद से ज्यादा सीधी और बेवकूफ थी।

आनन्दसिंह—इस पर मोहर इस ढंग की पड़ी हुई है जैसे किसी राजदरबार की हो।

भैरोंसिंह—बेशक ऐसी ही मालूम पड़ती है। (हँसकर इन्द्रजीतसिंह से) चलिए आपके लिए तो पौ-बारह हैं, किस्मत का धनी होना इसे ही कहते हैं ?

इन्द्रजीतसिंह—तुम्हारी ऐसी की तैसी।

पाठकों के सुभीते के लिए हम उस चिट्ठी की नकल यहाँ लिख देते हैं जिसे पढ़ कर और देखकर दोनों कुमारों और भैरोंसिंह को ताज्जुब मालूम हुआ था—

"पूज्यवर,

पत्र पाकर चित्त प्रसन्न हुआ। आपकी राय बहुत अच्छी है। उन दोनों के लिए कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ऐसा वर मिलना कठिन है, इसी तरह दोनों कुमारों को भी ऐसी स्त्री नहीं मिल सकती। बस अब इसमें सोच-विचार करने की कोई जरूरत

नहीं, आपकी आज्ञामुसार मैं आठ पहर के अन्दर ही सब सामान दुरुस्त कर दूँगा। बस परसों ब्याह हो जाना ही ठीक है। बड़े लोग इस तिलिस्म में जो कुछ दहेज की रकम रख गये हैं वह इन्हीं दोनों कुमारियों के योग्य है। यद्यपि इन दोनों का दिल चुटीला हो चुका है परन्तु हमारा प्रताप भी तो कोई चीज है! जब तक दोनों कुमार आपकी आज्ञा न मानेंगे, तब तक वे जा कहाँ सकते हैं? अन्त को वह होना आवश्यक है जो आप चाहते हैं।

मुहर द०—मु० मा०"

इस चिट्ठी को कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने पुनः पढ़ा और ताज्जुब करते हुए अपने छोटे भाई की तरफ देख कर कहा, "ताज्जुब नहीं कि यह चिट्ठी किसी ने दिल्लगी के तौर पर लिख कर भैरोंसिंह के रास्ते में डाल दी हो और हम लोगों को तरद्दुद में डाल कर तमाशा देखना चाहते हो?"

आनन्दसिंह—कदाचित ऐसा ही हो। अगर कमलिनी से मुलाकात हो गई होती तो···

भैरोंसिंह—तब क्या होता? मैं यह पूछता हूँ कि इस तिलिस्म के अन्दर आकर आप दोनों भाइयों ने क्या किया? अगर इसी तरह से समय बिताया जायगा तो देखियेगा कि आगे चल कर क्या-क्या होता है!

इन्द्रजीतसिंह—तो तुम्हारी क्या राय है, बिना समझे-बूझे तोड़-फोड़ मचाऊँ?

भैरोंसिंह—बिना समझे-बूझे तोड़-फोड़ मचाने की क्या जरूरत है? तिलिस्मी किताब और तिलिस्मी बाजे से आपने क्या पाया और वह किस दिन काम आवेगा? क्या इन बागों का हाल उसमें लिखा हुआ न था?

इन्द्रजीतसिंह—लिखा हुआ तो था मगर साथ ही इसके यह भी अन्दाज मिलता था कि तिलिस्म के ये हिस्से टूटने वाले नहीं हैं।

भैरोंसिंह—यह तो मैं भी बिना तिलिस्मी किताब पढ़े हो समझ सकता हूँ कि तिलिस्म के ये हिस्से टूटने वाले नहीं हैं, अगर टूटने वाले होते तो किशोरी, कामिनी वगैरह को राजा गोपालसिंह हिफाजत के लिए यहाँ न पहुँचा देते, मगर यहाँ से निकल जाने का या तिलिस्म के उस हिस्से में पहुँचने का रास्ता तो जरूर होगा जिसे आप तोड़ सकते हैं।

आनन्दसिंह—हाँ, इसमें क्या शक है!

भैरोंसिंह—अगर शक नहीं है तो उसे खोजना चाहिए।

इतने ही में इन्द्रानी और आनन्दी भी आ पहुँचीं, जिन्हें देख दोनों कुमार बहुत प्रसन्न हुए और इन्द्रजीतसिंह ने इन्द्रानी से कहा—"मैं बहुत देर से तुम्हारे आने का इन्तजार कर रहा था।"

इन्द्रानी—मेरे आने में वादे से ज्यादा देर तो नहीं हुई।

इन्द्रजीतसिंह—न सही, मगर ऐसे आदमी के लिए जिसका दिल तरह-तरह के तरद्दुदों और उलझनों में पड़ कर खराब हो रहा हो, इतना इन्तजार भी कम नहीं है।

इस समय इन्द्रानी और आनन्दी यद्यपि सादी पोशाक में थीं, मगर किसी तरह की सजावट की मुहताज न रहने वाली उनकी खूबसूरती देखने वाले का दिल, चाहे वह परले सिरे का त्यागी क्यों न हो, अपनी तरफ खींचे बिना नहीं रह सकती थी। नुकीले हर्बों से ज्यादा काम करने वाली उनकी बड़ी-बड़ी आँखों में मारने और जिलाने वाली दोनों तरह की शक्तियाँ मौजूद थीं। गालों पर इत्तिफाक से आ पड़ी हुई घुंघराली लटें शान्त बैठे हुए मन को भी चाबुक लगा कर अपनी तरफ मुतवज्जह कर रही थीं। सूधेपन और नेकचलनी का पता देने वाली सीधी और पतली नाक तो जादू का काम कर रही थी। मगर उनके खूबसूरत, पतले और लाल होंठों को हिलते देखने और उनमें से तुले हुए तथा मन लुभाने वाले शब्दों के निकलने की लालसा से दोनों कुमारों को छुटकारा नहीं मिल सकता था और उनकी सुराहीदार गर्दनों पर गर्दन देने वालों की कमी नहीं हो सकती थी। केवल इतना ही नहीं, उनके सुन्दर सुडौल और उचित आकार वाले अंगों की छटा बड़े-बड़े कवियों और चित्रकारों को भी चक्कर में डाल कर लज्जित कर सकती थी।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के आग्रह से वे दोनों उनके सामने बैठ गईं मगर अदब का पल्ला लिए और सिर नीचा किए हुए।

इन्द्रानी—इस जल्दी और थोड़े समय में हम लोग आपकी खातिरदारी और मेहमानी का इन्तजाम कुछ भी न कर सकीं। मगर मुझे आशा है कि कुछ देर के बाद इस कसूर की माफी का इन्तजाम अवश्य कर सकूंगी।

इन्द्रजीतसिंह—इतना क्या कम है कि मुझ जैसे नाचीज मुसाफिर के साथ यहाँ की रानी होकर तुमने ऐसा अच्छा बर्ताव किया। अब आशा है कि जिस तरह तुमने अपने बर्ताव से मुझे प्रसन्न किया है, उसी तरह मेरे सवालों का जवाब देकर मेरा सन्देह भी दूर करोगी।

इन्द्रानी—आप जो कुछ पूछना चाहते हों पूछें, मुझे जवाब देने में किसी तरह का उज्र न होगा।

इन्द्रजीतसिंह—किशोरी, कामिनी, कमलिनी और लाड़िली वगैरह इस तिलिस्म के अन्दर आई हैं?

इन्द्रानी—जी हाँ, आई तो हैं!

इन्द्रजीतसिंह—क्या तुम जानती हो कि इस समय वे सब कहाँ हैं?

इन्द्रानी—जी हाँ, मैं अच्छी तरह जानती हूँ। इस बाग के पीछे सटा हुआ एक और तिलिस्मी बाग है, सभी को लिए हुए कमलिनी उसी में चली गई हैं और उसी में रहती हैं!

इन्द्रजीतसिंह—क्या हम लोगों को तुम उनके पास पहुँचा सकती हो?

इन्द्रानी—जी नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—क्यों?

इन्द्रानी—वह बाग एक दूसरी औरत के अधीन है, जिससे बढ़ कर मेरी दुश्मन इस दुनिया में कोई नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—तो क्या तुम उस बाग में कभी नहीं जातीं ?

इन्द्रानी—जी नहीं, क्योंकि एक तो दुश्मन के खयाल से मेरा जाना वहाँ नहीं होता, दूसरे उसने रास्ता भी बन्द कर दिया है। इसी तरह मैं उसके पक्षपातियों को अपने बाग में नहीं आने देती।

इन्द्रजीतसिंह—तो हमारी और उनकी मुलाकात क्योंकर हो सकती है ?

इन्द्रानी—यदि आप उन सभी से मिलना चाहें तो तीन-चार दिन और सब्र करें क्योंकि अब ईश्वर की कृपा से ऐसा प्रबन्ध हो गया है कि तीन-चार दिन के अन्दर ही वह बाग मेरे कब्जे में आ जाय और उसका मालिक मेरा कैदी बने। मेरे दारोगा ने तो कमलिनी को उस बाग में जाने से मना किया था। मगर अफसोस कि उसने दारोगा की बात न मानी और धोखे में पड़ कर अपने को एक ऐसी जगह जा फँसाया, जहाँ से हम लोगों का सम्बन्ध कुछ भी नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—तो क्या तुम लोग राजा गोपालसिंह के अधीन नहीं होते ?

इन्द्रानी—हम लोग जरूर राजा गोपालसिंह के अधीन हैं, और मैं यह जानती हूँ कि आप यहाँ के तिलिस्म को तोड़ने के लिए आए हैं, अस्तु, इस बात को भी जानते होंगे कि यहाँ के बहुत से ऐसे हिस्से हैं, जिन्हें आप नहीं तोड़ सकेंगे।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, जानते हैं।

इन्द्रानी—उन्हीं हिस्सों में से जो टूटने वाले नहीं हैं, कई दर्जे ऐसे हैं जो केवल सैर-तमाशे के लिए बनाये गए हैं और वहाँ जमानिया का राजा प्रायः अपने मेहमानों को भेज कर सैर-तमाशा दिखाया करता है, अस्तु इसलिए कि वह जगह हमेशा अच्छी हालत में बनी रहे हम लोगों के कब्जे में दे दी गई है और नाम मात्र के लिए हम लोग तिलिस्म की रानी कहलाती हैं, मगर हाँ इतना तो जरूर है कि हम लोगों को सोना-चाँदी और जवाहिरात की (यहाँ की बदौलत) कमी नहीं है।

इन्द्रजीतसिंह—जिन दिनों राजा गोपालसिंह को मायारानी ने कैद कर लिया था उन दिनों यहाँ की क्या अवस्था थी ? मायारानी भी कभी यहाँ आती थी या नहीं ?

इन्द्रानी—जी नहीं, मायारानी को इन सब बातों और जगहों की कुछ खबर ही न थी। इसलिए वह अपने समय में यहाँ कभी नहीं आई और तब तक हम लोग स्वतन्त्र बने रहे। अब इधर जब से आपने राजा गोपालसिंह को कैद से छुड़ा कर हम लोगों को पुनः जीवनदान दिया है, तब से केवल तीन दफे राजा गोपालसिंह यहाँ आए हैं और चौथी दफे परसों मेरी शादी में यहाँ आवेंगे !

इन्द्रजीतसिंह—(चौंक कर) क्या परसों तुम्हारी शादी होने वाली है ?

इन्द्रानी—(कुछ शरमा कर) जी हाँ, मेरी और (आनन्दी की तरफ इशारा करके) मेरी इस छोटी बहिन की भी।

इन्द्रजीतसिंह—किसके साथ ?

इन्द्रानी—सो तो मुझे मालूम नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—शादी करने वाले कौन हैं ? तुम्हारे माँ-बाप होंगे ?

इन्द्रानी—जी, मेरे माँ-बाप नहीं हैं केवल गुरुजी महाराज हैं, जिनकी आज्ञा

मुझे माँ-बाप की आज्ञा से भी बढ़ कर माननी पड़ती है।

भैरोंसिह—(इन्द्रानी से) इस तिलिस्म के अन्दर कल-परसों में किसी और का ब्याह भी होने वाला है ?

इन्द्रानी—नहीं।

भैरोंसिह—मगर हमने सुना है।

इन्द्रानी—कदापि नहीं, अगर ऐसा होता तो हम लोगों को पहले खबर होती।

इन्द्रानी का जवाब सुनकर भैरोंसिह ने मुस्कराते हुए कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की तरफ देखा और दोनों कुमारों ने भी उसका मतलब समझ कर सिर नीचा कर लिया।

इन्द्रजीतसिंह—(इन्द्रानी से) क्या तुम लोगों में पर्दे का कुछ खयाल नहीं रहता ?

इन्द्रानी—पर्दे का खयाल बहुत ज्यादा रहता है। मगर उस आदमी से पर्दे का बर्ताव करना पाप समझा जाता है, जिसको ईश्वर ने तिलिस्म तोड़ने की शक्ति दी है, तिलिस्म तोड़ने वाले को हम ईश्वर समझें, यही उचित है।

आनन्दसिंह—तो तुम राजा गोपालसिंह के पास जा सकती हो या हमारी चिट्ठी उनके पास पहुँचा सकती हो ?

इन्द्रानी—मैं स्वयं राजा गोपालसिंह के पास जा सकती हूँ और अपना आदमी भी भेज सकती हूँ। मगर आजकल ऐसा करने का मौका नहीं है, क्योंकि आजकल माया-रानी वगैरह खास बाग में आई हुई हैं, और उनसे तथा राजा गोपालसिंह से बदाबदी हो रही है, शायद यह बात आपको भी मालूम होगी।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, मालूम है।

इन्द्रानी—ऐसी अवस्था में हम लोगों का या हमारे आदमियों का वहाँ जाना अनुचित ही नहीं बल्कि दुःखदायी भी हो सकता है !

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, सो तो जरूर है।

इन्द्रानी—मगर मैं आपका मतलब समझ गई, आप शायद उसके विषय में राजा गोपालसिंह को लिखना चाहते हैं जिसके हिस्से में किशोरी-कामिनी वगैरह पड़ी हुई हैं, मगर ऐसा करने की कोई जरूरत नहीं है। दो रोज सब्र कीजिए, तब तक स्वयं राजा गोपालसिंह ही यहाँ आकर आपसे मिलेंगे।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा, यह बताओ कि हमारी चिट्ठी किशोरी या कमलिनी के पास पहुँचवा सकती हो ?

इन्द्रानी—जी हाँ, बल्कि उसका जवाब भी मँगवा सकती हूँ, मगर ताज्जुब की बात है कि कमलिनी ने आपके पास कोई पत्र क्यों नहीं भेजा ? इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्हें आप लोगों का यहाँ आना मालूम है।

इन्द्रजीतसिंह—शायद कोई सबब होगा। अच्छा तो कमलिनी के नाम से एक चिट्ठी लिख दूँ ?

इन्द्रानी—हाँ लिख दीजिये, मैं उसका जवाब मँगा दूंगी।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने भैरोंसिंह की तरफ देखा। भैरोंसिह ने अपने बटुए में से

कलम-दवात और कागज निकाल कर कुमार के सामने रख दिया और कुमार ने कमलिनी के नाम से इस मजमून की चिट्ठी लिख और बन्द कर इन्द्रानी के हवाले कर दी—

"मेरी···कमलिनी,

यह तो मुझे मालूम ही है कि किशोरी, कामिनी, लक्ष्मीदेवी और लाड़िली वगैरह को साथ लेकर राजा गोपालसिंह की इच्छानुसार तुम यहाँ आई हो। मगर मुझे अफसोस इस बात का है कि तुम्हारा दिल जो किसी समय मक्खन की तरह मुलायम था, अब फौलाद की तरह ठोस हो गया। इस बात का तो विश्वास हो ही नहीं सकता कि तुम इच्छा करके भी मुझसे मिलने में असमर्थ हो, परन्तु इस बात का रंज अवश्य हो सकता है कि किसी तरह का कसूर न होने पर भी तुमने मुझे दूध की मक्खी की तरह अपने दिल से निकाल कर फेंक दिया। खैर, तुम्हारे दिल की मजबूती और कठोरता का परिचय तो तुम्हारे अनूठे कामों ही से मिल चुका था, परन्तु किशोरी के विषय में अभी तक मेरा दिल इस बात की गवाही नहीं देता कि वह भी मुझे तुम्हारी ही तरह अपने दिल से भुला देने की ताकत रखती है। मगर क्या किया जाय? पराधीनता की बेड़ी उसके पैरों में है और लाचारी की मुहर उसके होठों पर! अतः इन सब बातों का लिखना तो अब वृथा ही है, क्योंकि तुम अपनी आप मुख्तार हो, मुझसे मिलना चाहो, यह तुम्हारी इच्छा है, मगर अपना तथा अपने साथियों का कुशल-मंगल तो लिख भेजो, या यदि अब मुझे इस योग्य भी नहीं समझतीं तो जाने दो।

क्या कहें, किसका—इन्द्रजीत"

कुंअर आनन्दसिंह की भी इच्छा थी कि अपने दिल का कुछ हाल कामिनी और लाड़िली को लिखें। परन्तु कई बातों का खयाल कर रह गए। इन्द्रानी कुँअर इन्द्रजीतसिंह की लिखी हुई चिट्ठी लेकर उठ खड़ी हुई और यह कहती हुई अपनी बहिन को साथ लिए चली गई कि "अब मैं चिराग जलने के बाद आप लोगों से मिलूंगी, तब तक आप लोग यदि इच्छा हो तो इस बाग की सैर करें। मगर किसी मकान के अन्दर जाने का उद्योग न करें।

7

अब हम थोडा-सा हाल राजा गोपालसिंह का लिखते हैं। जब वह बरामदे पर से झांकने वाला आदमी मायारानी के चलाए हुए तिलिस्मी तमंचे की तासीर से बेहोश होकर नीचे आ गिरा और भीमसेन उसके चेहरे की नकाब हटाने और सूरत देखने पर चौंककर बोल उठें कि "वाह-वाह, यह तो राजा गोपालसिंह हैं, तब मायारानी बहुत ही प्रसन्न हुई और भीमसेन से बोली, "बस, अब विलम्ब करना उचित नहीं है, एक ही

बार में सिर धड़ से अलग कर देना चाहिए ।"

भीमसेन—नहीं, इसे एकदम से मार डालना उचित न होगा, बल्कि कैद करके तिलिस्म का कुछ हाल मालूम करना लाभदायक होगा ।

मायारानी—मैंने इसे कैद में रख कर हद से ज्यादा तकलीफें दीं, तब तो इसने तिलिस्म का कुछ हाल कहा नहीं, अब क्या कहेगा, बस इसे मार डालना ही मुनासिब है ।

इसके जवाब में उसी बरामदे पर से जिस पर से वह आदमी लुढ़क कर नीचे आया था किसी ने कहा, "तिलिस्म का हाल जानने का शौक अभी तक लगा ही है । इस बात की खबर नहीं कि अब तुम लोगों के मरने में केवल सात घण्टे की देर बाकी रह गई है ।"

सभी ने चौंककर उसकी तरफ देखा और पुनः एक आदमी को उसी बरामदे में टहलता हुआ पाया मगर अब की दफ इस आदमी का चेहरा नकाब से खाली था और एक जलती हुई मोमबत्ती बायें हाथ में मौजूद थी जिससे उसका रोबीला चेहरा साफ-साफ दिखाई दे रहा था । मायारानी और उसके साथियों को यह देख कर बड़ा ताज्जुब हुआ कि यह दूसरा आदमी भी राजा गोपालसिंह ही मालूम होता था बल्कि बनिस्बत पहले आदमी के ठीक राजा गोपालसिंह मालूम होता था । इस कैफियत ने मायारानी का कलेजा हिला दिया और वह डर से काँपती हुई उसको इस तरह देखने लगी जैसे कोई व्याध जंगल में अकस्मात् आ खड़े हुए शेर की तरफ देखता हो ।

सभी को अपनी तरफ ताज्जुब के साथ देखते-देखते उस आदमी ने पुनः कहा, "न तो वह राजा गोपालसिंह है और न उसकी जुबानी तिलिस्म का कोई भेद ही तुम लोगों को मालूम हो सकता है । अरे ओ कम्बख्त मायारानी, तू तो वर्षों तक मेरे साथ रह चुकी है, क्या तू भी मुझे नहीं पहचानती । राजा गोपालसिंह मैं हूँ या वह है ? तू उसके नाटे कद को नहीं देखती ? अगर वह राजा गोपालसिंह होता तो क्या उस तिलिस्मी तमंचे की एक गोली खाकर गिर पड़ता ! भला मुझ पर भी एक नहीं पचास गोली चला, देख, क्या असर होता है ।"

नये गोपालसिंह की इस बात ने मायारानी की रही-सही ताकत भी हवा कर दी और अब उसे अपने सामने मौत की सूरत दिखाई देने लगी । यद्यपि उसने इस गोपालसिंह पर भी तिलिस्मी तमंचा चलाने का इरादा किया था, मगर अब उसके हाथों में इतनी ताकत न रही कि तमंचे में गोली डालकर चला सके । इसी तरह उसके साथी भी घबड़ाकर इस नये राजा गोपालसिंह की तरफ देखने और अपने मन में सोचने लगे, "व्यर्थ इस मायारानी के फेर में पड़कर यहाँ आए ।"

इस नये गोपालसिंह ने पुनः पुकारकर मायारानी ने कहा, "हाँ-हाँ, सोचती क्या है, तिलिस्मी तमंचा चला और तमाशा देख, या कह तो मैं स्वयं तेरे पास चला आऊँ ! और भीमसेन वगैरह, तुम लोग क्यों इसके फेर में पड़कर अपनी-अपनी जान दे रहे हो ! क्या तुम समझ रहे हो कि यह तिलिस्म की रानी हो जायेगी और तुम्हें अपना हिस्सेदार बना लेगी ! कदापि नहीं, अब इसकी जान किसी तरह नहीं बच सकती और मैं अभी नीचे आकर तुम सभी का काम तमाम करता हूँ । हाँ, अगर तुम लोग अपनी जान बचाना

चाहते हो तो मैं तुम्हें कहता हूँ कि मायारानी का खयाल न करके उसे इसी जगह छोड़ दो और तुम लोग उस सफेद संगमरमर के चबूतरे पर भागकर चले जाओ। खबरदार, दूसरी जगह मत खड़े होना और मेरे नीचे आने के पहले ही यहाँ से हटकर उस चबूतरे पर चले जाना, नहीं तो पछताओगे!"

इतना कहकर नये गोपालसिंह ने मोमबत्ती नीचे फेंक दी और पीछे की तरफ हटकर उन लोगों की नजरों से गायब हो गये।

अब भीमसेन और माधवी वगैरह को निश्चय हो गया कि मायारानी के किए कुछ न होगा और इसका साथ करके हम लोगों ने व्यर्थ ही में अपने को आफत में ला फँसाया। इस तिलिस्मी बाग तथा राजा गोपालसिंह की माया का पता नहीं लगता, अतः मायारानी का साथ देना और गोपालसिंह की बात न मानना निःसन्देह अपना गला अपने हाथ से काटना है। इतना सोचते-सोचते ही वे लोग गोपालसिंह के कहे मुताबिक उस संगमरमर के चबूतरे पर चले गये जो उनसे थोड़ी ही दूर पर उनके पीछे की तरफ पड़ता था।

होना तो ऐसा ही चाहिए था कि गोपालसिंह की बातों से डरकर मायारानी भी उन लोगों के साथ-ही-साथ उसी संगमरमर वाले चबूतरे पर चली जाती, मगर न मालूम क्या सोचकर उसने ऐसा न किया और वहाँ से भागकर उन फौजी सिपाहियों की भीड़ में जा छिपी जो इस बाग में खड़े हुए इनकी बातें सुन नहीं सकते थे, मगर ताज्जुब के साथ सब-कुछ देख जरूर रहे थे।

वह संगमरमर का चबूतरा, जिस पर भीमसेन वगैरह चले गये थे, उनके जाने के थोड़ी ही देर बाद इस तेजी के साथ जमीन के अन्दर धँस गया कि उन लोगों को कूद-कर भागने की भी मोहलत न मिली। कुछ देर बाद उन सभी को न मालूम कहाँ उलट-कर वह चबूतरा फिर ऊपर चला आया और ज्यों का त्यों अपने स्थान पर जम गया।

इस समय केवल सुबह की सफेदी ही ने चारों तरफ अपना दखल नहीं जमा लिया था, बल्कि आसमान पर पूरब की तरफ सूरज की लालिमा भी कुछ दूर तक फैल चुकी थी, इसलिए उस चबूतरे पर जाने वाले भीमसेन और माधवी वगैरह का जो हाल हुआ, वह माधवी के फौजी सिपाहियों ने भी बखूबी देख लिया। अपने मालिक और उनके साथियों की यह दशा देख फौजी सिपाही घबरा गये और चाहने लगे कि यदि कहीं रास्ता मिल जाय तो हम लोग भी यहाँ से भागकर अपनी जान बचावें। उन्हें अपने झुंड में मायारानी का आ जाना बहुत ही बुरा मालूम हुआ और उन्होंने बड़ी बेमुरौवती के साथ मायारानी से कहा, "तुम्हारी ही बदौलत हम लोगों की यह दशा हुई है और हमारे मालिकों पर भी आफत आई, अतः अब तुम हमारी मण्डली में से चली जाओ, नहीं तो हम लोग जूते से तुम्हारे सिर की खबर लेंगे, तुम्हारे जाने के बाद हम लोगों पर जो कुछ बीतेगी, उसे सह लेंगे।"

अफसोस, अपनी करतूतों के कारण आज मायारानी इस दशा को पहुँच गई कि अपने सिपाहियों की झिड़की सहे और जूतियाँ खाय। सिपाहियों की बात जब मायारानी ने न मानी तो कई सिपाहियों ने जूतियों से उसकी खबर ली, और उसी समय ऊपर से

किसी के पुकारने की आवाज आई।

जिस जगह ये सिपाही लोग थे, उससे थोड़ी ही दूर पर एक बुर्ज था। इस समय उसी बुर्ज पर चढ़े हुए राजा गोपालसिंह को उन सिपाहियों ने देखा और मालूम किया कि वह आवाज उन्हीं ने दी थी।

गोपालसिंह की कैफियत देखकर सिपाहियों का कलेजा पहले ही दहल चुका था, अतः अब इस बात का हौसला नहीं कर सकते थे कि उनका मुकाबला करें। उन्हें देखने के साथ ही उस फौज का अफसर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला, "आज्ञा !"

गोपालसिंह ने कहा, "हम खूब जानते हैं कि तुम लोग बेकसूर हो और जो कुछ कसूर है, वह तुम्हारे मालिकों का है, सो तुमने देख ही लिया कि वे अपनी सजा को पहुँच गये, अब वे जीते नहीं हैं जो तुमसे आकर मिलेंगे, अतः अब तुम लोगों को हुक्म दिया जाता है कि तुम लोग अपनी-अपनी जान बचाकर यहाँ से निकल जाओ। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो तुम्हारे जाने के लिए दरवाजा खोल दिया जाय और तुम लोग बाग से बाहर होकर जहाँ इच्छा हो चले जाओ। यदि तुम चाहोगे और नेकचलनी का वादा करोगे तो हमारी फौज में भी तुम को जगह मिल जायगी।"

फौजी अफसर—(हाथ जोड़े हुए) आप स्वयं राजा हैं और जानते हैं कि सिपाही लोग तनख्वाह के वास्ते लड़ते हैं। जो राज्य या जमीन के वास्ते लड़े और सिपाहियों को तनख्वाह दे, कसूर उसी का समझा जाता है। हमारे मालिक नादान थे, आपके प्रताप का खयाल न करके मायारानी की बातों में आकर नष्ट हो गये, अब हम लोग आपके अधीन हैं और चाहते हैं कि हम लोगों को इस कैद से छुटकारा ही नहीं बल्कि आपके सरकार में नौकरी भी मिले। इस समय हम लोग अपने को आप ही का ताबेदार समझते हैं।

गोपालसिंह—अच्छा, तो जैसा चाहते हो, वैसा ही होगा। इस समय से तुम्हें अपना नौकर समझ के हुक्म दिया जाता है कि मायारानी जो तुम लोगों के बीच में चली आई है, जूतियाँ लगाकर अलग कर दी जाय और तुम लोग (हाथ का इशारा करके) उस तरफ की दीवार के पास चले जाओ। वहाँ तुम्हें एक छोटा सा दरवाजा खुला हुआ दिखाई देगा, बस उसी राह से तुम लोग बाहर चले जाना और किसी ठिकाने मैदान में डेरा जमाना। हमारा राजदीवान स्वयं तुम्हारे पास पहुँचकर सब इन्तजाम कर देगा। मगर खबरदार, इस बात का खूब खयाल रखना कि मायारानी तुम लोगों के साथ बाहर न जाने पावे और तुम लोगों में से एक आदमी भी उसका साथ न दे।

फौजी अफसर—जो हुक्म।

मायारानी बेइज्जत हो ही चुकी थी, मगर फिर भी दूर खड़ी यह सब कार्रवाई देख और बातें सुन रही थी। उसे इन सिपाहियों की नमकहरामी पर बड़ा क्रोध आया और वह वहाँ से भागकर पश्चिम की तरफ वाले दालान में चली गई, तथा एक कोठरी के अन्दर घुसकर गायब हो गयी। शायद इस कोठरी में कोई तहखाना या रास्ता था, जिसका हाल उसे मालूम था। उसी राह से होकर वह मकान की दूसरी मंजिल पर चली गई और उसी जगह से छिपकर तिलिस्मी तमंचे की गोली उन फौजी सिपाहियों पर चलाने लगी जो राजा गोपालसिंह की आज्ञानुसार दरवाजे की तरफ जा रहे थे। इन

गोलियों की तासीर का हाल हम पहले कई जगह लिख आये हैं और बता आये हैं कि इन गोलियों में से निकला हुआ धुआँ आला दर्जे की बेहोशी का असर बात की बात में पैदा करता था, अब बेचारे सिपाहियों को दरवाजे तक पहुँचने की भी मोहलत न मिली और तीन ही चार गोलियों में से निकले धुएँ ने उन सभी को बेहोश करके जमीन पर लिटा दिया।

अपनी कार्रवाई को देखकर मायारानी बहुत प्रसन्न हुई, मगर उसकी प्रसन्नता ज्यादा देर तक कायम न रही, क्योंकि उसी समय उसने राजा गोपालसिंह को उन सिपाहियों की तरफ जाते देखा। वह ताज्जुब में आकर उसी जगह खड़ी देखने लगी कि अब क्या होता है। उसने देखा कि राजा गोपालसिंह ने उन सिपाहियों के मध्य में पहुँचकर एक गोला जमीन पर पटका जो गिरते ही भारी आवाज के साथ फट गया और उसमें से इतना ज्यादा धुआँ निकला कि उसने क्रमशः फैलकर हर तरफ से उन सिपाहियों को घेर लिया और फिर हवा होकर आसमान की तरफ उठ गया। उस धुएँ की तासीर से सब सिपाहियों की बेहोशी जाती रही और वे लोग उठकर ताज्जुब के साथ एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। सिपाहियों के अफसर ने अपने पास राजा गोपालसिंह को मौजूद पाया और निगाह पड़ते ही हाथ जोड़कर बोला, "आपने तो हम लोगों को बाहर चले जाने की आज्ञा दे दी थी, फिर हम लोग बेहोश क्यों कर दिये गये?"

इसके जवाब में गोपालसिंह ने कहा, "तुम लोगों को हमने नहीं, बल्कि कम्बख्त मायारानी ने बेहोश किया था, हमने यहाँ पहुँचकर तुम्हारी बेहोशी दूर कर दी। अब तुम लोग एक सायत भी विलम्ब न करो और शीघ्र ही यहाँ से चले जाओ।"

उस अफसर ने झुककर सलाम किया और अपने साथियों को कुछ इशारा करके वहाँ से चल पड़ा। यह हाल देख मायारानी ने पुनः तिलिस्मी तमंचे की गोलियाँ उन लोगों पर चलाईं, मगर इसका असर कुछ भी न हुआ और वे सब सिपाही राजा गोपालसिंह की बदौलत थोड़ी ही देर में इस तिलिस्मी बाग के बाहर हो गये। फिर मायारानी को यह भी मालूम न हुआ कि राजा गोपालसिंह कहाँ गये और क्या हुए।

8

वास्तव में भूतनाथ का हाल बड़ा ही विचित्र है। अभी तक उसका असल भेद खुलने में नहीं आता। वह जहाँ जाता है वहाँ ही एक विचित्र घटना देखने में आती है, जिससे मिलता है, उसी से एक नई बात पैदा होती है, और जब जो कुछ करता है, उसी में एक अनूठापन मालूम होता है। इस समय वह बलभद्रसिंह के साथ चुनारगढ़ वाले तिलिस्म में मौजूद है और वहाँ पहुँचने के साथ ही वह सुन चुका है कि कल राजा वीरेन्द्रसिंह भी इस जगह आने वाले हैं। वीरेन्द्रसिंह को तो आये हुए आज कई दिन हो चुके होते, मगर उन्होंने जान बूझकर रास्ते में बहुत देर लगा दी। नकली किशोरी, कामिनी

और कमला के क्रिया-कर्म का बखेड़ा (जिसका करना लोगों को धोखे में डालने के लिए आवश्यक था) चुनार में ले आना उन्होंने पसन्द न किया बल्कि रास्ते में निपटा डालना उचित जाना, इसलिए पन्द्रह-बीस दिन की देर उन्हें रास्ते में हो गई और इसी से वहाँ पहुँच जाने पर भूतनाथ ने सुना कि राजा वीरेन्द्रसिंह कल आने वाले हैं।

उस खँडहर में पहुँचने पर रात के समय भूतनाथ ने जो कुछ तमाशा देखा था उसका विचित्र हाल तो हम ऊपर के किसी बयान में लिख ही चुके हैं, आज उसी के आगे का हाल लिखकर हम अपने पाठकों के चित्त में भूतनाथ की तरफ से पुनः एक तरह का खुटका पैदा करना चाहते हैं।

बलभद्रसिंह ने जब अपने सिरहाने वाला लिफाफा उठाकर शमादान के सामने खोला तो उसके अन्दर से एक अँगूठी निकली जिसे देखते ही वह चिल्ला उठा और तब बिना कुछ कहे अपनी चारपाई पर आकर बैठ गया। भूतनाथ ने उससे पूछा, "क्यों, यह अँगूठी कैसी है और इसे देखकर तुम घबरा क्यों गये ?"

बलभद्रसिंह—इस अँगूठी ने मुझे कई ऐसी बातें याद दिला दीं जिन्हें स्वप्न की तरह कभी याद करके मैं चौंक पड़ता था, मगर आज नहीं, फिर कभी मैं इसका खुलासा हाल तुमसे कहूँगा।

भूतनाथ—भला देखो तो सही उस लिफाफे के अन्दर कोई चिट्ठी भी है या केवल अँगूठी।

बलभद्रसिंह—(लिफाफा भूतनाथ के हाथ में देकर) लो, तुम्हीं देखो।

भूतनाथ—(शमादान के पास लिफाफा ले जाकर और उसे अच्छी तरह देखकर) हाँ-हाँ, इसमें चिट्ठी भी तो है।

बलभद्रसिंह—(भूतनाथ के पास जाकर) देखें।

भूतनाथ ने वह चिट्ठी बलभद्रसिंह के हाथ में दी और बलभद्रसिंह ने बड़े शौक से उसे पढ़ा, यह लिखा हुआ था—

"यह अँगूठी देकर तुम्हें विश्वास दिलाते हैं कि तुम हमारे हो और हम तुम्हारे हैं। भूतनाथ को अपना सच्चा सहायक समझो और जो कुछ वह कहे, उसे करो। भूतनाथ यह नहीं जानता कि हम कौन हैं, मगर हम कल उससे मिलकर अपना परिचय देंगे और जो कुछ कहना होगा, कहेंगे।"

इस चिट्ठी को पढ़कर दोनों के जी में एक तरह का खुटका पैदा हो गया और बिना कुछ विशेष बातचीत किये दोनों अपनी-अपनी चारपाई पर जाकर लेट रहे, मगर बची हुई रात दोनों ने अपनी आँखों में ही काटी, किसी को नींद न आई।

दूसरे दिन सवेरे ही पन्नालाल उन दोनों के पास पहुँचे और रात भर का कुशल-मंगल पूछा। दोनों ही ने दुनियादारी के तौर पर कुशल-मंगल कहकर बातचीत की मगर रात के विचित्र हाल को अपने दिल के अन्दर ही छिपा रखा।

दिनभर इन दोनों का बड़े चैन और आराम से बीता। जीतसिंह से भी मुलाकात और कई तरह की बातें हुईं, मगर जीतसिंह और उनकी आज्ञानुसार किसी ऐयार ने भी उन दोनों से मुकदमे की बात या किसी तरह का सवाल न किया क्योंकि यह बात पहले

ही से तय पा चुकी थी कि बिना राजा वीरेन्द्रसिंह के आये इस बारे में किसी तरह की बातचीत भूतनाथ से न की जायगी।

आज किसी समय राजा वीरेन्द्रसिंह के आने की खबर थी, मगर वे न आये। संध्या के समय हरकारे ने आकर जीतसिंह को खबर दी कि राजा साहब कल संध्या के समय यहाँ आवेंगे, भूतनाथ और बलभद्रसिंह के आने की खबर उन्हें हो गई है।

संध्या होने के साथ ही भूतनाथ और बलभद्रसिंह के दिलों में धुकधुकी पैदा हो गई कि देखना चाहिए कि आज की रात कैसी गुजरती है। तिलिस्मी चबूतरे के अन्दर से कौन निकलता है, और क्या कहता है।

रात आधी से ज्यादा जा चुकी है, कल की तरह आज भी इस लम्बे-चौड़े मकान के अन्दर सन्नाटा छाया हुआ है। भूतनाथ और बलभद्रसिंह अपनी-अपनी चारपाई पर लेटे हुए हैं। मगर नींद किसी की आँखों में नहीं है और दोनों का ध्यान उसी तिलिस्मी चबूतरे की तरफ है। कल की तरह आज भी उस चबूतरे वाले दालान में कन्दील जल रही है जिसके सबब से वह पत्थर वाला चबूतरा साफ दिखाई दे रहा है।

भूतनाथ ने देखा कि कल की तरह आज भी इस पत्थर वाले चबूतरे का दरवाजा खुला और उसके अन्दर से एक आदमी स्याह लबादा ओढ़े हुए निकला। धीरे-धीरे घूमता-फिरता वह उस कमरे के दरवाजे पर पहुँचा जिसमें भूतनाथ और बलभद्रसिंह आराम कर रहे थे। कमरे का दरवाजा खुलने के साथ ही वे दोनों उठ बैठे और उस आदमी को कमरे के अन्दर पैर रखते हुए देखा।

उस आदमी ने हाथ के इशारे से बलभद्रसिंह को बैठने के लिए कहा और भूतनाथ को अपने पास बुलाया। भूतनाथ चारपाई के नीचे उतर पड़ा और अपना तिलिस्मी खंजर, जो खूँटी के साथ लटक रहा था, लेकर उस आदमी के पास गया। वह आदमी भूतनाथ को अपने साथ कमरे के बाहर वाले दालान में ले गया और वहाँ से सीढ़ी की राह नीचे उतरने के लिए कहा। भूतनाथ भी चुपचाप उसके साथ नीचे चला गया।

यहाँ भी एक कन्दील जल रही थी और चारों तरफ सन्नाटा था। उस आदमी ने अपना चेहरा खोल दिया और भूतनाथ को अपनी तरफ अच्छी तरह देखने के लिए कहा। भूतनाथ सूरत देखते ही चौंक पड़ा और बोला—"हैं, यह मैं किसकी सूरत देख रहा हूँ ! क्या धोखा तो नहीं है ?"

आदमी—नहीं-नहीं, कोई धोखा नहीं है, 'मेमकुलचे' कहने से शायद तुम्हारा शक जाता रहेगा।

भूतनाथ—हाँ, अब मेरा शक जाता रहा। मगर आप यहाँ कहाँ ? क्या मुझे किसी तरह का विचित्र हुक्म दिया जायगा ? या मुझे राजा साहब से माफी माँगने की मोहलत ही न मिलेगी ?

आदमी—हाँ, तुम्हें एक विचित्र हुक्म दिया जायगा, मगर यह बताओ कि राजा साहब के बारे में तुमने क्या सुना है ? वे कब तक यहाँ आवेंगे ?

भूतनाथ—राजा वीरेन्द्रसिंह कल यहाँ अवश्य आ जायेंगे, आज हरकारे ने आकर यह पक्की खबर जीतसिंह को दी है।

आदमी—(कुछ सोचकर) यह तो बड़ी मुश्किल हुई है, हमारे लिए नहीं, बल्कि तुम्हारे लिए ।

भूतनाथ—(काँपकर) सो क्यों ! मैंने अब कौन-सा नया अपराध किया है ?

आदमी—नया अपराध किया तो नहीं, मगर करना पड़ेगा ।

भूतनाथ—नहीं-नहीं, मैं अब कोई अपराध न करूँगा। जो कुछ कर चुका हूं, उसी का कलंक मिटाना मुश्किल हो रहा है !

आदमी—मगर क्या किया जाय, लाचारी है, अपराध तो करना ही होगा और सो भी इसी समय ।

भूतनाथ—(कुछ सोचकर) भला यह तो बताइये कि वह अपराध है क्या और मुझे क्या करना होगा ?

आदमी—यह तो जानते ही हो कि बलभद्रसिंह हमारा है।

भूतनाथ—जी हाँ, इस समय तो मेरी जान बचाने वाला है।

आदमी—बेशक।

भूतनाथ—तब आप क्या चाहते हैं ?

आदमी—यही कि इसी समय बलभद्रसिंह को बेहोश करके हमारे हवाले कर दो। हम तो उन्हें कल ही उठा ले गये होते, मगर कल हमें निश्चय हो गया कि तुम जाग रहे होंगे और लड़ने लिए अवश्य तैयार हो जाओगे, इसलिए सोचा कि पहले तुम्हें अपना परिचय दे लें, तब यह काम करें जिसमें तुम्हारा दिल भी खुटके में न रहे।

भूतनाथ—मगर यह तो बड़ी मुश्किल होगी । अच्छा, कल राजा वीरेन्द्रसिंह से उनकी मुलाकात तो करा लेने दीजिए ।

आदमी—यह नहीं हो सकता, उन्हें हम आज ही ले जायेंगे । नहीं तो हमारा बहुत हर्ज होगा और उस हर्ज में तुम्हारा भी नुकसान है ।

भूतनाथ—हाय, नुकसान और दुःख भोगने के लिए तो मैं पैदा ही हुआ हूँ ! न जाने मेरी किस्मत में निश्चिन्त होना भी बदा है या नहीं । राजा वीरेन्द्रसिंह सुन चुके हैं कि भूतनाथ, बलभद्रसिंह को छुड़ा लाया है, अब अगर इस समय आप उन्हें ले जायेंगे कल राजा वीरेन्द्रसिंह उन्हें मुझसे माँगेंगे तो क्या जवाब दूंगा ?

आदमी—कह देना कि मैं रात को सोया हुआ था, न मालूम बलभद्रसिंह कहाँ चले गये । मुझे कुछ खबर नहीं, आप अपने पहरे वालों से पूछिए ।

भूतनाथ—हाँ, यदि आप न मानेंगे तो ऐसा ही करना पड़ेगा ।

आदमी—तो बस अब विलम्ब न करो, झटपट जाओ और उन्हें बेहोश करके हमारे पास ले आओ ।

भूतनाथ—जिस समय मैंने बलभद्रसिंह को छुड़ाया था, उस समय उन्हें विश्वास नहीं होता था कि मैं उनके साथ नेकी कर रहा हूँ, बड़ी मुश्किल से तो उन्हें विश्वास दिलाया । इस समय आप जानते हैं कि वे भी जाग रहे हैं, आप खुद ही उन्हें बैठे रहने के लिए कह आए हैं, अब मैं उन्हें जबर्दस्ती बेहोश करूँगा तो उनके दिल में क्या आवेगा ? क्या वे यह समझेंगे कि भूतनाथ ने नेकनीयती के साथ मेरी जान बचाई थी ?

आदमी—अगर ऐसा समझेंगे तो समझें, तुम सोच क्या रहे हो ! क्या मेरा हुक्म न मानोगे ?

भूतनाथ—मेरी क्या मजाल जो आपका हुक्म न मानूं ।

इतने ही में उसी तरह का स्याह लबादा ओढ़े और भी एक आदमी वहाँ आ पहुँचा । भूतनाथ समझ गया कि वह आदमी इसी का साथी है और कल भी यहाँ आया था । इस नये आये हुए आदमी ने पहले आदमी से खास बोली (भाषा) में कुछ बातचीत की जिसे भूतनाथ कुछ भी न समझ सका, इसके बाद उसने परदा हटा के अपनी सूरत भूतनाथ को दिखा दी ।

अब भूतनाथ के ताज्जुब का कोई ठिकाना न रहा और वह एक दम घबरा के बोला, "नहीं-नहीं, मैं जागता नहीं हूँ बल्कि जो कुछ देख रहा हूँ, सब स्वप्न है !"

दूसरा आदमी—भूतनाथ, तुम पागल हो गए हो !

भूतनाथ—बेशक यही बात है, या तो मैं स्वप्न देख रहा हूँ या पागल हो गया हूँ ।

पहला आदमी—न तो तुम स्वप्न देख रहे हो और न पागल ही हो गए हो, जो कुछ देख-सुन रहे हो सब ठीक है । अच्छा, अब तुम हम लोगों के साथ आओ, किसी दूसरी जगह अँधेरे में खड़े होकर बातचीत करेंगे, तो हम यहाँ केवल इसलिए खड़े हो गये थे कि तुम्हें अपनी सूरत दिखा दें ।

इतना कहकर वे दोनों आदमी भूतनाथ का हाथ पकड़े हुए दूसरे दालान में चले गए जहाँ बिलकुल अन्धकार था और वहाँ बातचीत करने लगे । इस जगह उन तीनों में जो कुछ बातें हुईं वह ऐयारी भाषा में हुईं, इसलिए लिख न सके, मगर आगे चलकर इन बातों का जो कुछ नतीजा निकलेगा पाठकों को मालूम हो जायगा । हाँ इतना कह देना जरूरी है कि डेढ़ घण्टे तक उन तीनों में खूब बातें होती रहीं, इस बीच में दो दफे भूतनाथ के बड़े जोर से हँसने की आवाज आई, ताज्जुब नहीं कि वह आवाज बलभद्रसिंह के कानों तक भी पहुँची हो । इसके बाद भूतनाथ वहाँ से रवाना होकर बलभद्रसिंह के पास आया, देखा कि अभी तक वह बैठे हुए हैं और भूतनाथ का इन्तजार कर रहे हैं ।

भूतनाथ को देखते ही बलभद्रसिंह बोले, "आओ-आओ भूतनाथ, मेरे पास बैठ जाओ और बताओ कि क्या हुआ ! वह आदमी कौन था जो तुम्हें ले गया था ?"

"मैं सब विचित्र हाल आपसे कहता हूँ ।" यह कहता हुआ भूतनाथ बलभद्रसिंह के पास बैठ गया, मगर इस तरह पर सटकर बैठा कि उसकी कमर में लगा तिलिस्मी खंजर बलभद्रसिंह के बदन से छू गया और वह उसी समय काँपकर बेहोश हो गये ।

बलभद्रसिंह के बेहोश हो जाने के बाद भूतनाथ ने उनकी गठरी बाँधी और नीचे उतारकर दोनों विचित्र आदमियों के पास ले गया । उन दोनों ने उसे तिलिस्मी चबूतरे के पास पहुँचा देने के लिए कहा और भूतनाथ उसे तिलिस्मी चबूतरे के पास ले गया, तब वे दोनों आदमी बलभद्रसिंह को लेकर चबूतरे के अन्दर चले गये, चबूतरे का पल्ला बन्द हो गया और भूतनाथ कुछ सोचता-विचारता अपनी चारपाई पर आकर लेट रहा ।

9

सवेरा हो जाने पर जब भूतनाथ और बलभद्रसिंह से मिलने के लिए पन्नालाल तिलिस्मी खँडहर के अन्दर नम्बर दो वाले कमरे में गये तो भूतनाथ को चारपाई पर सोते पाया और बलभद्रसिंह को वहाँ न देखा। पन्नालाल ने भूतनाथ को जगाकर पूछा, "आज तुम इस समय तक खुर्राटे ले रहे हो, यह क्या मामला है!"

भूतनाथ—बलभद्रसिंह जी ने गप-शप में तीन पहर रात बैठे ही बैठे बिता दी इसलिए सोने में बहुत कम आया और अभी तक आँख नहीं खुली, आइये बैठिये।

पन्नालाल—बलभद्रसिंह जी कहाँ हैं ?

भूतनाथ—मुझे क्या खबर, इसी जगह कहीं होंगे, मुझे तो अभी आपने सोते से जगाया है।

पन्नालाल—मगर मैंने तो उन्हें कहीं भी नहीं देखा !

भूतनाथ—किसी पहरे वाले से पूछिये, शायद हवा खाने के लिए कहीं बाहर चले गये हों।

बलभद्रसिंह को वहाँ न पाकर पन्नालाल को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और भूतनाथ भी घबराया-सा दिखाई देने लगा। पहले तो पन्नालाल और भूतनाथ दोनों ही ने उन्हें खँडहर वाले मकान के अन्दर खोजा मगर जब कुछ पता न लगा तब फाटक पर आकर पहरे वालों से पूछा। पहरे वालों ने भी उन्हें देखने से इनकार करके कहा कि "हम लोगों ने बलभद्रसिंह जी को फाटक के बाहर निकलते नहीं देखा। अतः हम लोग उनके बारे में कुछ नहीं कह सकते।"

बलभद्रसिंह कहाँ चले गये? आसमान पर उड़ गये, दीवार में घुस गये, या जमीन के अन्दर समा गये, क्या हुए? इस बात ने सभी को तरद्दुद में डाल दिया। धीरे-धीरे जीतसिंह को भी इस बात की खबर हुई। जीतसिंह स्वयं उस खँडहर वाले मकान में गये और तमाम कमरों, कोठरियों और तहखानों को देख डाला मगर बलभद्रसिंह का पता न लगा। भूतनाथ से भी तरह-तरह के सवाल किये गये, मगर इससे भी कुछ फायदा न हुआ।

संध्या के समय राजा वीरेन्द्रसिंह की सवारी उस तिलिस्मी खँडहर के पास आ पहुँची और राजा वीरेन्द्रसिंह तथा तेजसिंह वगैरह सब कोई उसी खँडहर वाले मकान में उतरे। पहर भर जाते तक तो इन्तजामी होहल्ला मचता रहा, इसके बाद लोगों को राजा साहब से मुलाकात करने की नौबत पहुँची, मगर राजा साहब ने वहाँ पहुँचने के साथ ही भूतनाथ और बलभद्रसिंह का हाल जीतसिंह से पूछा था और बलभद्रसिंह के बारे में जो कुछ हुआ था, उसे उन्होंने राजा साहब से कह सुनाया था। पहर रात जाने के बाद जब भूतनाथ आज्ञानुसार दरबार में हाजिर हुआ तब राजा वीरेन्द्रसिंह ने उससे पूछा, "कहो भूतनाथ, अच्छे तो हो?"

भूतनाथ—(हाथ जोड़कर) महाराज के प्रताप से प्रसन्न हूँ।

वीरेन्द्रसिंह—सफर में हमको जो कुछ रंज और गम हुआ, तुमने वह सुना ही होगा?

भूतनाथ—ईश्वर न करे महाराज को कभी रंज और गम हो मगर हाँ समयानुकूल जो कुछ होना था हो ही गया।

वीरेन्द्रसिंह—(ताज्जुब से) क्या तुम्हें इस बारे में कुछ मालूम हुआ है?

भूतनाथ—जी हाँ!

वीरेन्द्रसिंह—कैसे?

भूतनाथ—इसका जवाब देना तो कठिन है, क्योंकि भूतनाथ बनिस्बत जबान और कान के अन्दाज से ज्यादा काम लेता है।

वीरेन्द्रसिंह—(मुस्कुराकर) तुम्हारी होशियारी और चालाकी में तो कोई शक नहीं है मगर अफसोस इस बात का है कि तुम्हारे रहस्य तुम्हारी ही तरह द्विविधा में डालने वाले हैं। अभी कल की बात है कि हमको तुम्हारे बारे में इस बात की खुशखबरी मिली थी कि तुम बलभद्रसिंह को किसी भारी कैद से छुड़ाकर ले आये, मगर आज कुछ और ही बात सुनाई पड़ रही है।

भूतनाथ—जी हाँ, मैं तो हर तरह से अपनी किस्मत की गुत्थी को सुलझाने का उद्योग करता हूँ मगर विधाता ने उसमें उलझनें डाल दी हैं कि मालूम पड़ता है कि अब इस शरीर को चुनारगढ़ के कैदखाने का आनन्द अवश्य भोगना ही पड़ेगा।

वीरेन्द्रसिंह—नहीं-नहीं भूतनाथ, यद्यपि बलभद्रसिंह का यकायक गायब हो जाना तरह-तरह के खुटके पैदा करता है मगर हमें तुम्हारे ऊपर किसी तरह का सन्देह नहीं हो सकता। अगर तुम्हें ऐसा करना ही होता तो इतनी आफत उठा कर उन्हें क्यों छुड़ाते और क्यों यहाँ तक लाते? अतः तुम हमारी खफगी से तो बेफिक्र रहो, मगर इस बात के जानने का उद्योग जरूर करो कि बलभद्रसिंह कहाँ गये और क्या हुए।

भूतनाथ—(सलाम करके) ईश्वर आपको सदैव प्रसन्न रक्खे! मैं आशा करता हूँ कि एक सप्ताह के अन्दर ही बलभद्रसिंह का पता लगाकर उन्हें सरकार में उपस्थित करूँगा।

वीरेन्द्रसिंह—शाबाश, अच्छा अब तुम जाकर आराम करो।

आज्ञानुसार भूतनाथ वहाँ से उठकर अपने डेरे पर चला गया और बाकी लोग भी अपने ठिकाने कर दिये गये। जब राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह अकेले रह गए तब उन दोनों में यों बातचीत होने लगी—

वीरेन्द्रसिंह—कुछ समझ में नहीं आता कि यह रहस्य कैसा है? भूतनाथ की बातों से तो किस तरह का खुटका नहीं होता!

तेजसिंह—जहाँ तक पता लगाया गया है उससे यही जाहिर होता है कि बलभद्रसिंह इस इमारत के बाहर नहीं गए, मगर इस बात पर भी विश्वास करना कठिन हो रहा है।

वीरेन्द्रसिंह—निःसन्देह ऐसा ही है।

तेजसिंह—देखना चाहिए भूतनाथ एक सप्ताह के अन्दर क्या कर दिखाता है।

वीरेन्द्रसिंह—यद्यपि मैंने भूतनाथ की दिलमाजई कर दी है, परन्तु उसका जी शान्त नहीं हो सकता। खैर जो भी हो, मगर तुम उसे अपनी हिफाजत में समझो और पता लगाओ कि यह मामला कैसा है।

तेजसिंह—ऐसा ही होगा !

10

मायारानी ने जब समझा कि वे फौजी सिपाही इस बाग के बाहर हो गये और गोपालसिंह को भी वहाँ न देखा, तब हिम्मत करके अपने ठिकाने से निकली और पुनः बाग में आकर उस तरफ रवाना हुई जिधर उस गोपालसिंह को बेहोश छोड़ आई थी जो उसके चलाए हुए तिलिस्मी तमंचे की गोली के असर से बेहोश होकर बरामदे के नीचे आ रहा था, मगर वहाँ पहुँचने के पहले ही उसने उस दूसरे कुएँ के ऊपर एक गोपालसिंह को देखा जिसे फौजी सिपाहियों ने मिट्टी से पाट दिया था। मायारानी एक पेड़ की आड़ में खड़ी हो गई और उसी जगह से तिलिस्मी तमंचे वाली एक गोली उसने इस गोपालसिंह पर चलाई। गोली लगते ही गोपालसिंह लुढ़ककर जमीन पर आ रहा और मायारानी दौड़ती हुई उसके पास जा पहुँची। थोड़ी देर तक तो उसकी सूरत देखती रही, इसके बाद कमर से खंजर निकालकर गोपालसिंह का सिर काट डाला और तब खुशी-भरी निगाहों से चारों तरफ देखने लगी, यद्यपि उसे पूरा विश्वास न था कि मैंने असली गोपालसिंह को मार डाला है।

यद्यपि दिन बहुत चढ़ चुका था मगर अभी तक उसे जरूरी कामों से निपटने या कुछ खाने-पीने की परवाह न थी या यों कहिए कि उसे इन बातों का मोहलत हो नहीं मिल सकी थी। गोपालसिंह की लाश को उसी जगह छोड़कर वह बाग के तीसरे दर्जे में जाने की नीयत से अपने दीवानखाने में आई और उसी मामूली राह से बाग के तीसरे दर्जे में चली गई जिस राह से एक दिन तेजसिंह वहाँ पहुँचाये गये थे।

वहाँ भी उसने दूर ही से नम्बर दो वाली कोठरी के दरवाजे पर एक गोपालसिंह को बैठे बल्कि कुछ करते हुए देखा। मायारानी ताज्जुब में आकर थोड़ी देर तक तो उस गोपालसिंह को देखती रही, इसके बाद उसे भी उसी तिलिस्मी तमंचे वाली गोली का निशाना बनाया। जब वह भी बेहोश होकर जमीन पर लेट गया तब मायारानी ने वहाँ पहुँचकर उसका भी सिर काट डाला और एक लम्बी साँस लेकर आप-ही-आप बोली, "क्या अब भी असली गोपालसिंह न मरा होगा ! मगर अफसोस, उस एक गोपालसिंह पर ऐसी गोली ने कुछ भी असर न किया था। कदाचित असली गोपालसिंह वही हो !"

इसके जवाब में किसी ने कोठरी के अन्दर से कहा, "हाँ, असली गोपालसिंह वह भी न था और असली गोपालसिंह अभी तक नहीं मरा !"

इस बात ने मायारानी का कलेजा हिला दिया और वह काँपती हुई ताज्जुब के

साथ कोठरी के अन्दर देखने लगी।

अकस्मात् कोठरी के अन्दर से निकलते हुए नानक पर मायारानी की निगाह पड़ी। नानक को देखते ही मायारानी का पुराना क्रोध (जो नानक के बारे में था) पुनः उसके चेहरे पर दिखाई देने लगा। वह कुछ देर तक तो नानक को देखती रही और इसके बाद उसे तिलिस्मी गोली का निशाना बनाना चाहा, मगर नानक मायारानी की अवस्था देखकर हँस पड़ा और बोला, "क्या अब भी आप मुझे अपना पक्षपाती नहीं समझतीं?"

मायारानी—क्यों? तूने कौन-सा ऐसा काम किया है जिससे मैं तुझे अपना पक्षपाती समझूं?

नानक—क्या आपको इस बात की खबर न लगी होगी कि राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके खानदान तथा ऐयारों से मेरी गहरी दुश्मनी हो गई? मेरा बाप गिरफ्तार करके दोषी ठहराया गया है, वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों ने उसे बहुत तंग किया और इसी के साथ-ही-साथ मेरी भी बहुत बड़ी बेइज्जती की। मेरा बाप अपने बचाव की फिक्र कर रहा है और मैं उन सभी से लदला लेने का बन्दोबस्त कर रहा हूँ। इस समय मैं इसलिए यहाँ आया हूँ कि आप मेरी सहायता करें और मैं आपका साथ दूँ।

मायारानी—यदि तेरा कहना वास्तव में सच है तो बड़ी खुशी की बात है।

नानक—जो कुछ मैं कह रहा हूँ उसके सच होने में किसी तरह का सन्देह न कीजिए, मैं उन लोगों की बुराई में जान तक खर्च करने का संकल्प कर चुका हूँ।

मायारानी—यदि तू पहले ही मेरी बात मान चुका होता तो आज मुझे और तुझे दोनों ही को यह दिन देखना नसीब न होता। खैर, आज भी अगर तू राह पर आ जाय तो हम लोग मिल-जुलकर बहुत-कुछ कर सकते हैं।

नानक—उन दिनों मुझे हरी-हरी सूझती थी और उस दरबार से बहुत-कुछ पाने की आशा थी, मगर इस बात की खबर न थी कि उनके ऐयार अपनी मण्डली के सिवाय किसी नये या दूसरे ऐयार को अपने दरबार में देखना पसन्द नहीं करते। मुझे कमलिनी ने जितनी उम्मीदें दिलाई थीं उनका एक अंश भी कभी पूरा न हुआ, उल्टे मेरा बाप दोषी ठहराया गया।

मायारानी—भूतनाथ पर जो कुछ इल्जाम लगाया गया है मुझे उसकी पूरी-पूरी खबर लग चुकी है। अब भूतनाथ बिना मेरी मदद के किसी तरह अपनी जान नहीं बचा सकता और न वह बलभद्रसिंह का ही पता लगा सकता है। सच तो यह है कि भूतनाथ ने मुझे भी बड़ा धोखा दिया।

नानक—उन दिनों जो कुछ उन्होंने किया, सो किया, क्योंकि कमलिनी की दिलाई हुई उम्मीदों ने उन्हें भी अन्धा कर दिया था, मगर अब तो उन्हें कमलिनी से भी दुश्मनी हो गयी है, और मैं भी यह सुनकर कि कमलिनी वगैरा को राजा गोपालसिंह ने इसी बाग में लाकर रक्खा है, उससे बदला लेने का खयाल करके यहाँ आया हूँ।

मायारानी—यहाँ का रास्ता तुझे किसने बताया?

नानक—यहाँ के बहुत से रास्तों का हाल कमलिनी ने ही मुझे बताया था। मैं

एक दफे यहाँ पहले भी आ चुका हूँ।

मायारानी—कब ?

नानक—जब तेजसिंह को आपने कैद किया था और जब चंडूल ने आकर आप लोगों को छकाया था।

मायारानी—(उन बातों की याद से काँपकर) तब तो तुम्हें मालूम होगा कि वह चंडूल कौन था।

नानक—वह कमलिनी थी और मैं उसके साथ था।

मायारानी—(कुछ सोचकर) हाँ···ठीक है। त···तब तो तुम्हें···अच्छा··· अच्छा तुम मेरे पास आओ, पहले मैं निश्चय कर लूँ कि तुम ईमानदारी से साथ देने के लिए तैयार हो या सब बातें धोखा देने के लिए कह रहे हो। इसके बाद अगर तुम सच्चे निकले तो हम दोनों आदमी मिलकर बहुत-बड़ा काम कर सकेंगे और तुम्हें भी बहुत-सी···खैर तुम इधर आओ और मेरे साथ एकान्त में चलो।

नानक—(मायारानी के पास आकर) और यहाँ तीसरा कौन है जो हम लोगों की बातें सुनेगा ?

मायारानी—चाहे न हो, मगर शक तो है।

मायारानी नानक को लिए दूसरी तरफ चली गई।

11

संध्या होने में अभी दो घण्टे से कुछ ज्यादा देर थी जब कुँअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह और भैरोंसिंह कमरे से बाहर निकलकर बाग के उस हिस्से में घूमने लगे जो तरह-तरह के खुशनुमा पेड़ों-फूल-पत्तों, गमलों और फैली हुई लताओं से सुन्दर और सुहावना मालूम पड़ता था क्योंकि इन तीनों को इन्द्रानी के मुँह से निकले हुए ये शब्द बखूबी याद थे कि 'मगर आप लोग किसी मकान के अन्दर जाने का उद्योग न करें !'

भैरोंसिंह—(घूमते हुए एक फूल तोड़कर) यहाँ एक तो बगीचे के लिए बहुत कम जमीन छोड़ी गई है दूसरे जो कुछ जमीन छोड़ी गई है उसमें भी काम खूबी और खूबसूरती के साथ नहीं लिया गया है। जहाँ पर जिस ढंग के पेड़ होने चाहिए वैसे नहीं लगाये गये हैं।

आनन्दसिंह—बाग के शौकीन लोग प्रायः बेला, चमेली, जुही और गुलाब आदि खुशबूदार फूलों के पेड़ क्यारियों के बीच में लगाते हैं।

इन्द्रजीतसिंह—ऐसा नहीं होना चाहिए, क्यारियों के अन्दर केवल पहाड़ी गुल बूटों के ही लगाने में मजा है। जूही, बेला, मोतिया इत्यादि देशी खुशबूदार फूलों को रविशों के दोनों तरफ लगाना चाहिए, जिसमें सैर करने वाला घूमता-फिरता जब चाहे एक-दो फूल तोड़ के सूँघ सके।

आनन्दसिंह—बेशक ऐसा न होना चाहिए कि खुशबूदार फूल तोड़ने की लालच में कहीं सैर करने वाला बुद्धि-विसर्जन करके क्यारी के बीच में पैर रक्खे और जूते समेत फिल्ली तक जमीन के अन्दर जा रहे, क्योंकि सिंचाई का पानी क्यारियों में जमा होकर कीचड़ करता है, इसलिए क्यारियों के बीच में उन्हीं पेड़-पौधों का होना आवश्यक है जिन्हें केवल देखने ही में तृप्ति हो जाय और जिनमें ज्यादा सर्दी और पानी के बर्दाश्त करने की ताकत हो।

भैरोंसिह—मेरी भी यही राय है, मगर साथ ही इसके मैं यह भी कहूँगा कि गुलाब के पेड़ रविशों के दोनों तरफ न लगाने चाहिए जिसमें काँटों की बदौलत सैर करने वाले के (यदि वह भूल से कुछ किनारे की तरफ जा रहे तो) कपड़ों की दुर्गति हो जाय, उसके लिए क्यारी अलग ही होनी चाहिए जिसकी जमीन बहुत नम न हो।

इन्द्रजीतसिंह—ठीक है, इसी तरह चमेली के पेड़ों की कतार भी ऐसी जगह लगानी चाहिए जहाँ टट्टी बनाकर आड़ कर देने का इरादा हो।

भैरोंसिह—आड़ का काम तो मेंहदी की टट्टी से भी लिया जाता है।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ लिया जाता है मगर जमीन के उस हिस्से में जो बीच वाली या खास जलसे वाली इमारत से कुछ दूर हो, क्योंकि मेंहदी जब फूलती है तो अपने सिवाय और फूलों की खुशबू का आनन्द लेने की इजाजत नहीं देती।

आनन्दसिंह—जैसे कि अब भैरोंसिंह को हम लोग अपने साथ चलने की इजाजत न देंगे।

भैरोंसिह—(चौंककर) हैं, इसका क्या मतलब ?

आनन्दसिंह—इसका मतलब यही है कि अब आप थोड़ी देर के लिए हम दोनों भाइयों का पिण्ड छोड़िये और कुछ दूर हटकर उधर की रविशों पर पैर थकाइए।

भैरोंसिह—(कुछ चिढ़कर) क्या अब मुझ ऐसे साथी और ऐय्यार से भी बात छिपाने की नौबत आ गई ?

आनन्दसिंह —(इन्द्रजीतसिंह का इशारा पाकर) हाँ, और इसलिए कि बात छिपाने का कायदा तुम्हारी तरफ से जारी हो गया।

भैरोंसिह—सो कैसे ?

आनन्दसिंह—अपने दिल से पूछो।

भैरोंसिह—क्या मैं वास्तव में भैरोंसिह नहीं हूँ ?

आनन्दसिंह—तुम्हारे भैरोंसिह होने में कोई शक नहीं है बल्कि तुम्हारी बातों की सचाई में शक है।

भैरोंसिह—यह शक कब से हुआ ?

आनन्दसिंह—जब से तुमने स्वयं कहा कि राजा गोपालसिंह ने तुम्हें इस तिलिस्म में पहुँचते समय ताकीद कर दी थी सब काम कमलिनी की आज्ञानुसार करना, यहाँ तक कि यदि कमलिनी तुम्हें सामना हो जाने पर भी कुमार से मिलने के लिए मना करे

तो तुम कदापि न मिलना ।[1]

भैरोंसिंह—(कुछ सोचकर) हाँ ठीक है, मगर आपको यह कैसे निश्चय हुआ कि मैंने राजा गोपालसिंह की बात मान ली ?

इन्द्रजीतसिंह—यह इसी से मालूम हो गया कि तुमने अपने बटुए का जिक्र करते समय तिलिस्मी खंजर का जिक्र छोड़ दिया ।

भैरोंसिंह—(कुछ सोचकर और शर्मा कर) बेशक यह मुझसे भूल हुई ।

आनन्दसिंह—कि उस तिलिस्मी खंजर के लिए भी कोई अनूठा किस्सा गढ़ कर हम लोगों को सुना न दिया ।

भैरोंसिंह—(और भी शर्माकर) नहीं, ऐसा नहीं है, उस समय मैं इतना कहना भूल गया कि ऐयारी के बटुए के साथ-साथ वह तिलिस्मी खंजर मुझे उस नकागपोश या पीले मकरन्द से नहीं मिला, उन्होंने कसम खाकर कहा कि तुम्हारा खंजर हममें से किसी के पास नहीं है ।

आनन्दसिंह—हाँ—और तुमने मान लिया !

भैरोंसिंह—(हिचकता हुआ) इस जरा-सी भूल के हो जाने पर ऐसा नहीं होना चाहिए कि आप लोग अपना विश्वास मुझ पर से उठा लें ।

इन्द्रजीतसिंह—नहीं-नहीं, इससे हम लोगों का खयाल ऐसा नहीं हो सकता कि तुम भैरोंसिंह नहीं हो या अगर हो भी तो हमारे दुश्मन के साथी बनकर हमें नुकसान पहुँचाया चाहते हो ? कदापि नहीं । हम लोग अब भी तुम्हारा उतना ही भरोसा रखते हैं जितना पहले रखते थे, मगर कुछ देर के लिए जिस तरह तुम असली बातों को छिपाते हो, उसी तरह हम भी छिपावेंगे ।

अभी भैरोंसिंह इस बात का जवाब सोच ही रहा था कि सामने से एक औरत आती हुई दिखाई पड़ी । तीनों का ध्यान उसी तरफ चला गया । कुछ पास आने और ध्यान देने पर दोनों कुमारों ने उसे पहचान लिया कि इसे हम इस बाग में आने के पहले इन्द्रानी और आनन्दी के साथ नहर के किनारे देख चुके हैं ।

आनन्दसिंह—यह भी उन्हीं औरतों में से एक है जिन्हें हम लोग इन्द्रानी और आनन्दी के साथ पहले बाग में नहर के किनारे देख चुके हैं !

इन्द्रजीतसिंह—बेशक, मगर सब-की-सब एक ही खानदान की मालूम पड़ती हैं यद्यपि उम्र में इन सभी के वहुत फर्क नहीं है ।

आनन्दसिंह—देखना चाहिए, यह क्या सन्देशा लाती है ।

इतने में वह औरत कुमार के पास आ पहुँची और हाथ जोड़कर दोनों कुमारों की तरफ देखती हुई बोली, "इन्द्रानी और आनन्दी ने हाथ जोड़कर आप दोनों से इस बात की माफी माँगी है कि अब वे दोनों आप लोगों के सामने हाजिर नहीं हो सकतीं ।"

इन्द्रजीतसिंह—(ताज्जुब से) सो क्यों ?

औरत—उन्हें इस बात का बहुत रंज है कि वे आप लोगों की खातिरदारी

---

1. देखिए सत्रहवाँ भाग, चौदहवाँ बयान ।

अच्छी तरह से न कर सकीं और उनके गुरु महाराजने उन्हें आप लोगों का सामना करने से रोक दिया।

इन्द्रजीतसिंह—आखिर इसका कोई सबब भी है ?

औरत—इसके सिवाय तो और कोई सबब नहीं जान पड़ता कि उन दोनों की शादी आप दोनों भाइयों के साथ होने वाली है।

इन्द्रजीतसिंह—(ताज्जुब के साथ) मुझसे और आनन्द से ?

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—हमारे या हमारे बुजुर्गों की इच्छा के बिना ही।

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—चाहे हम लोग राजी हों या न हों ?

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—तब तो यह खांसी जबर्दस्ती है !

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—क्या उनके गुरु महाराज में इतनी सामर्थ्य है कि अपनी इच्छानुसार हम लोगों के साथ बर्ताव करें ?

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—(झुँझलाकर) कभी नहीं, कदापि नहीं !

आनन्दसिंह—ऐसा हो ही नहीं सकता ! (औरत से, जो जाने के लिए अपना मुँह फेर चुकी थी) क्या तुम जाती हो ?

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—बस, इतना ही कहने के लिए आई थीं ?

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—क्या भेजने वालों ने तुम्हें कह दिया था कि 'जी हाँ' के सिवाय और कुछ मत बोलना ?

औरत—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह की झुँझलाहट देखकर उस औरत को भी हँसी आ गई और वह मुस्कुराती हुई जिधर से आई थी उधर ही चली गई तथा थोड़ी दूर जाकर नजरों से गायब हो गई। तब भैरोंसिंह ने दिल्लगी के तौर पर कुमार से कहा, "आप लोगों की खुशकिस्मती का कोई ठिकाना है ! रम्भा और उर्वशी के समान औरतें जबर्दस्ती आप लोगों के गले मढ़ी जाती हैं, तिस पर मजा यह कि आप लोग नखरा करते हैं। ऐसा ही है तो मुझे कहिए मैं आपकी सूरत बनकर ब्याह कर लूँ।

इन्द्रजीतसिंह—तब कमला किसके नाम की हाँडी चढ़ावेगी ?

भैरोंसिंह—अजी कमला से क्या जाने कब मुलाकात हो और क्या हो ! यह तो परोसी हुई थाली ठहरी।

इन्द्रजीतसिंह—ठीक है मगर भैरोंसिंह, जहाँ तक मेरा खयाल है, मैं समझता हूँ कि तुम्हें इस ब्याह-शादी वाले मामले की कुछ-न-कुछ ख़बर जरूर है।

भैरोंसिंह—अगर खबर हो भी तो अब मैं कुछ कहने का साहस नहीं कर सकता

आनन्दसिंह—सो क्यों ?

भैरोंसिंह—इसलिए कि आप लोग मुझे झूठा समझ चुके हैं।

इन्द्रजीतसिंह—सो तो जरूर है।

भैरोंसिंह—(चिढ़कर) अगर ऐसा ही खयाल है तो अब मैं आप लोगों के साथ रहना भी मुनासिब नहीं समझता।

इन्द्रजीत—मेरी भी यही राय है।

भैरोंसिंह—अच्छा तो (सलाम करता हुआ) जय माया की।

इन्द्रजीतसिंह—जय माया की।

आनन्दसिंह—जय माया की, मगर यह तो मालूम हो कि आप जायँगे कहाँ ?

भैरोंसिंह—इससे आपको कोई मतलब नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ साहब, इससे हम लोगों को मतलब नहीं। आप जाइए और जल्द जाइए।

इसके जवाब में भैरोंसिंह ने कुछ भी न कहा और वहाँ से रवाना होकर पूरब तरफ वाली इमारत के नीचे वाली एक कोठरी में घुस गया। इसके बाद मालूम न हुआ कि भैरोंसिंह का क्या हुआ या कहाँ गया। उसके जाने के बाद दोनों कुमार भी धीरे-धीरे उसी कोठरी में चले गए मगर वहाँ भैरोंसिंह दिखाई न पड़ा और न उस कोठरी में से किसी तरफ जाने का रास्ता ही मालूम हुआ।

इन्द्रजीतसिंह—(आनन्द से) क्यों, हम लोगों का खयाल ठीक निकला न !

आनन्दसिंह—निःसन्देह वह झूठा था, अगर ऐसा न होता तो जानकारों की तरह इस कोठरी में घुसकर गायब न हो जाता।

इन्द्रजीतसिंह—बात तो यह है कि तिलिस्म के इस भाग में बहुत समझ-बूझकर काम करना चाहिए जहाँ की आबोहवा अपनों को भी पराया कर देती है।

आनन्दसिंह—मामला तो कुछ ऐसा ही नजर आता है। मेरी राय में तो अब यहाँ चुपचाप बैठना भी व्यर्थ जान पड़ता है। यहाँ से किसी तरफ जाने का उद्योग करना चाहिए।

इन्द्रजीतसिंह—अब आज की रात तो सब्र करके बिता दो, कल सवेरे कुछ-न-कुछ बन्दोबस्त जरूर करेंगे।

इसके बाद दोनों भाई वहाँ से हटे और टहलते हुए बावली के पास आकर संगमर्मर वाले चबूतरे पर बैठ गए। उसी समय उन्होंने एक आदमी को सामने वाली इमारत के अन्दर से निकलकर अपनी तरफ आते देखा।

यह शख्स वही बुड्ढा दारोगा था जिससे पहले बाग में मुलाकात हो चुकी थी, जिसने नानक को गिरफ्तार किया था और जिसके दिए हुए कमन्द के सहारे दोनों कुमार उस दूसरे बाग में उतर कर इन्द्रानी और आनन्दी से मिले थे।

जब वह कुमार के पास पहुँचा तो साहब-सलामत के बाद कुमारों ने उसे इज्जत के साथ पास बैठाया और यों बातचीत होने लगी —

इन्द्रजीतसिंह—आज पुनः आपसे मुलाकात होने की आशा तो न थी।

दारोगा—बेशक मुझे भी इस बात का गुमान न था परन्तु एक आवश्यक कार्य के कारण मुझे आप लोगों की सेवा में उपस्थित होना पड़ा। क्षमा कीजिएगा जिस समय आप कमन्द के सहारे उस बाग में उतरे थे उस समय मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी कि उन औरतों में जिन्हें देखकर आप उस बाग में गए थे, दो औरतें ऐसी हैं जिन्हें और बातों के अतिरिक्त यहाँ की रानी कहलाने की प्रतिष्ठा भी प्राप्त है। जिन्दगी का पिछला भाग इस बुढ़ौती के लिबास में काट रहा हूँ इसलिए आँखों की रोशनी और ताकत ने भी एक तौर पर जवाब ही दे दिया है, इसीलिए मैं उन औरतों को भी पहचान न सका।

इन्द्रजीतसिंह—खैर तो यह बात ही क्या थी जिसके लिए आप माफी माँग रहे हैं और इससे मेरा हर्ज भी क्या हुआ? आप उस काम की फिक्र कीजिए जिसके लिए आपको यहाँ आने की तकलीफ उठानी पड़ी।

दारोगा—इस समय वे ही दोनों, अर्थात् इन्द्रानी और आनन्दी, मेरे यहाँ आने का सबब हुई हैं। मैं आपके पास इस बात की इतिला करने के लिए भेजा गया हूँ कि परसों उन दोनों औरतों की शादी आप दोनों भाइयों के साथ होने वाली है, आशा है कि आप दोनों भाई इसे स्वीकार करेंगे।

इन्द्रजीतसिंह—मैं अफसोस के साथ यह जवाब देने पर मजबूर हूँ कि हम लोग इस शादी को मंजूर नहीं कर सकते और इसके कई सबब हैं।

दारोगा—ठीक है, मुझे भी पहले-पहले यही जवाब सुनने की आशा थी, मगर मैं आपको अपनी तरफ से भी नेकनीयती के साथ यह राय दूंगा कि आप इस शादी से इनकार न करें और मुझे उन सब बातों के कहने का मौका न दें जिन्हें लाचारी की हालत में निवेदन करके समझाना पड़ेगा कि आप इस शादी से इनकार नहीं कर सकते, बाकी रही यह बात कि इनकार करने के कई सबब हैं, सो यद्यपि मैं उन कारणों के जानने का दावा तो नहीं कर सकता मगर इतना तो जरूर कह सकता हूँ कि सबसे बड़ा सबब जो है वह केवल मुझी को नहीं बल्कि सभी को यहाँ तक कि इन्द्रानी और आनन्दी को भी मालूम है। परन्तु मैं आपको भरोसा दिलाता हूँ कि किशोरी और कामिनी को भी इस शादी से किसी तरह का दुःख न होगा, क्योंकि उन्हें इस बात की पूरी-पूरी खबर है कि यह शादी ही आपकी और उनकी मुलाकात का सबब होगी, बिना इस शादी के हुए वे आपको और आप उन्हें देख भी नहीं सकते।

इन्द्रजीतसिंह—मैं आपकी बातों पर विश्वास करने की कोशिश करूँगा, परन्तु और सब बातों को किनारे रखकर मैं आपसे यह पूछता हूँ कि यह शादी किस रीति के अनुसार हो रही है? विवाह के आठ प्रकार शास्त्र ने कहे हैं, यह उनमें से कौन सा प्रकार है और ऐसी शादी का नतीजा क्या निकलेगा। यद्यपि इसमें मेरी कुछ हानि नहीं हो सकती परन्तु मेरी अनिच्छा के कारण जो कुछ हानि हो सकती है इसका विचार लड़की वाले के सिर है।

दारोगा—ठीक है, मगर जहाँ तक मैं सोचता हूँ इन सब बातों पर अच्छी तरह

विचार किया जा चुका है और ज्योतिषी ने भी निश्चय दिला दिया है कि इस शादी का नतीजा दोनों तरफ बहुत अच्छा निकलेगा। यद्यपि आप इस समय प्रसन्न नहीं होते परन्तु अन्त में बहुत ही प्रसन्न होंगे। अच्छा इस समय तो मैं जाता हूँ क्योंकि मैं केवल इत्तिला करने के लिए आया था वाद-विवाद करने के लिए नहीं, परन्तु इसका जवाब पाने के लिए कल प्रातःकाल अवश्य आऊंगा।

इतना कहकर दारोगा उठ खड़ा हुआ और जावब का इन्तजार कुछ भी न करके जिधर से आया था उधर ही चला गया। उसके जाने के बाद कुछ देर तक तो दोनों भाई उसी जगह बातचीत करते रहे और इसके बाद जरूरी कामों से छुट्टी पाकर और उसी बावली पर संन्ध्या-वन्दन कर पुनः उस कमरे में चले आये जिसमें दोपहर तक बिता चुके थे। इस समय संध्या हो चुकी थी और कुमारों को यह देखकर ताज्जुब हो रहाथा कि उस कमरे में रोशनी हो चुकी थो मगर किसी गैर की सूरत दिखाई नहीं पड़ती थी।

कुमार को उस कमरे में गए बहुत देर न हुई होगी कि इन्द्रानी और आनन्दी वहाँ आ पहुँचीं जिन्हें देख कुमार बहुत खुश हुए और इन्द्रजीतसिंह ने इन्द्रानी से कहा, "तुमने तो कहला भेजा था कि अब मैं मुलाकात नहीं कर सकती !"

इन्द्रानी—वेशक बात ऐसी ही है, मगर मैं छिप कर आपसे कुछ कहने के लिए आई हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—वह कौन सी बात है जिसने तुम्हें छिप कर यहाँ आने के लिए मजबूर किया और वह कौन सा कसूर है जिसने मुझे तुम्हारा मेहमान···

इन्द्रानी—(बात काट कर और मुस्कुरा कर) मैं आपकी सब बातों का जवाब दूंगी, आप मेहरबानी करके जरा मेरे साथ इस दूसरे कमरे में आइये।

इन्द्रजीतसिंह—क्या मेरी चिट्ठी का जवाब भी लाई हो?

इन्द्रानी—जी हाँ, जवाब की चिट्ठी भी इसी समय आपको दूंगी। (इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को उठते देखकर आनन्दसिंह से) आप इसी जगह ठहरिये, (आनन्दी से) तू भी इसी जगह ठहर, मैं अभी आती हूँ।

इन्द्रजीतसिंह यद्यपि इन्द्रानी के साथ शादी करने से इनकार करते थे, मगर इन्द्रानी और आनन्दी की खूबसूरती, बुद्धिमानी, सभ्यता और उनकी मीठी बातें इस योग्य न थीं कि कुमार के दिल पर गहरा असर न करतीं और सामना होने पर उन्हें अपनी तरफ न खींचतीं। इन्द्रजीतसिंह इन्द्रानी की बात से इनकार न कर सके और खुशी-खुशी उसके साथ दूसरे कमरे में चले गये।

हम नहीं कह सकते कि इन्द्रजीतसिंह और इन्द्रानी में दो घण्टे तक क्या बातें हुईं और इधर आनन्दसिंह और आनन्दी में कैसी ठहरी, मगर इतना जरूर कहेंगे कि जब इन्द्रजीतसिंह और इन्द्रानी दोनों आदमी लौटकर कमरे में आये तो बहुत खुश थे और इसी तरह आनन्दी और आनन्दसिंह के चेहरे पर भी खुशी की निशानी पाई जाती थी। इन्द्रानी और आनन्दी के चले जाने-बाद कई औरतें खाने पीने का सामान लेकर हाजिर हुईं और दोनों भाई भोजन करके सो रहे। सुबह को जब वह दारोगा अपनी बातों का

जवाब लेने के लिए आया तो दोनों कुमार उससे खुशी-खुशी मिले और बोले कि हम दोनों भाइयों को इन्द्रानी और आनन्दी के साथ ब्याह करना स्वीकार है ।

12

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने इन्द्रानी और आनन्दी से ब्याह करना स्वीकार कर लिया और इस सबब से उस छोटे से बाग में ब्याह की तैयारी दिखाई देने लगी । इन दोनों कुमारों के ब्याह का बयान धूमधाम से लिखने के लिए हमारे पास कोई मसाला नहीं है । इस शादी में न तो बारात है, न बाराती, न गाना है न बजाना, न धूम है न धड़क्का, न महफिल है न ज्याफत, अगर कुछ बयान किया भी जाय तो किसका ! हाँ इसमें कोई शक नहीं कि ब्याह कराने वाले पण्डित अविद्वान और लालची न थे, तथा शास्त्र की रीति से ब्याह कराने में किसी तरह की त्रुटि भी दिखाई नहीं देती थी । बावली के ऊपर संगमर्म वाला चबूतरा ब्याह का मँड़वा बनाया गया था और उसी पर दोनों शादियाँ एक साथ ही हुई थीं, अतः ये बातें भी इस योग्य नहीं कि जिनके बयान में तूल दिया जाय और दिलचस्प मालूम हों, हाँ इस शादी के सम्बन्ध में कुछ बातें ऐसी जरूर हुईं जो ताज्जुब और अफसोस की थीं और उनका बयान इस जगह कर देना हम आवश्यक समझते हैं ।

इन्द्रानी के कहे मुताबिक कुँअर इन्द्रजीतसिंह को आशा थी कि राजा गोपालसिंह से मुलाकात होगी मगर ऐसा न हुआ । ब्याह के समय पाँच-सात औरतों के (जिन्हें कुमार देख चुके थे मगर पहचानते न थे) अतिरिक्त केवल चार मर्द वहाँ मौजूद थे । एक वही बुड्ढा दारोगा; दूसरे ब्याह कराने वाले पण्डितजी, तीसरा एक और आदमी जो पूजा इत्यादि की सामग्री इधर-से-उधर समयानुकूल रखता था और चौथा वह आदमी था जिसने कन्यादान (दोनों) किया था । चाहे वह इन्द्रानी और आनन्दी का बाप हो या गुरु हो या चाचा इत्यादि जो कोई भी हो, मगर उसकी सूरत देख कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को बड़ा ही आश्चर्य हुआ । यद्यपि उसकी उम्र पचास से ज्यादा न थी मगर वह साठ वर्ष से भी ज्यादे उम्र का बुड्ढा मालूम होता था । उसके खूबसूरत चेहरे पर जर्दी छाई थी, बदन में हड्डी-ही-हड्डी दिखाई देती थी, और मालूम होता था कि इसकी उम्र का सबसे बड़ा हिस्सा रंज, गम और मुसीबत ही में बीता है । इसमें कोई शक नहीं कि यह किसी जमाने में खूबसूरत, दिलेर और बहादुर रहा होगा, मगर अब तो अपनी सूरत-शक्ल से देखने वालों के दिल में दुःख ही पैदा करता था । दोनों कुमार ताज्जुब की निगाहों से उसे देखते रहे और उसका असल हाल जानने की उत्कण्ठा उन्हें बेचैन कर रही थी ।

कन्यादान हो जाने के बाद दोनों कुमारों ने अपनी-अपनी उँगली से अँगूठी उतार कर अपनी-अपनी स्त्री को (निशानी या तोहफे के तौर पर) दी और इसके बाद

सभी की इच्छानुसार दोनों भाई उठकर उसी कमरे में चले गये जो एक तौर पर उनके बैठने या रहने का स्थान हो चुका था। इस समय रात घण्टे भर से कुछ कम बाकी थी।

दोनों कुमारों को उस कमरे में बैठे पहर भर से ज्यादा बीत गया मगर किसी ने आकर खबर न ली कि वे दोनों क्या कर रहे हैं और उन्हें किसी चीज की जरूरत है या नहीं। आखिर राह देखते-देखते लाचार होकर दोनों कुमार कमरे के बाहर निकले और इस समय बाग में चारों तरफ सन्नाटा देखकर उन्हें बड़ा ही ताज्जुब हुआ। इस समय न तो उस बाग में कोई आदमी था और न ब्याह-शादी के सामान में से ही कुछ दिखाई देता था, यहाँ तक कि उस संगमर्मर के चबूतरे पर भी (जिस पर ब्याह का मँड़वा था) हर तरह से सफाई थी और यह नहीं मालूम होता था कि आज रात को इस पर कुछ हुआ था।

बेशक यह बात ताज्जुब की थी बल्कि इससे भी बढ़कर यह बात ताज्जुब की थी कि दिन भर बीत जाने पर भी किसी ने उनकी खबर न ली। जरूरी कामों से छुट्टी पाकर दोनों कुमारों ने बावली में स्नान किया और दो-चार फल, जो कुछ उस बागीचे में मिल सके, खाकर उसी पर सन्तोष किया।

दोनों भाइयों ने तरह-तरह के सोच-विचार में ज्यों-त्यों करके दिन बिता दिया मगर संध्या होते-होते जो कुछ वहाँ पर उन्होंने देखा उसके बर्दाश्त करने की ताकत उन दोनों के कोमल कलेजों में न थी। संध्या होने में थोड़ी ही देर थी जब उन दोनों ने उस बुड्ढे दारोगा को तेजी के साथ अपनी तरफ आते हुए देखा। उसकी सूरत पर हवाई उड़ रही थी और वह घबड़ाया हुआ सा मालूम पड़ रहा था। आने के साथ ही उसने कुँअर इन्द्रजीतसिंह की तरफ देख के कहा, "बड़ा अन्धेर हो गया! आज का दिन हम लोगों के लिए प्रलय का दिन था इसलिए आपकी सेवा में उपस्थित न हो सका!"

इन्द्रजीतसिंह—(घबड़ाहट और ताज्जुब के साथ) क्या हुआ?

दारोगा—आश्चर्य है कि इसी बाग में दो-दो खून हो गये और आपको कुछ भी मालूम न हुआ!

इन्द्रजीत—(चौंक कर) कहाँ और कौन मारा गया?

दारोगा—(हाथ का इशारा करके) उस पेड़ के नीचे चलकर देखने से आपको मालूम होगा कि एक दुष्ट ने इन्द्रानी और आनन्दी को इस दुनिया से उठा दिया, लेकिन बड़ी कारीगरी से मैंने खूनी को गिरफ्तार कर लिया है।

यह एक ऐसी बात थी जिसने इन्द्रजीत और आनन्दसिंह के होश उड़ा दिए। दोनों घबड़ाए हुए उस बुड्ढे दारोगा के साथ पूरब की तरफ चले गये और एक पेड़ के नीचे इन्द्रानी और आनन्दी की लाश देखी। उनके बदन में कपड़े और गहने सब वही थे जो आज रात को ब्याह के समय कुमार ने देखे थे, और पास ही एक पेड़ के साथ बँधा हुआ नानक भी उसी जगह मौजूद था। उन दोनों को देखने के साथ ही इन्द्रजीतसिंह ने नानक से पूछा, "क्या इन दोनों को तूने मारा है?"

इसके जवाब में नानक ने कहा, "हाँ, इन दोनों को मैंने मारा है और इनाम पाने का काम किया है, ये दोनों बड़ी ही शैतान थीं!"

चन्द्रकान्ता सन्तति

उन्नीसवाँ भाग

1

अठारहवें भाग के अन्त में हम इन्द्रानी और आनन्दी का मारा जाना लिख आये हैं और यह भी लिख चुके हैं कि कुमार के सवाल करने पर नानक ने अपना दोष स्वीकार किया और कहा—"इन दोनों को मैंने ही मारा और इनाम पाने का काम किया है, ये दोनों बड़ी शैतान थीं।"

एक तो इनके मारे जाने ही से दोनों कुमार दुःखी हो रहे थे, दूसरे नानक के इस उद्दण्डता के साथ जवाब देने ने उन्हें अपने आपे से बाहर कर दिया। कुँअर आनन्दसिंह ने तलवार के कब्जे पर हाथ रखकर बड़े भाई की तरफ देखा, अर्थात् इशारे ही में पूछा कि यदि आज्ञा हो तो नानक को दो टुकड़े कर दिया जाय। कुँअर आनन्दसिंह के इस भाव को नानक भी समझ गया और हँसता हुआ बोला, "आश्चर्य है कि आपके दुश्मनों को मारकर भी मैं दोषी ठहराया जाता हूँ।"

इन्द्रजीतसिंह—क्या ये दोनों हमारी दुश्मन थीं ?

नानक—बेशक।

इन्द्रजीतसिंह—इसका सबूत क्या है ?

नानक—केवल ये दोनों लाशें।

इन्द्रजीतसिंह—इसका क्या मतलब ?

नानक—यही कि इन दोनों का चेहरा साफ करने पर आपको मालूम हो जायगा कि ये दोनों वास्तव में मायारानी और माधवी थीं।

इन्द्रजीतसिंह—(चौंककर ताज्जुब से) हैं, मायारानी और माधवी !

नानक—(बात पर जोर देकर) जी हाँ, मायारानी और माधवी !

इन्द्रजीतसिंह—(आश्चर्य और क्रोध से बूढ़े दारोगा की तरफ देखकर) आप सुनते हैं, नानक क्या कह रहा है ?

दारोगा—नहीं, कदापि नहीं, नानक झूठा है।

नानक—(लापरवाही से) कोई हर्ज नहीं, यदि कुमार चाहेंगे तो बहुत जल्द मालूम हो जायेगा कि झूठा कौन है।

दारोगा—बेशक, कोई हर्ज नहीं मैं अभी बावली से जल लाकर और इनका चेहरा धोकर अपने को सच्चा साबित करता हूँ।

इतना कहकर दारोगा जोश दिखाता हुआ बावली की तरफ चला गया और फिर लौटकर न आया।

पाठक, आप समझ सकते हैं कि नानक की बातों ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के कोमल कलेजों के साथ कैसा बर्ताव किया होगा? आनन्दी और इन्द्रानी वास्तव में मायारानी और माधवी हैं। इस बात ने दोनों कुमारों को हद से ज्यादा बेचैन कर दिया और दोनों अपने किए पर पछताते हुए क्रोध और लज्जा-भरी निगाहों से बराबर एक-दूसरे को देखते हुए मन में सोचने लगे कि "हाय, हम दोनों से कैसी भूल हो गई! यदि कहीं यह हाल कमलिनी और लाड़िली तथा किशोरी और कामिनी को मालूम हो गया तो क्या वे सब कीं सब मारे तानों के हम लोगों के कलेजों को छलनी न कर डालेंगी! अफसोस, उस बुड्ढे दारोगा ही ने नहीं बल्कि हमारे सच्चे साथी भैरोंसिंह ने भी हमारे साथ दगा की। उसने कहा था कि इन्द्रानी ने मेरी सहायता की थी इत्यादि पर यह कदापि सम्भव नहीं कि मायारानी भैरोंसिंह की सहायता करे। अफसोस, क्या अब यह जमाना आ गया कि सच्चे ऐयार भी अपने मालिकों के साथ दगा करें।"

कुछ देर तक इसी तरह की बातें दोनों कुमार सोचते और दारोगा के आने का इन्तजार करते रहे। आखिर आनन्दसिंह ने अपने बड़े भाई से कहा, "मालूम होता है कि वह कम्बख्त बुड्ढा दारोगा डर के मारे भाग गया, यदि आज्ञा हो तो मैं जाकर पानी लाने का उद्योग करूँ।" इसके जवाब में कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने पानी लाने का इशारा किया और आनन्दसिंह बावली की तरफ रवाना हुए।

थोड़ी ही देर में कुँअर आनन्दसिंह अपना पटूका पानी से तर कर ले आए और यह कहते हुए इन्द्रजीतसिंह के पास पहुँचे—"बेशक दारोगा भाग गया।"

उसी पटूके के जल से दोनों लाशों का चेहरा साफ किया गया और उसी समय मालूम हो गया कि नानक ने जो कुछ कहा सब सच है, अर्थात् वे दोनों लाशें वास्तव में मायारानी तथा माधवी की ही हैं।

अब दोनों भाइयों के रंज और गम की कोई हद न रही। सकते की हालत में खड़े हुए पत्थर की मूरत की तरह वे उन दोनों लाशों की तरफ देख रहे थे। कुछ देर के बाद कुँअर आनन्दसिंह ने एक लम्बी साँस लेकर कहा, "वाह रे भैरोंसिंह, जब तुम्हारा यह हाल है तब हम लोग किस पर भरोसा कर सकते हैं!"

इसके जवाब में पीछे की तरफ से आवाज आई, "भैरोंसिंह ने क्या कसूर किया है जो आप उस पर आवाज कस रहे हैं!"

दोनों कुमारों ने घूम कर देखा तो भैरोंसिंह पर निगाह पड़ी। भैरोंसिंह ने पुनः कहा, "जिस दिन आप इस बात को सिद्ध कर देंगे कि भैरोंसिंह ने आपके साथ दगा की उस दिन जीते जी भैरोंसिंह को इस दुनिया में कोई भी न देख सकेगा।"

इन्द्रजीतसिंह—आशा तो ऐसी ही थी, मगर आज-कल तुम्हारे मिजाज में कुछ फर्क आ गया है।

भैरोंसिह—कदापि नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—अगर ऐसा न होता तो तुम बहुत-सी बातें मुझसे छिपा कर मुझे आफत में न डालते।

भैरोंसिह—(कुमार के पास जाकर) मैंने कोई बात आपसे नहीं छिपाई और जो कुछ आप समझे हुए हैं वह आपका भ्रम है।

इन्द्रजीतसिंह—क्या तुमने यह नहीं कहा था कि इन्द्रानी तुम्हें इस तिलिस्म में मिली थी और उसने तुम्हारी सहायता की थी ?

भैरोंसिह—कहा था और बेशक कहा था।

इन्द्रजीतसिंह—(उन दोनों लाशों की तरफ इशारा करके) फिर यह क्या मामला है ? तुम देख रहे हो कि ये किसकी लाशें हैं ?

भैरोंसिह—मैं जानता हूँ कि ये मायारानी और माधवी की लाशें हैं जो नानक के हाथ से मारी गई हैं, मगर इससे मेरा कोई कसूर सावित नहीं होता और न मेरी बात ही झूठी होती है। सम्भव है कि इन दोनों ने जिस तरह आपको धोखा दिया उसी तरह आपका मित्र और साथी समझ कर मुझे भी धोखा दिया हो।

इन्द्रजीतसिंह—(कुछ सोचकर) खैर, एक नहीं मैं और भी कई बातों में तुम्हें झूठा साबित करूँगा।

भैरोंसिह—दिल्लगी के शब्दों को छोड़कर आप मेरी एक बात भी झूठी साबित नहीं कर सकते।

इन्द्रजीतसिंह—सो अब कुछ नहीं, इन पेचीली बातों को छोड़ कर तुम्हें साफ-साफ मेरी बातों का जवाब देना होगा।

भैरोंसिह—मैं बहुत साफ-साफ आपकी बातों का जवाब दूंगा, आप को जो कुछ पूछना हो पूछें।

इन्द्रजीतसिंह—तुम हम लोगों से बिदा होकर कहाँ गए थे ? अब कहाँ से आ रहे हो ? और इन लाशों की खबर तुम्हें कैसे मिली ?

भैरोंसिह—आप तो एक साथ बहुत से सवाल कर गए जिनका जवाब मुख्तसिर में हो ही नहीं सकता। बेहतर होगा कि आप यहाँ से चलकर उस कमरे में या और किसी ठिकाने बैठें और जो कुछ मैं जवाब देता हूँ उसे गौर से सुनें। मुझे पूरा यकीन है कि निःसन्देह आप लोगों के दिल का खुटका निकल जायगा और आप लोग मुझे बेकसूर समझेंगे, इतना ही नहीं मैं और भी कई बातें आपसे कहूँगा।

इन्द्रजीतसिंह—इन दोनों लाशों को और नानक को यों ही छोड़ दिया जाय ?

भैरोंसिह—क्या हर्ज है, अगर यों ही छोड़ दिया जाय !

नानक—जब कि मैंने आप लोगों के साथ किसी तरह की बुराई नहीं की है तो फिर मुझे इस बेबसी की हालत में क्यों छोड़े जाते हैं ? यदि मुझे कुछ इनाम न मिले तो कम-से-कम कैद से तो छुट्टी मिल जाय !

इन्द्रजीतसिंह—ठीक है, मगर अभी हमें यह मालूम होना चाहिए कि तू इस तिलिस्म के अन्दर क्योंकर और किस नीयत से आया था, क्योंकि अभी उसी बाग में तेरी

बदनीयती का हाल मालूम हो चुका है जब दारोगा ने तुझे पकड़ा था।

नानक—मगर आपको दारोगा की बदनीयती का हाल भी तो मालूम हो चुका है।

भैरोंसिह—इस पचड़े से हमें कोई मतलब नहीं। अभी राजा गोपालसिंह का आदमी इसको लेने के लिए आता होगा, इसे उसके हवाले कर दीजिएगा।

इन्द्रजीतसिंह—अगर ऐसा हो तो बहुत अच्छी बात है, मगर क्या तुमको ठीक मालूम है कि राजा गोपालसिंह का आदमी आयेगा ? क्या इस मामले की खबर उन्हें लग गई है ?

भैरोंसिह—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—क्योंकर ?

भैरोंसिह—सो तो मैं नहीं जानता, मगर कमलिनी की जुबानी जो कुछ सुना है वह कहता हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—तो क्या तुमसे और मैं कमलिनी से मुलाकात हुई थी ? इस समय वे सब कहाँ हैं ?

भैरोंसिह—जी हाँ, हुई थी, और मैं आपकी मुलाकात उन लोगों से करा सकता हूँ। (हाथ का इशारा कर के) वे सब उस तरफ वाले बाग में हैं, और इस समय मैं उन्हीं के साथ था (रुक कर और सामने की तरफ देखकर) वह देखिए, राजा गोपालसिंह का आदमी आ पहुँचा।

दोनों भाइयों ने ताज्जुब के साथ उस तरफ देखा। वास्तव में एक आदमी आ रहा था जिसने पास पहुँच कर एक चिट्ठी इन्द्रजीतसिंह के हाथ में दी और कहा, "मुझे राजा गोपालसिंह ने आपके पास भेजा है।"

इन्द्रजीतसिंह ने उस चिट्ठी को बड़े गौर से देखा। राजा गोपालसिंह का हस्ताक्षर और खास निशान भी पाया। जब निश्चय हो गया कि यह चिट्ठी राजा गोपालसिंह की ही लिखी है तब पढ़ के आनन्दसिंह को दे दिया। उस पत्र में केवल इतना लिखा हुआ था—

"आप नानक तथा मायारानी और माधवी की लाशों को इस आदमी के हवाले करके अलग हो जायँ और जहाँ तक जल्दी हो सके, तिलिस्म का काम पूरा करें।"

इन्द्रजीतसिंह ने उस आदमी से कहा, "नानक और ये दोनों लाशें तुम्हारे सुपुर्द हैं. तुम जो मुनासिब समझो करो, मगर राजा गोपालसिंह को कह देना कि कल तक वह इस बाग में मुझसे जरूर मिल लें।" इसके जवाब में उस आदमी ने "बहुत अच्छा" कहा और दोनों कुमार तथा भैरोंसिह वहाँ से रवाना होकर बावली पर आए। तीनों ने उस बावली में स्नान करके अपने कपड़े सुखने के लिए पेड़ों पर फैला दिए और इसके बाद ऊपर वाले चबूतरे पर बैठ कर बातचीत करने लगे।

2

कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने एक लम्बी साँस लेकर भैरोंसिंह से कहा, "भैरोंसिंह, इस बात का तो मुझे गुमान भी नहीं हो सकता कि तुम स्वप्न में भी हम लोगों के साथ बुराई करने का इरादा करोगे मगर तुम्हारे झूठ बोलने ने हम लोगों को दुःखी कर दिया है। अगर तुमने झूठ बोल कर हम लोगों को धोखे न डाला होता तो आज इन्द्रानी और आनन्दी वाले मामले में पड़ कर हमने अपने मुँह पर अपने हाथ से स्याही न मली होती। यद्यपि इन दोनों औरतों के बारे में तरह-तरह के विचार मन में उठते थे, मगर इस बात का गुमान कब हो सकता था कि ये दोनों मायारानी और माधवी होंगी ! ईश्वर ने बड़ी कुशल की कि शादी होने के बाद आधी घड़ी के लिए भी उन दोनों कम्बख्तों का साथ न हुआ, अगर होता तो बड़े ही धर्म-संकट में जान फँस जाती । मैं यह समझता हूँ कि राजा गोपालसिंह की आज्ञानुसार आज-कल तुम कमलिनी वगैरह का साथ दे रहे हो, शायद ऐसा करने में भी कोई फायदा ही होगा, मगर इस बात पर हमारा खयाल कभी नहीं जम सकता कि इतनी बढ़ी-चढ़ी दिल्लगी करने की किसी ने तुम्हें इजाजत दी होगी। नहीं-नहीं, इसे दिल्लगी नहीं कहना चाहिए, यह तो इज्जत औ हुर्मत को मिट्टी में मिला देने वाला काम है। भला तुम ही बताओ कि किशोरी और कमलिनी वगैरह तथा और लोगों के सामने अब हम अपना मुँह क्योंकर दिखायेंगे !

भैरोंसिंह—और लोगों की बातें तो जाने दीजिए, क्योंकि इस तिलिस्म के अन्दर जो कुछ हो रहा है इसकी खबर बाहर वालों को हो ही नहीं सकती, हाँ किशोरी, कामिनी और कमला वगैरह अवश्य ताना मारेंगी क्योंकि उनको इस मामले की पूरी खबर है और वे लोग इसी बगल वाले बाग में मौजूद भी हैं, मगर मैं सच कहता हूँ कि इस मामले में मैं बिल्कुल बेकसूर हूँ ! इसमें कोई शक नहीं कि कमलिनी की इच्छानुसार मैं बहुत-सी बातें आप लोगों से छिपा गया हूँ मगर इन्द्रानी के मामले में मैं भी धोखा खा गया। मैंने ही नहीं, वलिक कमलिनी ने भी यही समझा था कि इन्द्रानी और आनन्दी इस तिलिस्म की रानी हैं। खैर, अब तो जो कुछ होना था वह हो चुका, रंज को दूर कीजिए और चलिए, मैं आपकी कमलिनी वगैरह से मुलाकात कराऊँ।

इन्द्रजीतसिंह—नहीं, अभी मैं उन लोगों से मुलाकात नहीं हाँ करूँगा, कुछ दिन बाद देखा जाएगा।

आनन्दसिंह—जी हाँ, मेरी भी यही राय है। अफसोस, माधवी की बनावटी कलाई पर भी उस समय कुछ ध्यान नहीं गया, यद्यपि एक मामूली और छोटी बात थी !

भैरोंसिंह—नहीं-नहीं ऐसा खयाल न कीजिए, जब आप अपना दिल इतना छोटा कर लेंगे तब किसी भारी काम को क्योंकर करेंगे ? इसे भी जाने दीजिए, आप यह बताइये कि इसमें किशोरी या कमलिनी वगैरह का क्या कसूर है जो आप उनसे मुलाकात तक भी न करेंगे ? शादी-ब्याह का शौक बढ़ा आपको और भूल हुई आपसे, कमलिनी ने भला क्या किया ? (चौंक कर) खैर, आप उनके पास न जाइए, वह देखिए

कमलिनी खुद ही आपके पास चली आ रही हैं !

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने अफसोस और रंज से झुका सिर उठा कर देखा तो कमलिनी पर निगाह पड़ी जो धीरे-धीरे चलती और मुस्कराती हुई इन्हीं लोगों की तरफ आ रही थीं।

3

नानक को लिए हुए मायारानी दूसरी तरफ चली गई। मगर जिस जगह जाना चाहती थी, वहाँ पहुँचने के पहले ही उसने पुनः एक गोपालसिंह को अपने से कुछ दूर पर देखा और उसी समय तिलिस्मी तमंचे में गोली भर कर निशाना सर किया। गोली उसके घुटने पर लग कर फूट गई और उसमें से निकला हुआ बेहोशी का धुआँ उसके चारों तरफ फैल गया, मगर उसका असर गोपालसिंह पर कुछ भी न हुआ। गोपालसिंह तेजी के साथ लपक मायारानी के पास चले आये और बोले, "मैं वह नकली गोपालसिंह नहीं हूँ जिस पर इस तमंचे का कुछ असर हो, मैं असली गोपालसिंह हूँ और तुझसे यह पूछने के लिए आया हूँ कि बता अब तेरे साथ क्या सलूक किया जाय ?"

यह कैफियत देख कर मायारानी घबरा गई और उसे निश्चय हो गया कि अब उसकी मौत उसके सामने आ खड़ी हुई है जो एक पल के लिए भी उसका मुलाहिजा न करेगी, अतः वह गोपालसिंह की बात का कुछ जवाब न दे सकी और नानक की तरफ देखने लगी। गोपालसिंह ने यह कहकर कि 'नानक की तरफ क्या देख रही है मेरी तरफ देख !' एक तमाचा उसके गाल पर इस जोर से मारा कि वह इस सदमे को बर्दाश्त न कर सकी और चक्कर खाकर जमीन पर बैठ गई। गोपालसिंह ने अपनी जेब में से कुछ निकाल कर उसे जबर्दस्ती सुंघाया, जिससे वह बेहोश होकर जमीन पर लेट गई।

इसके बाद गोपालसिंह ने नानक की तरफ, जो डर के मारे खड़ा काँप रहा था, देखा और कहा—

गोपालसिंह—कहो नानक, तुम यहाँ कैसे आ गये ? क्या उस भुवनमोहिनी के प्रेम में कमी तो नहीं हो गई या मनोरमा को खोजते हुए तो नहीं आ गए ?

नानक—(डरता हुआ हाथ जोड़कर) जी मैं कमलिनीजी से मिलने के लिए आया था। क्योंकि वे मुझ पर कृपा रखती हैं और जब-जब मुझे ग्रहदशा आकर घेरती है तब-तब सहायता करती हैं। मुझे यह खबर लगी थी कि वे इस बाग में आई हुई हैं।

गोपालसिंह—मगर यहाँ आकर कमलिनी की जगह मायारानी से मदद माँगने की नौबत आ गई। बल्कि क्या ताज्जुब कि इसी के साथ तुम यहाँ आये भी हो।

नानक—जी नहीं, मेरा इसका साथ भला क्योंकर हो सकता है, क्योंकि यह मेरी पुरानी दुश्मन है और इसने धोखा देकर मेरे बाप को ऐसी आफत में डाल दिया है कि अभी तक उसे किसी तरह छुटकारा नहीं मिलता।

गोपालसिंह—वह सब जो कुछ है, मैं खूब जानता हूँ। तुमने अपने बाप के लिए जो कुछ कोशिश की, वह भी किसी से छिपी नहीं है तथा तारासिंह ने तुम्हारे यहाँ जाकर जो कुछ तुम्हारा हाल मालूम किया है, वह भी मुझे मालूम है। अच्छा, अब मैं समझा कि तुम तारासिंह से बदला लेने यहाँ आये हो। मगर यह तो बताओ कि किस राह से तुम यहाँ आये ?

नानक—जी नहीं, यह बात नहीं है, भला मैं तारासिंह से क्या बदला ले सकूँगा ? तारासिंह ही से नहीं बल्कि राजा वीरेन्द्रसिंह के किसी भी ऐयार का मुकाबला करने की हिम्मत मेरे में नहीं, मगर तारासिंह ने जो कुछ सलूक मेरे साथ किया है उसका रंज जरूर है और मैं कमलिनी से इसी बात की शिकायत करने यहाँ आया था, क्योंकि मुझे उनका बड़ा भरोसा रहता है और यहाँ आने का रास्ता भी उन्होंने ही उस समय मुझे बताया था जब कम्बख्त मायारानी की बदौलत आप यहाँ कैद थे और पागल बने हुए तेजसिंह यहाँ आए हुए थे।

गोपालसिंह—हाँ ठीक है, मगर मैं समझता हूँ कि साथ ही इसके तुम उन भेदों के जानने का भी इरादा करके आए होंगे जो गूँगी रामभोली की बदौलत यहाँ आने पर तुमने देखा था···

नानक—जी हाँ, इसमें कोई शक नहीं कि मैं उन भेदों को भी जानना चाहता हूँ, परन्तु यह बात बिना आपकी कृपा के···

गोपालसिंह—नहीं-नहीं, उन भेदों का जानना तुम्हारे लिए बहुत ही मुश्किल है क्योंकि तुम्हारी गिनती ईमानदार ऐयारों में नहीं हो सकती। यद्यपि वह सब हाल मुझे मालूम है, लाड़िली ने तुम्हारा अनूठा हाल पूरा-पूरा बयान किया था और उसी को रामभोली समझ कर तुम यहाँ आए भी थे, मगर जो कुछ तुमने यहाँ आकर देखा उसका सबब बयान करना मैं उचित नहीं समझता, फिर भी इतना जरूर कहूँगा कि वह अनोखी तस्वीर जो दारोगा वाले अजायबघर के बँगले में तुमने देखी थी, वास्तव में कुछ न थी या अगर थी तो केवल तुम्हारी रामभोली की निरी शरारत।

नानक—और वह कुएँ वाला हाथ ?

गोपालसिंह—वह तुम्हारे बुजुर्ग धनपत का साया था। (कुछ सोच कर) मगर नानक, मुझे इस बात का अफसोस है कि तुम अपनी जवानी, हिम्मत, लियाकत और ऐयारी तथा बुद्धिमानी का खून बुरी तरह कर रहे हो। इसमें कोई शक नहीं कि अगर तुम इश्क और मुहम्मत के झगड़ों में न पड़े होते तो समय पर अपने बाप की सहायता करने लायक होते। अब भी तुम्हारे लिए उचित यही है कि तुम अपने खयालों को सुधार कर इज्जत पैदा करने की कोशिश करो और किसी के साथ दुश्मनी करने या बदला लेने का खयाल दिल से दूर कर दो। इस थोड़ी-सी जिन्दगी में मामूली ऐशोआराम के लिए अपना परलोक बिगाड़ना पढ़े-लिखे बुद्धिमानों का काम नहीं है। अच्छे लोग मौत और जिन्दगी का फैसला एक अनूठे ढंग पर करते हैं। उनका खयाल है कि दुनिया में वह कभी मरा हुआ तब तक न समझा जायगा जब तक उसका नाम नेकी के साथ सुना या लिया जायगा, और जिसने अपने माथे पर बुराई का टीका लगा लिया, वह मुर्दे से भी बढ़ कर है।

दुष्ट लोग यदि किसी कारण मनुष्य को चींटी समझने लायक हो भी जायँ तो भी कोई बात नहीं। मगर ईश्वर की तरफ से वे किसी तरह निश्चिन्त नहीं हो सकते और अपने बुरे कामों का फल अवश्य पाते हैं। क्या इन्हीं राजा वीरेन्द्रसिंह और मेरे किस्से से तुम यह नसीहत नहीं ले सकते? क्या तुम मायारानी, माधवी, अग्निदत्त और शिवदत्त वगैरह से भी अपने को बढ़कर समझते हो और नहीं जानते कि उन लोगों का अन्त किस तरह हुआ और हो रहा है? फिर किस भरोसे पर तुम अपने को बुरी राह चलाना चाहते हो? निःसंदेह तुम्हारा बाप बुद्धिमान है जो एकनामी और अद्भुत शक्ति रखने वाला अमीर ऐयार होने और हर तरह की बेइज्जती सहने पर भी राजा वीरेन्द्रसिंह का कृपा-पात्र बनने का ध्यान अपने दिल से दूर नहीं करता और तुम उसी भूतनाथ के लड़के हो जो अपने दिल को भी काबू में नहीं रख सकते!

इस तरह की बहुत-सी नसीहत-भरी बातें राजा गोपालसिंह ने इस ढंग से नानक को कहीं कि उसके दिल पर असर कर गईं। वह राजा गोपालसिंह के पैरों पर गिर पड़ा और जब उन्होंने उसे दिलासा देकर उठाया तो हाथ जोड़ कर अपनी डबडबाई हुई आँखें नीचे किए हुए बोला, "मेरा अपराध क्षमा कीजिए! यद्यपि मैं क्षमा माँगने योग्य नहीं हूँ। परन्तु आपकी उदारता मुझे क्षमा देने योग्य है। अब मुझे अपनी ताबेदारी में लीजिए और हर तरह से आजमा कर देखिए कि आपकी नसीहत का असर मुझ पर कैसा पड़ा और अब मैं किस तरह आपकी खिदमत करता हूँ।"

इसके जवाब में गोपालसिंह ने कहा, "अच्छा, हम तुम्हारा कसूर माफ करके तुम्हारी दर्खास्त कबूल करते हैं। तुम मेरे साथ आओ और जो कुछ मैं कहूँ, सो करो।"

4

कमलिनी को देख कर दोनों कुमार शरमाए और मन में तरह-तरह की बातें सोचने लगे। देखते-देखते कमलिनी उनके पास आ गई और प्रणाम करके बोली, "आप यहाँ जमीन पर क्यों बैठे हैं? उस कमरे में चलकर बैठिए, जहाँ फर्श बिछा है और सब तरह का आराम है।"

इन्द्रजीतसिंह—मगर वहाँ अंधकार तो जरूर होगा।

कमलिनी—जी नहीं, वहाँ बखूबी रोशनी हो रही होगी, (मुस्करा कर) क्योंकि यहाँ की रानी के मर जाने से यह बाग एक सुघड़ रानी के अधिकार में आ गया है और उसने आपकी खातिर में रोशनी जरूर कर रखी होगी।

इन्द्रजीतसिंह—(कुछ शर्मिन्दगी के साथ) बस, रहने दीजिए, मैं यहाँ की रानियों का मेहमान नहीं बनता। जो कुछ बनना था, सो बन चुका। अब तो तुम्हारी दिल्लगी का निशाना बनूँगा।

कमलिनी—(हाथ जोड़ कर) मेरी क्या मजाल जो आपसे दिल्लगी करूँ, अच्छा

आप मेरे मेहमान बनिए और यहाँ से उठिये।

इन्द्रजीतसिंह—क्या तुम नहीं जानतीं कि यहाँ अपने भी पराए होकर दुःख देने के लिए तैयार हो जाते हैं ?

भैरोंसिंह—(कमलिनी से) आपने खयाल किया या नहीं ? यह मेरी पूजा हो रही है।

कमलिनी—होनी ही चाहिए, आप इसी के योग्य हैं। (इन्द्रजीतसिंह से) मगर आप मुझ लौंडी पर किसी तरह का शक न करें। यदि आप यह समझते हों कि मैं वास्तव में कमलिनी नहीं हूँ, तो मैं बहुत-सी बातें उस जमाने की आपको याद दिला कर अपने पर विश्वास करा सकती हूँ। जिस जमाने में आप तालाब वाले तिलिस्मी मकान में मेरे साथ रहते थे। (उस समय की दो-तीन गुप्त बातों का इशारा करके) कहिए, अब भी मुझ पर शक है ?

इन्द्रजीतसिंह—(बनावटी मुस्कराहट के साथ) नहीं, अब तुम पर शक तो किसी तरह का नहीं है, मगर रंज जरूर है।

कमलिनी—रंज ! सो किस बात का ?"

इन्द्रजीतसिंह—इस बात का कि यहाँ आने पर तुमने मुझसे जान-बूझ के अपने को छिपाया और मुझे तरद्दुद में डाला !

कमलिनी—(हँसकर और कुमार का हाथ पकड़ के) अच्छा, आप यहाँ से उठिये और उस कमरे में चलिए तो मैं आपकी सब बातों का जवाब दूँगी। आप तो जरा-सी बात में रंज हो जाते हैं। मगर आपके साथ किसी तरह का मसखरापन किया या हम लोगों को आपसे मिलने नहीं दिया गया तो आपकी भावज साहेबा ने, अतः आपकी ऐसी बातों का जवाब भी वे ही देंगी और उनसे भी उसी कमरे में मुलाकात होगी।

इन्द्रजीतसिंह—मेरी भावज साहेबा ! सो कौन, क्या लक्ष्मीदेवी ?

कमलिनी—जी हाँ, वे उसी कमरे में बैठी आपका इन्तजार कर रही हैं, चलिए।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, हैं तो उनसे मैं जरूर मिलूँगा। जबसे मैंने यह सुना है कि 'तारा वास्तव में लक्ष्मीदेवी हैं' तभी से मैं उनसे मिलने के लिए बेताब हो रहा हूँ।

यह कहकर इन्द्रजीतसिंह उठ खड़े हुए और अपने सूखे हुए कपड़े पहनकर कमलिनी के साथ उसी कमरे की तरफ चले जिसमें पहले भी कई दफे आराम कर चुके थे। उनके पीछे-पीछे आनन्दसिंह और भैरोंसिंह गए।

इस समय कमलिनी मामूली ढंग में न थी बल्कि बेशकीमत पोशाक और गहनों से अपने को सजाए हुए थी। एक तो यों ही किशोरी के मुकाबले की खूबसूरत और हसीन थी तिस पर इस समय की बनावट और शृंगार ने उसे और भी उभाड़ रखा था। यद्यपि आज उससे मिलने के पहले कुमार तरह-तरह की बातें सोच रहे थे और इन्द्रानी तथा आनन्दी वाले मामले से शर्मिन्दा होकर जल्दी उससे मिलना नहीं चाहते थे मगर जब सामने आकर खड़ी हो गई तो सब बातें एक तरह पर थोड़ी देर के लिए भूल गये और खुशी-खुशी उसके साथ चलकर उस कमरे में जा पहुँचे।

इस कमरे का दरवाजा मामूली ढंग पर बन्द था, जो कमलिनी के धक्का देने से

खुल गया और ज्यादा रोशनी के सबब भीतर के जगमगाते हुए सामान तथा कई औरतों पर दोनों कुमारों की निगाह पड़ी जो उन्हें देखते ही उठ खड़ी हुईं और जिनमें से एक को छोड़ बाकी की सभी ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह को और कई ने आनन्दसिंह को भी प्रणाम किया।

वह औरत जिसने कुमार को सलाम नहीं किया, लक्ष्मीदेवी थी और वह राजा गोपालसिंह की जुबानी यह सुन चुकी थी कि दोनों कुमार उनके छोटे भाई हैं, अतः दोनों कुमारों ने स्वयं लक्ष्मीदेवी को सलाम किया और उनकी पिछली अवस्था पर अफसोस करके पुनः जमानिया की रानी बनने पर प्रसन्नता के साथ मुबारकबाद देने के बाद और विषयों में भी देर तक उससे बातें करते रहे। इसके बाद किशोरी, कामिनी इत्यादि से बातचीत की नौबत पहुँची। किशोरी और इन्द्रजीतसिंह में तथा कामिनी और आनन्दसिंह में सच्ची और बढ़ी-चढ़ी मुहब्बत थी, परन्तु धर्म, लज्जा और सभ्यता का पल्ला भी उन लोगों ने मजबूती के साथ पकड़ा हुआ था। इसलिए यद्यपि यहाँ पर कोई बड़ी-बूढ़ी औरत मौजूद न थी जिससे विशेष लज्जा करनी पड़ती तथापि इन चारों ने इस समय बनिस्बत जुबान के विशेष करके आँखों के इशारों तथा भावों ही में अपने दुःख-दर्द और जुदाई के सदमे को झलकाकर उपस्थित अवस्था तथा इस अनोखे मेल-मिलाप पर प्रसन्नता प्रकट की। कमलिनी, लाड़िली, कमला, सरयू और इन्दिरा आदि से भी कुशल-क्षेम पूछने के बाद इन लोगों में यों बातें होने लगीं—

इन्द्रजीतसिंह—(लक्ष्मीदेवी से) आपको इस बात की शिकायत तो जरूर होगी कि आपको हद से ज्यादा दुःख भोगना पड़ा, मगर यह जानकर आप अपना दुःख जरूर भूल गई होंगी कि भाई साहब ने कम्बख्त मायारानी की बदौलत जो कुछ कष्ट भोगा उसे भी कोई साधारण मनुष्य सहन नहीं कर सकता।

लक्ष्मीदेवी—निःसन्देह ऐसा ही है, क्योंकि मुझे तो किसी-न-किसी तरह आजादी की हवा मिल भी रही थी मगर उन्हें अँधेरी कोठरी में जिस तरह रहना पड़ा वैसा ईश्वर न करे, किसी दुश्मन को भी नसीब हो।

इन्द्रजीतसिंह—(मुस्कराकर) मगर मैंने तो सुना था कि आप उनसे नाराज हो गई हैं और जमानिया जाने में···

कमलिनी—(हँसकर) ये बनिस्बत उनके जिन्न को ज्यादा पसन्द करती थीं।

लक्ष्मीदेवी—वास्तव में उन्होंने बड़ा भारी धोखा दिया था।

कमला—आपने ठीक कहा, क्योंकि ऐयारी दोनों ही ने की थी।

कमलिनी—ओफ, जब मैं वह समय याद करती हूँ, जब ये तारा बनकर मेरे यहाँ रहतीं और ऐयारी का काम करती थीं, तो मुझे आश्चर्य होता है। वास्तव में इनकी ऐयारी बहुत अच्छी होती थी और ये दुश्मनों का पता खूब लगाती थीं। रोहतास-गढ़ पहाड़ी के नीचे जब मायारानी का ऐयार कंचनसिंह को मारकर आपको रथ पर सुला के ले गया था तब भी इन्होंने मुझे वह खबर कुछ ही देर पहले पहुँचाई थी।

इन्द्रजीतसिंह—(ताज्जुब से)हाँ! तब तो इनका बहुत बड़ा अहसान मेरी गर्दन पर भी है! ओफ, वह जमाना भी कैसा भयानक था! मजा तो यह था कि दुश्मन लोग

आपस में लड़-मरते थे पर एक की दूसरे को खबर नहीं होती थी। देखो, रोहतासगढ़ में मायारानी की चमेली ने तो माधवी पर वार किया और माधवी को मरते दम तक इस बात का पता न लगा। अगर पता लग जाता तो क्या आज दिन माधवी मायारानी के साथ मिलकर यहाँ के तिलिस्मी बाग में आने की हिम्मत कभी करती ?

कमलिनी—कदापि नहीं ! (हँसकर) मगर आश्चर्य तो यह है कि जिस माधवी और मायारानी ने इतना ऊधम मचा रखा था, उन्हीं दोनों से आपने शादी कर ली। अफसोस तो यही है कि उनके पापों ने उन्हें बचने न दिया और हम लोगों को मुबारकबाद देने का मौका न मिला !

इन्द्रजीतसिंह—(शरमाकर)तुम तो···!

लक्ष्मीदेवी—(कुमार की बात काटकर कमलिनी से) बहिन, तुम भी कैसी शोख हो ! कई दफे तुमसे कह चुकी हूँ कि इस बात का जिक्र न करना, मगर आखिर तुमने न मानी ! खैर, अगर कुमार ने शादी की तो फिर तुम्हें क्या ? तुम ताना मारने वाली कौन ? और फिर भूल-चूक की बात ही क्या है, इन्होंने कुछ जान-बूझके तो शादी की ही नहीं, धोखे में पड़ गये। खबरदार, अब इस बात का जिक्र कोई करने न पाये।(कुमार से) हाँ, तो बताइए कि हम लोगों का हाल आपको कुछ मालूम हुआ या नहीं ?

इन्द्रजीतसिंह—मैं तो बहुत दिनों से तिलिस्म के अन्दर हूँ, मगर बाहर का हाल, जिसमें आप लोगों का हाल भी मिला हुआ था, भाईसाहब(गोपालसिंह)बराबर सुना दिया करते थे और जो कुछ नहीं मालूम है वह अब मालूम हो जायेगा, क्योंकि ईश्वर की कृपा से आप लोगों का बहुत अच्छा समागम हुआ है, एक-दूसरे से आप-बीती कहने-सुनने का मौका आज से बढ़कर फिर न मिलेगा। साथ ही इसके मैं यह भी कहूँगा कि आप (कमलिनी की तरफ इशारा करके) इन्हें बात-बात में डाँटने या दबाने की तकलीफ न करें, ये जितना और जो कुछ मुझे कहें कहने दीजिये क्योंकि मैं इनके हाथ बिका हूँ, इन्होंने हम लोगों के साथ जो कुछ सलूक किया है, वह किसी से छिपा नहीं है और न उसका बोझ हम लोगों के सिर से कभी उतर सकता है···।

कमलिनी—बस-बस, ज्यादा तारीफों की भरमार न कीजिए। अगर आप··· (सरयू की तरफ देख के) चाची, क्षमा कीजिए, और जरा इस कमरे में जाकर (दोनों कुमारों और भैरोंसिंह की तरफ बताकर)इन लोगों के लिए खाने का इन्तजाम कीजिए।

सरयू कमलिनी का मतलब समझ गई कि उसके सामने हँसी-दिल्लगी की बातें करते इन लोगों को शर्म मालूम होती है और उचित भी यही है कि अतः वह उठकर दूसरे कमरे में चली गई और तब कमलिनी ने पुनः इन्द्रजीतसिंह से कहा, "हाँ, अगर आप मेरे हाथ बिके हुए हैं तो कोई चिन्ता नहीं, मैं आपको बड़ी खातिर के साथ अपने पास रखूँगी।"

किशोरी—(मुस्कराती हुई) इनकी ताबीज बना के गले में पहन लेना।

कमलिनी—जी नहीं, गले तो ये तुम्हारे मढ़े जायेंगे, मैं तो इन्हें हाथों पर लिए फिरूँगी।

लक्ष्मीदेवी—बल्कि चुटकियों पर, क्योंकि तुम ऐसी ही शोख और मसखरी हो !

(कुमार से) आज हम लोगों के लिए बड़ी खुशी का दिन है, ईश्वर ने बड़े भागों से यह दिन दिखाया है, अतएव अगर हम लोग हँसी-दिल्लगी में कुछ विशेष कह जायें तो रंज न मानिएगा।

इन्द्रजीतसिंह—ताज्जुब है कि आप रंज होने का जिक्र करती हैं! क्या आप इस बात को नहीं जानतीं कि इन्हीं बातों के लिए हम लोग कब से तरस रहे हैं! (कमलिनी की तरफ देख के और मुस्करा के)मगर आशा है कि अब तरसना न पड़ेगा।

कमलिनी—यह तो (किशोरी की तरफ बता के) इन्हें कहिए, तरसने की बात का जवाब तो यही दे सकेंगी।

किशोरी—ठीक है, क्योंकि आदमी जब किसी के हाथ बिक जाता है तो आजादी की हवा खाने के लिए उसे तरसना ही पड़ता है।

इन्द्रजीतसिंह—(बात का ढंग दूसरी तरफ बदलने की नीयत से कमलिनी की तरफ देखकर) हाँ, यह तो बताओ कि नानक से और तुम लोगों से मुलाकात हुई थी या नहीं?

कमलिनी—जी नहीं, उस पर तो आपको बड़ा रंज होगा!

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, इसलिए कि उसने अपनी चाल-चलन को बहुत बिगाड़ रखा है। (कमला से) तुमने यह तो सुना ही होगा कि नानक भूतनाथ का लड़का है और भूतनाथ तुम्हारा पिता है!

कमला—जी हाँ, मैं सुन चुकी हूँ, मगर वे(लम्बी साँस लेकर) आजकल अपनी भूलों के सबब आप लोगों के मुजरिम बन रहे हैं!

इन्द्रजीतसिंह—चिन्ता मत करो, पिछले जमाने में अगर भूतनाथ से किसी तरह का कसूर हो गया तो क्या हुआ, आजकल वह हम लोगों का काम बड़ी खूबी और नेक-नीयती के साथ कर रहा है और तुम विश्वास रखो कि उसका सब कसूर माफ किया जायेगा।

कमला—यदि आपकी कृपा हो तो सब अच्छा ही होगा। (कमलिनी की तरफ इशारा करके) इन्होंने भी मुझे ऐसी ही आशा दिलाई है।

लक्ष्मीदेवी—इनका तो वह ऐयार ही ठहरा, इन्हीं के दिए हुए तिलिस्मी खंजर की बदौलत उसने बड़े-बड़े काम किए और कर रहा है। हाँ, खूब याद आया, (इन्द्रजीतसिंह से) मैं आपसे एक बात पूछूँगी।

इन्द्रजीतसिंह—पूछिये।

लक्ष्मीदेवी—तालाब वाले तिलिस्मी मकान से थोड़ी दूर पर जंगल में एक खूबसूरत नहर है और वहीं पर किसी योगिराज की समाधि है…।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ-हाँ, मैं उस स्थान का हाल जानता हूँ। यद्यपि मैं वहाँ कभी गया नहीं, मगर 'रिक्तगन्थ' की बदौलत मुझे वहाँ का हाल बखूबी मालूम हो गया है, (कमलिनी की तरफ देखकर)इन्हें भी तो मालूम ही होगा क्योंकि वह 'रिक्तगन्थ' बहुत दिनों तक इनके पास था।

कमलिनी—जी हाँ, उसी रिक्तगन्थ की बदौलत मुझे उसका हाल मालूम हुआ

था और उसी जगह से वह तिलिस्मी खंजर और नेजा मैंने निकाला था[1] मगर मैं उस रिक्तगन्थ की लिखावट अच्छी तरह समझ नहीं सकती थी, इसलिए उसका ठीक-ठीक और पूरा हाल मैं न जान सकी ।

लक्ष्मीदेवी—इसी सबब से आप मेरी बातों का ठीक जवाब न दे सकीं तब मैंने सोचा कि आपसे मुलाकात होने पर पूछूँगी कि क्या वहाँ भी कोई तिलिस्म है ?

इन्द्रजीतसिंह—जी नहीं, वहाँ कोई तिलिस्म नहीं है । जिस दार्शनिक महात्मा की वह समाधि है, उन्होंने यह तिलिस्म तथा रोहतासगढ़ का तहखाना, तालाब वाला तिलिस्मी खँडहर, जिसमें मैं मुर्दा बनाकर पहुँचाया गया था,[2] अथवा जिसमें किशोरी, कामिनी और भैरोंसिंह वगैरह फँस गये थे बनवाया है, और चुनारगढ़ वाला तिलिस्म उनके गुरु का बनवाया हुआ है, यहाँ के राजा जिन्होंने यह तिलिस्म बनवाया था, उन्हीं के शिष्य थे । उन महात्मा ने जीते-जी समाधि ले ली थी और उन्होंने अपना योगाश्रम भी उसी स्थान में बनवाया था । कमलिनी ने तिलिस्मी खंजर उसी योगाश्रम से निकाला होगा क्योंकि वहाँ भी बड़ी-बड़ी अनूठी चीजें हैं ।

कमलिनी—जी हाँ, और उसी जगह मैंने इस बात की कसम भी खाई थी कि "भूतनाथ और नानक को अपना भाई समझूँगी, अगर ये लोग हम लोगों के साथ दगा न करेंगे ।" यद्यपि यह आश्चर्य की बात है कि अभी तक भूतनाथ के भेदों का सही-सही पता नहीं लगता फिर भी चाहे जो हो यह तो मैं जरूर कहूँगी कि भूतनाथ ने हम लोगों के साथ बड़ी नेकियाँ की हैं ।

इन्द्रजीतसिंह—इसमें किसी को क्या शक हो सकता है ? भूतनाथ वास्तव में बड़ा भारी ऐयार है । हाँ, यह तो बताओ कि नानक यहाँ कैसे आ पहुँचा ?

कमलिनी—भला मैं इस बात को क्या जानूँ ?

आनन्दसिंह—(मुस्कराते हुए) अपनी रामभोली को खोजता हुआ आया होगा ।

लाड़िली—उसे मालूम हो चुका है कि उसकी रामभोली को मरे तो मुद्दत हो गई ।

आनन्दसिंह—खैर, उसकी तस्वीर खोजने आया होगा !

लाड़िली—या किसी की बारात में आया होगा !

लाड़िली की इस आखिरी बात ने सबको हँसा दिया और कुँअर आनन्दसिंह शरमाकर चुप हो रहे ।

इन्द्रजीतसिंह—(कमलिनी से)इस बात का कुछ पता न लगा कि अग्निदत्त को किसने मारा था ! (किशोरी से) शायद इसका जवाब तुम दे सकती हो ?

किशोरी—अग्निदत्त को मायारानी के ऐयारों ने मारा था[3] और उन्हीं लोगों ने मुझे ले जाकर उस तिलिस्मी खँडहर में कैद किया था ।

---

1. देखिए छठवाँ भाग, तीसरा बयान ।
2. देखिए तीसरा भाग, पहला बयान ।
3. देखिए पाँचवाँ भाग, चौथा बयान ।

भैरोंसिह—(कमलिनी से) हाँ, खूब याद आया, हमने सुना था कि उस समय जब हम लोग शाहदरवाजा बन्द हो जाने के कारण दुःखी हो रहे थे, तब आपने ही विचित्र ढंग से वहाँ पहुँचकर हम लोगों की सहायता की थी। आपको इन बातों की खबर कैसे मिली थी ?[1]

कमलिनी—(लक्ष्मीदेवी की तरफ इशारा करके) उन दिनों ये ऐयारी कर रही थीं और इन्होंने ही उन बातों की खबर पहुँचाई थी तथा यह भी कहा था कि "खँडहर वाली बावली साफ हो गई है।" उस बावली में पहुँचने का रास्ता उसी योगिराज की समाधि के पास ही से है। अगर वह बावली खुदकर साफ न हो गई होती तो मैं शाहदरवाजा खोल न सकती क्योंकि ऊपर की तरफ से खँडहर के अन्दर पहुँचना कठिन हो रहा था और भीतर मायारानी के आदमी उस तहखाने में जा पहुँचे थे। वह भी हम लोगों की जिन्दगी का बड़ा कठिन समय था।

कमला—उसी समय राजा शिवदत्त भी वहाँ आकर···

कमलिनी—हाँ, उस समय भी भूतनाथ ने बड़ी मदद दी। रूहा बनकर अगर वह राजा शिवदत्त को पकड़ न लिए होता तो गजब ही हो जाता।[2]

भैरोंसिह—मैं तो कुमार की जिन्दगी से बिल्कुल ही नाउम्मीद हो गया था।

कमलिनी—(कुमार से) हाँ, यह तो बताइये कि आप वहाँ किस तरह पहुँचाये गये थे ? इसमें तो कोई शक नहीं कि आपको मायारानी के आदमियों ने गिरफ्तार किया था मगर इस बात का पता अभी तक न लगा कि उस मकान के अन्दर आप तथा देवीसिंह वगैरह ने क्या देखा कि हँसते-हँसते उसके अन्दर कूद गये[3] और कूदने के बाद क्या हुआ ?

इन्द्रजीतसिह—कूद पड़ने के बाद फिर मुझे तन-बदन की सुध न रही और यही हाल उन सबका भी हुआ जो मेरे पहले उसके अन्दर कूद चुके थे, मगर यह अभी न बताऊँगा कि उसके अन्दर कौन-सी हँसाने वाली चीज थी।

कमलिनी—यही बात हम लोगों ने जब देवीसिंह से पूछी थी तो उन्होंने भी इनकार करके कहा था कि "माफ कीजिए, उस विषय में तब तक कुछ न कहूँगा जब तक इन्द्रजीतसिह मेरे सामने मौजूद न होंगे, क्योंकि उन्होंने इस बात को छिपाने के लिए मुझे सखत ताकीद कर दी है।[4] ताज्जुब है कि आपने अपने साथियों को भी इस तरह की ताकीद कर दी और आज स्वयं भी उसको बताने से इनकार करते हैं !

इन्द्रजीतसिह—उसमें कोई ऐसी बात नहीं थी जिसके बताने से मुझे परहेज हो मगर मैं चाहता हूँ कि वही तमाशा तुम लोगों को तथा और अपने सबको दिखाकर बताऊँ कि उस मकान के अन्दर बस यही था, निःसन्देह तुम लोगों की भी वैसी दशा होगी।

कमलिनी—तो आज ही तमाशा क्यों नहीं दिखाते ?

---

1. देखिए छठवाँ भाग, पहला बयान।
2. देखिए छठवाँ भाग, दूसरा बयान।
3. देखिए छठवाँ भाग, चौथा बयान।
4. देखिए दसवाँ भाग, तीसरा बयान।

इन्द्रजीतसिंह—आज वह तमाशा मैं नहीं दिखा सकता, हाँ, भाई साहब(गोपालसिंह) अगर चाहें तो दिखा सकते हैं, मगर इसके लिए जल्दी ही क्या है ?

लक्ष्मीदेवी—खैर, जाने दीजिये, आखिर एक-न-एक दिन मालूम हो ही जायेगा। अच्छा यह बताइये कि आप जब इस तिलिस्म में या इसके बगल वाले बाग में आये थे तो उस बुड्ढे तिलिस्मी दारोगा से मुलाकात हुई थी या नहीं ?

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, हुई थी, बड़ा शैतान है, क्या तुम लोगों से वह नहीं मिला ?

लक्ष्मीदेवी—भला वह कभी बिना मिले रह सकता है ? उसने तो हम लोगों को भी धोखे में डालना चाहा था, मगर तुम्हारे भाई साहब ने पहले ही उसकी शैतानी से हम लोगों को होशियार कर दिया था, इसलिए हम लोगों का वह कुछ बिगाड़ न सका।

कमलिनी—मगर आपने उसकी बात मान ली और इसलिए उसने भी आपसे खुश होकर आपकी शादी करा दी। आपको तो उसका अहसान मानना चाहिए···

लक्ष्मीदेवी—(कमलिनी को झिड़ककर)फिर तुम उसी रास्ते पर चलीं ! खामखाह एक आदमी को···

इन्द्रजीतसिंह—अबकी अगर वह मुझे मिले तो उसे बिना मारे कभी न छोड़ूँ चाहे जो हो।

इन्द्रजीतसिंह की इस बात पर सब हँस पड़े और इसके बाद लक्ष्मीदेवी ने कुमार से कहा, "अच्छा, अब यह बताइये कि मेरे चले जाने के बाद आपने तिलिस्म में क्या किया और क्या देखा ?"

इसी समय सरयू भी वहाँ आ पहुँची और बोली, "चलिये पहले खा-पी लीजिए तब बातें कीजिये।"

लक्ष्मीदेवी के जिद करने से दोनों कुमारों को उठना पड़ा और भोजन इत्यादि से छुट्टी पाने के बाद फिर उसी ठिकाने बैठकर गप्पें उड़ने लगीं। कुमार ने अपना कुल हाल बयान किया और वे सब आश्चर्य से यह सब कथा सुनती रहीं। इसके बाद कुमार ने इन्दिरा से उसका बाकी किस्सा पूछा।

5

दूसरे दिन तेजसिंह को उसी तिलिस्मी इमारत में छोड़कर और इन्द्रजीतसिंह को साथ लेकर राजा वीरेन्द्रसिंह अपने पिता से मिलने के लिए चुनार गए। मुलाकात होने पर वीरेन्द्रसिंह ने पिता के पैरों पर सिर रखा और उन्होंने आशीर्वाद देने के बाद बड़े प्यार से उठाकर छाती से लगाया और सफर का हाल पूछने लगे।

राजा साहब की इच्छानुसार एकान्त हो जाने पर वीरेन्द्रसिंह ने सब हाल अपने पिता से बयान किया जिसे वे बड़ी दिलचस्पी के साथ सुनते रहे। इसके बाद पिता के साथ-

ही-साथ महल में जाकर अपनी माता से मिले और संक्षेप में सब हाल कहकर बिदा हुए तब चन्द्रकान्ता के पास गए और उसी जगह चपला तथा चम्पा से मिलकर देर तक अपने सफर का दिलचस्प हाल कहते रहे।

दूसरे दिन राजा वीरेन्द्रसिंह अपने पिता के पास एकान्त में बैठे हुए बातों में राय ले रहे थे जब जमानिया से आये हुए एक सवार की इत्तिला मिली जो राजा गोपालसिंह की चिट्ठी लाया था। आज्ञानुसार वह हाजिर किया गया, सलाम करके उसने राजा गोपालसिंह की चिट्ठी दी और तब बिदा लेकर बाहर चला गया।

यह चिट्ठी जो राजा गोपालसिंह ने भेजी थी नाम ही को चिट्ठी थी। असल में यह एक ग्रंथ ही मालूम होता था, जिसमें राजा गोपालसिंह ने दोनों कुमारों, किशोरी, कामिनी, सरयू, तारा, मायारानी और माधवी इत्यादि का खुला सा किस्सा जो कि हम ऊपर के बयानों में लिख आये हैं और जो राजा वीरेन्द्रसिंह को अभी तक मालूम नहीं हुआ था तथा आपने यहाँ का भी कुछ हाल लिख भेजा था और साथ ही यह भी लिखा था कि "आप लोग खँडहर वाली नई इमारत में रहकर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के मिलने का इन्तजार करें" इत्यादि।

राजा सुरेन्द्रसिंह को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि हम और राजा गोपालसिंह असल में एक ही खानदान की यादगार हैं और इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह से भी अब बहुत जल्द मुलाकात हुआ चाहती है, अतः यह बात तय पाई कि सब कोई उसी तिलिस्मी खँडहर वाली नई इमारत में चलकर रहें और उसी जगह भूतनाथ का हाल-चाल मालूम करें। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् राजा सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, महारानी, चन्द्रकान्ता, चपला और चम्पा वगैरह सबकी सवारी वहाँ आ पहुँची और मायारानी, दारोगा तथा कैदियों को भी उसी जगह लाकर रखने का इन्तजाम किया गया।

हम बयान कर चुके हैं कि इस तिलिस्मी खँडहर के चारों तरफ अब बहुत बड़ी इमारत बनकर तैयार हो गई है जिसके बनवाने में इन्द्रजीतसिंह ने अपनी बुद्धिमानी का नमूना बड़ी खूबी के साथ दिखाया है—इत्यादि अतः इस समय इन लोगों को यहाँ ठहरने में तकलीफ किसी तरह की नहीं हो सकती थी बल्कि हर तरह का आराम था।

पश्चिम तरफ वाली इमारत के ऊपर वाले खण्डों में कोठरियों और बालाखानों के अतिरिक्त बड़े-बड़े कमरे थे, जिनमें से चार कमरे इस समय बहुत अच्छी तरह सजाए गये थे और उनमें महाराज सुरेन्द्रसिंह, इन्द्रजीतसिंह, वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह का डेरा था। यहाँ भूतनाथ के डेरे वाला बारह नम्बर का कमरा ठीक सामने पड़ता था और वह तिलिस्मी चबूतरा भी यहाँ से उतना ही साफ दिखाई देता था, जिसका भूतनाथ के डेरे से।

इन कमरों के पिछले हिस्से में बाकी लोगों का डेरा था और बचे हुए ऐयारों को इमारत के बाहरी हिस्से में स्थान मिला था और उस तरफ थोड़े से फौजी सिपाहियों और शागिर्द पेशे वालों को भी जगह दी गई थी।

इस जगह राजा साहब और इन्द्रजीतसिंह तथा तेजसिंह के भी आ जाने से भूतनाथ तरद्दुद में पड़ गया और सोचने लगा कि 'उस तिलिस्मी चबूतरे के अन्दर से

निकलकर मुझसे मुलाकात करने वाले या बलभद्रसिंह को ले जाने वाले आदमियों का हाल कहीं राजा साहब या उनके ऐयारों को मालूम न हो जाये और मैं एक नई आफत में न फँस जाऊँ, क्योंकि उनका पुनः उस चबूतरे के नीचे से निकलकर मुझसे मिलने आना कोई आश्चर्य की बात नहीं है।'

रात आधी से कुछ ज्यादा जा चुकी है। राजा वीरेन्द्रसिंह अपने कमरे के बाहर बरामदे में फर्श पर बैठे अपने मित्र तेजसिंह से धीरे-धीरे कुछ बातें कर रहे हैं। कमरे के अन्दर इस समय एक हल्की रोशनी हो रही है सही, मगर कमरे का दरवाजा घूमा रहने के सबब यह रोशनी वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह तक नहीं पहुँच रही थी जिससे ये दोनों एक प्रकार से अंधकार में बैठे हुए थे और दूर से इन दोनों को कोई देख नहीं सकता था। नीचे बाग में लोहे के बड़े-बड़े खम्भों पर लालटेनें जल रही थीं, फिर भी बाग की घनी सब्जी और लताओं का सहारा उससे छिपकर घूमने वालों के लिए कम न था। उस दालान में कंदील जल रही थी जिसमें तिलिस्मी चबूतरा था और इस समय राजा वीरेन्द्रसिंह की निगाह भी जो तेजसिंह से बात कर रहे थे, उसी तिलिस्मी चबूतरे की तरफ ही थी।

यकायक चबूतरे के निचले हिस्से में रोशनी देखकर राजा वीरेन्द्रसिंह को ताज्जुब हुआ और उन्होंने तेजसिंह का ध्यान भी उसी तरफ दिलाया। उस रोशनी के सबब से साफ मालूम होता था कि चबूतरे का अगला हिस्सा, जो वीरेन्द्रसिंह की तरफ पड़ता था, किवाड़ के पल्ले की तरफ जमीन के साथ लग गया है और दो आदमी एक गठरी लटकाये हुए चबूतरे से बाहर की तरफ ला रहे हैं। उन दोनों के बाहर आने के साथ ही चबूतरे के अन्दर वाली रोशनी बन्द हो गई और उन दोनों में से एक ने दूसरे के कंधे पर चढ़कर वह कंदील भी बुझा दी जो उस दालान में जल रही थी।

कंदील बुझ जाने से वहाँ अंधकार हो गया और इसके बाद मालूम न हुआ कि वहाँ क्या हुआ या क्या हो रहा है। तेजसिंह और वीरेन्द्रसिंह उसी समय उठ खड़े हुए और हाथ में नंगी तलवार लिए तथा एक आदमी को लालटेन लेकर वहाँ जाने की आज्ञा देकर उस दालान की तरफ रवाना हुए जिसमें तिलिस्मी चबूतरा था, मगर वहाँ जाकर सिवाय एक गठरी के जो उसी चबूतरे के पास पड़ी हुई थी और कुछ नजर न आया। जब आदमी लालटेन लेकर वहाँ पहुँचा तो तेजसिंह ने अच्छी तरह घूमकर जाँच की मगर नतीजा कुछ भी न निकला, न तो यहाँ कोई आदमी दिखाई दिया और न उस चबूतरे ही में किसी तरह के निशान या दरवाजे का पता लगा।

तेजसिंह ने जब वह गठरी खोली तो एक आदमी पर निगाह पड़ी। लालटेन की रोशनी में बड़े गौर देखने पर भी तेजसिंह या वीरेन्द्रसिंह उसे पहचान न सके अतः तेजसिंह ने उसी समय जफील बजाई जिसे सुनते ही कई सिपाही और खिदमतगार वहाँ इकट्ठे हो गये। इसके बाद वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह उस आदमी को उठवाकर राजा सुरेन्द्रसिंह के पास ले आए जो इस समय का शोरगुल सुनकर जाग चुके थे और इन्द्रजीतसिंह को अपने पास बुलवाकर कुछ बातें कर रहे थे।

उस बेहोश आदमी पर निगाह पड़ते ही इन्द्रजीतसिंह पहचान गये और बोल उठे—"यह तो बलभद्रसिंह हैं!"

वीरेन्द्रसिंह---(ताज्जुब से) क्या ? यही बलभद्रसिंह हैं जो यहाँ से गायब हो गये थे ?

इन्द्रलीतसिंह—हाँ, यही हैं, ताज्जुब नहीं कि जिस अनूठे ढंग से यहाँ पहुँचाए गये हैं उसी ढंग से गायब भी हुए हों।

सुरेन्द्रसिंह—जरूर ऐसा ही हुआ होगा, भूतनाथ पर व्यर्थ का शक किया जाता था। अच्छा, अब इन्हें होश में लाने की फिक्र करो और भूतनाथ को बुलाओ।

तेजसिंह—जो आज्ञा !

सहज ही में बलभद्रसिंह चैतन्य हो गये और तब तक भूतनाथ भी वहाँ आ पहुँचा। राजा सुरेन्द्रसिंह, इन्द्रजीतसिंह और तेजसिंह को सलाम करने के बाद भूतनाथ बैठ गया और बलभद्रसिंह से बोला—

भूतनाथ—कहिये, कृपा-निधान, आप कहाँ छिप गये थे और कैसे प्रकट हो गये ? सभी को मुझ पर सन्देह हो रहा है।

पाठक, इसके जवाब में बलभद्रसिंह ने यह नहीं कहा कि 'तुम्हीं ने तो मुझे बेहोश किया था' जिसके सुनने की शायद आप इस समय आशा करते होंगे, बल्कि बलभद्रसिंह ने यह जवाब दिया कि "नहीं, भूतनाथ, तुम पर कोई क्यों शक करेगा ? तुमने ही तो मेरी जान बचाई है और तुम्हीं मेरे साथ दुश्मनी करोगे, ऐसा भला कौन कह सकता है ?"

तेजसिंह—खैर, यह तो बताइये कि आपको कौन ले गया था और फिर कैसे ले वापस आया ?

बलभद्रसिंह—इसका पता तो मुझे भी अभी तक नहीं लगा कि वे कौन थे जिनके पाले मैं पड़ गया था हाँ, जो कुछ मुझ पर बीती है उसे अर्ज कर सकता हूँ, मगर इस समय नहीं क्योंकि मेरी तबीयत कुछ खराब हो रही है। आशा है कि अगर मैं दो-तीन घण्टे सो सकूँगा तो सुबह तक ठीक हो जाऊँगा।

सुरन्द्रसिंह---कोई चिन्ता नहीं, आप इस समय जाकर आराम कीजिए।

इन्द्रजीतसिंह—यदि इच्छा हो तो अपने उसी पुराने डेरे में भूतनाथ के पास रहिए, नहीं तो कहिए आपके लिए दूसरे डेरे का इन्तजाम कर दिया जाये।

बलभद्रसिंह---जी नहीं, मैं अपने मित्र भूतनाथ के साथ ही रहना पसन्द करता हूँ।

बलभद्रसिंह को साथ लिए भूतनाथ अपने डेरे की तरफ रवाना हुआ, इधर राजा सुरेन्द्रसिंह, इन्द्रजीत, वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह उस तिलिस्मी चबूतरे तथा बलभद्रसिंह के बारे में बातचीत करने लगे तथा अन्त में यह निश्चय किया कि बलभद्रसिंह जो कुछ कहेंगे उस पर भरोसा न करके अपनी तरफ से इस बात का पता लगाना चाहिए कि उस तिलिस्मी चबूतरे की राह से आने-जाने वाले कौन हैं। उस दालान में ऐयारों का गुप्त पहरा मुकर्रर करना चाहिए।

6

कुमार की आज्ञानुसार इन्दिरा ने अपना किस्सा यों बयान किया—

इन्दिरा—मैं कह चुकी हूँ कि ऐयारी का कुछ सामान लेकर जब मैं उस खोह के बाहर निकली और पहाड़ तथा जंगल पार करके मैदान में पहुँची, तो यकायक मेरी निगाह ऐसी चीज पर पड़ी जिसने मुझे चौंका दिया और मैं घबराकर उस तरफ देखने लगी।

जिस चीज को देखकर मैं चौंकी, वह एक कपड़ा था जो मुझसे थोड़ी ही दूर पर ऊँचे पेड़ की डाल के साथ लटक रहा था और उस पेड़ के नीचे मेरी माँ बैठी हुई कुछ सोच रही थी। जब मैं दौड़ती हुई उसके पास पहुँची तो वह ताज्जुब-भरी निगाहों से मेरी तरफ देखने लगी, क्योंकि उस समय ऐयारी से मेरी सूरत बदली हुई थी। मैंने बड़ी खुशी के साथ कहा, "माँ, तू यहाँ कैसे आ गई?" जिसे सुनते ही उसने उठकर मुझे गले से लगा लिया और कहा, "इन्दिरा, यह तेरा क्या हाल है? क्या तूने ऐयारी सीख ली है?" मैंने मुख्तसिर में अपना सब हाल बयान किया मगर उसने अपने विषय में केवल इतना ही कहा कि अपना किस्सा मैं आगे चलकर तुझसे बयान करूँगी, इस समय केवल इतना ही कहूँगी कि दारोगा ने मुझे एक पहाड़ी में कैद किया था जहाँ से एक स्त्री की सहायता पाकर परसों मैं निकल भागी, मगर अपने घर का रास्ता न पाने के कारण इधर-उधर भटक रही हूँ।

अफसोस उस समय मैंने बड़ा ही धोखा खाया और उसके सबब से मैं बड़े संकट में पड़ गई, क्योंकि वह वास्तव में मेरी माँ न थी, बल्कि मनोरमा थी और यह हाल मुझे कई दिनों के बाद मालूम हुआ। मैं मनोरमा को पहचानती न थी। मगर पीछे मालूम हुआ कि वह मायारानी की सखियों में से थी और गौहर के साथ वह वहाँ तक गई थी, मगर इसमें भी कोई शक नहीं कि वह बड़ी शैतान, बेदर्द और दुष्टा थी। मेरी किस्मत में दुःख भोगना बदा हुआ था जो मैं उसे माँ समझकर कई दिनों तक उसके साथ रही और उसने भी नहाने-धोने के समय अपने को मुझसे बहुत बचाया। प्रायः कई दिनों के बाद वह नहाया करती और कहती कि मेरी तबीयत ठीक नहीं है।

साथ ही इसके यह भी शक हो सकता है कि उसने मुझे जान से क्यों नहीं मार डाला। इसके जवाब में मैं कह सकती हूँ कि वह मुझे जान से मार डालने के लिए तैयार थी। मगर वह भी उसी कम्बख्त दारोगा की तरह मुझसे कुछ लिखवाना चाहती थी। अगर मैं उसकी इच्छानुसार लिख देती तो वह निःसन्देह मुझे मारकर बखेड़ा तय करती मगर ऐसा न हुआ।

जब उसने मुझसे यह कहा कि 'रास्ते का पता न जानने के कारण मैं भटकती फिरती हूँ', तब मुझे एक तरह का तरद्दुद हुआ, मगर मैंने जो कुछ जोश के साथ उसी समय जवाब दिया—"कोई चिन्ता नहीं, मैं अपने मकान का पता लगा लूँगी।"

मनोरमा—मगर साथ ही इसके मुझे एक बात और भी कहनी है।

मैं—वह क्या ?

मनोरमा—मुझे ठीक खबर लगी है कि कम्बख्त दारोगा ने तेरे बाप को गिरफ्तार कर लिया है । और इस समय वह काशी में मनोरमा के मकान में कैद है ।

मैं—मनोरमा कौन ?

मनोरमा—राजा गोपालसिंह की स्त्री लक्ष्मीदेवी (जिसे अब लोग मायारानी के नाम से पुकारते हैं) की सखी···

मैं—असली लक्ष्मीदेवी से तो गोपालसिंह की शादी हुई ही नहीं । वह बेचारी तो···

मनोरमा—(बात काटकर)हाँ-हाँ, यह हाल मुझे भी मालूम है । मगर इस समय जो राजरानी बनी हुई है, लोग तो उसी को लक्ष्मीदेवी समझे हुए हैं, इसी से मैंने उसे लक्ष्मीदेवी कहा ।

मैं—(आँखों में आँसू भरकर) तो क्या मेरा बाप भी कैद हो गया ?

मनोरमा—बेशक, मैंने उसके छुड़ाने का भी बन्दोबस्त कर लिया है, क्योंकि तुझे तो शायद मालूम ही होगा कि तेरे बाप ने मुझे भी थोड़ी-बहुत ऐयारी सिखा रखी है । अतः वही ऐयारी इस समय मेरे काम आई और आवेगी ।

मैं—(ताज्जुब से) मुझे नहीं मालूम कि पिताजी ने तुम्हें ऐयारी कब सिखाई ।

मनोरमा—ठीक है, तू उन दोनों बहुत नादान थी, इसलिए आज वे बातें तुझे याद नहीं हैं पर मेरा मतलब यही है कि मैं कुछ ऐयारी भी जानती हूँ और इस समय तेरे बाप को छुड़ा सकती हूँ ।

मनोरमा की यह बात ऐसी थी कि मुझे उस पर शक हो सकता था । मगर उसकी मीठी-मीठी बातों ने मुझे धोखे में डाल दिया और सच तो यह है कि मेरी किस्मत में दुःख भोगना बदा था, अब मैंने कुछ सोचकर यही जवाब दिया कि "अच्छा जो उचित समझो सो करो । ऐयारी तो थोड़ी-सी मुझे भी आ गई है और इसका हाल भी मैं तुम्हें कह चुकी हूँ कि चम्पा ने मुझे अपनी चेली बना लिया है ।"

मनोरमा—हाँ, ठीक है । तो अब सीधे काशी ही चलना चाहिए और वहाँ चलने का सबसे ज्यादा सुभीता डोंगी है, इसलिए जहाँ तक जल्द हो सके, गंगा किनारे चलना चाहिए, जहाँ कोई न कोई डोंगी मिल ही जायगी ।

मैं—बहुत अच्छा, चलो ।

उसी समय हम लोग गंगा की तरफ रवाना हो गये और उचित समय पर वहाँ पहुँचकर अपने योग्य डोंगी किराये पर ली । डोंगी किराये पर करने में किसी तरह की तकलीफ न हुई, क्योंकि वास्तव में डोंगी वाले भी उसी दुष्ट मनोरमा के नौकर थे, मगर उस कम्बख्त ने ऐसे ढंग से बातचीत की कि मुझे किसी तरह का शक न हुआ या यों समझिए कि मैं अपनी माँ से मिलकर एक तरह से कुछ निश्चिन्त सी हो रही थी । रास्ते ही में मनोरमा ने मल्लाहों से इस किस्म की बातें भी शुरू कर दीं कि 'काशी पहुँचकर तुम्हीं लोग हमारे लिए एक छोटा-सा मकान भी किराए पर तलाश कर देना, इसके बदले मैं तुम्हें बहुत-कुछ इनाम दूँगी ।'

मुख्तसिर यह कि हम लोग रात के समय काशीजी पहुँचे। मल्लाहों द्वारा मकान का बन्दोबस्त हो गया और हम लोगों ने उसमें जाकर डेरा भी डाल दिया। एक दिन उसमें रहने के बाद मनोरमा ने कहा कि "बेटी, तू इस मकान के अन्दर दरवाजा बन्द करके बैठ तो मैं जाकर मनोरमा का हाल दरियाफ्त कर आऊँ। अगर मौका मिला तो मैं उसे जान से मार डालूँगी और तब स्वयं मनोरमा बनकर उसके मकान, असबाब और नौकरों पर कब्जा करके तुझे लेने के लिए यहाँ आऊँगी, उस समय तू मुझे मनोरमा की सूरत-शक्ल में देखकर ताज्जुब न करना, जब मैं तेरे सामने आकर 'चापगेच' शब्द कहूँ, तब समझ जाना कि यह वास्तव में मेरी माँ है, मनोरमा नहीं। क्योंकि उस समय सब सिपाही-नौकर मुझे मालिक समझकर आज्ञानुसार मेरे साथ होंगे। तेरे बारे में मैं उन लोगों में यही मशहूर करूँगी कि यह मेरी रिश्तेदार है, इसे मैंने गोद लिया है और अपनी लड़की बनाया है। तेरी जरूरत की सब चीजें यहाँ मौजूद हैं, तुझे किसी तरह की तकलीफ न होगी।"

इत्यादि बहुत-सी बातें समझा-बुझाकर मनोरमा मकान के बाहर हो गई और मैंने भीतर से दरवाजा बन्द कर दिया, मगर जहाँ तक मेरा खयाल है, वह मुझे अकेला छोड़कर न गई होगी बल्कि दो-चार आदमी उस मकान के दरवाजे पर या इधर-उधर हिफाजत के लिए जरूर लगा गई होगी।

ओफ ओह, उसने अपनी बातों और तरकीबों का ऐसा मजबूत जाल बिछाया कि मैं कुछ कह नहीं सकती। मुझे उस पर रत्ती-भर भी किसी तरह का शक न हुआ और मैं पूरा धोखा खा गई। इसके दूसरे ही दिन तक वह मनोरमा बनी हुई कई नौकरों को साथ लिए मेरे पास पहुँची और 'चापगेज' शब्द कहकर मुझे अपना परिचय दिया। मैं यह समझकर बहुत प्रसन्न हुई कि माँ ने मनोरमा को मार लिया, अब मेरे पिता भी कैद से छूट जायेंगे। अब जिस रथ पर सवार होकर मुझे लेने के लिए आई थी, उसी पर मुझे अपने साथ बैठाकर वह अपने घर ले गई और उस समय मैं हर तरह से उसके कब्जे में पड़ गई।

मनोरमा के घर पहुँचकर मैं उस सच्ची मुहब्बत को खोजने लगी जो एक माँ को अपने बच्चे के साथ होती है, मगर मनोरमा में वह बात कहाँ से आती? फिर भी मुझे इस बात का गुमान न हुआ कि यहाँ धोखे का जाल बिछा हुआ है जिसमें मैं फँस गई हूँ, बल्कि मैंने यह समझा कि वह मेरे पिता को छुड़ाने की फिक्र में लगी हुई है और इसी से मेरी तरफ ध्यान नहीं देती, और वह मुझसे घड़ी-घड़ी यही बात कहा भी करती कि 'बेटी, मैं तेरे बाप को छुड़ाने की फिक्र में पागल हो रही हूँ।'

जब तक मैं उसके घर में बेटी कहला कर रही, तब तक न तो उसने कभी स्नान किया और न अपना शरीर ही देखने का कोई ऐसा मौका मुझे दिया जिसमें मुझको शक होता कि यह मेरी माँ नहीं, बल्कि दूसरी औरत है। और हाँ मुझे भी वह असली सूरत में रहने नहीं देती थी, चेहरे में कुछ फर्क डालने के लिए उसने एक तेल बनाकर मुझे दे दिया था जिसे दिन में एक या दो दफे मैं नित्य लगा लिया करती थी। इससे केवल मेरे रंग में फर्क पड़ गया था और कुछ नहीं।

उसके यहाँ रहने वाले लोग मेरी खूब इज्जत करते और जो कुछ मैं कहती, उसे तुरन्त ही मान लेते, मगर मैं उस मकान के हाते के बाहर जाने का इरादा नहीं कर सकती थी। कभी अगर ऐसा करती तो सभी लोग मना करते और रोकने को तैयार हो जाते।

इसी तरह वहाँ रहते मुझे कई दिन बीत गये। एक दिन जब मनोरमा रथ पर सवार होकर कहीं बाहर गई थी, मैं समझती हूँ कि मायारानी से मिलने गई होगी, संध्या के समय जब थोड़ा-सा दिन बाकी था, मैं धीरे-धीरे बाग में टहल रही थी कि यकायक किसी का फेंका हुआ पत्थर का छोटा-सा टुकड़ा मेरे सामने आकर गिरा था। जब मैंने ताज्जुब से उसे देखा तो उसमें बँधे कागज के एक पुरजे पर मेरी निगाह पड़ी। मैंने झट उठा लिया और पुर्जा खोलकर पढ़ा, उसमें यह लिखा हुआ था—

"अब मुझे निश्चय हो गया कि तू 'इन्दिरा' है, अब तुझे होशियार करे देता हूँ और कहे देता हूँ कि तू वास्तव में मायारानी की सखी मनोरमा के फन्दे में फँसी हुई है। यह तेरी माँ बनकर तुझे फँसा लाई है और राजा गोपालसिंह के दारोगा की इच्छानुसार अपना काम निकालने के बाद तुझे मार डालेगी। मुझे जो कुछ कहना था कह दिया, अब जो तू उचित समझे कर। तुझे धर्म की शपथ है, इस पुर्जे को पढ़कर तुरन्त फाड़ दे।"

मैंने उस पुर्जे को पढ़ने के बाद उसी समय टुकड़े-टुकड़े करके वहीं फेंक दिया और घबरा कर चारों तरफ देखने अर्थात् उस आदमी को ढूँढ़ने लगी जिसने वह पत्थर का टुकड़ा फेंका था, मगर कुछ पता न लगा और न कोई मुझे दिखाई ही पड़ा।

उस पुर्जे के पढ़ने से जो कुछ मेरी हालत हुई, मैं बयान नहीं कर सकती। उस समय मैं मनोरमा के विषय में ज्यों-ज्यों पिछली बातों पर ध्यान देने लगी, त्यों-त्यों मुझे निश्चय होता गया कि यह वास्तव में मनोरमा है, मेरी माँ नहीं। और अब अपने किये पर पछताने और अफसोस करने लगी कि क्यों उस खोह के बाहर पैर रखा और आफत में फँसी ?

उसी समय से मेरे रहन-सहन का ढंग भी बदल गया और मैं दूसरी ही फिक्र में पड़ गई। सबसे ज्यादा फिक्र मुझे उसी आदमी का पता लगाने की हुई जिसने वह पुर्ज़ा मेरी तरफ फेंका था। मैं उसी समय वहाँ से हटकर मकान में चली गई, इस खयाल से कि जिस आदमी ने मेरी तरफ वह पुर्जा फेंका था और उसे फाड़ डालने के लिए कसम दी थी, वह जरूर मनोरमा से डरता होगा और यह जानने के लिए कि मैंने पुर्जा फाड़कर फेंक दिया या नहीं, उस जगह पर जरूर जायगा जहाँ (बाग में) टहलते समय मुझे पुर्जा मिला था।

जब मैं छत पर चढ़कर और छिपकर उस तरफ देखने लगी जहाँ मुझे वह पुर्जा मिला था तो एक आदमी को धीरे-धीरे टहलकर उस तरफ जाते देखा। जब वह उस ठिकाने पर पहुंच गया तब उसने इधर-उधर देखा और सन्नाटा पाकर पुर्जे के उन टुकड़ों को चुन लिया जो मैंने फेंके थे और उन्हें कमर में छिपाकर उसी तरह धीरे-धीरे टहलता हुआ उस मकान की तरफ चला आया जिसकी छत पर से मैं यह सब तमाशा देख रही थी। जब वह मकान के पास पहुँचा, तब मैंने उसे पहचान लिया। मनोरमा से बातचीत

करते समय मैं कई दफे उसका नाम 'नानू' सुन चुकी थी ।

इन्दिरा अपना किस्सा यहाँ तक बयान कर चुकी थी कि कमलिनी ने चौंककर इन्दिरा से पूछा, "क्या नाम लिया, नानू ?"

इन्दिरा—हाँ, उसका नाम नानू था ।"

कमलिनी—वह तो इस लायक नहीं था कि तेरे साथ ऐसी नेकी करता और तुझे आने वाली आफत से होशियार कर देता । वह बड़ा ही शैतान और पाजी आदमी था । ताज्जुब नहीं कि किसी दूसरे ने तेरे पास वह पुर्जा फेंका और नानू ने देख लिया हो और उसके साथ दुश्मनी की नीयत से उन टुकड़ों को बटोरा हो ।

इन्दिरा—(बात काटकर) बेशक ऐसा ही था इस बारे में भी मुझे धोखा हुआ जिसके सबब से मेरी तकलीफ बढ़ गई, जैसा कि मैं आगे चलकर बयान करूंगी ।

कमलिनी—ठीक है, मैं उस कम्बख्त नानू को खूब जानती हूँ । जब मैं मायारानी के यहाँ रहती थी, तब वह मायारानी और मनोरमा की नाक का बाल हो रहा था और उनकी खैरखाही के पीछे प्राण दिए देता था, मगर अन्त में न मालूम क्या सबब हुआ कि मनोरमा या नागर ही ने उसे फाँसी देकर मार डाला । इसका सबब मुझे आज तक मालूम न हुआ और न मालूम होने की आशा ही है, क्योंकि उन लोगों में से इसका सबब कोई भी न बतावेगा । मैं भी उसके हाथ से बहुत तकलीफ उठा चुकी हूँ जिसका बदला तो मैं ले न सकी, मगर उसकी लाश पर थूकने का मौका मुझे जरूर मिल गया । (लक्ष्मी-देवी की तरफ देख के) जब मैंने भूतनाथ के कागजात लेने के लिए मनोरमा के मकान पर जाकर नागर को धोखा दिया, तब मैंने अपनी कोठरी केबगल में इसीकी लटकती हुई लाश पर थूका था ।[1] उसी कोठरी में मैंने अफसोस के साथ 'बरदेबू' को भी मुर्दा पाया था, उसके मरने का सबब भी मुझे न मालूम हुआ और न होगा । वास्तव में 'बरदेबू' बड़ा ही नेक आदमी था और उसने मेरे साथ बड़ी नेकियाँ की थीं । मुझे यह खबर उसी ने दी थी कि 'अब मायारानी तुम्हें मार डालने का बन्दोबस्त कर रही है ।' वह उन दिनों खास बाग के मालियों का दारोगा था ।

इन्दिरा—बेशक, बरदेबू बड़ा नेक आदमी था, असल में वह पुर्जा उसी ने मेरी तरफ फेंका था और कम्बख्त नानू ने देख लिया था, मगर मैं धोखा खा गई, मेरी समझ में आया कि वह पुर्जा नानू का फेंका हुआ है और उन टुकड़ों को इस खयाल से उसने चन लिया है कि कोई देखने न पावे या किसी दुश्मन के हाथ में पड़कर मेरा···

कमलिनी—अच्छा फिर आगे क्या हुआ, सो कहो ।

इन्दिरा—जब मैंने यह समझ लिया कि यह नेकी नानू ने ही मेरे साथ की है और वह टहलता हुआ मकान के पास आ गया, तो मैं छत पर से उतरकर पुनः बाग में आई और टहलती हुई उसके पास वहुँची ।

मैं—(नानू से) आपने मुझ पर बड़ी कृपा की है जो मुझे आने वाली आफत से होशियार कर दिया । मैं अभी तक मनोरमा को अपनी माँ ही समझ रही थी ।

---

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, सातवाँ भाग, सातवाँ बयान ।

नानू—ठीक है, मगर तुम्हें मुझसे ज्यादा बातचीत न करनी चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि लोगों को मुझ पर शक हो जाय।

मैं—इस समय यहाँ कोई भी नहीं है इसलिए मैं यह प्रार्थना करने आई हूँ कि जिस तरह आपने मुझ पर इतनी कृपा की है, उसी तरह मेरे निकल भागने में भी मदद देकर अनन्त पुण्य के भागी हों।

नानू—अच्छा, मैं इस काम में भी तुम्हारी मदद करूँगा, मगर तुम भागने में जल्दी न करना, नहीं तो सब काम चौपट हो जाएगा, क्योंकि यहाँ के सभी आदमी तुम पर गहरी हिफाजत की निगाह रखते हैं और 'बरदेबू' तो तुम्हारा पूरा दुश्मन है, उससे कभी बातचीत न करना, वह बड़ा ही धोखेबाज ऐयार है। बरदेबू को जानती हो न ?

मैं—हाँ, मैं बरदेबू को जानती हूँ।

नानू—बस, तो तुम यहाँ से जल्दी चली जाओ, मैं फिर किसी समय किसी बहाने से तुम्हारे पास आऊँगा तब बातें करूँगा।

मैं खुशी-खुशी वहाँ से हटी और बाग के दूसरे हिस्से में जाकर टहलने लगी जहाँ से पहरे वाले बखूबी देख सकते थे।

जैसे-जैसे अंधकार बढ़ता जाता था, मुझ पर हिफाजत की निगाह भी बढ़ती जाती थी, यहाँ तक कि आधी घड़ी रात जाने पर लौंडियों और खिदमतगारों ने मुझे मकान के अन्दर जाने पर मजबूर किया और मैं भी लाचार होकर अपने कमरे में आ बिस्तर पर लेट गई। सभी ने खाने-पीने के लिए कहा, मगर इस समय मुझे खाना-पीना कहाँ सूझता, सो बहाना करके टाल दिया और लेटे-लेटे सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिए !

मैं समझे हुए थी कि नानू मेरे पास आकर मुझे यहाँ से निकल जाने के विषय में राय देगा जैसा कि वह वादा कर चुका था, मगर मेरा खयाल गलत था, आधी रात तक इन्तजार करने पर भी वह मेरे पास न आया। इसके अतिरिक्त रोज मेरी हिफाजत के लिए रात को दो लौंडियाँ मेरे कमरे में रहती थीं। मगर आज चार लौंडियों को रोज से ज्यादा मुस्तैदी के साथ पहरा देते देखा। उस समय मुझे खुटका हुआ, मैं सोचने लगी कि निःसदेह इन लोगों को मेरे बारे कुछ सन्देह हो गया है। मैं नींद न पड़ने और सिर में दर्द होने से बेचैनी दिखाकर उठी और कमरे में टहलने लगी, यहाँ तक कि दरवाजें के बाहर निकलकर सहन में पहुँची तब देखा कि आज तो बाहर भी पहरे का इन्तजाम बहुत सख्त हो रहा है। मैंने प्रकट में किसी तरह का आश्चर्य नहीं किया और पुनः अपने बिस्तरे पर आकर लेट रही और तरह-तरह की बातें सोचने लगी। उसी समय मुझे निश्चय हो गया कि उस पुर्जे को फेंकने वाला नानू नहीं कोई दूसरा है, अगर नानू होता तो इस बात की खबर फैल न जाती, क्योंकि उन टुकड़ों को तो नानू ने मेरे सामने ही बटोर लिया था। अफसोस, मैंने बहुत बुरा किया, अगर वे थोड़े से शब्द, मैं न कहती तो नानू सहज में ही उन टुकड़ों से कोई मतलब नहीं निकाल सकता था, मगर अब तो असल भेद खुल गया और मेरे पैरों में दोहरी जंजीर पड़ गई, अतः अब क्या करना चाहिए !

रात भर मुझे नींद न आई और सुबह को जैसे ही मैं बिछावन पर से उठी तो

सुना कि मनोरमा आ गई है। कमरे के बाहर निकलकर सहन में गई जहाँ मनोरमा एक कुर्सी पर बैठी नानू से बात कर रही थी। दो लौंडियाँ उसके पीछे खड़ी थीं और उसके बगल में दो-तीन खाली कुर्सियाँ भी पड़ी हुई थीं। मनोरमा ने अपने पास एक कुर्सी खींच कर मुझे बड़े प्यार से उस पर बैठने के लिए कहा और जब मैं बैठ गई तो बातें भी होने लगीं !

मनोरमा—(मुझसे) बेटी, तू जानती है कि यह (नानू की तरफ बताकर)आदमी हमारा कितना बड़ा खैरखाह है !

मैं—माँ, शायद यह तुम्हारा खैरखाह होगा, मगर मेरा तो पूरा दुश्मन है।

मनोरमा—(चौंककर) क्यों-क्यों, सो क्यों ?

मैं—सैकड़ों मुसीबतें झेल कर तो मैं तुम्हारे पास पहुँची और तुमने भी मुझे अपनी लड़की बनाकर मेरे साथ जो सलूक किया, वह प्रायः यहाँ के रहने वाले सभी कोई जानते होंगे, मगर यह नानू नहीं चाहता कि मैं अब भी किसी तरह सुख की नींद सो सकूँ। कल शाम को जब मैं बाग में टहल रही थी तो यह मेरे पास आया और एक पुर्जा मेरे हाथ में देकर बोला कि 'इसे पढ़ और होशियार हो जा, मगर खबरदार, मेरा नाम न लेना।'

नानू—(मेरी बात काटकर क्रोध से) क्यों मुझ पर तूफान बाँध रही हो ! क्या यह बात मैंने तुमसे कही थी :

मैं—(रंग बदलकर) बेशक, तूने पुर्जा देकर यह बात कही थी और मुझे भाग जाने के लिए भी ताकीद की ! आँखें क्यों दिखाता है ! जो बातें तूने···

मनोरमा—(बात काटकर) अच्छा-अच्छा, तू क्रोध मत कर, जो कुछ होगा, मैं समझ लूँगी। तू जो कहती थी उसे पूरा कर। (नानू से) बस, तुम चुपचाप बैठे रहो, जब यह अपनी बात पूरी कर ले तब जो कुछ कहना हो कहना।

मैं—मैंने उस पुर्जे को खोलकर पढ़ा तो उसमें यह लिखा हुआ पाया—"जिसे तू अपनी माँ समझती है, वह मनोरमा है। तुझे अपना काम निकालने के लिए यहाँ ले आई है, काम निकल जाने पर तुझे जान से मार डालेगी, अब जहाँ तक जल्द हो सके, निकल भागने की फिक्र कर।" इत्यादि और भी कई बातें उसमें लिखी हुई थीं, जिन्हें पढ़कर मैं चौंकी और बात बनाने के तौर तर नानू से बोली, "आपने बड़ी मेहरबानी की जो मुझे होशियार कर दिया, अब भागने में भी आप ही मेरी मदद करेंगे तो जान बचेगी।" इसके जवाब में इसने खुश होकर कहा कि तुम्हें मुझसे ज्यादा बातचीत न करनी चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि लोगों को मुझ पर शक हो जाय। मैं भागने में भी तुम्हारी मदद करूँगा, मगर इस बात को बहुत छिपाये रखना क्योंकि यहाँ बरदेबू नाम का आदमी तुम्हारा दुश्मन है।" इत्यादि—

नानू—(बात काट कर) हाँ, बेशक यह बात मैंने तुमसे जरूर कही थी कि···

मैं—धीरे-धीरे तुम सभी बात कबूल करोगे, मगर ताज्जुब यह है कि मना करने पर भी तुम टोके बिना नहीं रहते।

मनोरमा—(क्रोध से) क्या तुम चुप न रहोगे ?

इसका जवाब नानू ने कुछ न दिया और चुप हो रहा। इसके बाद मनोरमा की इच्छानुसार मैंने यों कहना शुरू किया —

मैं—मैंने इस पुर्जे को पढ़कर टुकड़े-टुकड़े कर डाला और फेंक दिया। इसके बाद नानू भी चला गया और मैं भी यहाँ आकर छत के ऊपर चढ़ गई और छिपकर उसी तरफ देखने लगी, जहाँ उस पुर्जे को फाड़ कर फेंक आई थी। थोड़ी देर बाद पुनः इसको (नानू को) उसी जगह पहुँचकर कागज के उन टुकड़ों को चुनते और बटोरते देखा। जब यह उन टुकड़ों को बटोर कर कमर में रख चुका और इस मकान की तरफ आया तो मैं भी तुरन्त छत पर से उतर कर इसके पास चली आई और बोली, "कहिए, अब मुझे कब यहाँ से बाहर कीजिएगा ?" इसके जवाब में इसने कहा कि "मैं रात को एकान्त में तुम्हारे पास आऊँगा, तो बातें करूँगा।" इतना कहकर यह चला गया और पुनः मैं बाग में टहलने लगी। जब अन्धकार हुआ, तो मैं घूमती हुई (हाथ का इशारा करके) उस झाड़ी की तरफ से निकली और किसी के बात की आहट पा पैर दबाती हुई आगे बढ़ी, यहाँ तक कि थोड़ी ही दूर पर दो आदमियों के बात करने की आवाज साफ-साफ सुनाई देने लगी। मैंने आवाज से नानू को तो पहचान लिया, मगर दूसरे को न पहचान सकी कि वह कौन था, हाँ पीछे मालूम हुआ कि वह बरदेबू था।

मनोरमा—अच्छा, खैर यह बता कि इन दोनों में क्या बातें हो रही थीं ?

मैं—सब बातें तो मैं सुन न सकी, हाँ, जो कुछ सुनने और समझने में आया सो कहती हूँ। इस नानू ने दूसरे से कहा कि 'नहीं-नहीं, अब मैं अपना इरादा पक्का कर चुका हूँ और उस छोकरी को भी मेरी बातों पर पूरा विश्वास हो चुका है, निःसन्देह उसे ले जाकर मैं बहुत रुपये उसके बदले में पा सकूँगा, अगर तुम इस काम में मेरी मदद करोगे, तो मैं उसमें से आधी रकम तुम्हें दूंगा।' इसके जवाब में दूसरे ने कहा कि 'देखो नानू यह काम तुम्हारे योग्य नहीं है, मालिक के साथ दगा करने वाला कभी सुख नहीं भोग सकता, बेहतर है कि तुम मेरी बात मान जाओ नहीं तो तुम्हारे लिए अच्छा न होगा और मैं तुम्हारा दुश्मन बन जाऊँगा।' यह जवाब सुनते ही नानू क्रोध में आकर उसे बुरा-भला कहने और धमकाने लगा। उसी समय इसके सम्बोधन करने पर मुझे मालूम हुआ कि उस दूसरे का नाम बरदेबू है। खैर, जब मैंने जाना कि अब ये दोनों अलग होते हैं तो मैं चुपके से वहाँ से चल पड़ी और अपने कमरे में लेट रही। थोड़ी ही देर में यह मेरे पास पहुँचा और बोला, "बस अब जल्दी से उठ खड़ी हो और मेरे पीछे चली आओ क्योंकि अब वह मौका आ गया कि मैं तुम्हें इस आफत से बचाकर बाहर निकाल दूं।" इसके जवाब मैं मैंने कहा कि 'बस रहने दीजिए, आपकी कलई खुल गई, मैं आपकी और बरदेबू की बातें छिपकर सुन चुकी हूँ, माँ को आने दीजिए तो मैं आपकी खबर लेती हूँ।" इतना सुनते ही यह लाल-पीला होकर बोला कि 'खैर, देख लेना कि मैं तेरी खबर लेता हूँ या तू मेरी खबर लेती है।" बस, यह कहकर चला गया और थोड़ी देर में मैंने अपने को सख्त पहरे में पाया।

मनोरमा—ठीक है, अब मुझे असल बातों का पता लग गया।

नानू—(क्रोध के साथ) ऐसी तेज और धूर्त लड़की तो आज तक मैंने देखी ही

नहीं ! मेरे सामने ही मुझे झूठा और दोषी बना रही है और अपने सहायक बरदेबू को निर्दोष बनाना चाहती है !

इतना कहकर इन्दिरा कुछ देर के लिए रुक गई और थोड़ा-सा जल पीने के बाद बोली—

"जो कुछ मैंने कहा था उस पर मनोरमा को विश्वास हो गया।"

इन्द्रजीतसिंह—विश्वास होना ही चाहिए, इसमें कोई शक नहीं कि तूने जो कुछ मनोरमा से कहा उसका एक-एक अक्षर चालाकी और होशियारी से भरा हुआ था।

कमला—निःसन्देह, अच्छा तब क्या हुआ ?

इन्दिरा—नानू ने मुझे झूठा बनाने के लिए बहुत जोर मारा, मगर कुछ कर न सका क्योंकि मनोरमा के दिल पर मेरी बातों का पूरा असर पड़ चुका था। उस पुर्जे के टुकड़ों ने उसी को दोषी ठहराया जो उसने बरदेबू को दोषी ठहराने के लिए चुन रखे थे, क्योंकि बरदेबू ने यह पुर्जा अक्षर बिगाड़ कर ऐसे ढंग से लिखा था कि उसकी कलम का लिखा हुआ कोई कह नहीं सकता था। मनोरमा ने इशारे से मुझे हट जाने के लिए कहा और मैं उठकर कमरे के अन्दर चली गई। थोड़ी देर के बाद जब मैं उसके बुलाने पर पुनः बाहर गई तो वहाँ मनोरमा को अकेले बैठे हुए पाया। उसके पास वाली कुर्सी पर बैठकर मैंने पूछा कि 'माँ, नानू कहाँ गया ?' इसके जवाब में मनोरमा ने कहा कि 'बेटी, नानू को मैंने कैदखाने में भेज दिया। ये लोग उस कम्बखत दारोगा के साथी और बड़े ही शैतान हैं इसलिए किसी-न-किसी तरह इन लोगों को दोषी ठहराकर जहन्नुम को भेज देना ही उचित है। अब मैं उस दारोगा से बदला लेने की धुन में लगी हुई हूँ, इसी काम के लिए मैं बाहर गयी थी और इस समय पुनः जाने के लिए तैयार हूँ, केवल तुझे देखने के लिए चली आयी थी, तू बेफिक्र होकर यहाँ रह, आशा है कि कल शाम तक मैं अवश्य लौट आऊँगी। जब तक मैं उस कम्बखत से बदला न ले लूँ और तेरे बाप को कैद से छुड़ा न लूँ, तब तक एक घड़ी के लिए भी अपना समय नष्ट करना नहीं चाहती। बरदेबू को अच्छी तरह समझा जाऊँगी, वह तुझे किसी तरह की तकलीफ न होने देगा।"

इन बातों को सुनकर मैं बहुत खुश हुई और सोचने लगी कि यह कम्बखत यहाँ से जितना शीघ्र चली जाये, उत्तम है, क्योंकि मुझे हर तरह से निश्चय हो चुका था कि यह मेरी माँ नहीं है और यहाँ से यकायक निकल जाना भी कठिन है। साथ ही इसके मेरा दिल कह रहा था कि मेरा बाप कैद नहीं हुआ, यह सब मनोरमा की बनावट है जो मेरे बाप का कैद होना बता रही है।

मनोरमा चली गई, मगर उसने शायद ठीक मुझको यह न बताया कि नानू के साथ क्या सलूक किया या अब वह कहाँ है, फिर भी मनोरमा के चले जाने के बाद मैंने नानू को न देखा और न किसी लौंडी या नौकर ही ने उसके बारे में मुझसे कुछ कहा।

अबकी बार मनोरमा के चले जाने के बाद मुझ पर उतना सख्त पहरा नहीं रहा जितना नानू ने बढ़ा दिया था, मगर कोई आदमी मेरी तरफ से गाफिल भी न था।

उसी दिन आधी रात के समय जब मैं कमरे में चारपाई पर पड़ी हुई नींद नहीं आने के कारण तरह-तरह के मनसूबे बाँध रही थी, यकायक बरदेबू मेरे सामने आकर

खड़ा हो गया और बोला, "शाबाश, तूने बड़ी चालाकी से मुझे बचा लिया और ऐसी बात गढ़ी कि मनोरमा को नानू पर ही पूरा शक हो गया और मैं इस आफत से बच गया नहीं तो नानू ने मुझे पूरी तरह फाँस लिया था, क्योंकि वह पुर्जा तो मेरा ही लिखा हुआ था, मैं तुझसे बहुत खुश हूँ और तुझे इस योग्य समझता हूँ कि तेरी सहायता करूँ।

मैं—आपको मेरी बातों का हाल क्यों कर मालूम हुआ?

बरदेबू—एक लौंडी की जबानी मालूम हुआ जो उस समय मनोरमा के पास खड़ी थी।

मैं—ठीक है, मुझे विश्वास है कि आप मेरी सहायता करेंगे और किसी तरह इस आफत से बाहर कर देंगे, मनोरमा के न रहने से अब मौका भी बहुत अच्छा है।

बरदेबू—बेशक मैं तुझे आफत से छुड़ाऊँगा, मगर आज ऐसा करने का मौका नहीं है, मनोरमा की मौजूदगी में यह काम अच्छी तरह हो जायेगा और मुझ पर किसी तरह का शक भी न होगा क्योंकि जाते समय मनोरमा तुझे मेरी हिफाजत में छोड़ गई है। इस समय मैं केवल इसलिए आया हूँ कि तुझे हर तरह की बातें समझा-बुझाकर यहाँ से निकल भागने की तर्कीब बता दूँ और साथ ही इसके यह भी कह दूँ कि तेरी माँ दारोगा की बदौलत जमानिया में तिलिस्म के अन्दर कैद है और इस बात की खबर गोपालसिंह को नहीं है। मगर मैं उनसे मिलने की तरकीब तुझे अच्छी तरह बता दूँगा।

बरदेबू घंटे भर तक मेरे पास बैठा रहा और उसने वहाँ की बहुत-सी बातें मुझे समझाईं और निकल भागने के लिए जो तरकीब सोची थी, वह भी कही जिसका हाल आगे चलकर मालूम होगा—साथ ही इसके बरदेबू ने मुझे यह भी समझा दिया कि मनोरमा की उँगली में एक अंगूठी रहती है, जिसका नोकीला नगीना बहुत ही जहरीला है, किसी के बदन में कहीं भी रगड़ देने से बात की बात में उसका तेज जहर तमाम बदन में फैल जाता है और तब सिवाय मनोरमा की मदद के वह किसी तरह नहीं बच सकता। वह जहर की दवाइयों को (जिन्हें मनोरमा ही जानती है) घोड़े का पेट चीरकर और उसकी ताजी आँतों में उनको रखकर तैयार करती है···

इतना सुनते ही कमलिनी ने रोक कर कहा, "हाँ-हाँ, यह बात मुझे भी मालूम है। जब मैं भूतनाथ के कागजात लेने वहाँ गई थी तो उसी कोठरी में एक घोड़े की दुर्दशा भी देखी थी, जिसमें नानू और बरदेबू की लाश देखी, अच्छा, तब क्या हुआ?" इसके जवाब में इन्दिरा ने फिर कहना शुरू किया।

इंदिरा बरदेबू मुझे समझा-बुझाकर और बेहोशी की दवा की दो पुड़िया देकर गया और उसी समय से मैं भी मनोरमा के आने का इन्तजार करने लगी। दो दिन तक वह न आई और इस बीच में पुनः दो दफे बरदेबू से बातचीत करने का मौका मिला। और सब बातें तो नहीं, मगर यह मैं इसी जगह कह देना उचित समझती हूँ कि बरदेबू ने वह दवा की पुड़ियाएँ मुझे क्यों दी थीं। उनमें से एक तो बेहोशी की दवा थी और दूसरी होश में लाने की। मनोरमा के यहाँ एक ब्राह्मणी थी, जो उसकी रसोई बनाती थी और उस मकान में रहने तथा पहरा देने वाली ग्यारह लौंड़ियों को भी उसी रसोई में से खाना मिलता था। इसके अतिरिक्त एक ठकुरानी और थी जो मांस बनाया करती

थी। मनोरमा को मांस खाने का शौक था और प्रायः नित्य खाया करती थी। माँस ज्यादा बना करता और जो बच जाता वह सब लौंडियों नौकरों और मालियों को बाँट दिया जाता था। कभी-कभी मैं भी रसोई बनाने वाली मिसरानी या ठकुरानी के पास बैठकर उसके काम में सहायता कर दिया करती थी और वह बेहोशी की दवा बरदेबू ने इसीलिए दी थी कि समय आने पर खाने की चीजों तथा मांस इत्यादि में जहाँ तक हो सके मिला दी जाये।

आखिर मुझे अपने काम में सफलता प्राप्त हुई, अर्थात् चौथे या पाँचवें दिन संध्या के समय मनोरमा आ पहुँची और मांस के बटुए में बेहोशी की दवा मिला देने का भी मौका मुझे मिल गया।

रात के समय जब भोजन इत्यादि से छुट्टी पाकर मनोरमा अपने कमरे में बैठी तो उसने मुझे भी अपने पास बुलाकर बैठा लिया और बातें करने लगी। उस समय सिवाय हम दोनों के वहाँ और कोई भी न था।

मनोरमा—अबकी बार मेरा सफर बहुत अच्छा हुआ और मुझे बहुत-सी बातें नई मालूम हो गईं जिससे तेरे बाप के छुड़ाने में अब किसी तरह की कठिनाई नहीं रही। आशा है कि दो ही तीन दिन में वह कैद से छूट जायेंगे और हम लोग भी इस अनूठे भेष को छोड़कर अपने घर जा पहुंचेंगे।

मैं—तुम कहाँ गई थीं और क्या करके आईं?

मनोरमा—मैं जमानिया गई थी। वहाँ के राजा गोपालसिंह की मायारानी तथा दारोगा से भी मुलाकात की। मायारानी ने वहाँ अपना पूरा दखल जमा लिया है और वहाँ की तथा तिलिस्म की बहुत-सी बातें उसे मालूम हो गई हैं। इसीलिए अब वह राजा गोपालसिंह को भी मार डालने का बन्दोबस्त कर रही है।

मैं—तिलिस्म कैसा?

मनोरमा—(ताज्जुब के हाथ) क्या तू नहीं जानती कि जमानिया का खास बाग एक बड़ा भारी तिलिस्म है?

मैं—नहीं, मुझे तो यह बात नहीं मालूम और तुमने भी कभी मुझे कुछ नहीं बताया।

यद्यपि मुझे जमानिया के तिलिस्म का हाल मालूम था और इस विषय की बहुत सी बातें अपनी माँ से सुन चुकी थी, मगर इस समय मनोरमा से यही कह दिया कि 'नहीं यह बात भी मालूम नहीं है और तुमने भी इस विषय में कभी कुछ नहीं कहा।' इसके जवाब में मनोरमा ने कहा, "हाँ ठीक है, मैंने नादान समझ कर तुझे वे बातें नहीं कही थीं।"

मैं—अच्छा तो यह बताओ कि मायारानी को थोड़े ही दिनों में वहां का सब हाल कैसे मालूम हो गया?

मनोरमा—ये सब बातें मुझे भी मालूम न थी, मगर दारोगा ने मुझको असली मनोरमा समझकर बता दिया, अतः जो कुछ उसकी जबानी सुनने में आया है सो तुझे कहती हूँ। मायारानी को वहाँ का हाल यकायक थोड़े ही दिनों में मालूम न हो जाता,

और दारोगा भी इतनी जल्दी उसे होशियार न कर देता मगर उसके (मायारानी के) बाप ने उसे हर तरह से होशियार कर दिया है क्योंकि उसके बड़े लोग दीवान के तौर पर वहाँ की हुकूमत कर चुके हैं और इसीलिए उसके बाप को भी न मालूम किस तरह पर वहाँ की बहुत-सी बातें मालूम हैं।

मैं—खैर, इन सब बातों से मुझे कोई मतलब नहीं, यह बताओ कि मेरे पिता कहाँ हैं और उन्हें छुड़ाने के लिए तुमने क्या बन्दोबस्त किया! वह छूट जायें तो राजा गोपालसिंह को मायारानी के फन्दे से बचा लें। हम लोगों के किये इस बारे में कुछ न हो सकेगा।

मनोरमा—उन्हें छुड़ाने के लिए भी मैं सब बन्दोबस्त कर चुकी हूँ, देर बस इतनी ही है कि तू एक चिट्ठी गोपालसिंह के नाम की उसी मजमून की लिख दे, जिस मजमून की लिखने के लिए दारोगा तुझे कहता था। अफसोस इसी बात का है कि दारोगा को तेरा हाल मालूम हो गया है। वह तो मुझे नहीं पहचान सका, मगर इतना कहता था कि 'इन्दिरा को तूने अपनी लड़की बनाकर घर में रख लिया है, सो खैर तेरे मुलाहिजे से मै उसे छोड़ देता हूँ, मगर उसके हाथ से इस मजमून की चिट्ठी लिखाकर जरूर भेजनी होगा।' (कुछ रुककर) न मालूम क्यों मेरा सिर घूमता है।

मैं—खाने को ज्यादा खा गई होगी।

मनोरमा—नहीं, मगर···

इतना कहते-कहते मनोरमा ने गौर की निगाह से मुझे देखा और मैं अपने को बचाने की नीयत से उठ खड़ी हुई। उसने यह देखकर मुझे पकड़ने की नीयत से उठना चाहा मगर उठ न सकी और उस बेहोशी की दवा का पूरा-पूरा असर उस पर हो गया अर्थात् वह बेहोश होकर गिर पड़ी। उसी समय मैं उसके पास से चली आई और कमरे के बाहर निकली। चारों तरफ देखने से मालूम हुआ कि सब लौंडी, नौकर मिसरानी और माली वगैरह जहाँ-तहाँ बेहोश पड़े हैं, किसी को तन-बदन की सुध नहीं है। मैं एक जानी हुई जगह से मजबूत रस्सी लेकर पुनः मनोरमा के पास पहुँची और उसी से खूब जकड़ कर दूसरी पुड़िया सुँघा उसे होश में लाई। चैतन्य होने पर उसने हाथ में खंजर लिए मुझे अपने सामने खड़े पाया। वह उसी का खंजर था जो मैंने ले लिया था।

मनोरमा—हैं, यह क्या? तूने मेरी ऐसी दुर्दशा क्यों कर रक्खी है?

मैं—इसलिए कि तू वास्तव में मेरी माँ नहीं है और मुझे धोखा देकर यहाँ ले आई है।

मनोरमा—यह तुझे किसने कहा?

मैं—तेरी बातों और करतूतों ने।

मनोरमा—नहीं-नहीं, यह सब तेरा भ्रम है।

मैं—अगर यह सब मेरा भ्रम है और तू वास्तव में मेरी माँ है तो बता मेरे नाना ने अपने अन्तिम समय में क्या-क्या कहा था?

मनोरमा—(कुछ सोच कर) मेरे पास आ तो बताऊँ।

मैं—मैं तेरे पास भी आ सकती हूँ मगर तू इतना समझ ले कि अब वह जहरीली

अँगूठी तेरी उँगली में नहीं है।

इतना सुनते ही वह चौंक पड़ी। इसके बाद और भी खूब बातें उससे हुईं जिससे निश्चय हो गया कि मेरी ही करनी से वह बेहोश हुई थी और अब मैं उसके फेर में नहीं पड़ सकती। मैं उसे निःसन्देह जान से मार डालती, मगर बरदेबू ने ऐसा करने से मुझे मना कर दिया था। वह कह चुका था कि मैं तुझे इस कैद से छुड़ा तो देता हूँ, मगर मनोरमा की जान पर किसी तरह की आफत नहीं ला सकता, क्योंकि उसका नमक खा चुका हूँ।"

यही सबब था कि उस समय मैंने उसे केवल बातों की ही धमकी देकर छोड़ दिया। बची हुई बेहोशी की दवा जबर्दस्ती उसे सुँघा कर बेहोश करने के बाद मैं कमरे के बाहर निकली और बाग में चली आई जहाँ प्रतिज्ञानुसार बरदेबू खड़ा मेरी राह देख रहा था। उसने मेरे लिए एक खंजर और ऐयारी का बटुआ भी तैयार कर रक्खा था जो मुझे देकर उसके अन्दर की सब चीजों के बारे में अच्छी तरह समझा दिया और इसके बाद जिधर मालियों के रहने का मकान था उधर ले गया। माली तो सब बेहोश थे ही अतः कमन्द के सहारे मुझे बाग की दीवार के बाहर कर दिया और फिर मुझे मालूम न हुआ कि बरदेबू ने क्या कार्रवाइयाँ कीं और उस पर तथा मनोरमा इत्यादि पर क्या बीती।

मनोरमा के घर से बाहर निकलते ही मैं सीधे जमानिया की तरफ भागी क्योंकि एक तो अपनी माँ को छुड़ाने की फिक्र लगी हुई थी, जिसके लिए बरदेबू ने कुछ रास्ता भी बता दिया था, मगर इसके अलावा मेरी किस्मत में भी यही लिखा था कि बनिस्बत घर जाने के जमानिया को जाना पसन्द करूँ और वहाँ अपनी माँ की तरह खुद भी फँस जाऊँ। अगर मैं घर जाकर अपने पिता से मिलती और यह सब हाल कहती तो दुश्मनों का सत्यानश भी होता और मेरी माँ भी छूट जाती मगर सो न तो मुझको सूझा और न हुआ। इस सम्बन्ध में उस समय मुझको घड़ी-घड़ी इस बात का भी खयाल होता था मनोरमा मेरा पीछा जरूर करेगी, अगर मैं घर की तरफ जाऊँगी तो निःसन्देह गिरफ्तार हो जाऊँगी।

खैर, मुख्तसिर यह है कि बरदेबू के बताए हुए रास्ते से ही मैं इस तिलिस्म के अन्दर आ पहुँची। आप तो यहाँ की सब बात का भेद जान ही गए होंगे इसलिए विस्तार के साथ कहने की कोई जरूरत नहीं, केवल इतना ही कहना काफी होगा कि गंगा-किनारे वाले स्मशान पर जो महादेव का लिंग एक चबूतरे से ऊपर है वही रास्ता आने के लिए बरदेबू ने मुझे बताया था।

इन्दिरा ने अपना हाल यहाँ तक बयान किया था कि कमलिनी ने रोका और कहा, "हाँ-हाँ, उस रास्ते का हाल मुझे मालूम है। (कुमार से) जिस रास्ते से मैं आप लोगों को निकाल कर तिलिस्म के बाहर ले गई थी, वही!"[1]

इन्द्रजीतसिंह—ठीक है, (इन्दिरा से) अच्छा तब क्या हुआ?

---

1. देखिए आठवाँ भाग, दूसरे बयान का अन्त।

इन्दिरा—मैं इस तिलिस्म के अन्दर आ पहुँची और घूमती-फिरती उसी कमरे में पहुँच गई जिसमें आपने उस दिन मुझे मेरे पिता और और राजा गोपालसिंह को देखा था, जिस दिन आप उस बाग में पहुँचे थे जिसमें मेरी माँ कैद थी।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा ठीक है, तो उसी खिड़की में से तूने भी अपनी माँ को देखा होगा ?

इन्दिरा—जी हाँ, दूर ही से उसने मुझे देखा और मैंने उसे देखा, मगर उसके पास न पहुँच सकी। उस समय हम दोनों की क्या अवस्था हुई होगी, इसे आप स्वयं समझ सकते हैं, मुझमें कहने की सामर्थ्य नहीं है। (एक लम्बी साँस लेकर) कई दिनों तक व्यर्थ उद्योग करने पर जब मुझे यह निश्चय हो गया कि मैं किसी तरह उसके पास नहीं पहुँच सकती और न उसके छुड़ाने का कुछ बन्दोबस्त ही कर सकती हूँ तब मैंने चाहा कि अपने पिता को इन सब बातों की इत्तिला दूँ। मगर अफसोस, कि यह काम भी मेरे किए न हो सका। मैं किसी तरह इस तिलिस्म के बाहर न जा सकी और मुद्दत तक यहाँ रह कर ग्रहदशा के दिन काटती रही।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा, यह बता कि राजा गोपालसिंह वाली तिलिस्मी किताब तुझे क्योंकर मिली ?

इन्दिरा—यह हाल भी आपसे कहती हूँ।

इतना कहकर इन्दिरा थोड़ी देर के लिए चुप हो गयी और उसके बाद फिर अपना किस्सा शुरू करना ही चाहती थी कि कमरे का दरवाजा, जो कुछ घूमा हुआ था, यकायक जोर से खुला और राजा गोपालसिंह आते हुए दिखाई पड़े।

7

राजा गोपालसिंह को देखते ही सब कोई उठ खड़े हुए और बारी-बारी से सलाम की रस्म अदा की। इस समय भैरोंसिंह ने लक्ष्मीदेवी की आँखों से मिलती हुई राजा गोपालसिंह की उस मुहब्बत, मेहरबानी और हमदर्दी की निगाह पर गौर किया जिसे आज के थोड़े दिन पहले लक्ष्मीदेवी बेताबी के साथ ढूँढ़ती थी या जिसके न पाने से वह तथा उसकी बहिनें तरह-तरह का इलजाम गोपालसिंह पर लगाने का खयाल कर रही थीं।

सभी की इच्छानुसार राजा गोपालसिंह भी दोनों कुमारों के पास ही बैठ गए और सभी की कुशल-मंगल पूछने के बाद कुमार से बोले, "क्या आपको उस बड़े इजलास की फिक्र नहीं है जो चुनार में होने वाला है, और जिसमें भूतनाथ के दिलचस्प मुकदमे का फैसला किया आयेगा जिसमें उसका तथा और भी कई कैदियों के सम्बन्ध में एक से एक बढ़कर अनूठा हाल खुलेगा ? साथ ही इसके मुझे यह भी सन्देह होता है कि आप उनकी तरफ से भी कुछ बेफिक्र हो रहे हैं जिनके लिए···

इन्द्रजीतसिंह—नहीं-नहीं, मैं न तो बेफिक्र हूँ, और न अपने काम में सुस्ती ही

करना चाहता हूँ !

गोपालसिंह—क्या हम लोग नहीं जानते कि इधर के कई दिन आपने ।कस तरह व्यर्थ नष्ट किए हैं और इस समय भी किस बेफिक्री के साथ बैठे गप्पें उड़ा रहे हैं ?

इन्द्रजीतसिंह—(कुछ कहते-कहते रुक कर) जी नहीं, इस समय तो हम लोग इन्दिरा का किस्सा सुन रहे थे।

गोपालसिंह—इन्दिरा कहीं भागी नहीं जाती थी, यहाँ नहीं तो चुनार में हर तरह से बेफिक्र होकर आप इसका किस्सा सुन सकते थे जहाँ और भी कई अनूठे किस्से आप सुनेंगे। खैर, बताइए कि आप इन्दिरा का किस्सा सुन चुके या नहीं ?

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, और सब किस्सा तो सुन चुका, केवल इतना सुनना बाकी है कि आपकी वह तिलिस्मी किताब क्योंकर इसके हाथ लगी और यह उस पुतली की सूरत में क्यों वहाँ रहा करती थी।

गोपालसिंह—इतना किस्सा आप तिलिस्मी कार्रवाई से छुट्टी पाकर सुन लीजिएगा और अगर इस पर आपका ऐसा ही जी लगा हुआ है तो मैं मुख्तसिर में आपको समझाये देता हूँ क्योंकि मैं यह सब हाल इन्दिरा से सुन चुका हूँ। सचाई यह है कि मेरे यहाँ दो ऐयार हरनामसिंह और बिहारीसिंह रहते थे। वे रुपये की लालच में पड़ कर कम्बख्त मायारानी से मिल गए थे और मुझे कैदखाने में पहुँचाने के बाद वे लोग उसी की इच्छानुसार काम करते थे, मगर बुरी राह चलने वालों को या बुरों का संग करने वालों को जो कुछ फल मिला है वही उन्हें भी मिला, अर्थात् एक दिन मायारानी ने धोखा देकर उन्हें खास बाग के एक गुप्त कुएँ में ढकेल दिया[1] जिसके बारे में वह केवल इतना ही जानती थी कि वह तिलिस्मी ढंग का कुआँ लोगों को मार डालने के लिए बना हुआ है, मगर वास्तव में ऐसा नहीं है। वह कुआँ उन लोगों के लिए बना है जिन्हें तिलिस्म में कैद करना मंजूर होता है। मायारानी को चाहे यह निश्चय हो गया कि दोनों ऐयार मर गए, लेकिन वास्तव में वे मरे नहीं बल्कि तिलिस्म में कैद हो गये थे। इस बात को मायारानी बहुत दिनों तक छिपाये रही लेकिन आखिर एक दिन उसने अपनी लौंडी लीला से कह दिया और लीला से यह बात हरनामसिंह की लड़की ने सुन ली।

जब आपने मुझे कैद से छुड़ाया और मैं खुल्लमखुल्ला पुनः जमानिया का राजा बना, तब हरनामसिंह की लड़की फरियाद करने के लिए मेरे पास पहुँची और मुझसे वह हाल कहा। मैंने जवाब में कहा कि 'वे दोनों ऐयार उस कुएँ में धकेल देने से मरे नहीं हैं बल्कि तिलिस्म में कैद हो गए हैं जिन्हें मैं छुड़ा तो सकता हूँ, मगर उन दोनों ने मेरे साथ दगा की है इसलिए छुड़ाने योग्य नहीं हैं और न मैं उन्हें छुड़ाऊँगा ही। इतना सुन वह चली गई मगर छिपे-छिपे उसने ऐसा भेद लगाया और चालाकी की जिसे सुनेंगे तो दंग हो जायेंगे। मुख्तसिर यह कि अपने बाप को कैद से छुड़ाने की नीयत से उस लड़की ने मेरी तिलिस्मी किताब चुराई और उसकी मदद से तिलिस्म के अन्दर पहुँची, मगर उस किताब का मतलब ठीक-ठीक न समझने के सबब वह न तो अपने बाप को छुड़ा सकी

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति आठवाँ भाग, पाँचवाँ बयान।

और न खुद ही तिलिस्म के बाहर निकल सकी। हाँ, उसी जगह अकस्मात् इन्दिरा से उसकी मुलाकात हो गई। इन्दिरा को भी अपनी तरह दुःखी जान कर उसने सब हाल इससे कहा और इन्दिरा ने चालाकी से वह किताब अपने कब्जे में कर ली तथा उससे बहुत-कुछ फायदा भी उठाया। तिलिस्म में आने-जाने वालों से अपने को बचाने के लिए इन्दिरा उस पुतली की सूरत बनकर रहने लगी, क्योंकि उसी ढंग के कपड़े इन्दिरा को उस पुतली वाले घर से मिल गए थे। जब मैंने इन्दिरा से यह हाल सुना तो बिहारीसिंह और हरनामसिंह तथा उसकी लड़की को बाहर निकाला। वे सब भी चुनारगढ़ पहुँचाए जा चुके हैं। अब जब आप चुनारगढ़ पहुँचेंगे तो औरों के साथ-साथ उन लोगों का भी तमाशा देखेंगे, तथा···

लक्ष्मीदेवी—(गोपालसिंह से) मगर आप इन बातों को इतनी जल्दी-जल्दी और संक्षेप में कहकर कुमारों को भगाना क्यों चाहते हैं? इन्हें यहाँ अगर एक दिन और देर ही हो जायगी तो क्या हर्ज है?

कमलिनी—मेहमानदारी के खयाल से जल्द छूटना चाहते हैं!

गोपालसिंह—औरतों का काम तो आवाज कसने का ही है, मगर मैं किसी और ही सबब से जल्दी मचा रहा हूँ। महाराज (वीरेन्द्रसिंह) के पत्र बराबर आ रहे हैं कि दोनों कुमारों को शीघ्र भेज दो, इसके अतिरिक्त वहाँ कैदियों का जमाव हो रहा है और नित्य एक नया रंग खिलता है। वहाँ जितनी आफतें थीं वह सब जाती रहीं···

लक्ष्मीदेवी—(बात काट कर) तो कुमार को और हम लोगों को आप तिलिस्म के बाहर क्यों नहीं ले चलते? वहाँ से कुमार बहुत जल्दी चुनार पहुँच सकते हैं।

गोपालसिंह—(कुमार से) आप इस समय मेरे साथ तिलिस्म के बाहर जा सकते हैं मगर ऐसा होना न चाहिए। आप लोगों के हाथ से जो कुछ तिलिस्म टूटने वाला है उसे तोड़कर फिर इस तिलिस्म के अन्दर ही अन्दर से चुनार पहुँचना उचित होगा। जब आपकी शादी हो जाएगी तब मैं आपको यहाँ लाकर अच्छी तरह इस तिलिस्म की सैर कराऊँगा। इस समय मैं (किशोरी, कामिनी, इन्दिरा वगैरह की तरफ बता कर) इन सभी को लेकर खास बाग में जाता हूँ क्योंकि अब वहाँ सब तरह से शान्ति हो चुकी है और किसी तरह का अन्देशा नहीं वहाँ आठ-दस दिन रहकर फिर सभी को साथ ले मैं चुनार चला जाऊँगा और तब उसी जगह आपसे हम लोगों की मुलाकात होगी।

इन्द्रजीतसिंह—जो कुछ आप कहते हैं वही होगा, मगर यहाँ की अद्भुत बातें देखकर मेरे दिल में कई तरह का खुटका बना है···

गोपालसिंह—वह सब चुनार में निकल जायगा, यहाँ मैं आपको कुछ न बताऊँगा। देखिए, अब रात बीतना चाहती है, सवेरा होने के पहले ही आपको अपने काम में हाथ लगा देना चाहिए।

लक्ष्मीदेवी—(हँस कर) आप क्या आये, मानो भूचाल आ गया! अच्छी जल्दी मचाई, बात तक नहीं करने देते! (कुमार से) जरा इन्हें अच्छी तरह जाँच तो लीजिए, कहीं कोई ऐयार रूप बदलकर न आया हो।

गोपालसिंह—(इन्द्रजीतसिंह के कान में कुछ कहकर) बस, अब आप विलम्ब

न कीजिए।

इन्द्रजीतसिंह—(उठकर) अच्छा, तो फिर मैं प्रणाम करता हूँ और भैरोंसिंह को भी आपके ही सुपुर्द किये जाता हूँ। (लक्ष्मीदेवी से) आप किसी तरह की चिन्ता न करें, ये (गोपालसिंह) वास्तव में हमारे भाई साहब ही हैं, अतः अब चुनार में पुनः मुलाकात की उम्मीद करता हुआ मैं आप लोगों से बिदा होता हूँ।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह ने मुस्कुराते हुए सभी की तरफ देखा और आनन्दसिंह ने भी बड़े भाई का अनुसरण किया। राजा गोपालसिंह दोनों कुमारों को लिए कमरे के बाहर चले गये और कुछ देर तक बातचीत करने तथा समझा कर बिदा करने के बाद पुनः कमरे में चले आये।

8

यद्यपि चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी खँडहर की अवस्था ही जीतसिंह ने बदल दी और अब वह आला दर्जे की इमारत बन गई है मगर उसके चारों तरफ दूर-दूर तक जो जंगलों की शोभा थी उसमें किसी तरह की कमी उन्होंने न होने दी।

सुबह का सुहावना समय है और राजा सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह तथा तेजसिंह वगैरह धुर ऊपर वाले कमरे में बैठे जंगल की शोभा देखने के साथ-ही-साथ आपस में धीरे-धीरे बात भी करते जाते हैं। जंगली पेड़ों के पत्तों से छनी और फूलों की महक से सुगन्धित हुई दक्षिणी हवा के झपेटे आ रहे हैं और रात-भर की चुप बैठी हुई तरह-तरह की चिड़ियाएँ सवेरा होने की खुशी में अपनी सुरीली आवाजों से लोगों का जी लुभा रही हैं। स्याह-तीतर अपनी मस्त और बँधी हुई आवाज से हिन्दू-मुसलमान कुँजड़ों और कस्साबों में झगड़ा पैदा कर रहे हैं। मुसलमान कहते हैं कि तीतर साफ आवाज में यही कह रहा है कि 'सुब्हान तेरी कुदरत' मगर हिन्दू इस बात को स्वीकार नहीं करते और कहते हैं कि यह स्याह तीतर 'राम लक्ष्मण दशरथ' कहकर अपनी भक्ति का परिचय दे रहा है। कुँजड़े इसे भी नहीं मानते और उसकी बोली का मतलब 'मूली, प्याज अदरक' समझकर अपना दिल खुश कर रहे हैं, परन्तु कस्साबों को सिवाय इसके और कुछ नहीं सूझता कि यह तीतर 'कर जबह और ढक रख' का उपदेश दे रहा है।

इसी समय देवीसिंह भी वहाँ आ पहुँचे और भूतनाथ और बलभद्रसिंह के हाजिर होने की इत्तिला दी। इच्छानुसार दोनों ने सामने आकर सलाम किया और फर्श पर बैठने के बाद इशारा पाकर भूतनाथ ने तेजसिंह से कहा—

भूतनाथ—(बलभद्रसिंह की तरफ इशारा करके) इनका हाल सुनने के लिए जी बेचैन हो रहा है, मैं इनसे कई दफे चुका हूँ मगर ये कुछ कहते नहीं।

तेजसिंह—(बलभद्रसिंह से) अब तो आपकी तबीयत ठिकाने हो गई होगी?

बलभद्रसिंह—जी हाँ, अब मैं बहुत अच्छा हूँ और अपना हाल कहने के लिए

तैयार हूँ ।

तेजसिंह—अच्छी बात है, हम लोग भी सुनने के लिए तैयार हैं और आप ही का इन्तजार कर रहे थे ।

सभी का ध्यान बलभद्रसिंह की तरफ खिंच गया और बलभद्रसिंह ने अपने गायब होने का हाल इस तरह कहना शुरू किया—

"इस बात की तो मुझे कुछ भी खबर नहीं कि मुझे कौन ले गया और क्यों कर ले गया। उस दिन मैं भूतनाथ के पास ही एक चारपाई पर सो रहा था और जब मेरी आँख खुली तो मैंने अपने को एक हरे-भरे और खूबसूरत बाग में पाया । उस समय मैं बिल्कुल मजबूर था अर्थात् मेरे हाथों में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी पड़ी हुई थी और एक औरत नंगी तलवार लिए मेरे सामने खड़ी थी । मैंने सोचा कि अब मेरी जान नहीं बचती और मेरे भाग्य में कैदी बनकर जान देना ही बदा है । बहुत-सी बातें सोच-विचार के मैंने उस औरत से पूछा कि 'तू कौन है और मैं यहाँ क्योंकर पहुँचा हूँ ?" जिसके जवाब में उस औरत ने कहा कि 'तुझे मैं यहाँ ले आई हूँ और इस समय तू मेरा कैदी है । मैं जिस मुसीबत में फँसी हुई हूँ उससे छुटकारा पाने के लिए इसके सिवाय और कोई तरकीब न सूझी कि तुझे अपने कब्जे में करके अपने छुटकारे की सूरत निकालूँ, क्योंकि मेरा दुश्मन तेरे ही कब्जे में है । अगर तू उसे समझा-बुझाकर राह पर ले आवेगा तो मेरे साथ-साथ तेरी जान भी बच जायगी ।'

उस औरत की बातें सुनकर मुझे बड़ा ही ताज्जुब हुआ और मैंने उससे पूछा, "वह कौन है जो तेरा दुश्मन है और है और मेरे कब्जे में है ?"

औरत—तेरी बेटी कमलिनी मेरे साथ दुश्मनी कर रही है ।

मैं—क्यों ?

औरत—उसकी खुशी, मैंने तो उसका कुछ नुकसान नहीं किया ।

मैं—आखिर दुश्मनी का कोई सबब भी तो होगा ?

औरत—अगर कोई सबब है तो केवल इतना ही कि वह भूतनाथ का पक्ष करती है और मुझे भूतनाथ का दुश्मन समझती है । मगर मैं कसम खाकर कहती हूँ कि मुझे भूतनाथ से जरा भी रंज नहीं है बल्कि मैं भूतनाथ को अपना मददगार और भाई समझती हूँ । और मुझे भूतनाथ से किसी तरह का रंज होता तो मैं तुझे गिरफ्तार करके न लाती बल्कि भूतनाथ ही को ले आती, क्योंकि जिस तरह मैं तुझे उठा लाई हूँ उसी तरह भूतनाथ को भी उठा ला सकता थी । खैर, अब मैं चाहती हूँ कि तू एक चिट्ठी कमलिनी के नाम की लिख दे कि वह मेरे साथ दुश्मनी का बर्ताव न करे । अगर तू अपनी कसम दे के यह बात कमलिनी को लिख देगा तो वह जरूर मान जायगी ।

मैंने कई तरह से, उलट-फेर के, कई तरह की बातें उस औरत से पूछीं मगर साफ-साफ न मालूम हुआ कि कमलिनी उसके साथ दुश्मनी क्यों करती है । इसके अतिरिक्त मुझे इस बात का भी निश्चय हो गया कि जब तक मैं कमलिनी के नाम की चिट्ठी न लिख दूँगा तब तक मेरी जान को छुट्टी न मिलेगी । चिट्ठी लिखने से इनकार करने के कारण कई दिनों तक मैं उसका कैदी बना रहा, आखिर लाचार हो मैंने उसकी इच्छा-

नुसार पत्र लिख दिया, तब उसने बेहोशी की दवा सुँघाकर मुझे बेहोश किया और उसके बाद जब मेरी आँख खुली तो मैंने अपने को आपके सामने पाया।

भूतनाथ—आपको यह नहीं मालूम हुआ कि उस औरत का नाम क्या था ?

बलभद्रसिंह—मैंने कई दफे नाम पूछा मगर उसने न बताया।

मालूम होता है कि बलभद्रसिंह ने अपना जो कुछ बयान किया उस पर हमारे राजा साहब या ऐयारों को विश्वास न हुआ मगर उसकी खातिर से तेजसिंह ने कह दिया कि "ठीक है, ऐसा ही होगा।"

बलभद्रसिंह और भूतनाथ को राजा साहब बिदा किया ही चाहते थे कि उसी समय इन्द्रदेव के आने की इत्तिला मिली। आज्ञानुसार इन्द्रदेव हाजिर हुए और सभी को सलाम करने के बाद इशारा पाकर तेजसिंह की बगल में बैठ गए।

इन्द्रदेव के आने से हमारे राजा साहब और ऐयारों को खुशी हुई और इसीलिए पन्नालाल, रामनारायण और पं० बद्रीनाथ वगैरह हमारे बाकी के ऐयार लोग भी जो इस समय यहाँ हाजिर और इस इमारत के बाहरी तरफ टिके हुए थे, इन्द्रदेव के साथ-ही-साथ राजा साहब के पास आ पहुँचे क्योंकि इन्द्रदेव, बलभद्रसिंह और भूतनाथ का अनूठा हाल जानने के लिए सभी बेचैन हो रहे थे और खास करके भूतनाथ के मुकदमे से तो सभी को दिलचस्पी थी। इसके अतिरितत इन्द्रदेव अपने साथ दो कैदी अर्थात् नकली बलभद्रसिंह और नागर को भी लाए थे और बोले थे कि "काशिराज के भेजे हुए और भी कई कैदी थोड़ी देर में हाजिर होना चाहते हैं" जिस कारण हमारे ऐयारों की दिलचस्पी और भी बढ़ रही थी।

सुरेन्द्रसिंह—तुम्हारे आने से हम लोगों को बड़ी प्रसन्नता हुई। इन्द्रजीत और गोपालसिंह तुम्हारी बड़ी प्रशंसा करते हैं और वास्तव में तुमने जो कुछ किया है, वह प्रशंसा के योग्य भी है।

इन्द्रदेव—(हाथ जोड़कर) मैं तो किसी योग्य भी नहीं हूँ और न कोई काम हीं मेरे हाथ सें ऐसा निकला जिससे महाराज के गुलाम के बराबर भी अपने को समझने की प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकूँ—हाँ दुर्दैव ने जो कुछ मेरे साथ बर्ताव किया उसके सबब से मुझ अभागे को जो कष्ट भोगने, पड़े उन्हें सुनकर दयालु महाराज को मुझ पर दया आवश्य आई होगी।

सुरेन्द्रसिंह—हम लोग ईश्वर को धन्यवाद देते हैं जिसकी कृपा से एक विचित्र और अनूठी घटना के साथ तुम्हारी स्त्री और लड़की का पता लग गया और तुमने उन दोनों को जीती-जागती देखा।

इन्द्रदेव—यह सब-कुछ आपके और कुमारों के चरणों की बदौलत हुआ। वास्तव में तो मैं भाड़े की ज़िन्दगी बिताता हुआ दुनिया से विरक्त ही हो चुका था। अब भी वे दोनों आप लोगों के चरणों की धूल आँखों में लगा लेंगी, तभी मेरी प्रसन्नता का कारण होंगी। आशा है कि आज ही या कल तक राजा गोपालसिंह भी उन दोनों तथा किशोरी, कामिनी लक्ष्मीदेवी, कमलिनी, लाड़िली और कमला इत्यादि को लेकर यहाँ आवें और महाराज के चरणों का दर्शन करेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—(आश्चर्य और प्रसन्नता के साथ) हाँ ! क्या गोपाल ने तुम्हें कुछ लिखा है ?

इन्द्रदेव—जी हाँ, उन्होंने मुझे लिखा है कि "मैं शीघ्र ही उन सभी को लेकर महाराज की सेवा में उपस्थित होना चाहता हूँ, तुम भी अपने दोनों कैदी नकली बल-भद्रसिंह और नागर को लेकर काशिराज से मिलते हुए चुनार जाओ और काशिराज ने हम पर कृपा करके हमारे जिन दुश्मनों को कैद कर रक्खा है अर्थात् बेगम, जमालो और नौरतन वगैरह को भी अपने साथ लेते जाओ। अतः इस समय उन्हीं के लिखे अनुसार मैं सेवा में उपस्थित हुआ हूँ !

सुरेन्द्रसिंह—(उत्कण्ठा के साथ) तो क्या तुम उन लोगों को भी अपने साथ लेते आए हो ?

इन्द्रदेव—जी हाँ और उन सभी को बाहर सरकारी सिपाहियों की सुपुर्दगी में छोड़ आया हूँ। बेगम वगैरह का हाल तो काशिराज ने महाराज को लिखा होगा !

सुरेन्द्रसिंह—हाँ, काशिराज ने गोपालसिंह को यह लिखा था कि "तुम्हारे ऐयार भूतनाथ के निशान देने के मुताबिक बलभद्रसिंह के दुश्मन गिरफ्तार कर लिए गए हैं और मनोरमा का मकान भी जब्त कर लिया गया है।" गोपालसिंह ने यह समाचार मुझको लिखा था।

इन्द्रदेव—ठीक है तो अब उन कैदियों के लिए भी उचित प्रबन्ध कर देना चाहिए जिन्हें मैं अपने साथ लाया हूँ।

सुरेन्द्रसिंह—उसका प्रबन्ध बद्रीनाथ कर चुके होंगे क्योंकि कैदियों का इन्तजाम उन्हीं के सुपुर्द है।

बद्रीनाथ—(इन्द्रदेव से) उनके लिए आप तरद्दुद न करें क्योंकि वे लोग अपने उचित स्थान पर पहुँचा दिए गए।

पन्नालाल—(सुरेन्द्र से भूतनाथ और बलभद्रसिंह की तरफ बताकर) मगर इन दोनों महाशयों में से जिनकी खातिरदारी मेरे सुपुर्द की गई, यह बलभद्रसिंह जी कहते हैं कि मैं महाराज का अन्न न खाऊँगा बल्कि अपने आराम की कोई चीज भी यहाँ से न लूंगा क्योंकि अब यह बात मालूम हो चुकी है कि राजा गोपालसिंह महाराज के पोते हैं और···

सुरेन्द्रसिंह—ठीक है, ठीक है, वास्तव में ऐसा ही होना चाहिए। (बलभद्रसिंह से) मगर आप बहुत ही मुसीबत और कैद से छूटकर आए हैं इसलिए आपके पास रुपये-पैसे की जरूर कमी होगी, फिर आप क्योंकर अपने लिए हर तरह का सामान जुटा सकेंगे ?

बलभद्रसिंह—मैं भी इसी फिक्र में डूबा हुआ था मगर ईश्वर ने बड़ी कृपा की जो मेरे प्यारे मित्र इन्द्रदेव को यहाँ भेज दिया। अब मुझे किसी तरह की तकलीफ न होगी, जो कुछ जरूरत पड़ेगी मैं इनसे ले लूंगा। फिर इसके बाद मुझे यह भी आशा है कि दुष्टों का मुकदमा हो जाने पर बेगम के कब्जे से निकली हुई मेरी दौलत भी मुझे मिल जायगी।

इन्द्रदेव—(हाथ जोड़कर महाराज सुरेन्द्रसिंह से) मेरे मित्र बलभद्रसिंह जो कुछ कह रहे हैं ठीक है और आशा है कि महाराज भी इस बात को स्वीकार कर लेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—(पन्नालाल से) खैर ऐसा ही किया जाय, इन्द्रदेव का डेरा बलभद्र-सिंह के साथ ही करा दो जिसमें ये दोनों मित्र प्रसन्नता से आपस में बातें करते रहें।

इन्द्रदेव—(हाथ जोड़कर) मैं भी यही अर्ज किया चाहता था। आज न मालूम किस तरह, कितने दिनों के बाद मुझे ईश्वर ने मित्र-दर्शन का सुख दिया है, सो भी ऐसे मित्र का दर्शन जिसके मिलने की आशा कर ही नहीं सकते थे और इसके लिए हम लोग भूतनाथ के बड़े ही कृतज्ञ हैं।

भूतनाथ—यह सब महाराज के चरणों का प्रताप है जिनके सदैव दर्शन के लोभ से महाराज का कुछ न बिगाड़ने पर भी मैं अपने को दोषी बनाए और भगवती की कृपा पर भरोसा किए बैठा हुआ हूँ।

इन्द्रदेव—(महाराज की तरफ देख के) वास्तव में ऐसा ही है। अभी तक जो कुछ मालूम हुआ है उससे तो यही जाना जाता है कि भूतनाथ ने महाराज के यहाँ एक दफे चोरी करने के अतिरिक्त और कोई काम ऐसा नहीं किया जिससे महाराज या महाराज के सम्बन्धियों को दुःख हो—

भूतनाथ—(लज्जा से नीची गर्दन करके) और सो भी बदनीयती के साथ नहीं!

इन्द्रदेव—आगे चलकर और कोई बात जानी जाय तो मैं नहीं कह सकता, मगर—

भूतनाथ—ईश्वर न करे, ऐसा हो।

वीरेन्द्रसिंह—भूतनाथ ने अगर हम लोगों का कोई कसूर किया भी हो तो अब हम लोग उस पर ध्यान नहीं दे सकते, क्योंकि रोहतासगढ़ के तहखाने में मैं भूतनाथ का कसूर माफ कर चुका हूँ।

भूतनाथ—ईश्वर आपका सहायक रहे!

इन्द्रदेव—लेकिन अगर भूतनाथ ने किसी ऐसे के साथ बुरा बर्ताव किया हो जिससे आज के पहले महाराज का कोई सम्बन्ध न था तो उस पर भी महाराज को विशेष ध्यान न देना चाहिए।

तेजसिंह—जी हाँ, मगर इसमें कोई शक नहीं कि भूतनाथ की रहस्यमय जीवनी अनेक अद्भुत अनूठी और दुःखद घटनाओं से भरी हुई है। मैं समझता हूँ कि भूतनाथ ने लोगों के दिल पर अपना भयानक प्रभाव तो पैदा किया, परन्तु अपने कामों की बदौलत अपने को सुखी न बना सका, उलटा इसने जमाने को दिखा दिया कि प्रतिष्ठा और सभ्यता का पल्ला छोड़कर केवल लक्ष्मी का कृपा-पात्र बनने के लिए उद्योग और उत्साह दिखाने वाले का परिणाम कैसा होता है।

इन्द्रदेव—निःसन्देह ऐसा ही है। अगर भूतनाथ उसके साथ-ही-साथ प्रतिष्ठा का पल्ला भी मजबूती के साथ पकड़े होता और इस बात पर ध्यान रखता कि जो कुछ करे वह इसकी प्रतिष्ठा के विरुद्ध न होने पावे तो आज दुनिया में भूतनाथ तीसरे दर्जे का ऐयार कहा जाता।

जीतसिंह—(मुस्कुराकर) मगर सुना जाता है कि अब भूतनाथ इज्जत और हुर्मत की मीनार पर चढ़कर दुनिया की सैर किया चाहता है और यह बात देवताओं को भी वश में कर लेने वाले मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर नहीं।

इन्द्रदेव—अगर सिफारिश न समझी जाय तो मैं यह कहने का हौसला कर सकता हूँ कि दुनिया में इज्जत और हुर्मत उसी को मिल सकती है, जो इज्जत और हुर्मत का उचित बर्ताव करता हुआ किसी बड़े इज्जत और हुर्मत वाले का कृपापात्र बने।

देवीसिंह—भूतनाथ का खयाल भी आजकल इन्हीं बातों पर है। मैंने बहुत दिनों तक छिपे-छिपे भूतनाथ का पीछा करके जान लिया है कि भूतनाथ को होशियारी, चालाकी और ऐयारी की विद्या के साथ-ही-साथ दौलत की भी कमी नहीं है। अगर यह चाहे तो बेफिक्री के साथ अमीराना ढंग पर अपनी जिन्दगी बिता सकता है, मगर भूतनाथ इसे पसन्द नहीं करता और खूब समझता है कि वह सच्चा सुख जो प्रतिष्ठा, सभ्यता और सज्जनता के साथ सज्जन और मित्र-मण्डली में बैठ कर हँसने-बोलने से प्राप्त होता है और ही कोई वस्तु है और उसके बिना मनुष्य का जीवन वृथा है।

बलभद्रसिंह—बेशक, यही सबब है कि आजकल भूतनाथ अपना समय ऐसे ही कामों और विचारों में बिता रहा है और चाहता है कि आईने में अपना चेहरा बेदाग उसी तरह देख सके जिस तरह हीरा निर्मल जल में; मगर इसके लिए भूतनाथ को अपने पुराने मालिक से भी मदद लेनी चाहिए।

इन्द्रदेव—(कुछ चौंक कर) हाँ, मैं यह निवेदन करना तो भूल ही गया कि आज ही कल में यहाँ रणधीरसिंह भी आने वाले हैं, अस्तु, उनके लिए महाराज को प्रबन्ध कर देना चाहिए।

यह एक ऐसी बात थी जिसने भूतनाथ को चौंका दिया और वह थोड़ी देर के लिए किसी गम्भीर चिन्ता में निमग्न हो गया, मगर उद्योग करके उसने शीघ्र ही अपने दिल को सम्हाला और कहा—

भूतनाथ—क्योंकि वे महाराज के मेहमान बनकर इस मकान में रहना कदाचित् स्वीकार न करेंगे।

जीतसिंह—ठीक है, तो उनके लिए दूसरा प्रबन्ध किया किया जायगा।

इन्द्रजीतसिंह—उनका आदमी उनके लिए खेमा वगैरह सामान लेकर आता ही होगा।

जीतसिंह—(इन्द्रदेव से) हमारे पास कोई इत्तिला तो नहीं आई!

इन्द्रदेव—जी, यह काम भी मेरे ही सुपुर्द किया गया था।

जीतसिंह—तो क्या तुम्हारे पास उनका कोई आदमी या पत्र आया था?

इन्द्रजीतसिंह—जी नहीं, वे स्वयं राजा गोपालसिंह के पास यह सुनकर गये थे कि माधवी उन्हीं के यहाँ कैद है, क्योंकि उन्होंने अपने हाथ से माधवी को मार डालने का प्रण किया था···

सुरेन्द्रसिंह—(ताज्जुब से) तो क्या उन्होंने माधवी को अपने हाथों से मारा?

इन्द्रजीतसिंह—जी नहीं, अपने खानदान की एक लड़की को मार कर हाथ रँगने

की बनिस्बत उन्होंने प्रतिज्ञा भंग करना उत्तम समझा, उस समय मैं भी वहाँ था।

भूतनाथ—(सुरेन्द्रसिंह से हाथ जोड़कर) यदि मुझे आज्ञा हो तो खेमा वगैरह खड़ा करने का इन्तजाम मैं करूँ और समय पर अगवानी के लिए कुछ दूर जाकर अपना कलंकित मुख उनको दिखाऊँ ! यद्यपि मैं इस योग्य नहीं हूँ और न वे मेरी सूरत देखना पसन्द ही करेंगे। मगर उनके नमक से पला हुआ यह शरीर उनसे दुरदुराया जाकर भी अपनी प्रतिष्ठा ही समझेगा।

सुरेन्द्रसिंह—ठीक है, मगर उनकी इच्छा के विरुद्ध ऐसा करने की आज्ञा हम नहीं दे सकते। हाँ, यदि तुम अपनी इच्छा से ऐसा करो तो हम रोकना भी उचित नहीं समझेंगे।

ये बातें हो ही रही थीं कि जमानिया से राजा गोपालसिंह के कूच करने की इत्तिला मिली, इस तौर पर कि—"किशोरी, कामिनी और लक्ष्मीदेवी वगैरह को लिए राजा गोपालसिंह चले आ रहे हैं।"

9

चुनारगढ़ वाली तिलिस्मी इमारत के चारों तरफ छोटे-बड़े सैकड़ों खेमों, डेरों रावटियों और शामियानों की बहार दिखाई दे रही है, जिनमें से बहुतों में लोगों के डेरे पड़ चुके हैं और बहुत अभी तक खाली पड़े हैं। मगर वे भी धीरे-धीरे भर रहे हैं। किशोरी के नाना रणधीरसिंह और किशोरी, कामिनी वगैरह को लिए हुए राजा गोपालसिंह भी आ गए हैं और इन लोगों के साथ कुछ फौजी सिपाही भी आ पहुँचे हैं जो कायदे के साथ रावटियों में डेरा डाले हुए हैं। किशोरी इत्यादि महल में पहुँचा दी गई हैं जिसके सबब से अन्दर तरह-तरह की खुशियाँ मनाई जा रही हैं। राजा गोपालसिंह का डेरा भी तिलिस्मी इमारत के अन्दर ही पड़ा है। राजा वीरेन्द्रसिंह ने उनके लिए अपने कमरे के पास ही एक सुन्दर और सजा हुआ कमरा मुकर्रर कर दिया है, और उनके (गोपालसिंह के) साथी लोग इमारत के बाहर वाले खेमों में उतरे हुए हैं। इसी तरह रणधीरसिंह का भी डेरा इमारत के बाहर उन्हीं के भेजे हुए खेमे में पड़ा है और वे यहाँ पहुँच कर राजा सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह तथा और लोगों से मुलाकात करने के बाद किशोरी और कमला से मिल कर खुश हो चुके हैं और साथ ही इसके भूतनाथ की नजर भी कबूल कर चुके हैं जिसकी उम्मीद भूतनाथ को कुछ भी न थी।

इसी तरह राजा वीरेन्द्रसिंह के बचे हुए ऐयार लोग भी जो यहाँ मौजूद न थे, अब आ गए हैं। यहाँ तक कि रोहतासगढ़ से ज्योतिषीजी का डेरा भी आ गया है और वे भी तिलिस्मी इमारत के बाहर एक खेमे में टिके हुए हैं।

इनके अतिरिक्त कई बड़े-बड़े, रईस जमींदार और महाजन लोग भी गया, रोहतासगढ़, जमानिया और चुनार वगैरह से राजा वीरेन्द्रसिंह को नजर और मुबारक-

बाद देने की नीयत से आये हुए हैं, जिनके सबब से यहाँ खूब अमन-चमन हो रहा है और सभी को यह भी विश्वास है कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी तिलिस्म फतह करते हुए शीघ्र आना चाहते हैं और उनके आने के साथ ही ब्याह-शादी के जलसे शुरू हो जायँगे । साथ ही इसके भूतनाथ वगैरह के मुकदमे से भी सभी को दिलचस्पी हो रही है, यहाँ तक कि बहुत से लोग तो केवल इसी कैफियत को देखने-सुनने की नीयत से आए हुए हैं।

तिलिस्मी इमारत के बाहर एक छोटा-सा बाजार लग गया है जिसमें जरूरी चीजें तथा खाने का कच्चा गल्ला तथा सब तरह का सामान मेहमानों के लिए मौजूद है और राजा साहब की आज्ञा है कि जिसको जिस चीज की जरूरत हो दी जाय और उसकी कीमत किसी से भी न ली जाय । इस काम की निगरानी के लिए कई नेक और ईमानदार मुंशी मुकर्रर हैं जो अपना काम बड़ा खूबी और नेकनीयती के साथ कर रहे हैं। यह बात तो हुई है, मगर लोगों को आश्चर्य के साथ उस समय और भी आनन्द मिलता है जब एक बहुत बड़े खेमे या पण्डाल के अन्दर कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की शादी का सामान इकट्ठा होते देखते हैं।

कैदियों को किसी खेमे में जगह नहीं मिली है। बल्कि वे सब तिलिस्मी इमारत के अन्दर एक ऐसे स्थान में रखे गये हैं जो उन्हीं के योग्य है, मगर भूतनाथ बिल्कुल आजाद है और आश्चर्य के साथ लोगों की उँगलियाँ उठवाता हुआ इस समय चारों तरफ घूम रहा है और मेहमानों की खातिरदारी का खयाल भी करता रहता है ।

राजा साहब की आज्ञानुसार तिलिस्मी इमारत के अन्दर पहले खण्ड में एक बहुत बड़ा दालान उस आलीशान दरबार के लिए सजाया जा रहा है जिसमें पहले तो भूतनाथ तथा अन्य कैदियों का मुकदमा फैसल किया जाएगा और बाद में दोनों कुमारों के ब्याह की महफिल का आनन्द लोगों को मिलेगा और इसे लोग 'दरबारे-आम' के नाम से सम्बोधन करते हैं। इसके अतिरिक्त 'दरबारे-खास' के नाम से दूसरी मंजिल पर एक और कमरा सजा कर तैयार हुआ है। उसमें नित्य पहर दिन चढ़े तक दरबार हुआ करेगा और उसमें खास-खास तथा ऐयारी पेशे वाले लोग बैठ कर जरूरी कामों पर विचार किया करेंगे। इस समय हम अपने पाठकों को भी इसी दरबारे-खास में ले चल कर बैठाते हैं ।

एक ऊँची गद्दी पर महाराज सुरेन्द्रसिंह और उनके बाईं तरफ वीरेन्द्रसिंह बैठे हुए हैं। सुरेन्द्रसिंह के दाहिने तरफ जीतसिंह और वीरेन्द्रसिंह के बाईं तरफ तेजसिंह बैठे हैं और उनके बगल में क्रमशः देवीसिंह, पण्डित बद्रीनाथ, रामनारायण, जगन्नाथ ज्योतिषीजी, पन्नालाल और भूतनाथ वगैरह बैठे हुए दिखाई दे रहे हैं और भूतनाथ के बगल में चुन्नीलाल हाथ में नंगी तलवार लिए खड़ा है। उधर जीतसिंह के बगल में राजा गोपालसिंह और फिर क्रमशः बलभद्रसिंह, इन्द्रदेव, भैरोंसिंह वगैरह बैठे हैं और उनके बगल में नाहरसिंह नंगी तलवार लिए खड़ा है और इस बात पर विचार हो रहा है कि कि कैदियों का मुकदमा कब से शुरू किया जाय तथा उस सम्बन्ध में किन-किन बातों या चीजों की ज़रूरत है ।

इसी समय चोबदार ने आकर अदब से अर्ज किया—"महल के दरवाजे पर एक नकाबपोश हाजिर हुआ है। उसने पूछने पर भी अपना परिचय नहीं दिया परन्तु दरबार में हाजिर होने की आज्ञा माँगता है।"

इस खबर को सुन कर तेजसिंह ने राजा साहब की तरफ देखा और इशारा पाकर उस सवार को हाजिर करने के लिए चोबदार को हुक्म दिया।

वह नौजवान नकाबपोश सवार जो सिपाहियाना ठाठ के बेशकीमत कपड़ों से अपने को सजाए हुए था, हाजिर होने की आज्ञा पाकर घोड़े से उतर पड़ा। अपना नेजा जमीन में गाड़ कर उसी के सहारे घोड़े की लगाम अटका कर वह इमारत के अन्दर गया और चोबदार के साथ घूमता-फिरता दरबारे-खास में हाजिर हुआ। महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह और तेजसिंह को अदब से सलाम करने के बाद उसने अपना दाहिना हाथ जिसमें एक चिट्ठी थी दरबार की तरफ बढ़ाया और देवीसिंह ने उसके हाथ से पत्र लेकर तेजसिंह के हाथ में दे दिया। तेजसिंह ने राजा सुरेन्द्रसिंह को दिया; उन्होंने उसे पढ़ कर जीतसिंह के हवाले किया और इसके बाद वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह ने भी वह पत्र पढ़ा।

जीतसिंह—(नकाबपोश से) इस पत्र के पढ़ने से जाना जाता है कि खुलासा हाल तुम्हारी जुबानी मालूम होगा !

नकाबपोश—(हाथ जोड़ कर) जी हाँ। मेरे मालिकों ने यह अर्ज करने के लिए मुझे यहाँ भेजा है कि "हम दोनों भूतनाथ तथा और कैदियों का मुकदमा सुनने के समय उपस्थित रहने की इच्छा रखते हैं और आशा करते हैं कि इसके लिए महाराज प्रसन्नता के साथ हम लोगों को आज्ञा देंगे। हम लोग यह प्रतिज्ञापूर्वक कहते हैं कि हम लोगों के हाजिर होने का नतीजा देखकर महाराज प्रसन्न होंगे।

जीतसिंह—मगर पहले यह तो बताओ कि तुम्हारे मालिक कौन हैं, और कहाँ रहते हैं ?

नकाबपोश—इसके लिए आप क्षमा करें, क्योंकि हमारे मालिक लोग अभी अपने को प्रकट नहीं करना चाहते और इसलिए जब यहाँ उपस्थित होंगे तो अपने चेहरे पर नकाब डाले होंगे। हाँ, मुकदमा खत्म हो जाने के बाद वे अपने को प्रसन्नता के साथ प्रकट कर देंगे। आप देखेंगे कि उनकी मौजूदगी में मुकदमा सुनने के समय कैसे-कैसे गुल खिलते हैं। हमें आशा है कि इससे महाराज भी बहुत प्रसन्न होंगे।

जीतसिंह—कदाचित तुम्हारा कहना ठीक हो। मगर ऐसे मुकदमों में, जिन्हें घरेलू मुकदमे भी कह सकते हैं, अपरिचित लोगों को शरीक होने और बोलने की आज्ञा महाराज कैसे दे सकते हैं ?

नकाबपोश—ठीक है, महाराज मालिक हैं जो उचित समझें करें। मगर इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि अगर उस समय हमारे मालिक लोग (केवल दो आदमी) उपस्थित न होंगे तो मुकदमे की बारीक गुत्थी सुलझ न सकेगी, और यदि वे पहले ही से अपने को प्रकट कर देंगे तो···

जीतसिंह—(तेजसिंह से) इस विषय में उचित यही है कि एकान्त में इस नकाब-

पोश से बातचीत की जाय ।

तेजसिंह—(हाथ जोड़ कर) जो आज्ञा !

इतना कहकर तेजसिंह उठे और उस नकाबपोश को साथ लिए हुए एकान्त में चले गए ।

इस नकाबपोश को देख कर सभी हैरान थे। इसकी सिपाहियाना, चुस्त और बेशकीमत पोशाक, इसका बहादुराना ढंग और इसकी अनूठी बातों ने सभी के दिल में खलबली पैदा कर दी थी, खास करके भूतनाथ के पेट में तो चूहे दौड़ने लग गये और उसने इस नकाबपोश की असलियत जानने का खयाल अपने दिल में मजबूती के साथ बाँध लिया था । यही कारण था कि जब थोड़ी देर बाद तेजसिंह उस नकाबपोश से बातें करके और उसको साथ लिए हुए वापस आए, तब सभी का ध्यान उसी तरफ चला गया और सभी यह जानने के लिए व्यग्र होने लगे कि देखें तेजसिंह क्या कहते हैं।

तेजसिंह ने अपने बाप जीतसिंह की तरफ देखकर कहा, "मेरे खयाल से इनकी प्रार्थना स्वीकार करने में कोई हर्ज नहीं है । यदि मान लिया जाय कि वे लोग हमारे साथ दुश्मनी भी रखते हों तो भी इसकी कुछ परवाह नहीं हो सकती और न वे लोग हमारा कुछ बिगाड़ ही सकते हैं ।"

तेजसिंह की बात सुनकर जीतसिंह ने महाराज की तरफ देखा और कुछ इशारा पाकर नकाबपोश से कहा, "खैर, तुम्हारे मालिकों की प्रार्थना स्वीकार की जाती है। उनसे कह देना कि कल से नित्य एक पहर दिन चढ़ने के बाद इस दरगारे-खास में हाजिर हुआ करें ।"

नकाबपोश ने झुक कर सलाम किया और जिधर से आया था उसी तरफ लौट गया । थोड़ी देर तक और कुछ बातचीत होती रही। जिसके बाद सब कोई अपने-अपने ठिकाने चले गए । केवल महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह और गोपालसिंह रह गए और इन लोगों में कुछ देर तक उसी नकाबपोश के विषय में बातचीत होती रही । क्या-क्या बातें हुईं, इसे हम इस जगह खोलना उचित नहीं समझते और न इसकी जरूरत देखते हैं ।

10

दूसरे दिन फिर उसी तरह का दरबारे-खास लगा जैसा पहले दिन लगा था और जिसका खुलासा हाल हम ऊपर के बयान में लिख आये हैं। आज के दरबार में वे दोनों नकाबपोश हाजिर होने वाले थे, जिनकी तरफ से कल एक नकाबपोश आया था। अतः राजा साहब की तरफ से कल ही सिपाहियों और चोबदारों को हुक्म मिल गया था कि जिस समय दोनों दोनों नकाबपोश आवें उसी समय बिना इत्तिला किए ही दरबार में पहुँचा दिए ज़ायँ । यही सबब था कि आज दरबार लगने के कुछ ही देर बाद एक चोब-

दार के पीछे-पीछे वे दोनों नकाबपोश हाजिर हुए।

इन दोनों नकाबपोशों की पोशाक बहुत ही बेशकीमत थी। सिर पर बेलदार शमला था, जिसके आगे हीरे का जगमगाता हुआ सरपेंच था। भद्दी, मगर कीमती नकाब में बड़े-बड़े मोतियों की झालर लगी हुई थी। चपकन और पायजामे में भी सलमे-सितारे की जगह हीरे और मोतियों की भरमार थी तथा परतले के बेशकीमत हीरे ने तो सभी को ताज्जुब ही में डाल दिया था जिसके सहारे जड़ाऊ कब्जे की एक तलवार लटक रही थी। दोनों नकाबपोशों की पोशाक एक ही ढंग की थी और दोनों एक ही उम्र के मालूम पड़ते थे।

यद्यपि देखने से तो यही मालूम होता था कि ये दोनों नकाबपोश राजाओं से भी ज्यादा दौलत रखने वाले और किसी अमीर खानदान के होनहार बहादुर हैं। मगर इन दोनों ने बड़े अदब के साथ महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह और जीतसिंह को सलाम किया और इन तीनों के सिवाय और किसी की तरफ ध्यान भी न दिया। महाराज की आज्ञानुसार राजा गोपालसिंह के बगल में इन दोनों को जगह मिली। जीतसिंह ने सभ्यतानुसार कुशल-मंगल का प्रश्न किया।

दुष्टों के सिरताज, पतितों के महाराजाधिराज, नमकहरामों के किबलेगाह और दोजखियों के जहाँनाह मायारानी के तिलिस्मी दारोगा साहब तलब किये गए और जब हाजिर हुए तो बिना किसी को सलाम किए, जहाँ चोबदार ने बैठाया, बैठ गए। इस समय इनके हाथों में हथकड़ी और पैरों में ढीली बेड़ी पड़ी हुई थी। जब से इन्हें कैदखाने की हवा नसीब हुई तब से बाहर की कोई खबर इनके कानों तक पहुँची न थी। इन्हीं के लिए नहीं बल्कि तमाम कैदियों के लिए इस बात का इन्तजाम किया गया था कि किसी तरह की अच्छी या बुरी खबर उनके कानों तक न पहुँचे और न कोई उनकी बातों का जवाब ही दे।

महाराज का इशारा पाकर पहले राजा गोपालसिंह ने बात शुरू की और दारोगा की तरफ देखकर कहा—

गोपालसिंह—कहिए दारोगा साहब, मिजाज तो अच्छा है! अब आपको अपनी बेकसूरी साबित करने के लिए किन-किन चीजों की जरूरत है?

दारोगा—मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है और मैं उम्मीद करता हूँ कि आपको भी इस बात का कोई सबूत न मिला होगा कि मैंने आपके साथ किसी तरह की बुराई की थी या मुझे इस बात की खबर भी थी कि आपको महारानी ने कैद कर रक्खा है।

गोपालसिंह—(मुस्कुराते हुए) नहीं-नहीं, आप मेरे बारे में किसी तरह का कोई तरद्दुद न करें। मैं आपसे अपने मामले में बातचीत करना नहीं चाहता और न यही पूछना चाहता हूँ कि शुरू-शुरू में आपने मेरी शादी में कैसे-कैसे नोंक-झोंक के काम किए और बहुत सी मँड़वे की बातों को तै करते हुए अन्त में किस मायारानी को लेकर अपने किस मेहरबान गुरु-भाई के पास किस तरह की मदद लेने गये थे या फिर जमाने ने क्या रंग दिखाये, इत्यादि। मेरे साथ तो जो कुछ आपने किया, उसे याद करने का ध्यान भी

मैं अपने दिल में लाना पसन्द नहीं करता मगर मेरे पुराने दोस्त इन्द्रदेव आपसे कुछ पूछे बिना भी न रहेंगे। उन्हें चाहिए था कि अब भी अपने गुरुभाई का नाता निबाहें, मगर अफसोस, किसी बेविश्वासे ने उन्हें यह कहकर रंज कर दिया है कि "इन्दिरा और सरयू की किस्मतों का फैसला भी इन्हीं दारोगा साहब के हाथ से हुआ है !"

राजा गोपालसिंह के जुबानी थपेड़ों ने दारोगा का मुँह नीचा कर दिया। पुरानी बातों और करतूतों ने आँखों के आगे ऐसी भयानक मूरतें पैदा कर दीं जिनके देखने की ताकत इस समय उसमें न थी। उसके दिल में एक तरह का दर्द सा मालूम होने लगा और उसका दिमाग चक्कर खाने लगा। यद्यपि उसकी बदकिस्मती और उसके पापों ने भयानक अन्धकार का रूप धारण करके उसे चारों तरफ से घेर लिया था, परन्तु इस अन्धकार में भी उसे सुबह के झिलमिलाते हुए तारे की तरह उम्मीद की एक बारीक और हलकी रोशनी बहुत दूर पर दिखाई दे रही थी जिसका सबब इन्द्रदेव था, क्योंकि इसे (दारोगा को) इन्दिरा और सरयू के प्रकट होने का हाल कुछ भी मालूम न था और वह यही समझ रहा था कि इन्द्रदेव पहले की तरह अभी तक इन बातों से बेखबर होगा और इन्दिरा तथा सरयू भी तिलिस्म के अन्दर मर-खप कर अपने बारे में मेरी बदकारियों का सबूत अपने साथ ही लेती गई होंगी। अस्तु, ताज्जुब नहीं कि आज भी इन्द्रदेव मुझे अपना गुरुभाई समझ कर मदद करे। इसी सबब से उसने मुश्किल से अपने दिल को सम्हाला और इन्द्रदेव की तरफ देख के कहा—

"राम-राम, भला इस अनर्थ का भी कुछ ठिकाना है ! क्या आप भी इस बात को सच मान सकते हैं ?"

इन्द्रदेव—अगर इन्दिरा मर गई होती और यह कलमदान नष्ट हो गया होता तो इस बात को मानने के लिए मुझे जरूर कुछ उद्योग करना पड़ता।

इतना कहकर इन्द्रदेव ने इन्दिरा की तस्वीर वाला वह कलमदान निकालकर सामने रख दिया।

इन्द्रदेव की बातें सुन और इस कलमदान की सूरत पुनः देख कर दारोगा की बची-बचाई उम्मीद भी जाती रही। उसने भय और लज्जा से सिर झुका लिया और बदन में पैदा हुई भई कँपकँपी को रोकने का उद्योग करने लगा। इसी बीच में भूतनाथ बोल उठा—

"दारोगा साहब, इन्दिरा को आपके पंजे से बार-बार छुड़ाने वाला भूतनाथ भी तो आपके सामने ही मौजूद है और अगर आप चाहें तो उस कम्बख्त औरत से भी मिल सकते हैं जिसने उस बाग में आपको कुएँ के अन्दर धकेला था और बेचारी इन्दिरा को दुःख के अथाह समुद्र से बाहर किया था।"

भूतनाथ की बात सुनते ही दारोगा काँप गया और घबड़ा कर उन नये आये हुए दोनों नकाबपोशों की तरफ देखने लगा। उसी समय उनमें से एक नकाबपोश ने नकाब हटा कर रूमाल से अपने चेहरे को इस तरह पोंछा जैसे पसीना आने पर कोई अपने चेहरे को साफ करता है लेकिन इससे उसका असल मतलब केवल इतना ही था कि दारोगा उसकी सूरत देख ले।

दारोगा के साथ-ही-साथ और कई आदमियों की निगाह उस नकाबपोश के चेहरे पर गई मगर उनमें से किसी ने भी आज के पहले उसकी सूरत नहीं देखी थी इसलिए कोई कुछ अनुमान न कर सका, हाँ दारोगा उसकी सूरत देखते ही भय और दुःख से पागल हो गया। वह घबड़ा कर उठ खड़ा हुआ और उसी समय चक्कर खाकर जमीन पर गिरने के साथ ही बेहोश हो गया।

यह कैफियत देख लोगों को बड़ा ही ताज्जुब हुआ। राजा सुरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह और राजा गोपालसिंह ने भी उस नकाबपोश की सूरत देख ली थी, मगर इनमें से न तो किसी ने उसे पहचाना और न उससे कुछ पूछना ही उचित जाना अतः आज्ञानुसार दरबार बर्खास्त किया गया और वह कम्बख्त नकटा दारोगा पुनः कैदखाने की अंधेरी कोठरी में डाल दिया गया। उन दोनों नकाबपोशों में से एक ने तेजसिंह से पूछा, "कल किसका मुकदमा होगा ?" जवाब में तेजसिंह ने बलभद्रसिंह का नाम लिया और दोनों नकाबपोश वहाँ से रवाना हो गये।

11

दूसरे दिन नियत समय पर फिर दरबार लगा और वे दोनों नकाबपोश भी आ मौजूद हुए। आज के दरबार में बलभद्रसिंह भी अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए थे। आज्ञानुसार पुनः वह नकटा दारोगा और नकली बलभद्रसिंह हाजिर किए गए और सबके पहले इन्द्रदेव ने नकली बलभद्रसिंह से इस तरह पूछना शुरू किया—

इन्द्रदेव—क्यों जी, क्या तुम असली बलभद्रसिंह का ठीक-ठीक पता नहीं बताओगे ?

नकली बलभद्रसिंह (लम्बी साँस लेकर और महाराजा साहब की तरफ देख कर) कैसा बुरा जमाना हो रहा है। हजार बार पहचाने जाने पर भी अभी तक मुझे नकली बलभद्रसिंह ही कहा जाता है और गुनाहों की टोकरी सिर पर लादने वाले भूतनाथ को मूँछों पर ताव देता हुआ देखता हूँ। (इन्द्रदेव की तरफ देखकर) मालूम होता है कि आपको जमानिया के दारोगा वाला रोजनामचा नहीं मिला, अगर मिलता तो आपको मुझ पर किसी तरह का शक न रहता।

भूतनाथ—(जैपाल अर्थात् नकली बलभद्रसिंह से) तुझे अभी तक हौसला बना ही हुआ है ? (तेजसिंह से) कृपानिधान, अभी कल की बात है, आप उन बातों को कदापि न भूले होंगे जो मैंने कमलिनीजी के तालाब वाले तिलिस्मी मकान में इस दुष्ट के सामने आप लोगों से उस समय कही थीं जब आप लोग इसे सच्चा मानकर मुझे कैदखाने की हवा खिलाने का बन्दोबस्त कर चुके थे। क्या मैंने नहीं कहा था कि महाराज के सामने मेरा मुकदमा एक अनूठा रंग पैदा करके मेरे बदले में किसी दूसरे ही को कोठरी का मेहमान बनावेगा ? देखिये आज वह दिन आपकी आँखों के सामने है, आपके साथ

वे लोग भी हर तरह से मेरी बातों को सुन रहे हैं जिन्होंने उस दिन इसे असली बलभद्रसिंह मान लिया और मुझे घृणा की दृष्टि से भी देखना पसन्द नहीं करते थे। आशा है आप लोग उस समय की भूल पर अफसोस करेंगे और इस समय मैं बड़े अनूठे रहस्यों को खोलकर जो तमाशा दिखाने वाला हूँ, उसे ध्यान देकर देखेंगे।

तेजसिंह—बेशक ऐसा ही है, औरों के दिल की तो मैं नहीं कह सकता, मगर मैं अपनी उस समय की भूल पर जरूर अफसोस करता हूँ।

इस कमरे में जिसमें दरबार लगा हुआ था, ऊपर की तरफ कई खिड़कियाँ थीं जिनमें दोहरी चिकें पड़ी हुई थीं जहाँ बैठी लक्ष्मीदेवी, कमलिनी वगैरह इन बातों को बड़े गौर से सुन रही थीं। भूतनाथ ने पुनः जैपाल की तरफ देखा और कहा—

भूतनाथ—अब मैं उन बातों को भी जान चुका हूँ जिन्हें उस समय न जानने के कराण मैं सचाई के साथ अपनी बेकसूरी साबित नहीं कर सकता था। हाँ कहो, अब तुम अपने बारे में क्या कहते हो ?

जैपालसिंह—मालूम होता है कि आज तू अपने हाथ की लिखी हुई उन चिट्ठियों से इनकार किया चाहता है जो तेरी बुराइयों के खजाने को खोलने के काम में आ चुकी हैं और आवेंगी। क्या लक्ष्मीदेवी की गद्दी पर मायारानी को बैठाने की कार्रवाई में तूने सबसे बड़ा हिस्सा नहीं लिया था और क्या वे सब चिट्ठियाँ तेरे हाथ की लिखी हुई नहीं हैं ?

भूतनाथ—नहीं-नहीं, मैं इस बात से इनकार नहीं करूँगा कि वे चिट्ठियाँ मेरे हाथ की लिखी हुई नहीं हैं, बल्कि इस बात को साबित करूँगा कि लक्ष्मीदेवी के बारे में मैं बिल्कुल बेकसूर हूँ और चिट्ठियाँ, जिन्हें मैंने अपने फायदे के लिए लिख रक्खा था मुझे नुकसान पहुँचाने का सबब हुईं, तथा इस बात को भी साबित करूँगा कि मैं वास्तव में वह रघुबरसिंह नहीं हूँ जिसने लक्ष्मीदेवी के बारे में कार्रवाई की थी। इसके साथ ही तुझे और इस नकटे दारोगा को भी यह सुनकर अपने उछलते हुए कलेजे को रोकने के लिए तैयार हो जाना चाहिए कि केवल असली बलभद्रसिंह ही नहीं, बल्कि इन्दिरा तथा सरयू भी दम भर में तुम लोगों की कलई खोलने के लिए यहाँ आ चुकी हैं !

जैपाल—(बेहयाई के साथ) मालूम होता है कि तुम लोगों ने किसी को जाली बलभद्रसिंह बनाकर राजा साहब के सामने पेश कर दिया है।

इतना सुनते ही बलभद्रसिंह ने अपने चेहरे से नकाब हटाकर जैपाल की तरफ देखा और कहा, "नहीं-नहीं, जाली बलभद्रसिंह नहीं बनाया गया बल्कि मैं स्वयं असली बलभसिंह यहाँ बैठा हुआ तेरी बातें सुन रहा हूँ।"

बलभद्रसिंह की सूरत देखकर एक दफे तो जयपाल हिचका। मगर तुरन्त ही उसने अपने को सम्हाला और परले सिरे की बेहयाई को काम में लाकर कहा, "आहा, हेलासिंह भी यहाँ आ गए ! मुझे तुमसे मिलने की कुछ भी आशा न थी, क्योंकि मेरे मुलाकातियों ने जोर देकर कहा था कि हेलासिह मर गया और अब तुम उसे कदापि नहीं देख सकते।"

बलभद्रसिंह—(मुस्कराता हुआ तेजसिंह की तरफ देख कर) ऐसे बेहया की सूरत

भी आज के पहले आप लोगों ने न देखी होगी ! (जयपाल से) मालूम होता है कि तू अपने दोस्त हेलासिंह की मौत का सबब भी किसी दूसरे को ही बताना चाहता है। मगर ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि मेरे दोस्त भूतनाथ मेरे साथ हेलासिंह के मामले का सबूत भी बेगम के मकान से लेते आये हैं।

भूतनाथ—हाँ-हाँ, वह सबूत भी मेरे पास मौजूद है जो सबसे ज्यादा मेरे खास मामले में काम देगा।

इतना कहकर भूतनाथ ने दो-चार कागज, दस-बारह पन्ने की एक किताब और हीरे की अँगूठी जिसके साथ छोटा-सा पुरजा बँधा हुआ था, अपने बटुए में से निकाल कर राजा गोपालसिंह के सामने रख दिया और कहा, "बेगम नौरतन और जमालो को भी तलब करना चाहिए।"

इन चीजों को गौर से देख कर राजा गोपालसिंह ताज्जुब में आ गए और भूतनाथ का मुँह देखने लगे।

भूतनाथ—(गोपालसिंह से) आप जिस समय कृष्ण जिन्न की सूरत में थे, उस समय मैंने आपसे अर्ज किया था कि अपनी बेकसूरी का बहुत अच्छा सबूत किसी समय आपके सामने ला रखूँगा, सो यह सबूत मौजूद है, इसी से दोनों का काम चलेगा।

गोपालसिंह—(ताज्जुब के साथ) हाँ ठीक है, (वीरेन्द्रसिंह से) ये बड़े काम की चीजें भूतनाथ ने पेश की हैं। बेगम नौरतन और जमालो के हाजिर होने पर मैं इनका मतलब बयान करूँगा।

वीरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह की तरफ देखा और तेजसिंह ने बेगम नौरतन और जमालो के हाजिर होने का हुक्म दिया। इस समय जयपाल का कलेजा उछल रहा था। वह उन चीजों को अच्छी तरह देख नहीं सकता था और न उसे इसी बात का गुमान था कि बेगम के यहाँ से भूतनाथ फलाँ चीजें ले आया है।

कैदियों की सूरत में बेगम नौरतन और जमालो हाजिर हुईं। उस समय एक नकाबपोश ने, जिसने भूतनाथ की पेश की हुई चीजों को अच्छी तरह देख लिया था, गोपालसिंह से कहा, "मैं उम्मीद करता हूँ कि भूतनाथ की पेश की हुई इन चीजों का मतलब बनिस्बत आपके मैं ज्यादा अच्छी तरह बयान कर सकूँगा। यदि आप मेरी बातों पर विश्वास करके ये चीजें मेरे हवाले करें तो उत्तम हो।"

नकाबपोश की बातें सभी ने ताज्जुब के साथ सुनीं, खास करके जयपाल ने, जिसकी विचित्र अवस्था हो रही थी। यद्यपि वह अपनी जान से हाथ धो बैठा था, मगर साथ ही इसके यह भी सोचे हुए था कि मेरी चालबाजियों में उलझे हुए भूतनाथ को कोई कदापि बचा नहीं सकता और इस समय भूतनाथ के मददगार जो आदमी हैं, वे लोग तभी भूतनाथ को बचा सकेंगे जब मेरी बातों पर पर्दा डालेंगे या मेरे कसूरों की माफी दिला देंगे, तथा जब तक ऐसा न होगा मैं कभी भूतनाथ को अपने पंजे से निकलने न दूँगा। यही सबब था कि ऐसी अवस्था में भी वह बोलने और बातें बनाने से बाज नहीं आता था।

नकाबपोश की बात सुनकर राजा गोपालसिंह ने मुस्करा दिया और भूतनाथ की

दी हुई चीजें उसके सामने रख कर कहा, "अच्छी बात है, यदि आप मुझसे ज्यादा जानते हैं तो आप ही इस गुत्थी को साफ करें।"

नकाबपोश—अच्छा होता यदि इन चीजों को पहले बड़े महाराज और जीतसिंह भी देख लेते।

गोपालसिंह—मैं भी यही चाहता हूँ।

इतना कह कर राजा गोपालसिंह ने उन चीजों को हाथ में उठा लिया और तेजसिंह की तरफ देखा। तेजसिंह का इशारा पाकर देवीसिंह राजा गोपालसिंह के पास गए और वे चीजें लेकर जीतसिंह के हाथ में दे आए।

महाराज सुरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह ने भी उन चीजों को अच्छी तरह देखा और इसके बाद महाराज की आज्ञानुसार जीतसिंह ने कहा, "महाराज हुक्म देते हैं कि आज की कार्रवाई यहीं खत्म की जाय और इसके बाद की कार्रवाई कल दरबारे-आम में हो और इन पुर्जों का मतलब भी कल ही के दरबार में नकाबपोश साहब बयान करें।"

इस बात को सभी ने पसन्द किया, खासकर दोनों नकाबपोशों की और भूतनाथ की भी यही इच्छा थी, अस्तु, दरबार बर्खास्त हुआ और कल के लिए दरबार-आम की मुनादी की गई।

12

आज के दरबारे-आम की बैठक भी उसी ढंग की है जैसा कि हम दरबारे-आम के बारे में बयान कर चुके हैं, अगर फर्क है तो सिर्फ इतना ही कि दरबारे-खास में बैठने वाले लोगों के बाद उन रईसों-अमीरों और अफसरों तथा ऐयारों को दर्जे-बदर्जे जगह मिली है जो आज के दरबार में शरीक हुए हैं और आदमी भी बहुत ज्यादा इकट्ठे हुए मगर आवाज के खयाल से पूरा-पूरा सन्नाटा छाया हुआ है। शोरगुल की तो दूर रही किसी की मजाल नहीं कि बिना मर्जी के चुटकी भी बजा सके। इसके अतिरिक्त नंगी तलवार लिए रुआबदार फौजी सिपाहियों के पहरे का इन्तजाम भी बहुत ही मुनासिब और खूबसूरती के साथ किया गया है और बाहर के आये हुए मेहमान भी बड़ी दिलचस्पी के साथ बलभद्रसिंह और भूतनाथ का मुकदमा सुनने के लिए तैयार हैं।

नकटा दारोगा, जैपाल, बेगम, नौरतन और जमालो के हाजिर होने के बाद तेजसिंह ने कल के दरबार में भूतनाथ की पेश की हुई चिट्ठियाँ, अँगूठी और छोटी किताब राजा गोपालसिंह को दे दी और राजा गोपालसिंह ने इस खयाल से कि कल के और परसों के मामले से भी सभी को आगाही हो जानी चाहिए, जो कुछ पिछले दो दिन के दरबार-खास में हुआ था, रणधीरसिंह की तरफ देखकर बयान किया और इसके बाद "आज भी वे दोनों नकाबपोश इस दरबार में हाजिर हैं जिन्हें हम लोग ताज्जुब की

निगाहों से देख रहे हैं और नहीं जानते कि कौन हैं, कहाँ के रहने वाले हैं, या इन मामलों से इन्हें क्या सम्बन्ध है जिसके लिए इन दोनों ने यहाँ आने और मुकदमे में शरीक होने का कष्ट स्वीकार किया है। फिर भी जब तक ये दोनों अपने को प्रकट न करें हम लोगों को इनका हाल जानने के लिए उद्योग न करना चाहिए और देखना चाहिए कि इनकी कार्रवाइयों और बात का असर कम्बख्त मुजरिमों पर कैसा पड़ता है।"

यह कहकर गोपालसिंह ने वह अँगूठी, चिट्ठियाँ और छोटी किताब नकाबपोश के आगे रख दी।

इस दरबार-आम वाले मकान में भी ऐसी जगह बनी हुई थी जहाँ से रानी चन्द्रकान्ता और किशोरी, कामिनी, लक्ष्मीदेवी, कमलिनी वगैरह भी यहाँ की कैफियत देख-सुन सकती थीं, इसलिए समझ रखना चाहिए कि वे सब भी दरबार के मामले को देख-सुन रही हैं।

उन दोनों में से एक नकाबपोश ने भूतनाथ के पेश किए हुए कागजों में से एक कागज उठा लिया और खड़े होकर इस तरह कहना शुरू किया—

"निःसन्देह आप लोग हम दोनों को ताज्जुब की निगाह से देखते होंगे और यह भी जानने की इच्छा रखते होंगे कि हम लोग कौन हैं, और कहाँ के रहनेवाले हैं, मगर अफसोस है कि इस समय इस बारे में हम इससे ज्यादा कुछ नहीं कह सकते कि हम लोग ईश्वर के दूत हैं और इन दुष्टों के अच्छे-बुरे कर्मों को अच्छी तरह जानते हैं। यह जैपाल अर्थात् नकली बलभद्रसिंह चाहता है कि अपने साथ भूतनाथ को भी ले डूबे, मगर इसे समझ रखना चाहिए कि भूतनाथ हजार बुरा होने पर भी इज्जत और कदर की निगाह से देखे जाने के लायक है। अगर भूतनाथ न होता तो यह जैपाल इस समय असली बलभद्रसिंह बनकर न मालूम और भी कैसे-कैसे अनर्थ करता और असली बलभद्रसिंह की जान न जाने किस तकलीफ के साथ निकलती। अगर भूतनाथ न होता तो आज का यह आलीशान दरबार भी हम लोगों के लिए न होता और राजा गोपालसिंह भी इस तरह बैठे हुए दिखाई न देते, क्योंकि भूतनाथ की ही बदौलत दारोगा की गुप्त कमेटी का अन्त हुआ और इसी की बदौलत कमलिनी भी मायारानी के साथ मुकाबला करने लायक हुई। अगर भूतनाथ ने दो काम बुरे किये हैं तो दस काम अच्छे भी किए हैं, जो आप लोगों से छिपे नहीं हैं। भूतनाथ के अनूठे कामों का बदला यह नहीं हो सकता कि उसे किसी तरह की सजा मिले वल्कि यही हो सकता है कि उसे मुँहमाँगा इनाम मिले, आशा है कि मेरी इस बात को महाराज खुले दिल से स्वीकार भी करेंगे।"

इतना कहकर नकाबपोश चुप हो गया और महाराज की तरफ देखने लगा। महाराज का इशारा पाकर तेजसिंह ने कहा, "महाराज आपकी इस बात को प्रसन्नता के साथ स्वीकार करते हैं।"

इतना सुनते ही भूतनाथ ने खड़े होकर सलाम किया और नकाबपोश ने भी सलाम करके पुनः इस तरह कहना शुरू किया—

"बहुतों को ताज्जुब होगा कि जैपाल जब बलभद्रसिंह बन ही चुका था तो इतने दिनों तक कहाँ और क्योंकर छिपा रहा, लक्ष्मीदेवी या कमलिनी से मिला क्यों

नहीं ? और इसी तरह से भूतनाथ भी जब जानता था कि बलभद्रसिंह कौन और कहाँ है तो उसने इस बात को इतने दिनों तक छिपा क्यों रक्खा ? इसका जवाब मैं इस तरह देता हूँ कि अगर भूतनाथ कमलिनी का ऐयार बना हुआ न होता तो यह नकली बलभद्रसिंह अर्थात् जैपाल, जिसे भूतनाथ मरा हुआ समझे बैठा था, कभी का प्रकट हो चुका होता, मगर भूतनाथ का डर इसे हद से ज्यादा था और यह चाहता था कि कोई ऐसा जरिया हाथ लग जाय जिससे भूतनाथ इसके सामने कभी भी सिर उठाने लायक न रहे, और तब यह प्रकट होकर अपने को बलभद्रसिंह के नाम से मशहूर करे। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् वह छोटी सन्दूकड़ी, जिसकी तरफ देखने की भी ताकत भूतनाथ में नहीं है, इसके हाथ लग गई और वह कागज का मुट्ठा भी इसे मिल गया जो भूतनाथ के हाथ का लिखा हुआ था। अपनी इस बात के सबूत में मैं इस (हाथ की चिट्ठी दिखाकर) चिट्ठी को, जो आज के बहुत दिन पहले की लिखी हुई है, पढ़कर सुनाऊँगा !"

इतना कहकर उसने चिट्ठी पढ़ना शुरू किया जिसमें यह लिखा हुआ था—

"प्यारी बेगम,

वह सन्दूकड़ी तो मेरे हाथ लग गई जो भूतनाथ को बस में करने के लिए जादू का असर रखती है, मगर भूतनाथ तथा उसके आदमी बेतरह मेरे पीछे पड़े हुए हैं। ताज्जुब नहीं कि मैं गिरफ्तार हो जाऊँ, इसलिए यह सन्दूकड़ी तुम्हारे पास भेजता हूँ। तुम इसे हिफाजत के साथ रखना। मैं भूतनाथ को धोखा देने का बन्दोबस्त कर रहा हूँ। अगर मैं अपना काम पूरा कर सका तो निःसन्देह भूतनाथ को विश्वास हो जायगा कि जयपालसिंह मर गया। उस समय मैं तुम्हारे पास आकर अपनी खुशी का तमाशा दिखाऊँगा। मुझे इस बात का पता भी लग चुका है कि वह कागज की गठरी उसकी स्त्री के सन्दूक में है जिसका जिक्र मैं कई दफे तुमसे कर चुका हूँ और जिसके मिले बिना मैं अपने को बलभद्रसिंह बनाकर प्रकट नहीं कर सकता। — वही जयपाल।"

पढ़ने के बाद नकाबपोश ने वह चिट्ठी गोपालसिंह के आगे फेंक दी और बेगम की तरफ देख के पूछा, "तुझे याद है कि यह चिट्ठी किस महीने में जयपाल ने तेरे पास भेजी थी ?"

बेगम—बहुत दिन की बात हो गई। इसलिए मुझे महीना और दिन तो याद नहीं है।

नकाबपोश—(जयपाल से) क्या तुझे याद है कि यह चिट्ठी तूने किस महीने में लिखी थी ?

जयपालसिंह—यह चिट्ठी मेरे हाथ की लिखी हुई होती तो मैं तेरी बात का जवाब देता।

नकाबपोश—तो यह बेगम क्या कह रही है ?

जयपालसिंह—तू ही जाने कि तेरी बेगम क्या कह रही है ? मैं तो उसे पहचानता भी नहीं।

इतना सुनते ही नकाबपोश को गुस्सा चढ़ आया। उसने अपने चेहरे से नकाब हटाकर गुस्से-भरी निगाहों से जयपाल की तरफ देखा, जिसकी ताज्जुब-भरी निगाहें

पहले ही से उसकी तरफ जम रहीं, और इसके बाद तुरन्त अपना चेहरा ढाँप लिया।

न मालूम उस नकाबपोश की सूरत में क्या बात थी कि उसे देखते ही जयपाल की सूरत बिगड़ गई और काँपता तथा नकाबपोश की तरफ देखता हुआ अपने हथकड़ी सहित हाथों को जोड़कर बोला, "बस-बस, माफ कीजिए, बेशक यह चिट्ठी मेरे हाथ की लिखी हुई है ! ओफ, मैं नहीं जानता था कि तुम अभी जीते हो ? मैं तुम्हारी तरफ देखना नहीं चाहता हूँ !"

इतना कहकर जयपाल ने दोनों हाथों से अपनी आँखें ढक लीं और लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगा।

इस नकाबपोश की सूरत पर सभी की तो नहीं, मगर बहुतों की निगाह पड़ी। हमारे राजा साहब, ऐयार लोग, गोपालसिंह, इन्द्रदेव और भूतनाथ वगैरह ने भी इसे देखा, मगर पहचाना किसी ने भी नहीं, क्योंकि इन लोगों में से किसी ने भी आज के पहले इसे देखा न था। इसके अतिरिक्त पहले दिन दरबार में नकाबपोश की जो सूरत दिखाई दी थी, उसमें और आज की सूरत में जमीन-आसमान का फर्क था। इस विषय में लोगों ने यह खयाल कर लिया कि पहले दिन एक नकाबपोश ने सूरत दिखाई थी और आज दूसरे ने, क्योंकि नकाब और पोशाक इत्यादि के खयाल से जाहिर में दोनों नकाबपोश एक ही रंग-ढंग के थे।

इन नकाबपोशों की तरफ से भूतनाथ का दिल तरद्दुद और खुटके से खाली न था। पहले दिन उस नकाबपोश की जो सूरत भूतनाथ ने देखी, उसे उसने अपने दिल में अच्छी तरह नक्श कर लिया था—बल्कि एक कागज पर उसकी सूरत(तस्वीर) भी बना कर तैयार कर ली थी और आज भी इसी नीयत से उसी सूरत के विषय में बारीक निगाह से भूतनाथ ने काम लिया, मगर ताज्जुब कर रहा था कि ये दोनों कौन हैं जो बेवजह मेरी मदद कर रहे हैं और ये गुप्त बातें इन दोनों को कैसे मालूम हुईं।

थोड़ी देर तक वह नकाबपोश चुप रहा और इसके बाद उसने राजा साहब की तरफ देख के कहा, "महाराज देखते हैं कि मैं इस मुकदमे की गुत्थी को किस तरह सुलझा रहा हूँ और इस जयपाल के दिल पर मेरी सूरत का क्या असर पड़ा, अब मैं इसी जगह एक और भी गुप्त बात की तरफ इशारा करना चाहता हूँ जिसका हाल शायद अभी तक भूतनाथ को भी मालूम न होगा। वह यह है कि मनोरमा इस(बेगम की तरफ बताकर) बेगम की एक मौसेरी बहिन है और भूतनाथ की गुप्त सहेली नन्हों से गहरी मुहब्बत रखती है। यही सबब है कि भूतनाथ के घर से यह गठरी गायब हुई और जयपाल ने भी यह प्रकट होने के साथ ही लामाघाटी[1] की तरफ इशारा करके भूतनाथ को काबू में कर लिया। इस बात को महाराज तो न जानते होंगे, मगर भूतनाथ को इनकार करने की जगह अब नहीं तो दो दिन बाद न रहेगी।

नकाबपोश की इस बात ने भूतनाथ को चौंका दिया और उसने घबराकर नकाबपोश से कहा, "क्या यह बात आप पूरी तरह से समझ-बूझकर कह रहे हैं ?"

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, ग्यारहवाँ भाग, आठवाँ बयान।

नकाबपोश—हाँ, और यह बात तुम्हारे ही सबब से पैदा हुई थी जिसके सबूत में मैं यह पुर्जा पेश करता हूँ।

इतना कहकर नकाबपोश ने अपनी जेब में से एक पुर्जा निकालकर पढ़ा और फिर राजा गोपालसिंह के सामने फेंक दिया। उसमें लिखा हुआ था—

"प्यारी नन्हों,

अब तो उन्होंने अपना नाम भी बदल दिया। तुम्हें पता लगाना हो तो 'भूतनाथ' के नाम से पता लगा लेना और मुझे भी चाँद वाले दिन गौहर के यहाँ देखना जो शेर की लड़की है।

—करौंदा की छैंयें-छैंये।"

इस चिट्ठी ने भूतनाथ को परेशान कर दिया और उसने खड़े होकर कहा, "बस बस, मुझे आपके कहने का विश्वास हो गया और बहुत-सी पुरानी बातों का पता भी लग गया।"

नकाबपोश—मैं इस बारे में और भी बहुत-सी बातें कहूँगा, मगर अभी नहीं। जब समय तथा बातों का सिलसिला आ जायगा। मैं यह तो ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि तुम्हारी स्त्री तुमसे दुश्मनी रखती है या वह इस बात को जानती है कि नन्हों और बेगम की मुहब्बत है, मगर इतना जरूर कहूँगा कि तुमने अपनी स्त्री को गौहर के यहाँ जाने की इजाजत देकर अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मार ली। मुझे इन बातों के कहने की कोई जरूरत नहीं थी, मगर इस खयाल से बात निकल आई कि तुम भी अपनी गठरी के चोरी जाने का सबब जान जाओ। (तेजसिंह की तरफ देखकर) औरों को क्या कहा जाय, भूतनाथ ऐसे चालाक और ऐयार लोग भी औरतों के मामले में चूक ही जाते हैं।

इसी समय बेगम उद्योग करके उठ खड़ी हुई और महाराज की तरफ देखकर जोर से बोली, "दोहाई महाराज की! इस नकाबपोश का यह कहना कि नन्हों नाम की किसी औरत से मुझसे दोस्ती है। बिल्कुल झूठ है। इसका कोई सबूत नकाबपोश साहब नहीं दे सकते। मैं तो जानती भी नहीं कि नन्हों किस चिड़िया का नाम है। असल तो यह है कि यह केवल भूतनाथ की मदद करने को आये हैं और झूठ-सच बोलकर अपना काम निकालना चाहते हैं। अगर सरकार उस सन्दूकड़ी को खोलें तो सारी कलई खुल जाय।"

बेगम की बात सुनकर दोनों नकाबपोश गुस्से में आ गये। दूसरा नकाबपोश जो बैठा था, उठ खड़ा हुआ और अपने चेहरे की एक झलक लापरवाही के साथ बेगम को दिखाकर क्रोध-भरी आवाज में बोला, "क्या ये सब बातें झूठ हैं?"

इस दूसरे नकाबपोश ने अपनी सूरत दिखाने की नीयत से अपनी नकाब को दम भर के लिए इस तरह हटाया जिससे लोगों को गुमान हो सकता था कि धोखे में नकाब खसक गई, मगर होशियार और ऐयार लोग समझ गये कि इसने जानबूझ के अपनी सूरत दिखाई है। यद्यपि इसके चेहरे पर केवल तेजसिंह, देवीसिंह, गोपालसिंह, भूतनाथ, जयपाल और बेगम की निगाह पड़ी थी, मगर इस दूसरे नकाबपोश के चेहरे पर निगाह पड़ते ही बेगम यह कहकर चिल्ला उठी—"आह, तू कहाँ! क्या नन्हों भी गई!"

बस इससे ज्यादा और कुछ न कह सकी, एक दफे काँपकर बेहोश हो गई और जयपाल भी जमीन पर गिरकर बेहोश हो गया, अतएव मुकदमे की कार्रवाई रोक देनी पड़ी।

भूतनाथ तथा हमारे ऐयारों को विश्वास था कि यह दूसरा नकाबपोश वही होगा जिसने पहले दिन सूरत दिखलाई थी, मगर ऐसा न था। उस सूरत और इस सूरत में जमीन-आसमान का फर्क था, अतएव सभी ने निश्चय कर लिया कि वह कोई दूसरा था और यह कोई और है।

इस सूरत को भी भूतनाथ पहचानता न था। उसके ताज्जुब की हद न रही और उसने निश्चय कर लिया कि आज इनकी खबर जरूर ली जायगी। और यही कैफियत हमारे ऐयारों की भी थी।

कैदी पुनः कैदखाने में भेज दिये गये, दोनों नकाबपोश विदा हुए और दरबार बर्खास्त किया गया।

13

दरबार बर्खास्त होने के बाद जब महाराज सुरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, गोपालसिंह और देवीसिंह एकान्त में बैठे तो यों बातचीत होने लगी।

सुरेन्द्रसिंह—ये दोनों नकाबपोश तो विचित्र तमाशा कर रहे हैं। मालूम होता है कि इन सब मामलों की सबसे ज्यादा खबर इन्हीं लोगों को है।

जीतसिंह—बेशक ऐसा ही है।

वीरेन्द्रसिंह—जिस तरह इन दोनों ने तीन दफे में तीन तरह की सूरतें दिखाईं इसी से मालूम होता है और भी कई दफे कई तरह की सूरतें दिखायेंगे।

गोपालसिंह—निःसन्देह ऐसा ही होगा। मैं समझता हूँ कि या तो ये अपनी सूरत बदलकर आया करते हैं या दोनों केवल दो ही नहीं हैं और भी कई आदमी हैं जो पारी-पारी से आकर लोगों को ताज्जुब में डालते हैं और डालेंगे।

तेजसिंह—मेरा भी यही खयाल है। भूतनाथ के दिल में भी खलबली पैदा हो रही है। उसके चेहरे से मालूम होता था कि वह इन लोगों का पता लगाने के लिए परेशान हो रहा है।

देवीसिंह—भूतनाथ का ऐसा विचार कोई ताज्जुब की बात नहीं। जब हम लोग उनका हाल जानने के लिए व्याकुल हो रहे हैं, तब भूतनाथ का क्या कहना है।

सुरेन्द्रसिंह—इन लोगों ने मुकदमे की उलझन खोजने का ढंग तो अच्छा निकाला है, मगर यह मालूम करना चाहिए कि इन मामलों से इन्हें क्या सम्बन्ध है?

देवीसिंह—अगर आज्ञा हो तो मैं उनका हाल जानने के लिए उद्योग करूँ?

वीरेन्द्रसिंह—कहीं ऐसा न हो कि पीछा करने से ये लोग बिगड़ जायें और फिर

यहाँ आने का इरादा न करें।

गोपालसिंह—मेरे खयाल से तो उन लोगों को इस बात का रंज न होगा कि लोग उनका हाल जानने के लिए पीछा कर रहे हैं, क्योंकि उन लोगों ने काम ही ऐसा उठाया है कि सैकड़ों आदमियों को ताज्जुब हो और सैकड़ों ही उनका पीछा भी करें। इस बात को वे लोग खूब ही समझते होंगे और इस बात का भी उन्हें विश्वास होगा कि भूतनाथ उनका हाल जानने के लिए सबसे ज्यादा कोशिश करेगा।

वीरेन्द्रसिंह—ठीक है और इसी खयाल से वे लोग हर वक्त चौकन्ने भी रहते हों तो कोई ताज्जुब नहीं।

जीतसिंह—जरूर चौकन्ने रहते होंगे और ऐसी अवस्था में पता लगाना भी कठिन होगा।

गोपालसिंह—जो हो, मगर मेरी इच्छा तो यही है कि स्वयं उनका हाल जानने के लिए उद्योग करूँ।

सुरेन्द्रसिंह—अगर उनके मामले में पता लगाने की इच्छा ही है तो क्या तुम्हारे यहाँ ऐयारों की कमी है जो तुम स्वयं कष्ट करोगे? तेज़सिंह, देवीसिंह, पण्डित बद्रीनाथ या और जिसे चाहो इस काम पर मुकर्रर करो।

गोपालसिंह—जो आज्ञा, देवीसिंह कहते ही हैं तो इन्हींको यह काम सुपुर्द किया जाय।

सुरेन्द्रसिंह—(देवीसिंह से) जाओ तुम, तुम ही इस काम में उद्योग करो, देखें क्या खबर लाते हो।

देवीसिंह—(सलाम करके) जो आज्ञा।

गोपालसिंह—और इस बात का भी पता लगाना कि भूतनाथ उनका पीछा करता है या नहीं।

देवीसिंह—जरूर पता लगाऊँगा।

इस बात से छुट्टी पाने के बाद थोड़ी देर तक और बातें हुईं, इसके बाद महाराज आराम करने चले गये तथा और लोग भी अपने ठिकाने पधारे।

14

सबसे ज्यादा फिक्र भूतनाथ को इस बात के जानने की थी कि वे दोनों नकाबपोश कौन हैं और दारोगा, जयपाल तथा बेगम का उन सूरतों से क्या संबंध है जो समय-समय पर नकाबपोशों ने दिखाई थीं या हमारे तथा राजा गोपालसिंह और लक्ष्मीदेवी इत्यादि के सम्बन्ध में हम लोगों से भी ज्यादा जानकारी इन नकाबपोशों को क्योंकर हुई तथा ये दोनों वास्तव में दो ही हैं या कई।

इन्हीं बातों के सोच-विचार में भूतनाथ का दिमाग चक्कर खा रहा था। यों तो उस दरबार में जितने भी आदमी थे, सभी उन दोनों नकाबपोशों का हाल जानने के लिए

बेताब हो रहे थे और दरबार बर्खास्त होने तथा अपने डेरे पर जाने के बाद भी हर एक आदमी इन्हीं दोनों नकाबपोशों का खयाल और फिक्र करता था, मगर किसी की हिम्मत यह न होती थी कि उनके पीछे-पीछे जाय। हाँ, ऐयार और जासूस लोग जिनकी प्रकृति ही ऐसी होती है कि खामख्वाह भी लोगों के भेद जानने की कोशिश किया करते हैं, उन दोनों नकाबपोशों का हाल जानने के फेर में पड़े हुए थे।

भूतनाथ का डेरा यद्यपि तिलिस्मी इमारत के अन्दर बलभद्रसिंह के साथ था, मगर वास्तव में वह अकेला न था। भूतनाथ के पिछले किस्से से पाठकों को मालूम हो चुका होगा कि उसके साथी नौकर, सिपाही या जासूस लोग कम न थे जिनसे वह समय-समय पर काम लिया करता था और जो उसके हाल-चाल की खबर बराबर रखा करते थे। अब यह कह देना आवश्यक है कि यहाँ भी भूतनाथ के बहुत-से आदमी धीरे-धीरे आ गये हैं जो सूरत बदलकर चारों तरफ घूमते और उसकी जरूरतों को पूरा करते हैं और उनमें से दो आदमी खास तिलिस्मी इमारत के अन्दर उसके साथ ही रहते हैं जिन्हें भूतनाथ ने अपने खिदमतगार कहकर अपने पास रख लिया है और इस बात को बलभद्रसिह भी जानते हैं।

दरबार बर्खास्त होने के बाद भूतनाथ और बलभद्रसिंह अपने डेरे पर गये और कुछ जलपान इत्यादि से छुट्टी पाकर यों बातचीत करने लगे—

बलभद्रसिंह—ये दोनों नकाबपोश तो बड़े ही विचित्र मालूम पड़ते हैं।

भूतनाथ—क्या कहें अक्ल कुछ काम ही नहीं करती। मजा तो यह है कि वे हमीं लोगों की बातों को हम लोगों से भी ज्यादा जानते और समझते हैं।

बलभद्रसिंह—बेशक, ऐसा ही है।

भूतनाथ—यद्यपि अभी तक इन नकाबपोशों ने मेरे साथ बुरा बर्ताव नहीं किया, बल्कि एक तौर पर मेरा पक्ष ही करते रहे हैं तथापि मेरा कलेजा डर के मारे सूखा जाता है, यह सोचकर कि जिस तरह आज मेरी स्त्री की एक गुप्त बात इन्होंने प्रकट कर दी, जिसे मैं भी नहीं जानता था, उसी तरह कहीं मेरी उस सन्दूकड़ी का भेद भी न खोल दें, जो जयपाल की दी हुई अभी तक राजा साहब के पास अमानत रखी है और जिसके खयाल ही से मेरा कलेजा हरदम काँपा करता है।

बलभद्रसिंह—ठीक है, मगर मेरा खयाल है कि नकाबपोश तुम्हारी उस सन्दूकड़ी का भेद न तो खुद ही खोलेंगे और न खुलने ही देंगे।

भूतनाथ—सो कैसे?

बलभद्रसिंह—क्या तुम उन बातों को भूल गये जो एक नकाबपोश ने भरे दरबार में तुम्हारे लिए कही थीं? क्या उसने नहीं कहा था कि भूतनाथ ने जैसे-जैसे काम किए हैं उनके बदले में उसे मुँहमाँगा इनाम देना चाहिए और क्या इस बात को महाराज ने भी स्वीकार नहीं किया था?

भूतनाथ—ठीक है, तो इसके कहने से शायद आपका मतलब यह है कि मुँह-माँगे इनाम के बदले में मैं उस सन्दूकड़ी को भी पा सकता हूँ?

बलभद्रसिंह—बेशक ऐसा ही है और उन नकाबपोशों ने भी इसी खयाल से वह

बात कही थीं, मगर अब यह सोचना चाहिए कि मुकदमा तय होने के पहले माँगने का मौका क्योंकर मिल सकता है।

भूतनाथ—मेरे दिल ने भी उस समय यही कहा था, मगर दो बातों के ख्याल से मुझे प्रसन्न होने का समय नहीं मिलता।

बलभद्रसिंह—वह क्या ?

भूतनाथ—एक तो यही कि मुकदमा होने के पहले इनाम में उस सन्दूकड़ी के माँगने का मौका मुझे मिलेगा या नहीं, और दूसरे यह कि नकाबपोश ने इस समय यह बात सच्चे दिल से कही थी या केवल जयपाल को सुनाने की नीयत से। साथ ही इसके एक बात और भी है।

बलभद्रसिंह—वह भी कह डालो।

भूतनाथ—आज आखिरी मर्तबे दूसरे नकाबपोश ने जो सूरत दिखाई थी उसके बारे में मुझे कुछ भ्रम-सा होता है। शायद मैंने उसे कभी देखा है, मगर कहाँ और कब, सो नहीं कह सकता।

बलभद्रसिंह—हाँ, उस सूरत के बारे में तो अभी तक मैं भी गौर कर रहा हूँ, मगर अक्ल तब तक कुछ ठीक काम नहीं कर सकती, जब तक उन नकाबपोशों का कुछ हाल मालूम न हो जाये।

भूतनाथ—मेरी तो यही इच्छा होती है कि उनका असल हाल जानने के लिए उद्योग करूँ, बल्कि कल मैं अपने आदमियों को इस काम के लिए मुस्तैद भी कर चुका हूँ।

बलभद्रसिंह—अगर कुछ पता लगा सको तो बहुत ही अच्छी बात है, सच तो यही है कि मेरा दिल भी खुटके से खाली नहीं है।

भूतनाथ—इस समय से संध्या तक और इसके बाद रात भर मुझे छुट्टी है, यदि आप आज्ञा दें तो मैं जवाब दे लूंगा।

बलभद्रसिंह—कोई चिन्ता नहीं, तुम जाओ ! अगर महाराज का कोई आदमी खोजने आवेगा, तो मैं इस फिक्र में जाऊँ।

भूतनाथ—बहुत अच्छा।

इतना कहकर भूतनाथ उठा और अपने दोनों आदमियों में से एक को साथ लेकर मकान के बाहर हो गया।

15

तिलिस्मी इमारत से लगभग दो कोस दूरी पर जंगल में पेड़ों की घनी झुरमुट के अन्दर बैठा हुआ भूतनाथ अपने दो आदमियों से बातें कर रहा है।

भूतनाथ—तो क्या तुम उनके पीछे-पीछे उस खोह के मुहाने तक चले गये थे ?

एक आदमी—जी नहीं, थोड़ी देर तक तो मैं उन नकाबपोशों के पीछे-पीछे

चला गया, मगर जब देखा कि वे दोनों बेफिक्र नहीं हैं बल्कि चौकन्ने होकर चारों तरफ खास करके मुझे गौर से देखते जाते हैं, तब मैं भी तरह देकर हट गया। दूसरे दिन हम लोग कई आदमी एक-दूसरे से अलग दूर-दूर बैठ गये और आखिर मेरे साथी ने उन्हें ठिकाने तक पहुँचा कर पता लगा ही लिया कि ये दोनों इस खोह के अन्दर रहते हैं। उसके बाद हम लोगों ने निश्चय कर लिया और उसी खोह के पास छिपकर मैंने स्वयं कई दफे उन लोगों को उसी के अन्दर आते-जाते देखा और यह भी जान लिया कि वे लोग दस-बारह आदमी से कम नहीं हैं।

भूतनाथ—मेरा भी यही खयाल था कि वे लोग दस-बारह से कम न होंगे, खैर जो होगा देखा जायेगा, अब मैं संध्या हो जाने पर उस खोह के अन्दर जाऊँगा, तुम लोग हमारी हिफाजत का खयाल रखना और इसके अतिरिक्त इस बात का भी पता लगाना कि जिस तरह मैं उनकी टोह में लगा हुआ हूँ, उसी तरह और कोई भी उनका पीछा करता है या नहीं।

आदमी—जो आज्ञा।

भूतनाथ—हाँ, एक बात और पूछना है। तुम लोगों ने जिन दस-बारह आदमियों को खोह के अन्दर आते-जाते देखा है वे सभी अपने चेहरे पर नकाब रखते हैं या सिर्फ दो-चार?

आदमी—जी, हम लोगों ने जितने भी आदमियों को देखा सभी को नकाबपोश पाया।

भूतनाथ—अच्छा, तो तुम अब जाओ और अपने साथियों को मेरा हुक्म सुना कर होशियार कर दो।

इतना कहकर भूतनाथ खड़ा हो गया और अपने दोनों आदमियों को बिदा करने के बाद पश्चिम की तरफ रवाना हुआ। इस समय भूतनाथ अपनी असली सूरत में न था बल्कि सूरत बदल कर अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए था।

यहाँ से लगभग कोस भर की दूरी पर उस खोह का मुहाना था, जिसका पता भूतनाथ के आदमियों ने दिया था। संध्या होने तक भूतनाथ इधर-उधर जंगल में घूमता रहा और जब अँधेरा हो गया, तब उस खोह के मुहाने पर पहुँचकर चारों तरफ देखने लगा।

यह स्थान एक घने और भयानक जंगल में था। छोटे पहाड़ के निचले हिस्से में दो-तीन आदमियों के बैठने लायक एक गुफा थी और आगे से पत्थरों के बड़े-बड़े ढोकों ने उसका रास्ता रोक रखा था। उसके नीचे की तरफ पानी का एक छोटा-सा नाला बहता था, जिसमें इस समय कम, मगर साफ पानी बह रहा था और उस नाले के दोनों तरफ भी पेड़ों की बहुतायत थी। भूतनाथ ने सन्नाटा पाकर उस गुफा के अन्दर पैर रखा और सुरंग की तरह रास्ता पाकर टटोलता हुआ थोड़ी दूर तक बेखटके चला गया। आगे जाकर जब रास्ता खराब मालूम हुआ, तब उसने बटुए में से मोमबत्ती निकाल कर जलाई और चारों तरफ देखने लगा। सामने का रास्ता बिल्कुल बन्द पाया अर्थात् सामने की तरफ पत्थर की दीवार थी, जो एक चबूतरे की तरह मालूम पड़ती थी, मगर वहाँ की

छत इतनी ऊँची जरूर थी कि आदमी उस चबूतरे के ऊपर चढ़कर बखूबी खड़ा हो सकता था, अतः भूतनाथ उस चबूतरे के ऊपर चढ़ गया और जब आगे की तरफ देखा तो नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ नजर आईं।

भूतनाथ सीढ़ियों की राह नीचे उतर गया और अन्त में उसने एक छोटे से दरवाजे का निशान देखा, जिसमें किवाड़-पल्ले इत्यादि की कोई जगह न थी, केवल बाएँ दाहिने और नीचे की तरफ चौखट का निशान था। दरवाजे के अन्दर पैर रखने के बाद सुरंग की तरह रास्ता दिखाई दिया, जिसे गौर से अच्छी तरह देखने के बाद भूतनाथ ने मोमबत्ती बुझा दी और टटोलता हुआ आगे की तरफ बढ़ा। थोड़ी दूर जाने के बाद सुरंग खतम हुई और रोशनी दिखाई दी। यह हल्की और नाम मात्र की रोशनी किसी चिराग या मशाल की न थी बल्कि आसमान पर चमकते हुए तारों की थी क्योंकि वहाँ से आसमान तथा सामने की तरफ मैदान का एक छोटा-सा टुकड़ा दिखाई दे रहा था।

यह मैदान आठ या दस बीघे से ज्यादा न होगा। बीच में एक छोटा-सा बँगला था, उसके आगे वाले दालान में कई आदमी बैठे हुए दिखाई देते थे तथा चारों तरफ बड़े-बड़े जंगली पेड़ों की भी कमी न थी। सन्नाटा देखकर भूतनाथ सुरंग के पार निकल गया और एक पेड़ की आड़ देकर इस खयाल में खड़ा हो गया कि मौका मिलने पर आगे की तरफ बढ़ेंगे। थोड़े ही देर में भूतनाथ को मालूम हो गया कि उसके पास ही एक पेड़ की आड़ में कोई दूसरा आदमी भी खड़ा है। यह दूसरा आदमी वास्तव में देवीसिंह था जो भूतनाथ के पीछे ही पीछे थोड़ी देर बाद यहाँ आकर पेड़ की आड़ में खड़ा हो गया था और वह भी सूरत बदलने के बाद अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए था इसलिए एक को दूसरे का पहचानना कठिन था।

थोड़ी ही देर बाद दो औरतें अपने-अपने हाथों में चिराग लिए बँगले के अन्दर से निकलीं और उसी तरफ रवाना हुईं जिधर पेड़ की आड़ में भूतनाथ और देवीसिंह खड़े हुए थे। एक तो भूतनाथ और देवीसिंह का दिल इस खयाल से खुटके में था ही कि मेरे पास ही एक पेड़ की आड़ में कोई दूसरा भी खड़ा है, दूसरे इन दो औरतों को अपनी तरफ आते देख और भी घबड़ाये, मगर कर ही क्या सकते थे, क्योंकि इस समय जो कुछ ताज्जुब की बात उन दोनों ने देखी उसे देखकर भी चुप रह जाना उन दोनों की सामर्थ्य से बाहर था अर्थात् कुछ पास आने पर मालूम हो गया कि उन दोनों ही औरतों में से एक तो भूतनाथ की स्त्री है जिसे वह लामाघाटी में छोड़ आया था और दूसरी चम्पा।

भूतनाथ आगे बढ़ना ही चाहता था कि पीछे से कई आदमियों ने आकर उसे पकड़ लिया और उसी की तरह देवीसिंह भी बेकाबू कर दिये गये।

चन्द्रकान्ता सन्तति

बीसवाँ भाग

1

भूतनाथ और देवीसिंह को कई आदमियों ने पीछे से पकड़ कर अपने काबू में कर लिया और उसी समय एक आदमी ने किसी विचित्र भाषा में पुकार कर कुछ कहा, जिसे सुनते ही वे दोनों औरतें अर्थात् चम्पा तथा भूतनाथ की स्त्री चिराग फेंक-फेंककर पीछे की ओर लौट गईं, अंधकार के कारण कुछ मालूम न हुआ कि वे दोनों कहाँ गईं, हाँ भूतनाथ और देवीसिंह को इतना मालूम हो गया कि उन्हें गिरफ्तार करने वाले भी सब नकाबपोश हैं। भूतनाथ की तरह देवीसिंह भी सूरत बदल कर अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए थे।

गिरफ्तार हो जाने के बाद भूतनाथ और देवीसिंह दोनों एक साथ कर दिये गये और दोनों ही को लिए हुए वे सब बीच वाले बँगले की तरफ रवाना हुए। यद्यपि अंधकार के अतिरिक्त सूरत बदलने और नकाब डाले रहने के सबब एक का दूसरे को पहचानना कठिन था तथापि अन्दाज ही से एक को दूसरे ने जान लिया और शरमिन्दगी के साथ धीरे-धीरे उस बँगले की तरफ जाने लगे। जब बँगले के पास पहुँचे तो आगे वाले दालान में जहाँ दो चिरागों की रोशनी थी, तीन आदमियों को हाथ में नंगी तलवारें लिए पहरा देते देखा। वहाँ पहुँचने पर हमारे दोनों ऐयारों को मालूम हुआ कि उन्हें गिरफ्तार करने वाले गिनती में आठ से ज्यादा नहीं हैं। उस समय देवीसिंह और भूतनाथ के दिल में थोड़ी देर के लिए यह बात पैदा हुई कि केवल आठ आदमियों से हमें गिरफ्तार हो जाना उचित न था और अगर हम चाहते तो इन लोगों से अपने को बचा ही लेते, मगर उन दोनों का यह विचार तुरन्त ही जाता रहा, जब उन्होंने कुछ कमोबेश यह सोचा कि अगर हम इन लोगों से अपने को बचा लेते तो क्या होता क्योंकि यहाँ से निकल कर भाग जाना कठिन था और अगर भाग भी जाते तो जिस काम के लिए आये, उससे हाथ धो बैठते, अतः जो होगा देखा जायेगा।

इस दालान में अन्दर जाने के लिए दरवाजा था और उसके आगे लाल रंग का रेशमी पर्दा लटक रहा था। दीवार-छत इत्यादि सब रंगीन बने हुए थे और उन पर बनी

हुई तरह-तरह की तस्वीरें अपनी खूबी और खूबसूरती के सबब देखने वालों का दिल खींच लेती थीं, परन्तु इस समय उनपर भरपूर और बारीक निगाह डालना हमारे ऐयारों के लिए कठिन था इसलिए हम भी उनका हाल बयान नहीं कर सकते।

जो लोग दोनों ऐयारों को गिरफ्तार कर लाये थे, बनमें से एक आदमी पर्दा उठा कर बँगले के अन्दर चला गया और चौथाई घड़ी के बाद लौट आकर अपने साथियों से बोला, "इन दोनों महाशयों को सरदार के सामने ले चलो और एक आदमी जाकर इनके लिए हथकड़ी-बेड़ी भी ले आओ, कदाचित हमारे सरदार इन दोनों के लिए कैदखाने का हुक्म दें।"

अतः एक आदमी हथकड़ी-बेड़ी लाने के लिए चला गया और वे सब देवीसिंह और भूतनाथ को लिए हुए बँगले की तरफ रवाना हुए।

यह बँगला बाहर से जैसा सादा और मामूली ढंग का मालूम होता था, वैसा अन्दर से नहीं था। जूता उतार कर चौखट के अन्दर पैर रखते ही हमारे दोनों ऐयार ताज्जुब के साथ चारों तरफ देखने लगे और फौरन ही समझ गये कि इसके अन्दर रहने वाला या इसका मालिक कोई साधारण आदमी नहीं है। देवीसिंह के लिए यह बात सबसे ज्यादा ताज्जुब की थी और इसीलिए उनके दिल में घड़ी-घड़ी यह बात पैदा होती थी कि यह स्थान हमारे इलाके में होने पर भी अफसोस और ताज्जुब की बात है कि इतने दिनों तक हम लोगों को इसका पता न लगा।

पर्दा उठा कर अन्दर जाने पर हमारे दोनों ऐयारों ने अपने को एक गोल कमरे में पाया जिसकी छत भी गोल और गुम्बददार थी और उसमें बहुत-सी बिल्लौरी हाँडियाँ, जिनमें इस समय मोमबत्तियाँ जल रही थीं, कायदे और मौके के साथ लटक रही थीं। दीवारों पर खूबसूरत जंगलों और पहाड़ों की तस्वीरें निहायत खूबी के साथ बनी थीं जो इस जगह की ज्यादा रोशनी के सबब साफ मालूम होती थीं और यही जान पड़ता था कि अभी ताजा बनकर तैयार हुई हैं। इन तस्वीरों में अकस्मात् देवीसिंह और भूतनाथ ने रोहतासगढ़ के पहाड़ और किले की भी तस्वीर देखी जिसके सबब से और तस्वीरों को भी गौर से देखने का शौक इन्हें हुआ मगर ठहरने की मोहलत न मिलने के सबब से लाचार थे। वहाँ की जमीन पर सुर्ख मखमली मुलायम गद्दा बिछा हुआ था और सदर दरवाजे के अतिरिक्त और भी तीन दरवाजे नजर आ रहे थे, जिन पर बेशकीमत किमखाब के पर्दे पड़े हुए थे और उनमें मोतियों की झालरें लटक रही थीं। हमारे दोनों ऐयारों को दाहिने तरफ वाले दरवाजे के अन्दर जाना पड़ा जहाँ गली के ढंग पर रास्ता घूमा हुआ था। इस रास्ते में भी मखमली गद्दा बिछा हुआ था। दोनों तरफ की दीवारें साफ और चिकनी थीं तथा छत के सहारे एक बिल्लौरी कन्दील लटक रही थी जिसकी रोशनी इस सात-आठ हाथ लम्बी गली के लिए काफी थी। इस गली को पार करके ये दोनों एक बहुत बड़े कमरे में पहुँचाए गए जिसकी सजावट और खूबी ने उन्हें ताज्जुब में डाल दिया और वे हैरत की निगाह से चारों तरफ देखने लगे।

जंगल, मैदान, पहाड़, खोह, दर्रे, झरने, शिकारगाह तथा शहरपनाह, किले, मोरचे आदि और लड़ाई इत्यादि की तस्वीरें चारों तरफ दीवार में इस खूबी और सफाई

के साथ बनी हुई थीं कि देखने वाला यह कह सकता था कि बस इससे ज्यादा कारीगरी और सफाई का काम मुसौवर कर ही नहीं सकता। छत पर हर तरह की चिड़ियों और उनके पीछे झपटते हुए बाज-बहरी इत्यादि शिकारी परिन्दों की तस्वीरें बनी हुई थी जो दीवारगीरों और कन्दीलों की तेज रोशनी के सबब बहुत साफ दिखाई दे रही थीं। जमीन पर साफ-सुथरा फर्श बिछा हुआ था और सामने की तरफ हाथ-भर ऊँची गद्दी पर दो नकाबपोश तथा गद्दी के नीचे और कई आदमी अदब के साथ बैठे हुए थे, मगर उनमें से ऐसा कोई भी न था जिसके चेहरे पर नकाब न हो।

देवीसिंह और भूतनाथ को उम्मीद थी कि हम उन्हीं दोनों नकाबपोशों को उसी ढंग की पोशाक में देखेंगे जिन्हें कई दफा देख चुके हैं मगर यहाँ उसके विपरीत देखने में आया। इस बात का निश्चय तो नहीं हो सकता था कि इस नकाब के अन्दर वही सूरत छिपी हुई है या कोई और लेकिन पोशाक और आवाज यही प्रकट करती थी कि वे दोनों कोई दूसरे ही हैं, मगर इसमें भी कोई शक नहीं कि इन दोनों की पोशाक उन नकाबपोशों से कहीं बढ़-चढ़ के थी जिन्हें भूतनाथ और देवीसिंह देख चुके थे।

जब देवीसिंह और भूतनाथ उन दोनों नकाबपोशों के सामने खड़े हुए तो उन दोनों में से एक ने अपने आदमियों से पूछा, "ये दोनों कौन हैं, जिन्हें गिरफ्तार कर लाए हो?"

एक—जी, इनमें से एक (हाथ का इशारा करके) राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयार देवीसिंह हैं और यह वही मशहूर भूतनाथ है जिसका मुकदमा आज-कल राजा वीरेन्द्रसिंह के दरबार में पेश है।

नकाबपोश—(ताज्जुब से) हाँ! अच्छा, तो ये दोनों यहाँ क्यों आये हैं? अपनी मर्जी से आये हैं या तुम लोग जबर्दस्ती गिरफ्तार कर लाए हो?

वही आदमी—इस हाते के अन्दर तो ये दोनों आदमी अपनी मर्जी से आये थे, मगर यहाँ हम लोग गिरफ्तार करके लाये हैं।

नकाबपोश—(कुछ कड़ी आवाज में) गिरफ्तार करने की जरूरत क्यों पड़ी? किस तरह मालूम हुआ कि ये दोनों यहाँ बदनीयती के साथ आये हैं? क्या इन दोनों ने तुम लोगों से कुछ हुज्जत की थी?

वही आदमी—जी, हुज्जत तो किसी से न की मगर छिप-छिपकर आने और पेड़ की आड़ में खड़े होकर ताक-झाँक करने से मालूम हुआ कि इन दोनों की नीयत अच्छी नहीं है, इसीलिए गिरफ्तार कर लिए गये।

नकाबपोश—इतने बड़े प्रतापी राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐसे नामी ऐयार के साथ केवल इतनी बात पर इस तरह का बर्ताव करना तुम लोगों को उचित न था, कदाचित् ये हम लोगों से मिलने के लिए आए हों। हाँ, अगर केवल भूतनाथ के साथ ऐसा बर्ताव होता तो ज्यादा रंज की बात न थी।

यद्यपि नकाबपोश की आखिरी बात भूतनाथ को कुछ बुरी मालूम हुई, मगर कर ही क्या सकता था? साथ ही इसके यह भी देख रहा था कि नकाबपोश भलमनसी और सभ्यता के साथ बातें कर रहा है, जिसकी उम्मीद यहाँ आने के पहले कदापि न थी।

अतः जब नकाबपोश अपनी बात पूरी कर चुका तो इसके पहले कि उसका नौकर कुछ जवाब दे, भूतनाथ बोल उठा—

भूतनाथ—कृपानिधान, हम लोग यहाँ किसी बुरी नीयत से नहीं आये हैं, न तो चोरी करने का इरादा है न किसी को तकलीफ देने का, मैं केवल अपनी स्त्री का पता लगाने के लिए यहाँ आया हूँ, क्योंकि मेरे जासूसों ने मेरी स्त्री के यहाँ होने की मुझे इत्तिला दी थी।

नकाबपोश—(मुस्कुरा कर) शायद ऐसा ही हो, मगर मेरा खयाल कुछ दूसरा ही है। मेरा दिल कह रहा है कि तुम लोग उन दोनों नकाबपोशों का असल हाल जानने के लिए यहाँ आये हो जो राजा साहब के दरबार में जाकर अपने विचित्र कामों से लोगों को ताज्जुब में डाल रहे हैं, मगर साथ ही इसके इस बात को भी समझ लो कि यह मकान उन दोनों नकाबपोशों का नहीं है बल्कि हमारा है। उनके मकान में जाने का रास्ता तुम उस सुरंग के अन्दर ही छोड़ आये जिसे तै करके यहाँ आये हो, अर्थात् हमारे और उनके मकान का रास्ता बाहर से तो एक ही है मगर सुरंग के अन्दर आकर दो हो गया है। खैर, जो कुछ हो हम इस बारे में ज्यादा बातचीत करना उचित नहीं समझते और न तुम लोगों को कुछ तकलीफ ही देना चाहते हैं बल्कि अपना मेहमान समझ कर कहते हैं कि अब आ गये हो तो रात भर कुटिया में आराम करो; सवेरा होने पर जहाँ इच्छा हो चले जाना। (गद्दी के नीचे बैठे हुए एक नकाबपोश की तरफ देख के) यह काम तुम्हारे सुपुर्द किया जाता है, इन्हें खिला-पिलाकर ऊपर वाली मंजिल में सोने की जगह दो और सुबह को इन्हें खोह के बाहर पहुँचा दो।

इतना कहकर वह नकाबपोश उठ खड़ा हुआ और उसका साथी दूसरा नकाबपोश भी जाने के लिए तैयार हो गया। जिस जगह इन नकाबपोशों की गद्दी लगी हुई थी उस (गद्दी) के पीछे दीवार में एक दरवाजा था जिस पर पर्दा लटक रहा था। दोनों नकाबपोश पर्दा उठा कर अन्दर चले गये और यह छोटा-सा दरबार बर्खास्त हुआ। गद्दी के नीचे बैठने वाले मुसाहिब, दरबारी या नौकर जो भी कोई हों उठ खड़े हुए और उस आदमी ने जिसे दोनों ऐयारों की मेहमानी का हुक्म हुआ था देवीसिंह और भूतनाथ की तरफ देखकर कहा—"आप लोग मेहरबानी करके मेरे साथ आइये और ऊपर की मंजिल में चलिए।" भूतनाथ और देवीसिंह भी कुछ उज्र न करके पीछे-पीछे चलने के लिए तैयार हो गये।

नकाबपोश की बातों ने भूतनाथ और देवीसिंह दोनों ही को ताज्जुब में डाल दिया। भूतनाथ ने नकाबपोश से कहा था कि मैं अपनी स्त्री की खोज में यहाँ आया हूँ, मगर बहुत-कुछ कह जाने पर भी नकाबपोश ने भूतनाथ की इस बात का कोई जवाब न दिया और ऐसा करना भूतनाथ के दिल में खुटका पैदा करने के लिए कम नहीं था। भूतनाथ को निश्चय हो गया कि उसकी स्त्री यहाँ है और अवश्य है। उसने सोचा कि जो नकाबपोश राजा वीरेन्द्रसिंह के दरबार में पहुँच कर बड़ी-बड़ी गुप्त बातें इस अनूठे ढंग से खोलते हैं उनके घर में यदि मैं अपनी स्त्री को देखूं तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। हमारे देवीसिंह ने तो एक शब्द भी मुँह से निकालना पसन्द न किया, न मालूम

इसका सबब क्या था और वे क्या सोच रहे थे, मगर कम-से-कम इस बात की शर्म तो उनको जरूर ही थी कि वे यहाँ आने के साथ गिरफ्तार हो गये। यह तो नकाबपोशों की मेहरबानी थी कि हथकड़ी और बेड़ी से उनकी खातिर न की गई।

वह नकाबपोश कई रास्तों से घुमाता-फिराता भूतनाथ और देवीसिंह को ऊपर वाली मंजिल में ले गया। जो लोग इन दोनों को गिरफ्तार कर लाए थे, वे भी उनके साथ गये।

जिस कमरे में भूतनाथ और देवीसिंह पहुँचाये गये, वह यद्यपि बहुत बड़ा न था मगर जरूरी और मामूली ढंग के सामान से सजाया हुआ था। कन्दील की रोशनी हो रही थी, जमीन पर साफ-सुथरा फर्श बिछा था और कई तकिए भी रक्खे हुए थे, एक संगमरमर की छोटी चौकी बीच में रक्खी हुई थी और किनारे दो सुन्दर पलंग आराम के लिए बिछे हुए थे।

भूतनाथ और देवीसिंह को खाने-पीने के लिए कई दफा कहा गया, मगर उन दोनों ने इनकार किया अतः लाचार होकर नकाबपोशों ने उन दोनों को आराम करने के लिए उसी जगह छोड़ा और स्वयं उन आदमियों को जो दोनों ऐयारों को गिरफ्तार कर लाये थे, साथ लिए हुए वहाँ से चला गया। जाते समय ये लोग बाहर से दरवाजे की जंजीर बन्द करते गये और इस कमरे में भूतनाथ और देवीसिंह अकेले रह गये।

2

जब दोनों ऐयार उस कमरे में अकेले रह गये, तब थोड़ी देर तक अपनी अवस्था और भूल पर गौर करने के बाद आपस में यों बातें करने लगे—

देवीसिंह—यद्यपि तुम मुझसे और मैं तुमसे छिपकर यहाँ आया मगर यहाँ आने पर वह छिपना बिल्कुल व्यर्थ गया। तुम्हारे गिरफ्तार हो जाने का तो ज्यादा रंज न होना चाहिए क्योंकि तुम्हें अपनी जान की फिक्र पड़ी थी, अतएव अपनी भलाई के लिए तुम यहाँ आये थे और जो कोई किसी तरह का फ़ायदा उठाना चाहता है उसे कुछ-न-कुछ तकलीफ भी जरूर ही भोगनी पड़ती है, मगर मैं तो दिल्लगी ही दिल्लगी में बेवकूफ बन गया। न तो मुझे इन लोगों से कोई मतलब ही था और न यहाँ आए बिना मेरा कुछ हर्ज ही होता था।

भूतनाथ—(मुस्कुरा कर) मगर आने पर आपका भी एक काम निकल आया, क्योंकि यहाँ अपनी स्त्री को देखकर अब किसी तरह भी जाँच किए बिना आप नहीं रह सकते।

देवीसिंह—ठीक है! मगर भूतनाथ, तुम बड़े ही निडर और हौसले के ऐयार हो जो ऐसी अवस्था में भी हँसने और मुस्कुराने से बाज नहीं आते!

भूतनाथ—तो क्या आप ऐसा नहीं कर सकते?

देवीसिंह—अगर बनावट के तौर पर हँसने या मुस्कुराने की जरूरत न पड़े तो मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं इस बात को खूब समझता हूँ कि तुम्हारे जीवट और हौसले की इतनी तरक्की क्योंकर हुई मगर वास्तव में तुम निराले ढंग के आदमी हो, सच तो यह है कि तुम्हारी ठीक-ठीक अवस्था जानना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है।

भूतनाथ—आपका कहना बहुत ठीक है, मगर तब तक मेरे जीवट और मर्दानगी का अन्दाजा मिलना कठिन है जब तक कि मैं अपने को मुर्दा समझे हुए हूँ, जिस दिन मैं अपने को जिन्दा समझूँगा उस दिन यह बात न रहेगी।

देवीसिंह—तो क्या तुम अभी तक भी अपने को मुर्दा ही समझे हुए हो ?

भूतनाथ—बेशक, क्योंकि अब मैं बेइज्जती और बदनामी के साथ जीने को मरने के बराबर समझता हूँ। जिस दिन मैं राजा वीरेन्द्रसिंह का विश्वासपात्र बनने योग्य हो जाऊँगा उस दिन समझूँगा कि जी गया। मैं आपसे इस किस्म की बातें कदापि न करता अगर आपको अपना मेहरबान और मददगार न समझता। आप को जयपाल या नकली बलभद्रसिंह की पहली मुलाकात का दिन याद होगा जब आपने मुझ पर मेहरबानी रखने और मुझे अपनाने का शपथपूर्वक इकरार किया था।

देवीसिंह—बेशक मुझे याद है, जब तुम घबराये हुए और बेबसी की अवस्था में थे तब मैंने तुमसे कहा था कि 'यदि मुझे यह मालूम हो जायगा कि तुम मेरे पिता के घातक हो, जिन पर मेरा बड़ा स्नेह था तब भी मैं तुम्हें इसी तरह मुहब्बत की निगाह से देखूँगा जैसे कि अब मैं देख रहा हूँ[1]। कहो, है न यही बात ?

भूतनाथ—बेशक यही शब्द आपने कहे थे।

देवीसिंह—और अब भी मैं उसी बात का इकरार करता हूँ।

भूतनाथ—(प्रसन्नता से) आपकी सचाई पर भी मुझे उतना ही विश्वास है जितना एक और एक दो होने पर !

देवीसिंह—यह बात तो तुम सच नहीं कहते !

भूतनाथ—(चौंक कर) सो कैसे ?

वेवीसिंह—इसी से कि तुमने भेद की कोई बात आज तक मुझसे नहीं कही, यहाँ तक कि इस जगह आने की इच्छा भी मुझ पर प्रकट न की।

भूतनाथ—(शर्मिन्दगी से सिर नीचा करके) बेशक यह मेरा कसूर है जिसके लिए (हाथ जोड़ कर) मैं आपसे माफी माँगता हूँ, क्योंकि मैं इस बात को अच्छी तरह देख चुका हूँ कि आपने अपनी बात का निर्वाह पूरा-पूरा किया।

देवीसिंह—खैर, अब भी अगर तुम मुझे अपना विश्वासपात्र समझोगे तो मेरे दिल का रंज निकल जायगा, असल तो यह है कि इस मौके पर तुमसे मिलने के लिए ही मैंने यहाँ आने का इरादा भी किया क्योंकि मुझे विश्वास था कि तुम यहाँ जरूर आओगे। ख़ैर अब तुम अपने कौल और इक़रार को याद रक्खो और इस समय इन सब बातों को इसी जगह छोड़कर इस बात पर विचार करो कि अब हम लोगों को क्या करना

---

1. देखिए ग्यारहवें भाग का आखिरी बयान।

चाहिए । मैं समझता हूँ कि तुम्हारे पास तिलिस्मी खंजर मौजूद है ।

भूतनाथ—जी हाँ, (खंजर की तरफ इशारा करके) यह तैयार है ।

देवीसिंह—(अपने खंजर की तरफ बता के) मेरे पास भी है ।

भूतनाथ—आपको कहाँ से मिला ?

देवीसिंह—तेजसिंह ने दिया था । यह वही खंजर है जो मनोरमा के पास था, कम्बख्त ने इसके जोड़ की अँगूठी अपनी जाँघ के अन्दर छिपा रक्खी थी जिसका पता बड़ी मुश्किल से लगा और तब से इस ढंग को मैंने भी पसन्द किया ।

भूतनाथ—अच्छा, तो अब आपकी क्या राय होती है ? यहाँ से निकल भागने की कोशिश की जाय या यहाँ रह कर कुछ भेद जानने की ?

देवीसिंह—इन दोनों खंजरों की बदौलत शायद हम यहाँ से निकल जा सकें, मगर ऐसा करना न चाहिए । अब जब गिरफ्तार होने की शर्मिन्दगी उठा ही चुके तो बिना कुछ किये चले जाना उचित नहीं है, जिस पर यहाँ आकर मैंने अपनी स्त्री को और तुमने अपनी स्त्री को देख लिया, अब क्या बिना उन दोनों का असल भेद मालूम किये यहाँ से चलने की इच्छा हो सकती है !

भूतनाथ—बेशक ऐसा ही है···

इतना कहते-कहते भूतनाथ यकायक रुक गया, क्योंकि उसके कान में किसी के जोर से हँसने की आवाज आई और यह आवाज कुछ पहचानी हुई सी जान पड़ी । देवीसिंह ने भी इस आवाज पर गौर किया और उन्हें भी इस बात का शक हुआ कि इस आवाज को मैं कई दफा सुन चुका हूँ । मगर इस बात का कोई निश्चय वे दोनों नहीं कर सके कि यह आवाज किसकी है ।

देवीसिंह और भूतनाथ दोनों ही आदमी इस बात को गौर से देखने और जाँचने लगे कि यह आवाज किधर से आई या हम उसे किसी तरह देख भी सकते हैं या नहीं जिसकी यह आवाज है । यकायक उन दोनों ने दीवार में ऊपर की तरफ दो सूराख देखे जिनमें आदमी का सिर बखूबी जा सकता था । ये सूराख छत से हाथ भर नीचे हट कर बने हुए थे और हवा आने-जाने के लिए बनाये गये थे । दोनों को खयाल हुआ कि इसी सूराख में से आवाज आती है और उसी समय पुनः हँसने की आवाज आने से इस बात का निश्चय हो गया ।

फौरन ही दोनों के मन में यह बात पैदा हुई कि किसी तरह उस सूराख तक पहुँच कर देखना चाहिए कि कुछ दिखाई देता है या नहीं, मगर इस ढंग से कि उस दूसरी तरफ वालों को हमारी इस ढिठाई का पता न लगे ।

हम लिख चुके हैं कि इस कमरे में दो चारपाइयाँ बिछी हुई थीं । देवीसिंह ने उन्हीं दोनों चारपाइयों को उस सूराख तक पहुँचने का जरिया बनाया, अर्थात् बिछावन हटा देने के बाद एक चारपाई दीवार के सहारे खड़ी करके दूसरी चारपाई उसके ऊपर खड़ी की और कमन्द से दोनों के पाये अच्छी तरह मजबूती के साथ बाँधकर एक प्रकार की सीढ़ी तैयार की । इसके बाद देवीसिंह ने भूतनाथ के कन्धे पर चढ़कर कन्दील की रोशनी बुझा दी और तब उस चारपाई की अनूठी सीढ़ी पर चढ़ने का विचार किया ।

उस समय मालूम हुआ कि उस सूराख में से थोड़ी-थोड़ी रोशनी भी आ रही है। भूतनाथ ने नीचे खड़े रहकर चारपाई को मजबूती के साथ थामा और बुनावट के सहारे अँगूठा अड़ाते हुए देवीसिंह ऊपर चढ़ गये। वे सूराख टेढ़े अर्थात् दूसरी तरफ को झुकते हुए थे। एक सूराख में गर्दन डालकर देवीसिंह ने देखना शुरू किया। उधर नीचे की मंजिल में एक बहुत बड़ा कमरा था जिसकी ऊँची छत इस कमरे की छत के बराबर पहुँची हुई थी जिसमें देवीसिंह और भूतनाथ थे। उस कमरे में सजावट की कोई चीज न थी सिर्फ जमीन पर साफ-सफेद फर्श बिछा हुआ और दो शमादान जल रहे थे। वहाँ पर देवीसिंह ने दो नकाबपोशों को ऊँची गद्दी पर और चार को गद्दी के नीचे बैठे हुए पाया और एक तरफ जिधर कोई मर्द न था अपनी और भूतनाथ की स्त्री को भी देखा। ये लोग आपस में धीरे-धीरे बातें कर रहे थे। इनकी बातें साफ समझ में नहीं आती थी, जो कुछ टूटी-फूटी बातें सुनने में आईं उनका मतलब यही था कि सुरंग का दरवाजा बन्द करने में भूल हो जाने के सबब से भूतनाथ और देवीसिंह वहाँ आ गये, अतः अब ऐसी भूल न होनी चाहिए जिसमें यहाँ तक कोई आ सके इत्यादि। इसी बीच में एक और भी नकाबपोश वहाँ आ पहुँचा जो इस समय अपने नकाब को उलट कर सिर के ऊपर फेंके हुए था। इस आदमी की सूरत देखते ही देवीसिंह ने पहचान लिया कि भूतनाथ का लड़का और कमला का सगा तथा बड़ा भाई हरनामसिंह है। देवीसिंह ने अपनी जिन्दगी में हरनाम-सिंह को शायद एक या दो दफे किसी मौके पर देखा होगा, इसलिए उसको पहचान तो लिया मगर ताज्जुब के साथ-ही-साथ शक बना रहा, अस्तु इस शक को मिटाने के लिए देवीसिंह नीचे उतर आये और चारपाई को खुद पकड़ कर भूतनाथ को ऊपर चढ़ने और उस सूराख के अन्दर झाँकने के लिए कहा।

जब भूतनाथ चारपाई की बिनत के साहारे ऊपर चढ़ गया और उस सूराख में झाँककर देखा तो अपने लड़के हरनामसिंह को पहचान कर उसे बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वह बड़े गौर से देखने तथा उन लोगों की बातें सुनने लगा।

पाठक, ताज्जुब नहीं कि आप इस हरनामसिंह को एक दम ही भूल गये हों क्यों कि जहाँ तक हमें याद है इसका नाम शायद चन्द्रकान्ता-सन्तति के दूसरे भाग के पाँचवें बयान में आकर रह गया और फिर कहीं इसका जिक्र तक नहीं आया। यह वह हरनामसिंह नहीं है जो मायारानी का ऐयार था, बल्कि यह कमला का बड़ा भाई तथा खास भूतनाथ का पहला और असल लड़का हरनामसिंह है। इसे बहुत दिनों के बाद आज यहाँ देखकर आप निःसन्देह आश्चर्य करेंगे, परन्तु खैर, अब हम यह लिखते हैं कि भूतनाथ ने सूराख के अन्दर झाँक कर क्या देखा।

भूतनाथ ने देखा कि उसका लड़का हरनामसिंह गद्दी के ऊपर बैठे हुए दोनों नकाबपोशों के सामने खड़ा है और सदर दरवाजे की तरफ बड़े गौर से देख रहा है। उसी समय एक आदमी लपेटे हुए मोटे कपड़े का बहुत बड़ा लम्बा पुलिन्दा लिए हुए आ पहुँचा और इस पुलिन्दे को गद्दी पर रख के खड़ा हो हाथ जोड़कर भर्राई हुई आवाज में बोला, "कृपानाथ, बस मैं इसी का दावा भूतनाथ पर करूँगा।"

गद्दी के नीचे बैठे हुए दो आदमियों ने इशारा पाकर लपेटे हुए कपड़े को खोला

और तब भूतनाथ ने भी देखा कि वह एक बहुत बड़ी और आदमी के कद के बराबर तस्वीर है।

उस तस्वीर पर निगाह पड़ते ही भूतनाथ की अवस्था बिगड़ गई और वह डर के मारे थरथर काँपने लगा। बहुत कोशिश करने पर भी वह अपने को सम्हाल न सका और उसके मुँह से एक चीख की आवाज निकल ही गई अर्थात् वह चिल्ला उठा। उसी समय उसने यह भी देखा कि आवाज उन लोगों के कानों में पहुँच गई और इस सबब से वे लोग ताज्जुब के साथ ऊपर की तरफ देखने लगे।

भूतनाथ जल्दी के साथ चारपाई से नीचे उधर आया और काँपती हुई आवाज में देवीसिंह से बोला, "ओफ, मैं अपने को सम्हाल नहीं सका और मेरे मुँह से चीख की आवाज निकल ही गई जिसे उन लोगों ने सुन लिया। ताज्जुब नहीं कि उन लोगों में से कोई यहाँ आये, अस्तु आप जो उचित समझिये कीजिये, कुछ देर बाद मैं अपना हाल आपसे कहूँगा।" इतना कह भूतनाथ जमीन पर बैठ गया।

देवीसिंह ने झटपट अपने बटुए में से सामान निकालकर मोमबत्ती जलाई, दो-तीन डपट की बातें कह भूतनाथ को चैतन्य किया और उसके मोढ़े पर चढ़कर कन्दील जलाने के बाद मोमबत्ती बुझाकर बटुए में रख ली और इसके बाद दोनों चारपाई उसी तरह दुरुस्त कर दीं जिस तरह पहले थीं, इसके बाद एक चारपाई पर भूतनाथ को सुला कर पेट-दर्द का बहाना करने और 'हाय-हाय' करके कराहने के लिए कहकर आप उसी चारपाई के सहारे बैठ गये। उसी समय कमरे का दरवाजा खुला और तीन-चार नकाबपोश अन्दर आते हुए दिखाई पड़े।

उन आदमियों ने पहले तो गौर से कमरे के अन्दर की अवस्था देखी और तब उनमें से एक ने आगे बढ़कर देवीसिंह से पूछा, "क्या अभी तक आप लोग जाग रहे हैं?"

देवीसिंह—हाँ (भूतनाथ की तरफ इशारा करके) इनके पेट में यकायक दर्द पैदा हो गया और बड़ी तकलीफ है, अक्सर दर्द की तकलीफ से चिल्ला उठते हैं।

नकाबपोश—(भूतनाथ की तरफ देख के) आज यहाँ कुछ खाने में भी तो नहीं आया।

देवीसिंह—पहले ही की कुछ कसर होगी।

नकाबपोश—फिर कुछ दवा वगैरह का बन्दोबस्त किया जाय?

देवीसिंह—मैंने दो दफे दवा खिलाई है, अब तो कुछ आराम हो रहा है, पहले बड़ी तेजी पर था।

इतना सुनकर वे लोग चले गये और जाते समय पहले की तरह दरवाजा पुनः बन्द करते गये।

अब फिर उस कमरे में सन्नाटा हो गया और भूतनाथ तथा देवीसिंह को धीरे-धीरे बातचीत करने का मौका मिला।

देवीसिंह—हाँ अब बताओ तुमने पिछले कमरे में क्या देखा और तुम्हारे मुँह से चीख की आवाज क्यों निकल गई?

भूतनाथ—ओफ, मेरे प्यारे दोस्त देवीसिंह, क्योंकि अब मैं आपको खुशी और

सच्चे दिल से अपना दोस्त कह सकता हूँ चाहे आप मुझसे हर तरह पर बड़े क्यों न हों, उस कमरे में जो कुछ मैंने देखा, वह मुझे दहला देने के लिए काफी था। पहले तो वहां मैंने अपने लड़के को देखा जिसे उम्मीद है कि आपने भी देखा होगा।

देवीसिंह—बेशक उसे मैंने देखा था, मगर शक मिटाने के लिए तुम्हें दिखाना पड़ा, चाहे वह कोई ऐयार ही सूरत बदले क्यों न हो, मगर शक्ल ठीक वैसी ही थी।

भूतसिंह—अगर उसकी सूरत बनावटी नहीं है तो वह मेरा लड़का हरनामसिंह ही है, खैर उसके बारे में तो मुझे कुछ ज्यादा तरद्दुद न हुआ मगर उसके कुछ ही देर बाद मैंने एक ऐसी चीज देखी कि जिससे मुझे हौल हो गया और मेरे मुँह से चीख की आवाज निकल पड़ी।

देवीसिंह—वह क्या चीज थी ?

भूतनाथ—एक बहुत बड़ी तस्वीर थी जिसे एक आदमी ने पहुँच कर उन नकाबपोशों के आगे रख दिया जो गद्दी पर बैठे हुए थे और कहा, "बस, मैं इसी का दावा भूतनाथ पर करूँगा।"

देवीसिंह—वह किसकी तस्वीर थी, किसी मर्द की या औरत की ?

भूतनाथ—(एक लम्बी साँस लेकर) वह औरत-मर्द, जंगल-पहाड़, बस्ती-उजाड़ सभी की तस्वीर थी, मैं क्या बताऊँ कि किसकी तस्वीर थी। एक यही बात है जिसे मैं अपने मुँह से नहीं निकाल सकता! मगर अब मैं आपसे कोई बात न छिपाऊँगा चाहे कुछ भी क्यों न हो। आप यह अच्छी तरह जानते ही हैं कि मैं उस पीतल की संदूकड़ी से कितना डरता हूँ जो नकली बलभद्रसिंह की दी हुई अभी तक तेजसिंह के पास है।

देवीसिंह—मैं खूब जानाता हूँ और उस दिन भी मेरा खयाल उसी सन्दूकड़ी की तरफ चला गया था जब एक नकाबपोश ने दरबार में खड़े होकर तुम्हारी तारीफ की थी और तुम्हें मुँहमाँगा इनाम देने के लिए कहा था।

भूतनाथ—ठीक है, बलभद्रसिंह ने भी मुझे यही कहा था कि 'ये नकाबपोश तुम्हारे मददगार हैं और तुम्हारा भेद ढके रहने के लिए महाराज से यह सन्दूकड़ी तुम्हें दिलाना चाहते हैं। मैं भी यह सोचकर प्रसन्न था और चाहता था कि मुकदमा फैसल होने के पहले ही इनाम माँगने का मुझे कोई मौका मिला जाय, मगर इस तस्वीर ने जिसे मैं अभी देख चुका हूँ मेरी हिम्मत तोड़ दी और मैं पुन: अपनी जिन्दगी से नाउम्मीद हो गया हूँ।

देवीसिंह—तो उस सन्दूकड़ी से और इस तस्वीर से क्या सम्बन्ध ?

भूतसिंह—वह सन्दूकड़ी अपने पेट में जिस भेद को छिपाये हुए है उसी भेद को यह तस्वीर प्रकट करती है। इसके अतिरिक्त मैं सोचे हुए था कि अब उसका कोई दावेदार नहीं है मगर अब मालूम हो गया कि उसका दावेदार भी आ पहुँचा और उसी ने यह तस्वीर नकाबपोश के आगे पेश की!

देवीसिंह—क्या तुम यह नहीं बता सकते कि उस सन्दूकड़ी और इस तस्वीर मे क्या भेद है ?

भूतसिंह—(लम्बी साँस लेकर) अब मैं आपसे कोई बात छिपा न रक्खूंगा मगर

इतना समझ रखिये कि उस भेद को सुनकर आप अपने ऊपर एक तरद्दुद का बोझा डाल लेंगे।

देवीसिंह—खैर जो कुछ होगा सहना ही पड़ेगा और तुम्हारी मदद भी करनी ही पड़ेगी, मगर सबके पहले मैं यह जानना चाहता हूँ कि उस भेद से हमारे महाराज का भी कुछ सम्बन्ध है या नहीं ?

भूतसिंह—अगर कुछ सम्बन्ध है भी तो केवल इतना ही कि उस भेद को सुनकर वे मुझ पर घृणा करेंगे, नहीं तो महाराज से और उस भेद से कुछ सम्बन्ध नहीं। मैंने महाराज के विपक्ष में कोई बुरा काम नहीं किया, जो कुछ बुरा किया है वह सिर्फ अपने और अपने दुश्मनों के साथ।

देवीसिंह—जब महाराज से उस भेद का कोई सम्बन्ध ही नहीं है तो मैं हर तरह पर तुम्हारी मदद कर सकता हूँ, अच्छा तो अब बताओ कि वह कौन सा भेद है ?

भूतनाथ—इस समय न पूछिये क्योंकि हम लोग विचित्र स्थान में कैद हैं, ताज्जुब नहीं कि हम दोनों की बातें कोई किसी जगह पर छिपकर सुनता हो। हाँ, मैदान में निकल चलने पर जरूर कहूँगा।

देवीसिंह—अच्छा यह तो बताओ कि उस आदमी की सूरत भी तुमने अच्छी तरह देख ली या नहीं, जिसने यह तस्वीर नकाबपोश के आगे पेश की थी ?

भूतनाथ—हाँ, उसकी सूरत मैंने बखूबी देखी थी। मैं खूब पहचानता हूँ, क्यों कि दुनिया में मेरा सबसे बड़ा दुश्मन वही है और उसे अपनी ऐयारी का भी घमंड है।

देवीसिंह—अगर वह तुम्हारे कब्जे में आ जाये तो ?

भूतनाथ—जरूर उसे फँसाने बल्कि मार डालने की फिक्र करूँगा ! मैं तो उसकी तरफ से बिल्कुल बेफिक्र हो गया था, मुझे इस बात की रत्ती भर उम्मीद न थी कि वह जीता है।

देवीसिंह—खैर कोई चिन्ता नहीं, जैसा होगा देखा जायगा, तुम अभी से हताश क्यों हो रहे हो !

भूतनाथ—अगर वह सन्दूकड़ी मुझे मिल जाती और उसके खुलने की नौबत न आती तो···

देवीसिंह—वह सन्दूकड़ी मैं तुम्हें दिला दूँगा और उसे किसी के सामने खुलने भी न दूँगा, उसकी तरफ से तुम बेफिक्र रहो।

भूतनाथ—(मुहब्बत से देवीसिंह का हाथ पकड़ के) अगर ऐसा करो तो क्या बात है !

देवीसिंह—ऐसा ही होगा। खैर, अब यह सोचना चाहिए कि इस समय हम लोगों को क्या करना उचित है। मैं समझता हूँ कि सुबह होने के साथ ही हम लोग इस हद के बाहर पहुँचा दिये जायेंगे।

भूतनाथ—मेरा खयाल भी यही है। लेकिन अगर ऐसा हुआ तो आपकी और मेरी स्त्री के बारे में किसी बात का पता न लगेगा।

देवीसिंह और भूतनाथ इस विषय पर बहुत देर तक बातचीत और राय पक्की

करते रहे, यहाँ तक कि सवेरा हो गया। कई नकाबपोश उस कमरे को खोलकर भूतनाथ तथा देवीसिंह के पास पहुँचे और उन्हें बाहर चलने के लिए कहा।

3

महाराज से जुदा होकर देवीसिंह और बलभद्रसिंह से बिदा होकर भूतनाथ ये दोनों ही नकाबपोशों का पता लगाने के लिए चले गये। बचा हुआ दिन और तमाम रात तो किसी ने इन दोनों की खोज न की मगर दूसरे दिन सवेरा होने के साथ ही इन दोनों की तलबी हुई और थोड़ी ही देर में जवाब मिला कि उन दोनों का पता नहीं है कि कहाँ गये और अभी तक क्यों नहीं आये। हमारे महाराज समझ गये कि देवीसिंह की तरह भूतनाथ भी उन्हीं दोनों नकाबपोशों का पता लगाने चला गया, मगर उन दोनों के न लौटने से एक तरह की चिन्ता पैदा हो गई और लाचार होकर आज दरबार-आम का जलसा बन्द रखना पड़ा।

दरबारे-आम के बन्द होने की खबर वहाँ वालों को तो मिल गई, मगर वे दोनों नकाबपोश अपने मामूली समय पर आ ही गये और उनके आने की इत्तिला तुरंत राजा वीरेन्द्रसिंह से की गई। उस समय राजा वीरेन्द्रसिंह एकान्त में तेजसिंह तथा और भी कई ऐयारों के साथ बैठ हुए देवीसिंह और भूतनाथ के बारे ही में बातें कर रहे थे। उन्होंने ताज्जुब के साथ नकाबपोशों का आना सुना और उसी जगह हाजिर करने का हुक्म दिया।

हाजिर होकर दोनों नकाबपोशों ने बड़े अदब से सलाम किया और आज्ञा पाकर महाराज से थोड़ी दूर पर तेजसिंह के बगल में बैठ गये। इस समय तखलिये का दरबार था तथा गिनती के मामूली आदमी बैठे हुए थे। राजा वीरेन्द्रसिंह को नकाबपोश की बातें सुनने का शौक था, इसलिए तेजसिंह के बगल ही में बैठने की आज्ञा दी और स्वयं बातचीत करने लगे।

वीरेन्द्रसिंह—आज भूतनाथ के न होने से मुकदमे की कार्रवाई रोक देनी पड़ी।

नकाबपोश—(अदब से हाथ जोड़कर)जी हाँ; मैंने यहाँ पहुँचने के साथ ही सुना कि "कल से देवीसिंहजी और भूतनाथ का पता नहीं है, इसलिए आज दरबार न होगा।" मगर ताज्जुब की बात है कि भूतनाथ और देवीसिंहजी एकसाथ कहाँ चले गये। मैं तो यही समझता हूँ कि भूतनाथ हम लोगों का पता लगाने को निकला है और उसका ऐसा करना कोई ताज्जुब की बात भी नहीं, मगर देवीसिंहजी बिना मर्जी के चले गये इस बात का ताज्जुब है।

वीरेन्द्रसिंह—देवीसिंह बिना मर्जी के नहीं चले गये बल्कि हमसे पूछ के गये हैं।

नकाबपोश—तो उन्हें महाराज ने हम लोगों का पीछा करने की आज्ञा क्यों दी? हम लोग तो महाराज के ताबेदार स्वयं ही अपना भेद कहने के लिए तैयार हैं और शीघ्र

ही समय पाकर अपने को प्रकट ही करेंगे, केवल मुकदमे की उलझन खोलने और कैदियों को निरुत्तर करने के लिए अपने को छिपाये हुए हैं ।

तेजसिंह—आप लोगों को शायद यह मालूम नहीं है कि भूतनाथ ने देवीसिंह को अपना दोस्त बना लिया है । जिस समय भूतनाथ के मुकदमे का बीज रोपा गया था उसके कई घण्टे पहले ही देवीसिंह ने उसकी सहायता करने की प्रतिज्ञा कर दी थी, क्योंकि वह भूतनाथ की चालाकी, ऐयारी तथा उसके अच्छे कामों से प्रसन्न थे ।

नकाबपोश - ठीक है, तब तो ऐसा होना ही चाहिए परन्तु कोई चिन्ता नहीं, भूतनाथ वास्तव में अच्छा आदमी है और उसे महाराज की सेवा का उत्साह भी है ।

तेजसिंह—इसके अतिरिक्त उसने हमारे कई काम भी बड़ी खूबी के साथ पूरे किये हैं ।

नकाबपोश—ठीक है ।

तेजसिंह—हाँ, मैं एक बात आपसे पूछना चाहता हूँ ।

नकाबपोश—आज्ञा !

तेजसिंह—निःसन्देह भूतनाथ और देवीसिंह आप लोगों का भेद लेने के लिए गये हैं, अतः आश्चर्य नहीं कि वे दोनों उस ठिकाने तक पहुँच गये हों जहाँ आप लोग रहते हैं और आपको उनका कुछ हाल भी मालूम हुआ हो !

नकाबपोश—न तो वे हम लोगों के डेरे तक पहुँचे और न हम लोगों को उनका कुछ हाल ही मालूम है । हम लोगों के विषय में हजारों आदमी बल्कि यों कहना चाहिए कि आजकल यहाँ जितने लोग इकट्ठे हो रहे हैं, सभी आश्चर्य करते हैं और इसलिए जब हम लोग यहाँ आते हैं तो सैकड़ों आदमी चारों तरफ से घेर लेते हैं और जाते समय तो कोसों तक का पीछा करते हैं इसलिए हम लोगों को भी बहुत घूम-फिर तथा लोगों को भुलावा देते हुए अपने डेरे की तरफ जाना पड़ता है ।

तेजसिंह—तब तो उन दोनों का न लौटना आश्चर्य है ।

नकाबपोश—बेशक, अच्छा तो आज हम लोग कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का कुछ हाल महाराज को सुनाते जायँ, आखिर आ गये हैं तो कुछ काम करना ही चाहिए ।

वीरेन्द्रसिंह—(ताज्जुब से) उनका कौन-सा हाल ?

नकाबपोश—वही तिलिस्म के अन्दर का हाल । जब तक राजा गोपालसिंह वहाँ थे तब तक का हाल तो उनकी जुबानी आपने सुना ही होगा मगर उसके बाद क्या हुआ और तिलिस्म में उन दोनों भाइयों ने क्या किया, सो न सुना होगा । वह सब हाल हम लोग सुना सकते हैं, यदि आज्ञा हो तो…।

वीरेन्द्रसिंह—(ज्यादा ताज्जुब के साथ)कब तक का हाल आप सुना सकते हैं ?

नकाबपोश—आज तक का हाल, बल्कि आज के बाद भी रोज-रोज का हाल तब तक बराबर सुना सकते हैं जब तक उनके यहाँ आने में दो घण्टे की देर हो ।

वीरेन्द्रसिंह—हम बड़ी प्रसन्नता से उनका हाल सुनने के लिए तैयार हैं, बल्कि हम चाहते हैं कि गोपालसिंह और अपने पिताजी के सामने वह हाल सुनें ।

नकाबपोश—जो आज्ञा, मैं सुनाने के लिए तैयार हूँ।

वीरेन्द्रसिंह—मगर वह सब हाल आप लोगों को कैसे मालूम हुआ होता है, और होगा ?

नकाबपोश—(हाथ जोड़कर)इसका जवाब देने के लिए मैं अभी तैयार नहीं हूँ, लेकिन यदि महाराज मजबूर करेंगे तो लाचारी है, क्योंकि हम लोग महाराज को अप्रसन्न भी नहीं किया चाहते हैं।

वीरेन्द्रसिंह—मुस्कराकर) हम तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कोई काम करना भी नहीं चाहते।

इतना कहकर वीरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह की तरफ देखा। तेजसिंह स्वयं उठकर महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास गये और थोड़ी ही देर में लौटकर बोले, "चलिए, महाराज बैठे हैं और आप लोगों का इन्तजार कर रहे हैं।" सुनते ही सब लोग उठ खड़े हुए और राजा सुरेन्द्रसिंह की तरफ चले। उसी समय तेजसिंह ने एक ऐयार राजा गोपालसिंह के पास भेज दिया।

4

महाराजा सुरेन्द्रसिंह का दरबारे-खास लगा हुआ है। जीतसिंह, वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, गोपालसिंह और भैरोंसिंह वगैरह अपने खास ऐयारों के अतिरिक्त कोई गैर आदमी यहाँ दिखाई नहीं देता। महाराज की आज्ञानुसार एक नकाबपोश ने कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का हाल इस तरह कहना शुरू किया—

नकाबपोश—जब तक राजा गोपालसिंह वहाँ रहे तब तक का हाल तो इन्होंने आपसे कहा ही होगा, अब मैं उसके बाद का हाल बयान करूँगा।

राजा गोपालसिंह से बिदा हो दोनों कुमार उसी बावली पर पहुँचे। जब राजा गोपालसिंह सबको लिए हुए वहाँ से चले गये उस समय सवेरा हो चुका था, अतएव दोनों भाई जरूरी काम और प्रातःकृत्य से छुट्टी पाकर बावली के अन्दर उतरे। निचली सीढ़ी पर पहुँचकर आनन्दसिंह ने अपने कुल कपड़े उतार दिए और केवल लंगोट पहने हुए जल के अन्दर बीचोंबीच में जा गोता लगाया। वहाँ जल के अन्दर एक छोटा-सा चबूतरा था और उस चबूतरे के बीचोंबीच में लोहे की मोटी कड़ी लगी हुई थी। जल में जाकर उसी को आनन्दसिंह ने उखाड़ लिया और इसके बाद जल के बाहर चले आए। बदन पोंछकर कपड़े पहन लिए, लंगोट सूखने के लिए फैला दिया और दोनों भाई सीढ़ी पर बैठकर जल के सूखने का इन्तजार करने लगे।

जिस समय आनन्दसिंह ने जल में जाकर वह लोहे की कड़ी निकाल ली, उसी समय से बावली का जल तेजी के साथ घटने लगा, यहाँ तक कि दो घण्टे के अन्दर ही बावली खाली हो गई और सिवा कीचड़ के उसमें कुछ न रहा, और वह कीचड़ भी मालूम होता

था कि बहुत जल्द सूख जायेगा, क्योंकि नीचे की जमीन पक्की और संगीन बनी हुई थी; केवल नाम मात्र को मिट्टी या कीचड़ का हिस्सा उस पर था। इसके अतिरिक्त किसी सुरंग या नाली की राह निकल जाते हुए पानी ने भी बहुत-कुछ सफाई कर दी थी।

बावली के नीचे वाली चारों तरफ की अन्तिम सीढ़ी लगभग तीन हाथ के ऊँची थी और उसकी दीवार में चारों तरफ चार दरवाजों के निशान बने हुए थे जिसमें से पूरब की तरफ वाले निशान को दोनों कुमारों ने तिलिस्मी खंजर से साफ किया। जब उसके आगे वाले पत्थरों को उखाड़कर अलग किया तो अन्दर जाने के लिए रास्ता दिखाई दिया जिसके विषय में कह सकते हैं कि वह एक सुरंग का मुहाना था और इस ढंग से बन्द किया गया था जैसा कि ऊपर बयान कर चुके हैं।

इसी सुरंग के अन्दर कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को जाना था, मगर पहर भर तक उन्होंने इस खयाल से उसके अन्दर जाना मौकूफ रखा था कि उसके अन्दर से पुरानी हवा निकलकर ताजी हवा भर जाये, क्योंकि यह बात उन्हें पहले ही से मालूम थी कि दरवाजा खुलने के बाद थोड़ी ही देर में उसके अन्दर की हवा साफ हो जायेगी।

पहर भर दिन बाकी था जब दोनों कुमार उस सुरंग के अन्दर घुसे और तिलिस्मी खंजर की रोशनी करते हुए आधे घण्टे तक बराबर चले गये। सुरंग में कई जगह ऐसे सूराख बने हुए थे जिनमें से रोशनी तो नहीं मगर हवा तेजी के साथ आ रही थी और यही सबब था कि उसके अन्दर की हवा थोड़ी देर में साफ हो गई।

आप सुन चुके होंगे कि तिलिस्मी बाग के चौथे दर्जे में(जहाँ के देवमन्दिर में दोनों कुमार कई दिन तक रह चुके हैं)देवमन्दिर के अतिरिक्त चारों तरफ चार मकान बने हुए थे[1] और उसमें से उत्तर की तरफ वाला मकान गोलाकार स्याह पत्थर का बना हुआ था तथा उसके चारों तरफ चर्खियाँ और तरह-तरह के कल-पुर्जे लगे हुए थे। उस सुरंग का दूसरा मुहाना उसी मकान के अन्दर था और इसीलिए सुरंग के बाहर होकर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने अपने को उसी मकान में पाया। इस मकान के चारों तरफ एक गोलाकार दालान के अतिरिक्त कोई कोठरी या कमरा न था। बीच में एक संगमरमर का चबूतरा था और उस पर स्याह रंग का एक मोटा आदमी बैठा हुआ था जो जाँच करने पर मालूम हुआ कि लोहे का है। उसी आदमी के सामने की तरफ दालान में सुरंग का वह मुहाना था जिसमें से दोनों कुमार निकले थे। उसी सुरंग की बगल में एक और सुरंग थी और उसके अन्दर उतरने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। चारों तरफ देख-भाल करने के बाद दोनों कुमार उसी सुरंग में उतर गये और आठ-दस सीढ़ी नीचे उतर जाने के बाद देखा कि सुरंग खुलासा है तथा बहुत दूर तक चली गई है। लगभग सौ कदम तक दोनों कुमार बे-खटके चले गये और इसके बाद वे एक छोटे से बाग में पहुँचे जिसमें खूबसूरत पेड़-पत्तों का तो कहीं नाम-निशान भी न था हाँ, जंगली बेर, मकोय तथा केले के पेड़ों की कमी भी न थी। दोनों कुमार सोचे हुए थे कि यहाँ भी और जगहों की तरह हम सन्नाटा पाएँगे किसी आदमी की सूरत दिखाई न देगी मगर ऐसा न था। वहाँ कई आदमियों को इधर-

---

1. देखिए नौवाँ भाग, पहला बयान।

उधर घूमते देख दोनों कुमारों को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वे गौर से उन आदमियों की तरफ देखने लगे जो बिल्कुल जंगली और भयानक मालूम पड़ते थे।

वे आदमी गिनती में पाँच थे और उन लोगों ने भी दोनों कुमारों को देखकर उतना ही ताज्जुब किया जितना कुमारों ने उनको देखकर। वे लोग इकट्ठे होकर कुमार के पास चले आये और उनमें से एक ने आगे बढ़कर कुमार से पूछा, "क्या आप दोनों के साथ भी वही सलूक किया गया जो हम लोगों के साथ किया गया था? मगर ताज्जुब है कि आपके कपड़े और हरबे छीने नहीं गए और आप लोगों के चेहरे पर भी किसी तरह का रंज नहीं मालूम पड़ता !"

इन्द्रजीतसिंह—तुम लोगों के साथ क्या सलूक किया गया ? तुम लोग कौन हो ?

आदमी—हम लोग कौन हैं, इसका जवाब देना सहज नहीं है और न आप थोड़ी देर में इसका जवाव सुन ही सकते हैं, मगर आप अपने बारे में सहज में बता सकते हैं कि किस कसूर पर यहाँ पहुँचाए गये ?

इन्द्रजीतसिंह—हम दोनों तिलिस्म को तोड़ते और कई कैदियों को छुड़ाते हुए अपनी खुशी से यहाँ तक आये हैं और अगर तुम लोग कैदी हो तो समझ रखो कि अब इस कैद की अवधि पूरी हो गई और बहुत जल्द अपने को स्वतन्त्र विचरते हुए देखोगे।

आदमी—हमें कैसे विश्वास हो कि जो कुछ आप कह रहे हैं वह सच है ?

इन्द्रजीतसिंह—अभी नहीं तो थोड़ी देर में स्वयं विश्वास हो जायेगा।

इतना कहकर कुमार आगे की तरफ बढ़े और वे लोग उन्हें घेरे हुए साथ-साथ जाने लगे। इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को विश्वास हो गया कि सरयू की तरह ये लोग भी इस तिलिस्म में कैद किये गये हैं और दारोगा या मायारानी ने इनके साथ यह सलूक किया है, और वास्तव में बात भी ऐसी ही थी।

इन आदमियों की उम्र यद्यपि बहुत ज्यादा न थी, मगर रंज, गम और तकलीफ की बदौलत सूखकर काँटा हो गये थे। सिर और दाढ़ी के बालों ने बढ़ और उलझकर उनकी सूरत डरावनी कर दी थी और चेहरे की जर्दी तथा गड्ढे में घुसी हुई आँखें उनकी बुरी अवस्था का परिचय दे रही थीं।

इस बाग में पानी का एक चश्मा था और वही इन कैदियों की जिन्दगी का सहारा था, मगर इस बात का पता नहीं लग सकता था कि पानी कहाँ से आता है और निकलकर कहाँ चला जाता है। इसी नहर की बदौलत यहाँ की जमीन का बहुत बड़ा हिस्सा तर हो रहा था और इस सबब से उन कैदियों को केला वगैरह खाकर अपनी जान बचाये रहने का मौका मिलता था।

बाग के बीचोंबीच में बीस या पच्चीस हाथ ऊँचा एक बुर्ज था और उस बुर्ज के चारों तरफ स्याह पत्थर का कमर बराबर ऊँचा चबूतरा बना हुआ था, मगर इस बात का पता नहीं लगता था कि इस बुर्ज पर चढ़ने के लिए कोई रास्ता भी है या नहीं, अगर है तो कहाँ से है। दोनों कुमार उस चबूतरे पर बेधड़क जाकर बैठ गये और तब इन्द्रजीतसिंह ने उन कैदियों की तरफ देखकर कहा, "कहो, अब तुम्हें विश्वास हुआ कि जो कुछ हमने कहा था, वह सच है ?"

आदमी—-जी हाँ, अब हम लोगों को विश्वास हो गया, क्योंकि हम लोगों ने इस चबूतरे को कई दफे आजमाकर देख लिया है। इस पर बैठना तो दूर रहा, हम इसे छूने के साथ ही बेहोश हो जाते थे, मगर ताज्जुब है कि आप पर इसका असर कुछ भी नहीं होता।

इन्द्रजीतसिंह--इस समय तुम लोग भी इस चबूतरे पर बैठ सकते हो जब तक हम बैठे हैं।

आदमी—(चबूतरा छूने की नीयत से बढ़ता हुआ) क्या ऐसा हो सकता है ?

इन्द्रजीतसिंह—आजमा के देख लो।

उस आदमी ने चबूतरा छूआ मगर उस पर कुछ बुरा असर न हुआ और तब कुमार की आज्ञा पा वह चबूतरे पर बैठ गया। उसकी देखा-देखी सभी आदमी उस चबूतरे पर बैठ गये और जब किसी तरह का बुरा असर होते न देखा, तब हाथ जोड़कर कुमार से बोले, "अब हम लोगों को आपकी बात में किसी तरह का शक न रहा, आशा है कि आप कृपा करके अपना परिचय देंगे।"

जब कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने अपना परिचय दिया, तब सब-के-सब उनके पैरों पर गिर पड़े और डबडबाई आँखों से उनकी तरफ देखकर बोले, "दुहाई है, महाराज की ! हमारे मामले पर विचार होकर दुष्टों को दण्ड मिलना चाहिए।"

इतना कहकर नकाबपोश चुप हो गया और कुछ सोचने लगा। इसी समय वीरेन्द्रसिंह ने उससे कहा, "मालूम होता है कि उस चबूतरे में बिजली का असर था और इस सबब से उसे कोई छू नहीं सकता था, मगर दोनों लड़कों के पास बिजली वाला तिलिस्मी खंजर मौजूद था और उसके जोड़ की अँगूठी भी, इसलिए तब तक के लिए उसका असर जाता रहा, जब तक दोनों लड़के उस पर बैठे रहे।"

नकाबपोश—(हाथ जोड़कर) जी, बेशक यही बात है।

वीरेन्द्रसिंह—अच्छा, तब क्या हुआ ?

नकाबपोश—इसके बाद कुमार ने उन सबका हाल पूछा और उन सबने रो-रोकर अपना हाल बयान किया।

वीरेन्द्रसिंह—उन लोगों ने अपना हाल क्या कहा ?

नकाबपोश—मैं यही सोच रहा था कि उन लोगों ने जो कुछ अपना हाल बयान किया वह मैं इस समय कहूँ या न कहूँ।

तेजसिंह—क्या उन लोगों का हाल कहने में कोई हर्ज है ? आखिर हम लोगों को मालूम तो होगा ही।

नकाबपोश—-जरूर मालूम होगा और मेरी ही जुबानी मालूम होगा। मैं जो कहने से रुकता हूँ, वह केवल एक ही दो दिन के लिए, हमेशा के लिए नहीं।

तेजसिंह—यही बात है तो हमें एक दिन के लिए कोई जल्दी भी नहीं।

नकाबपोश—(हाथ जोड़कर) अतः अब आज्ञा हो तो हम लोग डेरे पर जायें। कल पुनः सभा में उपस्थित होकर यदि देवीसिंह और भूतनाथ न आये, तो कुमार का हाल सुनावेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—(इशारे से जाने की आज्ञा देकर)तुम दोनों ने इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का हाल सुनाकर अपने विषय में हम लोगों आश्चर्य को और भी बढ़ा दिया।

दोनों नकाबपोश उठ खड़े हुए और अदब के साथ सलाम करके वहाँ से रवाना हुए।

5

देवीसिंह और भूतनाथ की यह इच्छा न थी कि आज सवेरा होते ही हम लोग यहाँ से चले जायें और अपनी स्त्रियों के किसी तरह की जाँच न करें, मगर लाचारी थी, क्योंकि नकाबपोशों की इच्छा के विरुद्ध वे यहाँ नहीं रह सकते थे, साथ ही इसके मकान-मालिक की मेहरबानी और मीठे बर्ताव का भी उन्हें वैसा ही खयाल था, जैसाकि इस मजबूरी की अवस्था में होना चाहिए। सवेरा होने पर जब कई नकाबपोश उनके सामने आये और उन्हें बाहर निकलने के लिए कहा तो देवीसिंह और भूतनाथ उठ खड़े हुए और कमरे के बाहर निकल उनके पीछे-पीछे रवाना हुए। जब मकान के नीचे उतरकर मैदान में पहुँचे तो देवीसिंह का इशारा पाकर भूतनाथ ने नकाबपोश से कहा, "हम तुम्हारे मकान-मालिक से एक दफे और मिलना चाहते हैं।

नकाबपोश—इस समय उनसे मुलाकात नहीं हो सकती।

भूतनाथ—अगर घण्टे या दो घण्टे में मुलाकात हो सके तो हम लोग ठहर जायें।

नकाबपोश—नहीं, अब मुलाकात हो ही नहीं सकती। उन्होंने रात ही को जो हुक्म दे रखा था, हम लोग उसको पूरा कर रहे हैं।

भूतनाथ—हम लोगों को कोई जरूरी बात पूछनी हो तो ?

नकाबपोश—एक चिट्ठी लिखकर रख जाओ, उसका जवाब तुम्हारे पास पहुँच जायेगा।

भूतनाथ—अच्छा, यह बताओ कि यहाँ हम लोगों ने गिरफ्तार होने के पहले जिन दो औरतों को देखा था, उनसे भी मुलाकात हो सकती है या नहीं ?

नकाबपोश—नहीं, क्या उन लोगों को आपने खानदानी समझ रखा है ?

दूसरा नकाबपोश—इन सब फिजूल बातों से कोई मतलब नहीं और न हम लोगों को इतनी फुरसत ही है। आप लोग नाहक हम लोगों को रंज करते हैं और हमारे मालिक की उस मेहरबानी को एकदम भूल जाते हैं जिसकी बदौलत आप लोग कैदखाने की हवा खाने से बच गये।

भूतनाथ—(कुछ क्रोध-भरी आवाज में)अगर हम लोग यहाँ से न जायें तो तुम क्या करोगे ?

नकाबपोश—(रंज के साथ) जबरदस्ती निकाल बाहर करेंगे। आप लोग अपने तिलिस्मी खंजर के भरोसे न भूलियेगा, ऐसे-ऐसे तुच्छ खंजरों का काम हम लोग अपने नाखूनों से लेते हैं। बस, सीधी तरह कदम उठाइये और इस जमीन को अपनी मिलकियत न समझिये।

नकाबपोशों की बातें यद्यपि भूतनाथ और देवीसिंह को बुरी मालूम हुईं, मगर बहुत-सी बातों को सोच-विचारकर चुप ही रहे और तकरार करना उचित न जाना। सब नकाबपोशों ने मिलकर उन्हें खोह के बाहर किया और लौटते समय भूतनाथ और देवीसिंह से एक नकाबपोश ने कहा, "बस, अब इसके अन्दर आने का खयाल न कीजियेगा, कल दरवाजा खुला रह जाने के कारण आप लोग चले आये, मगर अब ऐसा मौका न मिलेगा।"

नकाबपोशों के चले जाने के बाद भूतनाथ और देवीसिंह वहाँ से रवाना हुए और कुछ दूर जाकर जंगल में एक घने पेड़ की छाया देखकर बैठ गये और यों बातचीत करने लगे—

भूतनाथ—कहिये, अब क्या इरादा है ?

देवीसिंह—बात तो यह है कि हम लोग नकाबपोशों के घर जाकर बेइज्जत हो गये। चाहे ये दोनों नकाबपोश कुछ भी कहें मगर मुझे निश्चय है कि दरबार में आने वाले दोनों नकाबपोश वही हैं जिनके हम मेहमान हुए थे। मुझे तो शर्म आयेगी जब दरबार में मैं उन्हें अपने सामने देखूँगा। इसके अतिरिक्त यदि यहाँ से जाकर अपनी स्त्री को घर में न देखूँगा, तो मेरे आश्चर्य, रंज और क्रोध की कोई हद न रहेगी।

भूतनाथ—यद्यपि मैं एक तौर पर बेहया हो गया हूँ, परन्तु आज की बेइज्जती दिल को फाड़े डालती है। बहुत ऐयारी की, मगर ऐसा जिक्र कभी नहीं उठा था, मेरी तो यहाँ से हटने की इच्छा नहीं होती, यही जी में आता है कि इनमें से एक-न-एक को अवश्य पकड़ना चाहिए और अपनी स्त्री के विषय में इतना कहना काफी है कि यदि अपने घर जाकर अपनी स्त्री को पा लिया तो मैं भी अपनी स्त्री की तरफ से बेफिक्र हो जाऊँगा।

देवीसिंह—करने के लिए तो हम लोग बहुत कुछ कर सकते हैं, मगर जब मैं उनके बर्ताव पर ध्यान देता हूँ, तब लाचारी आकर पल्ला पकड़ लेती है। जब एक बार उन्होंने हम लोगों को गिरफ्तार किया तो हर तरह का सलूक कर सकते थे, परन्तु किसी तरह की बुराई हमारे साथ नहीं की। दूसरे वे लोग स्वयं हमारे महाराज के दरबार में हाजिर हुआ करते हैं और समय पर अपने को प्रकट कर देने का वादा भी कर चुके हैं, ऐसी अवस्था में उनके साथ खोटा बर्ताव करते डर लगता है। कहीं ऐसा न हो कि वे लोग रंज हो जायें और दरबार में आना छोड़ दें, अगर ऐसा हुआ तो बड़ी बदनामी होगी और कैदियों का मामला भी आजकल के ढंग से अधूरा ही रह जायेगा !

भूतनाथ—आप बात तो ठीक कहते हैं, परन्तु···

देवीसिंह—नहीं, अब इस समय तरह देना ही उचित है। जिस तरह मैं अपनी बदनामी का खयाल करता हूँ, उसी तरह तुमको भी तो खयाल होगा !

भूतनाथ—जरूर ! यदि नकाबपोशों का कोई अकेला आदमी कब्जे में आ जाये

तो शायद काम निकल जाये और किसी को इस बात की खबर भी न हो।

इस तरह की बातें हो रही थीं कि उनके कानों में घोड़े के टापों की आवाज आई और दोनों ने घूमकर पीछे की तरफ देखा। एक नकाबपोश सवार आता हुआ दिखाई पड़ा जिस पर निगाह पड़ते ही भूतनाथ ने देवीसिंह से कहा, "यह भी जरूर उन्हीं में से है, भला एक दफे तो और कोशिश कीजिए और जिस तरह हो सके, इसे गिरफ्तार कीजिए, फिर जैसा होगा देखा जायेगा। बस, अब इस समय सोचने-विचारने का मौका नहीं है।"

वह सवार बिल्कुल बेफिक्री के साथ धीरे-धीरे आ रहा था, अतः ये दोनों भी उसके रास्ते के दोनों तरफ पेड़ों की आड़ देकर उसे गिरफ्तार करने की नीयत से खड़े हो गये। जब वह नकाबपोश सवार इन दोनों की सीध पर पहुँचा और आगे बढ़ना ही चाहता था, तभी भूतनाथ के हाथ की फेंकी हुई कमन्द उसके घोड़े के गले में जा पड़ी। घोड़ा भड़ककर उछलने-कूदने लगा और तब दोनों ने लपककर घोड़े की लगाम थाम ली। उस सवार ने खंजर खींचकर वार करना चाहा, मगर कुछ सोचकर रुक गया और साथ ही इसके इन दोनों को भी उसने लड़ने के लिए तैयार देखा।

नकाबपोश—(भूतनाथ से)तुम मुझे व्यर्थ क्यों रोकते हो ? मुझसे क्या चाहते हो ?

भूतनाथ—हम लोग तुम्हें किसी तरह की तकलीफ देना नहीं चाहते, बस, थोड़ी देर के लिए घोड़े से नीचे उतरो, और हमारी दो-चार बातों का जवाब देकर जहाँ जी में आवे, चले जाओ।

नकाबपोश—बहुत अच्छा, मगर नकाब हटाने के लिए जिद न करना।

इतना कहकर नकाबपोश घोड़े के नीचे उतर पड़ा और भूतनाथ ने उससे कहा, "लेकिन तुम्हें अपने चेहरे से नकाब हटाना पड़ेगा, और यह काम सबसे पहले होगा।" यह कहते-कहते भूतनाथ ने अपने हाथ से उसके चेहरे की नकाब उलट दी, मगर उसके चेहरे पर निगाह पड़ते ही चौंककर बोल बैठा, "हैं, यह तो मेरी स्त्री है जो नकाबपोशों के घर में दिखाई पड़ी थी !"

6

अपनी स्त्री की सूरत देखकर जितना ताज्जुब भूतनाथ को हुआ उतना ही आश्चर्य देवीसिंह को भी हुआ। यह विचारकर रंज-गम और गुस्से से देवीसिंह का सिर घूमने लगा कि इसी तरह मेरी स्त्री भी अवश्य नकाबपोशों के यहाँ होगी और हम लोगों को उसकी सूरत देखने में किसी तरह का भ्रम नहीं हुआ। यदि सोचा जाये, कि जिन दोनों औरतों को हम लोगों ने देखा था, वे वास्तव में हम लोगों की औरतें न थीं, बल्कि वे औरतों की सूरत में ऐयार थे तो इसका निश्चय भी इसी समय हो सकता है। वह औरत सामने मौजूद ही है, देख लिया जाये कि कोई ऐयार है या वास्तव में भूतनाथ की स्त्री है।

उस स्त्री ने भूतनाथ के मुँह यह से सुनकर कि 'यह तो मेरी स्त्री है', क्रोध-भरी

आँखों से भूतनाथ की तरफ देखा और कहा, "एक तो तुमने जबरदस्ती मेरी नकाब उलट दी, दूसरे बिना कुछ सोचे-विचारे आवारा लोगों की तरह यह कह दिया कि 'यह मेरी स्त्री है।' क्या सभ्यता इसी को कहते हैं? (देवीसिंह की तरफ देखकर) आप ऐसे सज्जन और प्रतापी राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयार होकर क्या इस बात को पसन्द करते हैं?"

देवीसिंह—अगर तुम भूतनाथ की स्त्री नहीं हो तो मैं जरूर इस बर्ताव को बुरा समझता हूँ, जो भूतनाथ ने तुम्हारे साथ किया है।

औरत—(भूतनाथ से) क्यों साहब, आपने मेरी ऐसी बेइज्जती क्यों की? अगर मेरा मालिक या कोई वारिस इस समय यहाँ होता तो अपने दिल में क्या कहता?

भूतनाथ—(ताज्जुब से उसका मुँह देखता हुआ) क्या मैं भ्रम में पड़ा हुआ हूँ, या मेरी आँखें मेरे साथ दगा कर रही हैं?

औरत—सो तो आप ही जानें, क्योंकि दिमाग आपका है और आँखें भी आपकी हैं, हाँ, इतना मुझे अवश्य कहना पड़ेगा कि आप अपनी सभ्यता का परिचय देकर पुरानी बदनामी को चरितार्थ करते हैं। कौन-सी बात आपने मुझमें ऐसी देखी जिससे इतना कहने का साहस आपको हुआ?

भूतनाथ—मालूम होता है कि या तो तू कोई ऐयार है और या फिर किसी दूसरे ने तेरी सूरत मेरी स्त्री के ढंग की बना दी है, जिसे शायद तूने कभी देखा नहीं।

भूतनाथ ने उस औरत की बातों का जवाब तो दिया मगर वास्तव में वह खुद भी बहुत घबरा गया था। अपनी स्त्री की ढिठाई और चपलता पर उसे तरह-तरह के शक होने लगे और वह बड़ी बेचैनी के साथ सोच रहा था कि अब क्या करना चाहिए कि इसी बीच में उस स्त्री ने भूतनाथ की बात का यों जवाब दिया—

स्त्री—यों आप जिस तरह चाहें सोच-समझकर अपनी तबीयत खुश कर लें, मगर इस बात को खूब समझ रखें कि मैं भी लावारिस नहीं हूँ, और आप अगर मेरे साथ कोई बेअदबी का बर्ताव करेंगे तो उसका बदला भी अवश्य पायेंगे। साथ ही इस बात को भी अवश्य समझ लें, कि आपके इतना कहने पर कि तू कोई ऐयार है, आपके सामने अपना चेहरा धोने की बेइज्जती बर्दाश्त नहीं कर सकती।

भूतनाथ—अफसोस है कि मैं बिना जाँच किए तुम्हें छोड़ भी नहीं सकता।

स्त्री—(देवीसिंह की तरफ देखकर) बहादुरी तो तब थी, जब आप लोग किसी मर्द के साथ इस ढिठाई का बर्ताव करते। एक कमजोर औरत को इस तरह मजबूर करके फजीहत करना, ऐयारों और बहादुरों का काम नहीं है। हाय, इस जगह अगर मेरा कोई होता तो यह दुःख न भोगना पड़ता। (यह कहकर वह आँसू बहाने लगी।)

उस औरत की बातचीत कुछ ऐसे ढंग की थी, कि सुनने वालों को उस पर दया आ सकती थी और यही मालूम होता था कि यह जो कुछ कह रही है, उसमें झूठ का लेश नहीं है, यहाँ तक कि स्वयं भूतनाथ को भी उसकी बातों पर सहम जाना पड़ा और वह ताज्जुब के साथ उस औरत का मुँह देखने लगा, खास करके इस खयाल से भी कि देखें आँसू बहने के सबब से उसके चेहरे का रंग कुछ बदलता है या नहीं। उधर देवीसिंह तो उसकी बातों से बहुत ही हैरान हो गये और उनके जी में रह-रहकर यह बात पैदा होने

लगी कि जरूर भूतनाथ इसके पहचानने में धोखा खा गया और वास्तव में यह भूतनाथ की स्त्री नहीं है। अक्सर लोगों ने एक ही रूप-रंग के दो आदमी देखे हैं, ताज्जुब नहीं कि यहाँ भी वैसा ही कुछ मामला आ पड़ा हो।

देवीसिंह—(स्त्री से) तो तू इस भूतनाथ की स्त्री नहीं है ?

स्त्री—जी नहीं।

देवीसिंह—आखिर इसका फैसला क्योंकर हो ?

स्त्री—आप लोग जरा तकलीफ करके मेरे घर तक चलें, वहाँ मेरे बच्चों को देखने और मेरे मालिक से बातचीत करने पर आपको मालूम हो जायेगा कि मेरा कहना सच है या झूठ।

देवीसिंह—(औरत की बात पसन्द करके) तुम्हारा घर यहाँ से कितनी दूर है ?

स्त्री—(हाथ का इशारा करके) इसी तरफ है, सो यहाँ से थोड़ी दूर पर। इन घने पेड़ों के पार ही आपको वह झोंपड़ी दिखाई देगी, जिसमें आजकल हम लोग रहते हैं।

देवीसिंह—क्या तुम झोंपड़ी में रहती हो ? मगर तुम्हारी सूरत-शक्ल तो किसी झोपड़ी में रहने योग्य नहीं है।

स्त्री—जी, मेरे दो लड़के बीमार हैं, उनकी तन्दुरुस्ती का खयाल करके हवा-पानी बदलने की नीयत से आजकल हम लोग यहाँ आ टिके हैं। (हाथ जोड़कर) आप कृपा करके शीघ्र उठिये, और मेरे डेरे पर चलकर इस बखेड़े को तय कीजिये, विलम्ब होने से मैं मुफ्त में सताई जाऊँगी।

देवीसिंह—(भूतनाथ से) क्या हर्ज है, अगर इसके डेरे पर चलकर शक मिटा लिया जाये ?

भूतनाथ—जो कुछ आपकी राय हो, मैं करने को तैयार हूँ, मगर यह तो मुझे अजीब ढंग से अन्धा बना रही है।

देवीसिंह—अच्छा, फिर उठो, अब देर करना उचित नहीं !

उस औरत की अनूठी बातचीत ने इन दोनों को इस बात पर मजबूर किया कि उसके साथ-साथ डेरे तक या जहाँ वह ले जाये, चुपचाप चले जायें, और देखें, कि जो कुछ वह कहती है, कहाँ तक सच है, और आखिर ऐसा ही हुआ।

इशारा पाते ही औरत उठ खड़ी हुई। देवीसिंह और भूतनाथ उसके पीछे-पीछे रवाना हुए। उस औरत को घोड़े पर सवार होने की आज्ञा न मिली, इसलिए वह घोड़े की लगाम थामे हुए धीरे-धीरे इन दोनों के साथ चली।

लगभग आध कोस के गए होंगे कि दूर से एक छोटा-सा कच्चा मकान दिखाई पड़ा जिसे एक तौर पर झोंपड़ी कहना उचित है। यह मकान ऊपर से खपड़े की जगह केवल पत्तों ही से छाया हुआ था।

जब ये लोग झोंपड़ी के दरवाजे पर पहुँचे तब उस औरत ने अपने घोड़े को खूँटे के साथ बाँध कर थोड़ी-सी घास उसके आगे डाल दी जो उसी जगह एक पेड़ के नीचे पड़ी हुई थी और जिसे देखने से मालूम होता था कि रोज इसी जगह घोड़ा बाँधा जाता है। इसके बाद उसने देवीसिंह और भूतनाथ से कहा, "आप लोग जरा सा इसी जगह

ठहर जायँ, मैं अन्दर जाकर आप लोगों के लिए चारपाई ले आती हूँ और अपने मालिक तथा लड़कों को भी बुला लाती हूँ।"

देवीसिंह और भूतनाथ ने इस बात को कबूल किया और कहा, "क्या हर्ज है, जाओ मगर जल्दी आना, क्योंकि हम लोग ज्यादा देर तक यहाँ नहीं ठहर सकते।"

वह औरत मकान के अन्दर चली गई और वे दोनों देर तक बाहर खड़े रह कर उसका इन्तजार करते रहे, यहाँ तक कि घण्टे भर से ज्यादा बीत गया और वह औरत मकान के बाहर न निकली। आखिर भूतनाथ ने उसे पुकारना और चिल्लाना शुरू किया, मगर इसका भी कोई नतीजा न निकला अर्थात् किसी ने भी उसे किसी तरह का जवाब न दिया। तब लाचार होकर वे दोनों मकान के अन्दर घुस गए, फिर भी किसी आदमी की यहाँ तक कि उस औरत की भी सूरत दिखाई न पड़ी। उस छोटी झोंपड़ी में किसी को ढूँढ़ना या पता लगाना कौन कठिन था तो भी दोनों ने बित्ता-बित्ता जमीन देख डाली मगर सिवाय एक सुरंग के और कुछ भी दिखाई न पड़ा। न तो मकान में किसी तरह का असबाब ही था और न चारपाई, बिछौना, कपड़ा-लत्ता या अन्न और बर्तन इत्यादि ही दिखाई पड़ा, अतः लाचार होकर भूतनाथ ने कहा, "बस-बस, हम हम लोगों को उल्लू बनाकर वह इसी सुरंग की राह निकल गई!"

बेवकूफ बनाकर इस तरह उस उस औरत के निकल जाने से दोनों ऐयारों को बड़ा ही अफसोस हुआ। भूतनाथ ने सुरंग के अन्दर घुस कर उस औरत को ढूँढ़ने का इरादा किया। पहले तो इस बात खयाल हुआ कि कहीं उस सुरंग में दो-चार आदमी घुस कर बैठे न हों जो हम लोगों पर बेमौके वार करें, मगर जब अपने तिलिस्मी खंजर का ध्यान आया तो यह खयाल जाता रहा और बेफिक्री के साथ में तिलिस्मी खंजर लिये हुए भूतनाथ उस सुरंग के अन्दर घुसा, पीछे-पीछे देवीसिंह ने भी उसके अन्दर पैर रक्खा।

वह सुरंग लगभग पाँच सौ कदम के लम्बी होगी। उसका दूसरा सिरा घने जंगल में पेड़ों के झुरमुट के अन्दर निकला था। देवीसिंह और भूतनाथ भी उसी सुरंग के अन्दर ही अंदर वहाँ तक चले गये और इन्हें विश्वास हो गया कि अब उस औरत का पता किसी तरह नहीं लग सकता।

इस समय इन दोनों के दिल की क्या कैफियत थी सो वे ही ठीक जानते होंगे, अतः लाचार होकर देवीसिंह ने घर लौट चलने का विचार किया, मगर भूतनाथ ने इस बात को स्वीकार न करके कहा, "इस तरह तकलीफ उठाने और बेइज्जत होने पर भी बिना कुछ काम किए घर लौट चलना मेरे खयाल से उचित नहीं है।"

देवीसिंह—आखिर फिर किया ही क्या जायगा? मुझे इतनी फुरसत नहीं है कि कई दिनों तक बेफिक्री के साथ इन लोगों का पीछा किया करूँ। उधर दरबार की जो कुछ कैफियत है तुम जानते ही हो! ऐसी अवस्था में मालिक की प्रसन्नता का खयाल न करके एक साधारण काम में दूसरी तरफ उलझ रहना मेरे लिए उचित नहीं है।

भूतनाथ—आपका कहना ठीक है मगर इस समय मेरी तबीयत का क्या हाल है, सो भी आप अच्छी तरह समझते होंगे।

देवीसिंह—मेरे खयाल से तुम्हारे लिए कोई ज्यादा तरद्दुद की बात नहीं है।

इसके अतिरिक्त घर लौट चलने पर मैं अपनी औरत को देखूँगा, अगर वह मिल गई तो तुम भी अपनी स्त्री की तरफ से बेफिक्र हो जाओगे।

भूतनाथ—अगर आपकी स्त्री घर पर मिल जाय तो भी मेरे दिल का खुटका न जायगा।

देवीसिंह—अपनी स्त्री का हाल लेने के लिए तुम भी अपने आदमियों को भेज सकते हो।

भूतनाथ—यह सब कुछ ठीक है मगर क्या करूँ, इस समय मेरे पेट में अजीब तरह की खिचड़ी पक रही है और क्रोध क्षण-क्षण में बढ़ा ही चला आता है।

देवीसिंह—अगर ऐसा ही है तो जो कुछ तुम्हें उचित जान पड़े सो करो। मैं अकेला ही घर की तरफ लौट जाऊँगा।

भूतनाथ—अगर ऐसा ही कीजिये तो मुझ पर बड़ी कृपा होगी, मगर जब महाराज मेरे बारे में पूछेंगे तब क्या जवाब···

देवीसिंह—(बात काट कर) महाराज की तरफ से तुम बेफिक्र रहो, मैं जैसा मुनासिब समझूँगा कह-सुन लूँगा, मगर इस बात का वादा कर जाओ कि कितने दिन पर तुम वापस आओगे या तुम्हारा हाल मुझे कब और क्योंकर मिलेगा ?

भूतनाथ—मैं आपसे सिर्फ तीन दिन की छुट्टी लेता हूँ। अगर इससे ज्यादा दिन तक अटकने की नौबत आई तो किसी तरह अपने हाल-चाल की खबर आप तक पहुँचा दूँगा।

देवीसिंह—बहुत अच्छा ! (मुस्कुराते हुए) अब आप जाइये और पुनः लात खाने का बन्दोबस्त कीजिए, मैं तो घर की तरफ रवाना होता हूँ, जय माया की !

भूतनाथ—जय माया की !

भूतनाथ को उसी जगह छोड़कर देवीसिंह रवाना हुए और संध्या होने के पहले ही तिलिस्मी इमारत के पास आ पहुँचे।

7

डेरे पर पहुँच कर स्नान करने और पोशाक बदलने के बाद देवीसिंह सबसे पहले राजा वीरेन्द्रसिंह के पास गये और उसी जगह तेजसिंह से भी मुलाकात की। पूछने पर देवीसिंह ने अपना और भूतनाथ का कुल हाल बयान किया जो कि हम ऊपर के बयानों में लिख आये हैं। उस हाल को सुनकर वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह को कई दफा हँसने और ताज्जुब करने का मौका मिला और अन्त में वीरेन्द्रसिंह ने कहा, "अच्छा किया जो तुम भूतनाथ को छोड़कर यहाँ चले आये। तुम्हारे न रहने के कारण नकाबपोशों के आगे हम लोगों को शर्मिन्दा होना पड़ा।"

देवीसिंह—(ताज्जुब से) क्या वे लोग वहाँ आये थे ?

वीरेन्द्रसिंह—हाँ, वे दोनों अपने मामूली वक्त पर यहाँ आये थे और तुम दोनों का पीछा करने पर ताज्जुब और अफसोस करते थे, साथ ही इसके उन्होंने यह भी कहा था कि वे दोनों ऐयार हमारे मकान तक नहीं पहुँचे।

देवीसिंह—वे लोग जो चाहें सो कहें, मगर मेरा खयाल यही है कि हम दोनों उन्हीं के मकान में गए थे।

वीरेन्द्रसिंह—खैर, जो हो मगर उन नकाबपोशों का यह कहना बहुत ठीक है कि जब हम लोग समय पर अपना हाल आप ही कहने के लिए तैयार हैं, तो आपको हमारा भेद जानने के लिए उद्योग नहीं करना चाहिए!

देवीसिंह—बेशक उनका कहना ठीक है मगर क्या किया जाय, ऐयारों की तबीयत ही ऐसी चंचल होती है कि किसी भेद को जानने के लिए वे देर तक या कई दिनों तक सब्र नहीं कर सकते। यद्यपि भूतनाथ इस बात को खूब जानता है कि वे दोनों नकाबपोश उसके पक्षपाती हैं और पीछा करके उनका दिल दुखाने का नतीजा शायद अच्छा न निकले मगर फिर भी उसकी तबीयत नहीं मानती, तिस पर कल की बेइज्जती और अपनी स्त्री को वहाँ न देखता तो निःसन्देह मेरे साथ वापस चला आता और उन लोगों का पीछा करने का खयाल अपने दिल से निकाल देता।

तेजसिंह—खैर, कोई चिन्ता नहीं, वे नकाबपोश खुशदिल नेक और हमारे प्रेमी मालूम होते हैं, इसलिए आशा है कि भूतनाथ को अथवा तुम्हारे किसी आदमी को कोई तकलीफ पहुँचाने का खयाल न करेंगे।

वीरेन्द्रसिंह—हमारा भी यही खयाल है। (देवीसिंह से मुस्कुराकर) तुम्हारा दिल भी तो अपनी बीवी साहेबा को देखने के लिए बेताब हो रहा होगा?

देवीसिंह—बेशक मेरे दिल में धुक-धुकी सी लगी हुई है और मैं चाहता हूँ कि किसी तरह आपकी बात पूरी हो तो महल में जाऊँ।

वीरेन्द्रसिंह—मगर हमसे तो तुमने पूछा ही नहीं कि तुम्हारे जाने के बाद तुम्हारी बीवी महल में थी या नहीं।

देवीसिंह—(हँसकर) जी आपसे पूछने की मुझे कोई जरूरत नहीं और न मुझे विश्वास ही है कि आप इस बारे में मुझसे सच बोलेंगे।

वीरेन्द्रसिंह—(हँसकर) खैर, मेरी बातों पर भले विश्वास न करो और महल में जाकर अपनी रानी को देखो। मैं भी उसी जगह पहुँचकर तुम्हें इस बेऐतबारी का मजा चखाता हूँ!

इतना कहकर राजा वीरेन्द्रसिंह उठ खड़े हुए और देवीसिंह भी हँसते हुए वहाँ से चले गये।

महल के अन्दर अपने कमरे में एक कुर्सी पर बैठी चम्पा रोहतासगढ़ की पहाड़ी और किले की तस्वीर दीवार के ऊपर बना रही है और उसकी दो लौंडियां हाथ में मोमी शमादान लिए हुए रोशनी दिखा कर इस काम में उसकी मदद कर रही हैं। चम्पा का मुँह दीवार की तरफ और पीठ सदर दरवाजे की तरफ है। दोनों लौंडियाँ भी उसी की तरह दीवार की तरफ देख रही हैं इसलिए चम्पा तथा उसकी लौंडियों को इस बात की

कुछ भी खबर नहीं कि देवीसिंह धीरे-धीरे पैर दबाते हुए इस कमरे में आकर दूर से और कुछ देर से उनकी कार्रवाई देखते हुए ताज्जुब कर रहे हैं। चम्पा तस्वीर बनाने के काम में बहुत ही निपुण और शीघ्र काम करने वाली थी तथा उसे तस्वीरों के बनाने का शौक भी हद से ज्यादा था। देवीसिंह ने उसके हाथ की बनाई हुई सैकड़ों तस्वीरें देखी थीं, मगर आज की तरह ताज्जुब करने का मौका उन्हें आज के पहले नहीं मिला था। ताज्जुब इसलिए कि इस समय जिस ढंग की तस्वीरें चम्पा बना रही थी ठीक उठी ढंग की तस्वीरें देवीसिंह ने भूतनाथ के साथ जाकर नकाबपोशों क मकान में दीवार के ऊपर बनी हुई देखी थीं। कह सकते हैं कि एक स्थान या इमारत की तस्वीर अगर दो कारीगर बनावें तो सम्भव है कि एक ढंग की तैयार हो जायँ मगर यहाँ यही बात न थी। नकाबपोशों के मकान में रोहतासगढ़ पहाड़ी की जो तस्वीर देवीसिंह ने देखी थी, उसमें दो नकाबपोश सवार पहाड़ी के ऊपर चढ़ते हुए दिखलाये गये थे जिनमें से एक का घोड़ा मुश्की और दूसरे का सब्जा था। इस समय जो तस्वीर चम्पा बना रही थी, उसमें भी उसी ठिकाने उसी ढंग के दो सवार इसने बनाये थे और उसी तरह इन दोनों सवारों में से भी एक का घोड़ा मुश्की और दूसरे का सब्जा था। देवीसिंह का खयाल है कि यह बात इत्तिफाक से नहीं हो सकती।

ताज्जुब के साथ उस तस्वीर को देखते हुए देवीसिंह सोचने लगे, 'क्या यह तस्वीर इसने यों ही अन्दाज से तैयार की है? नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। अगर यह तस्वीर इसने अन्दाज से बनाई होती तो दोनों सवार और घोड़े ठीक उसी रंग के न बनते जैसा कि मैं उन नकाबपोशों के यहाँ देख आया हूँ। तो क्या यह वास्तव में उन नकाबपोशों के यहाँ गई थी? बेशक गई होगी, क्योंकि उस तस्वीर के देखे बिना उसके जोड़ की तस्वीर यह बना नहीं सकती, मगर इस तस्वीर के बनाने से साफ जाहिर होता है कि यह अपनी उन नकाबपोशों के यहाँ जाने वाली बात गुप्त रखना भी नहीं चाहती, मगर ताज्जुब है कि जब इसका ऐसा खयाल है तो वहाँ (नकाबपोशों के घर पर) मुझे देखकर छिप क्यों गई थी? खैर, अब बातचीत करने पर जो कुछ भेद है सब मालूम हो जायगा।

यह सोचकर देवीसिंह दो कदम आगे बढ़े ही थे कि पैरों की आहट पाकर चम्पा चौंकी और घूमकर पीछे देखने लगी। देवीसिंह पर निगाह पड़ते ही कूंची और रंग की प्याली जमीन पर रख कर उठ खड़ी हुई और हाथ जोड़कर प्रणाम करने के बाद बोली, "आप सफर से लौट कर कब आये?"

देवीसिंह—(मुस्कुराते हुए) चार-पांच घण्टे हुए होंगे, मगर यहां भी मैं आधी घड़ी से तमाशा देख रहा हूँ।

चम्पा—(मुस्कुराती हुई) क्या खूब! इस तरह चोरी से ताक-झांक करने की क्या जरूरत थी?

देवीसिंह—इस तस्वीर और इसकी बनावट को देखकर मैं ताज्जुब कर रहा था और तुम्हारे काम में हर्ज डालने का इरादा नहीं होता था।

चम्पा—(हँसकर) बहुत ठीक, खैर, आइये और बैठिये।

देवीसिंह—पहले मैं तुम्हारी इस कुर्सी पर बैठ के इस तस्वीर को गौर से देखूंगा।

इतना कह कर देवीसिंह उस कुर्सी पर बैठ गये जिस पर थोड़ी ही देर पहले चम्पा बैठी हुई तस्वीर बना रही थी और बड़े गौर से उस तस्वीर को देखने लगे, चम्पा भी कुर्सी की पिछवाई पकड़ कर खड़ी हो गई और देखने लगी। देखते-देखते देवीसिंह ने झट हलके जर्द रंग की प्याली और कूँची उठा ली और उस तस्वीर में रोहतासगढ़ किले के ऊपर एक बुर्ज और उसके साथ सटे हुए पताके का साधारण निशान बनाया अर्थात् उसकी जमीन बाँधी जिसे देखते ही चम्पा चौंकी और बोली, "हाँ-हाँ ठीक है, यह बनाना तो मैं भूल ही गई थी। बस अब आप रहने दीजिये, इसे भी मैं ही अपने हाथ से बनाऊँगी, तब आप देखकर कहियेगा कि तस्वीर कैसी बनी और इसमें कौन सी बात छूट गई थी।"

चम्पा की इस बात को सुन देवीसिंह चौंक पड़े। अब उन्हें पूरा-पूरा विश्वास हो गया कि चम्पा उन नकाबपोशों के मकान जरूर गई थी और मैंने निःसन्देह इसी को देखा था अतः देवीसिंह ने घूमकर चम्पा की तरफ देखा और कहा, "मगर पहले यह तो बताओ कि वहाँ मुझे देखकर तुम भाग क्यों गई थीं ?"

चम्पा—(ताज्जुब की सूरत बना के) कहाँ ? कब ?

देवीसिंह—उन्हीं नकाबपोशों के यहाँ !

चम्पा—मुझे बिल्कुल याद नहीं पड़ता कि आप कब की बात कर रहे हैं।

देवीसिंह—अब लगीं न नखरा करके परेशान करने !

चम्पा—मैं आपके चरणों की कसम खाकर कहती हूँ कि मुझे कुछ याद नहीं कि आप कब की बात कर रहे हैं।

अब तो देवीसिंह के ताज्जुब की कोई हद न रही, क्योंकि वे खूब जानते थे कि चम्पा जितनी खूबसूरत और ऐयारी के फन में तेज है, उतनी ही नेक और पतिव्रता भी है। वह उनके चरणों की कसम खाकर झूठ कदापि नहीं बोल सकती। अतः कुछ देर तक ताज्जुब के साथ गौर करने के बाद पुनः देवीसिंह ने कहा, "आखिर कल या परसों तुम कहाँ गई थीं ?"

चम्पा—मैं तो कहीं नहीं गई ! आप महारानी चन्द्रकान्ता से पूछ लें क्योंकि मेरा उनका तो दिन-रात का संग है, अगर मैं कहीं जाती तो किसी काम से ही जाती और ऐसी अवस्था में आपसे छिपाने की जरूरत ही क्या थी ?

देवीसिंह—फिर यह तस्वीर तुमने कहाँ देखी ?

चम्पा—यह तस्वीर ? मैं···

इतना कह चम्पा कपड़े का एक लपेटा हुआ पुलिन्दा उठा लाई और देवीसिंह के हाथ में दिया। देवीसिंह ने उसे खोलकर देखा और चौंक कर चम्पा से पूछा, "यह नक्शा तुम्हें कहाँ से मिला ?"

चम्पा—यह नक्शा मुझे कहाँ से मिला, सो मैं पीछे कहूँगी, पहले आप यह बतावें कि इस नक्शे को देखकर आप क्यों चौंके और यह नक्शा वास्तव में कहाँ का है ? क्योंकि मैं इसके बारे में कुछ भी नहीं जानती।

देवीसिंह—यह नक्शा उन्हीं नकाबपोशों के मकान का है जिनके बारे में मैं अभी तुमसे पूछ रहा था।

चम्पा—कौन नकाबपोश ? वे ही जो दरबार में आया करते हैं ?

देवीसिंह—हाँ वे ही, और उन्हीं के यहाँ मैंने तुमको देखा था।

चम्पा—(ताज्जुब के साथ) यों मैं कुछ भी नहीं समझ सकती, पहले आप अपने सफर का हाल सुनावें और यह बतावें कि आप कहाँ गये थे और क्या-क्या देखा ?

इसके जवाब में देवीसिंह ने अपने और भूतनाथ के सफर का हाल बयान किया और इसके बाद उस कपड़े वाले नक्शे की तरफ बता के कहा, "यह उसी स्थान का नक्शा है। उस बँगले के अन्दर दीवारों पर तरह-तरह की तस्वीरें बनी हुई हैं, जिन्हें कारीगर दिखा नहीं सकता, इसलिए नमूने के तौर पर बाहर की तरफ यही रोहतासगढ़ की एक तस्वीर बनाकर उसने नीचे लिख दिया है कि इस बँगले में इसी तरह की बहुत सी तस्वीरें बनी हुई हैं। वास्तव में यह नक्शा बहुत ही अच्छा, साफ और बेशकीमत बना हुआ है।"

चम्पा—अब मैं समझी कि असल मामला क्या है, मैं उस मकान में नहीं गई थी।

देवीसिंह—तब यह तस्वीर तुमने कहाँ से पाई ?

चम्पा—यह तस्वीर मुझे लड़के (तारासिंह) ने दी थी।

देवीसिंह—तुमने पूछा तो होगा कि यह तस्वीर उसे कहाँ से मिली ?

चम्पा—नहीं, उसने बहुत तारीफ करके यह तस्वीर मुझे दी और मैंने ले ली।

देवीसिंह—कितने दिन हुए ?

चम्पा—आज पाँच-छः दिन हुए होंगे।

इसके बाद देवीसिंह बहुत देर तक चम्पा के पास बैठे रहे और जब वहाँ से जाने लगे तब वह कपड़े वाली तस्वीर अपने साथ बाहर लेते गये।

8

महल के बाहर आने पर भी देवीसिंह के दिल को किसी तरह चैन न पड़ा। यद्यपि रात बहुत बीत चुकी थी तथापि राजा वीरेन्द्रसिंह से मिल कर उस तस्वीर के विषय में बातचीत करने की नीयत से वह राजा साहब के कमरे में चले गए, मगर वहाँ जाने पर मालूम हुआ कि वीरेन्द्रसिंह महल में गए हैं, लाचार होकर वे लौटना ही चाहते थे कि राजा वीरेन्द्रसिंह भी आ पहुँचे और अपने पलंग के पास देवीसिंह को देखकर बोले, "रात को भी तुम्हें चैन नहीं पड़ती ! (मुस्कुरा कर) मगर ताज्जुब यह है कि चम्पा ने तुम्हें इतने जल्दी बाहर आने की छुट्टी क्यों दे दी !"

देवीसिंह—इस हिसाब से तो मुझे भी आप पर ताज्जुब करना चाहिए मगर नहीं, असल तो यह है कि मैं एक ताज्जुब की बात आपको सुनाने के लिए यहाँ चला आया हूँ।

वीरेन्द्रसिंह—वह कौन-सी बात है, और तुम्हारे हाथ में यह कपड़े का पुलिन्दा कैसा है ?

देवीसिंह—इसी कम्बख्त ने तो मुझे इस आनन्द के समय में आपसे मिलने पर मजबूर किया।

वीरेन्द्रसिंह—सो क्या ? (चारपाई पर बैठकर) बैठ के बात करो।

देवीसिंह ने महल में चम्पा के पास जाकर जो कुछ देखा और सुना था सब बयान किया, इसके बाद वह कपड़े वाली तस्वीर खोलकर दिखाई तथा उस नक्शे को भी अच्छी तरह समझाने के बाद कहा, "न मालूम यह नक्शा तारा को क्योंकर और कहाँ से मिला और उसने इसे अपनी माँ को क्यों दे दिया !"

वीरेन्द्रसिंह—तारासिंह से तुमने क्यों नहीं पूछा ?

देवीसिंह—अभी तो मैं सीधा यहाँ आप ही के पास चला आया हूँ। अब जो कुछ मुनासिब हो सो किया जाय। कहिए तो लड़के को इसी जगह बुलाऊँ ?

वीरेन्द्रसिंह—क्या हर्ज है, किसी को कहो बुला लावे।

देवीसिंह कमरे के बाहर निकले और पहरे के एक सिपाही को तारासिंह को बुलाने की आज्ञा देकर पुनः कमरे में चले गये और राजा साहब से बातचीत करने लगे। थोड़ी देर में पहरे वाले ने वापस आकर अर्ज किया कि "तारासिंह से मुलाकात नहीं हुई और इसका भी पता न लगा कि वे कब और कहाँ गये हैं, उनका खिदमतगार कहता है कि संध्या होने के पहले ही से उनका पता नहीं है।"

बेशक यह बात ताज्जुब की थी। रात के समय बिना आज्ञा लिए तारासिंह का गैरहाजिर रहना सभी को ताज्जुब में डाल सकता था, मगर राजा वीरेन्द्रसिंह ने यह सोचा कि आखिर तारासिंह ऐयार है, शायद किसी काम की जरूरत समझकर कहीं चला गया हो, अतः राजा साहब ने भैरोंसिंह को तलब किया और थोड़ी ही देर में भैरोंसिंह ने हाजिर होकर सलाम किया।

वीरेन्द्रसिंह—(भैरोंसिंह से) क्या तुम जानते हो कि तारासिंह क्यों और कहाँ गया है ?

भैरोंसिंह—तारा तो आज संध्या होने के पहले ही से गायब है, पहर भर दिन बाकी था जब वह मुझसे मिला था। उसे तरद्दुद में देखकर मैंने पूछा भी था कि आज तुम तरद्दुद में क्यों मालूम पड़ते हो, मगर इसका उसने कोई जवाब नहीं दिया।

वीरेन्द्रसिंह—ताज्जुब की बात है ! हमें उम्मीद थी कि तुम्हें उसका हाल मालूम होगा।

भैरोंसिंह—क्या मैं सुन सकता हूँ कि इस समय उसे याद करने की जरूरत क्यों पड़ी ?

वीरेन्द्रसिंह—जरूर सुन सकते हो।

इतना कहकर वीरेन्द्रसिंह ने देवीसिंह की तरफ देखा और देवीसिंह ने कुछ कम-बेश अपना और भूतनाथ का किस्सा बयान करने के बाद उस तस्वीर का हाल कहा और तस्वीर भी दिखाई। अन्त में भैरोंसिंह ने कहा, "मुझे कुछ भी मालूम नहीं कि तारासिंह को यह तस्वीर कब और कहाँ से मिली, मगर अब इसका हाल जानने की कोशिश जरूर करूँगा।"

हुक्म पाकर भैरोंसिंह विदा हुआ और थोड़ी देर तक बातचीत करने के बाद देवीसिंह भी चले गये।

दूसरे दिन मामूली कामों से छुट्टी पाकर राजा वीरेन्द्रसिंह जब दरबार खास में बैठे तो पुनः तारासिंह के विषय में बातचीत शुरू हुई और इसी बीच में नकाबपोशों का भी जिक्र छिड़ा। उस समय वहाँ राजा वीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, तेजसिंह तथा देवीसिंह वगैरह अपने ऐयारों के अतिरिक्त कोई गैर आदमी न था। जितने थे सभी ताज्जुब के साथ तारासिंह के विषय में तरह-तरह की बातें कर रहे थे और मौके पर भूतनाथ तथा नकाबपोशों का भी जिक्र आता था। दोनों नकाबपोश वहाँ आ के इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का किस्सा सुना गये थे। उसे आज तीन दिन का जमाना गुजर गया। इस बीच में न तो दोनों नकाबपोश आये और न उनके विषय में कोई बात ही सुनी गई। साथ ही इसके अभी तक भूतनाथ का कोई हाल-चाल मालूम न हुआ। खुलासा यह कि इस समय के दरबार में इन्हीं सब बातों की चर्चा थी और तरह-तरह के खयाल दौड़ाये जा रहे थे। इसी समय चोबदार ने दोनों नकाबपोशों के आने की इत्तिला की। हुक्म पाकर वे दोनों हाजिर हुए और सलाम करके आज्ञानुसार उचित स्थान पर ही बैठ गये।

एक नकाबपोश—(हाथ जोड़ के राजा वीरेन्द्रसिंह से) महाराज ताज्जुब करते होंगे कि ताबेदारों ने हाजिर होने में दो-तीन दिन का नागा किया।

वीरेन्द्रसिंह—बेशक, ऐसा ही है, क्योंकि हम लोग इन्द्रजीत और आनन्द का तिलिस्मी किस्सा सुनने के लिए बेचैन हो रहे थे।

नकाबपोश—ठीक है, हम लोग हाजिर न हुए, इसके भी कई सबब हैं। एक तो इसका पता हम लोगों को लग चुका था कि भूतनाथ जो हम लोगों की फिक्र में गया था, अभी तक लौटकर नहीं आया और इस सबब से कैदियों के मुकदमे में दिलचस्पी नहीं आ सकती थी। दूसरे कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के किस्से में कई बातें ऐसी थीं जिनका हाल दरियाफ्त करना बहुत जरूरी था और इस काम के लिए हम लोग तिलिस्म के अन्दर गये हुए थे।

वीरेन्द्रसिंह—क्या आप लोग जब चाहे तब उस तिलिस्म के अन्दर जा सकते हैं जिसे वे दोनों लड़के फतह कर रहे हैं?

नकाबपोश—जी, सब जगह तो नहीं। मगर खास-खास ठिकाने कभी-कभी जा सकते हैं जहाँ तक कि हमारे गुरु महाराज जाया करते थे, मगर उसकी खबर एक-एक घड़ी की हम लोगों मिला करती है।

वीरेन्द्रसिंह—आप लोगों के गुरु कौन हैं और कहाँ हैं?

नकाबपोश—अब तो वे परमधाम को चले गये।

वीरेन्द्रसिंह—खैर, तो जब आप लोग तिलिस्म में गये थे तो क्या दोनों लड़कों से मुलाकात हुई थी?

नकाबपोश—मुलाकात तो नहीं हुई, मगर जिन बातों का शक था मिट गया और जो बातें मालूम न थीं, वे मालूम हो गईं जिससे इस समय हम लोग पुनः उनका किस्सा कहने के लिए तैयार हैं। (देवीसिंह की तरफ देखकर) आपने भूतनाथ को अकेला ही

छोड़ दिया !

देवीसिंह—हाँ, क्योंकि मुझे आप लोगों का भेद जानने का उतना शौक न था जितना भूतनाथ को है। मैं तो उस दिन केवल इतना ही जानने के लिए गया था कि देखें भूतनाथ कहाँ जाता है और क्या करता है। मगर मेरी तबीयत इतने ही में भर गई।

नकाबपोश—मगर भूतनाथ की तबीयत अभी नहीं भरी।

तेजसिंह—वह भी विचित्र ढंग का ऐयार है। साफ-साफ देखता है कि आप लोग उसके पक्षपाती हैं, मगर फिर भी आप लोगों का असल हाल जानने के लिए बेताब हो रहा है। यह उसकी भूल है, तथापि आशा है कि आप लोगों की तरफ से उसे किसी तरह की तकलीफ न पहुँचेगी।

नकाबपोश—नहीं-नहीं, कदापि नहीं। (वीरेन्द्रसिंह की तरफ देख के और हाथ जोड़ के) हम लोगों को अपना लड़का ही समझिये और विश्वास रखिये कि आपके किसी ऐयार को हम लोगों की तरफ से किसी तरह की तकलीफ नहीं पहुँच सकती चाहे वे लोग हमें जिसी तरह का रंज पहुँचावें।

वीरेन्द्रसिंह—आशा तो ऐसी ही है, और हमारे ऐयार भी बड़े ही नालायक होंगे, अगर आप लोगों को किसी तरह की तकलीफ पहुँचाने का इरादा करेंगे।

देवीसिंह—मैं कल से एक और तरद्दुद में पड़ गया हूँ।

नकाबपोश—वह क्या ?

देवीसिंह—कल से मेरे लड़के तारासिंह का पता नहीं है, न मालूम वह क्यों और कहाँ चला गया।

नकाबपोश—तारासिंह के लिए आपको तरद्दुद न करना चाहिए, आशा है कि घण्टे भर के अन्दर ही यहाँ आ पहुँचेगा।

देवीसिंह—आपके इस कहने से तो मालूम होता है कि आपको उसका हाल भी मालूम है।

नकाबपोश—बेशक मालूम है। मगर मैं अपनी जुबान से कुछ भी न कहूँगा, आप स्वयं उससे जो कुछ पूछना होगा पूछ लेंगे। (वीरेन्द्रसिंह से) आज जिस समय हम लोग घर से यहाँ की तरफ रवाना हो रहे थे, उसी समय एक चिट्ठी कुँअर इन्द्रजीत-सिंह की मुझे मिली जिसमें उन्होंने लिखा था कि तुम महाराज के पास जाकर मेरी तरफ से अर्ज करो कि महाराज भैरोंसिंह और तारासिंह को मेरे पास भेज दें, क्योंकि उनके बिना हम लोगों को कई बातों की तकलीफ हो रही है, साथ ही इसके एक चिट्ठी महा-राज के नाम की भी उन्होंने भेजी है।

इतना कहके नकाबपोश ने अपनी जेब में से एक बंद लिफाफा निकालकर वीरेन्द्र-सिंह के हाथ में दिया।

वीरेन्द्रसिंह—(ताज्जुब के साथ लिफाफा लेकर) सीधे मेरे पास क्यों नहीं भेजा ?

नकाबपोश—वे न तो खुद तिलिस्म के बाहर आ सकते हैं और न किसी को भेज सकते हैं, हम लोगों का आदमी हरदम तिलिस्म के अन्दर मौजूद रहता है और उनके हालचाल की खबर लिया करता है, इसलिए उसी मार्फत पत्र भेज सकते हैं।

इतना सुनकर वीरेन्द्रसिंह चुप हो रहे और लिफाफा खोलकर पढ़ने लगे। प्रणाम इन्यादि के बाद यह लिखा था —

"हम दोनों भाई कुशलपूर्वक तिलिस्म की कार्रवाई कर रहे हैं। परन्तु कोई ऐयार या मददगार न रहने के कारण कभी-कभी तकलीफ हो जाती है, इसलिए आशा है कि भैरोंसिंह और तारासिंह को शीघ्र भेज देंगे। यहाँ तिलिस्म में ईश्वर ने हमें दो मददगार बहुत अच्छे पहुँचा दिये हैं जिनका नाम रामसिंह और लक्ष्मणसिंह है। ये दोनों मायारानी और तिलिस्मी दारोगा इत्यादि के भेदों से खूब वाकिफ हैं। यदि इन लोगों के सामने दुष्टों के मुकदमे का फैसला करेंगे तो आशा है कि देखने-सुनने वालों को एक अपूर्व आनन्द मिलेगा। इन्हीं दोनों की जुबानी हम दोनों भाइयों का हाल पूरा-पूरा मिला करेगा और ये ही दोनों भैरोंसिंह को भी हम लोगों के पास पहुँचा देंगे। भाई गोपालसिंह से कह दीजियेगा कि उनके दोस्त भरतसिंहजी भी इस तिलिस्म में मुझे मिले हैं। उन्हें कम्बख्त दारोगा ने कैद किया था, ईश्वर की कृपा से उनकी जान बच गई। भाई गोपालसिंहजी मुझसे बिदा होते समय तालाब वाली नहर के विषय में गुप्त रीति से जो कुछ कह गये थे वह ठीक निकला, चाँद वाला पताका भी हम लोगों को मिल गया।

—आपके आज्ञाकारी पुत्र—इन्द्रजीत, आनन्द।"

इस चिट्ठी को पढ़कर वीरेन्द्रसिंह बहुत ही प्रसन्न हुए, मगर साथ ही इसके उन्हें ताज्जुब भी हद से ज्यादा हुआ। इन्द्रजीतसिंह के हाथ के अक्षर पहचानने में किसी तरह की भूल नहीं हो सकती थी, तथापि शक मिटाने के लिए वीरेन्द्रसिंह ने वह चिट्ठी राजा गोपालसिंह के हाथ में दे दी, क्योंकि उनके विषय में भी दो-एक गुप्त बातों का ऐसा इशारा था जिसके पढ़ने से इस बात का रत्ती भर भी शक नहीं हो सकता था कि यह चिट्ठी कुमार के हाथ की लिखी हुई नहीं है या ये नकाबपोश जाल करते हैं।

चिट्ठी पढ़ने के साथ ही राजा गोपालसिंह हद से ज्यादा खुश होकर चौंक पड़े और राजा वीरेन्द्रसिंह की तरफ देखकर बोले, "निःसन्देह यह पत्र इन्द्रजीतसिंह के हाथ का लिखा हुआ है। बिदा होते समय जो गुप्त बातें मैं उनसे कह आया था, इस चिट्ठी में उनका जिक्र एक अपूर्व आनन्द दे रहा है, तिस पर अपने मित्र भरतसिंह के पास जाने का हाल पढ़कर मुझे जो प्रसन्नता हुई, उसे मैं शब्दों द्वारा प्रकट नहीं कर सकता। (नकाबपोशों की तरफ देख के) अब मालूम हुआ कि आप लोगों के नाम रामसिंह और लक्ष्मणसिंह हैं, जरूर आप लोग बहुत सी बातों को छिपा रहे हैं, परन्तु जिस समय भेदों को खोलेंगे, उस समय निःसन्देह एक अद्भुत आनन्द मिलेगा।"

इतना कहकर राजा गोपालसिंह ने वह चिट्ठी तेजसिंह के हाथ में दे दी और उन्होंने पढ़कर देवीसिंह को और देवीसिंह ने पढ़कर और ऐयारों को भी दिखाई जिसके सबब से इस समय सब ही के चेहरे पर प्रसन्नता दिखाई देने लगी। इसी समय तारासिंह भी वहाँ आ पहुँचा।

नकाबपोश ने जो कुछ कहा था वही हुआ, अर्थात् थोड़ी देर में तारासिंह ने भी वहाँ पहुँचकर सभी के दिल से खुटका दूर किया, मगर हमारे राजा साहब और ऐयारों

को इस बात का ताज्जुब जरूर था कि नकाबपोश को तारासिंह का हाल क्योंकर मालूम हुआ और उसने किस जानकारी पर कहा कि वह घण्टे भर के अन्दर आ जायगा। खैर, इस समय तारासिंह के आ जाने से सभी को प्रसन्नता ही हुई और देवीसिंह को भी उस तस्वीर के विषय में कुछ खुलासा हाल पूछने का मौका मिला। मगर नकाबपोशों के सामने उस विषय में बातचीत करना उचित न जाना।

नकाबपोश—(वीरेन्द्रसिंह से) देखिए, तारासिंह आ गये, जो मैंने कहा था वही हुआ। अब इन दोनों के विषय में क्या हुक्म होता है? क्या आज ये दोनों ऐयार कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के पास जाने के लिए तैयार हो सकते हैं?

तेजसिंह—हाँ, तैयार हो सकते हैं और आप लोगों के साथ जा सकते हैं, मगर दो-एक जरूरी कामों की तरफ ध्यान देने से यही उचित जान पड़ता है कि आज नहीं, बल्कि कल इन दोनों भाइयों को आपके साथ विदा किया जाय।

नकाबपोश—जैसी मर्जी, अब आज्ञा तो हम लोग विदा हों?

तेजसिंह—क्या आज इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का किस्सा आप न सुनावेंगे?

नकाबपोश—देर तो हो गई, मगर फिर भी कुछ थोड़ा सा हाल सुनाने के लिए हम लोग तैयार हैं, आप दरियाफ्त करावें, यदि बड़े महाराज निश्चिन्त हों तो···

इशारा पाते ही भैरोंसिंह बड़े महाराज अर्थात् महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास चले गये और थोड़ी ही देर में लौट आकर बोले, "महाराज आप लोगों का इन्तजार कर रहे हैं।"

इतना सुनते ही वीरेन्द्रसिंह के साथ ही साथ सब कोई उठ खड़े हुए और बात की बात में यह दरबारे-खास महाराज सुरेन्द्रसिंह का दरबारे-खास हो गया।

9

महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह तथा उनके ऐयारों के सामने एक नकाबपोश ने दोनों कुमारों का हाल इस तरह बयान करना शुरू किया—

नकाबपोश—कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने भी उन पाँचों कैदियों के साथ रात को उसी बाग में गुजारा किया। सवेरा होने पर सब मामूली कामों से छुट्टी पाकर दोनों भाई उसी बीच वाले बुर्ज के पास गये और चबूतरे वाले पत्थरों को गौर से देखने लगे। उन पत्थरों में कहीं-कहीं अंक और अक्षर भी खुदे हुए थे, उन्हीं अंकों को देखते-देखते इन्द्रजीतसिंह ने एक चौखूंटे पत्थर पर हाथ रखा और आनन्दसिंह की तरफ देखकर कहा, "बस इसी पत्थर को हमें उखाड़ना चाहिए।" इसके जबाव में आनन्दसिंह ने "जी हाँ" कहा और तिलिस्मी खंजर की नोक से टुकड़े को उखाड़ डाला।

पत्थर के नीचे एक छोटा-सा चौखूंटा कुण्ड बना हुआ था और उस कुंड के बीचों-बीच में लोहे की एक गोल कड़ी लगी थी जिसे कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने खींचना शुरू

किया। उस कड़ी के साथ लोहे की पच्चीस-तीस हाथ लम्बी जंजीर लगी हुई थी जो बराबर खिंचती हुई चली आई और जब वह रुक गई अर्थात् अपनी हद तक खिंच कर बाहर निकल आई, तब उस चबूतरे के चारों तरफ का निचला पत्थर आप से आप उखड़कर जमीन के साथ लग गया और उसके अन्दर जाने के लिए दो रास्ते दिखाई देने लगे। इनमें से एक रास्ता नीचे तहखाने में उतर जाने के लिए था और दूसरा बुर्ज के ऊपर चढ़ने के लिए।

दोनों कुमार पहले बुर्ज के ऊपर चढ़ गये और वहाँ से चारों तरफ की बहार देखने लगे। खास बाग के कुछ हिस्से और उनके कई तरफ की मजबूत दीवारें तथा कुछ इमारतें और पेड़-पत्ते इत्यादि दिखाई दे रहे थे। उन सभी को गौर से देखने के बाद कुमार नीचे उतर आये और उन पाँचों कैदियों को यह कहकर कि "तुम लोग इसी बाग में रहो, खबरदार नीचे न उतरना" दोनों भाई तहखाने में उतर गये।

नीचे उतरने के लिए चक्करदार ग्यारह सीढ़ियाँ थीं जिन्हें तै करने के बाद वे दोनों एक लम्बे-चौड़े कमरे में पहुँचे। वहाँ बिलकुल अन्धकार था, मगर तिलिस्मी खंजर की रोशनी करने पर वहाँ की सब चीजें साफ दिखाई देने लगीं। वह कमरा लम्बाई में बीस हाथ और चौड़ाई में पन्द्रह हाथ से ज्यादा न होगा। उसके बीचोंबीच में लोहे का एक चबूतरा था और उसके ऊपर लोहे की एक शेर बैठा हुआ था जिसकी चमकदार आँखें उसके भयानक चेहरे के साथ ही साथ देखने वालों के दिल पर खौफ पैदा कर सकती थीं। उसके सामने जमीन पर लोहे का एक हथौड़ा पड़ा हुआ था। बस इसके अतिरिक्त उस कमरे में और कुछ भी न था। कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने उस शेर के सिर को अच्छी तरह टटोलना शुरू किया।

उस शेर के दाहिने कान की तरफ केवल एक उँगली जाने लायक छोटा-सा गढ़ा था। कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने अपनी जेब में से एक चमकदार चीज निकाल कर उस गड़हे में फँसाने के बाद शेर के सामने वाला हथौड़ा जमीन से उठाकर उसी से वह चमकदार चीज (कील) एक ही चोट में ठोंक दी और इसके बाद तुरन्त ही दोनों भाई उस तहखाने के बाहर निकल आये।

वह चमकदार चीज, जो शेर के सिर में ठोंकी गई, क्या थी इसे आप लोग जानते होंगे। यह वही चमकदार चीज थी जो कुँअर इन्द्रजीतसिंह को बाग के उस तहखाने में एक पुतले के पेट में से मिली थी, जिसमें वे कुँअर आनन्दसिंह को खोजते हुए गये थे।[1]

जब दोनों कुमार तहखाने के बाहर निकल आये, उसके थोड़ी ही देर बाद जमीन के अन्दर से धमधमाहट और घड़घड़ाहट की आवाज आने लगी, जिससे वे पाँचों कैदी बहुत ही ताज्जुब और घबराहट में आ गये। मगर कुमार ने उन्हें समझा कर शान्त किया और कुछ खाने-पीने की फिक्र में लगे। पहर भर बाद वह आवाज बन्द हुई और तब तक कुमार भी हर तरह से निश्चिन्त हो गये। दोपहर दिन ढलने के बाद पाँचों कैदियों को साथ लिए हुए दोनों कुमार पुनः तहखाने के अन्दर उतरे। जब उस कमरे में पहुँचे तो

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, दसवाँ भाग, पहला बयान।

वहाँ शेर और चबूतरे का नाम-निशान भी न पाया, हाँ, उसके बदले में उस जगह एक गड़हा देखा जिसमें उतरने के लिए छः-सात सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। कैदियों को भी साथ लिए और तिलिस्मी खंजर की रोशनी किए हुए दोनों कुमार इस सुरंग में घुसे और लगभग पचास कदम जाने के बाद पुनः एक कमरे में पहुँचें। यह कमरा भी पहले कमरे के बराबर था और इसके सामने की दीवार में पुनः आगे जाने के लिए एक सुरंग का मुहाना नजर आ रहा था अर्थात् इस कमरे को लाँघ कर पुनः आगे बढ़ जाने के लिए भी सामने की तरफ सुरंग दिखाई दे रही थी।

यह कमरा पहले की तरह खाली या सुनसान न था। इसमें तरह-तरह की बेश-कीमत चीजों—हर्ब, जवाहिरात और अशर्फियों—के जगह-जगह ढेर लगे हुए थे जिन्हें देखकर उन पाँचों कैदियों में से एक ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह से पूछा, "यह इतनी बड़ी रकम यहाँ किसके लिए रखी हुई है ?"

इन्द्रजीतसिंह—यह सब दौलत हमारे लिए रखी हुई है, केवल इतनी ही नहीं, बल्कि इसी तरह और भी कई जगह इससे भी बढ़कर अच्छी-अच्छी और कीमती चीजें दिखाई देंगी।

कैदी—इन चीजों को आप क्योंकर बाहर निकालेंगे ?

इन्द्रजीतसिंह—जब हम लोग तिलिस्म तोड़ते हुए चुनारगढ़ पहुँचेंगे, तब ये सब चीजें निकलवा ली जायेंगी।

कैदी—तब तक इसी तरह ज्यों-की-त्यों पड़ी रहेंगी ?

इन्द्रजीतसिंह—हाँ।

इस कमरे में चारों तरफ की दीवारों के साथ तरह-तरह के बेशकीमत हर्बे लटक रहे थे, जिन पर इस खयाल से कि ज़ंग इत्यादि लगकर खराब न हो जायें, एक किस्म का मोमी रोगन लगाया हुआ था। नीचे दो सन्दूक जड़ाऊ जेवरों से भरे हुए थे, जिनमें ताले लगे हुए न थे। इसके अतिरिक्त सोने के बहुत से जड़ाऊ खुशनुमा और नाजुक बर्तन भी दिखाई दे रहे थे।

इन चीजों को देख-भाल कर कुमार आगे बढ़े और सुरंग के दूसरे मुहाने में घुस कर दूर तक चले गये। अबकी दफे का सफर सीधा न था बल्कि घूमघुमौवा था। लगभग डेढ़ या दो कोस जाने के बाद पुनः एक कमरे में पहुंचे। पहले कमरे की तरह इसमें भी आमने-सामने दोनों तरफ सुरंगें बनी हुई थीं।

इस कमरे में सोने-चाँदी या जवाहरात की कोई चीज न थी, हाँ, दीवारों पर बड़ी-बड़ी तस्वीरें लटक रही थी, जो एक किस्म के रोगनी कपड़े पर जिस पर सर्दी-गर्मी का असर नहीं पहुंच सकता था बनी हुई थीं। इन तस्वीरों में रोहतासगढ़ और चुनार की तस्वीरें ज्यादा थीं और तरह-तरह के नक्शे भी जगह-जगह लटक रहे थे, जिन्हें बड़े गौर से दोनों कुमार देर तक देखते रहे।

इस कमरे की कैफियत को देखकर इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "मालूम होता है, ब्रह्म-मण्डल' यही है, इसी जगह हम लोगों को बराबर आना पड़ेगा तथा चुनार-गढ़ के तिलिस्म की चाबी भी इसी जगह से हमें मिलेगी।"

आनन्दसिंह—बेशक यही बात है, इस जगह के 'ब्रह्म-मण्डल' होने में कुछ भी सन्देह नहीं हो सकता।

इन्द्रजीतसिंह—फिर अब तुम्हारी क्या राय है ? इस समय यहाँ कुछ काम किया जाय या नहीं ? क्योंकि इस काम को हम लोग अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं।

आनन्दसिंह—मेरी राय में तो इस समय यहाँ कोई काम न करना चाहिए, क्यों कि (कैदियों की तरफ इशारा करके) इन लोगों को तकलीफ होगी, पहले इन लोगों को तिलिस्म के बाहर कर देना उचित होगा, फिर हम लोग यहाँ आकर अपना काम किया करेंगे।

इन्द्रजीतसिंह—मैं भी यही उचित समझता हूँ, इसके अतिरिक्त हम लोगों को यहाँ कई दफे आने की जरूरत पड़ेगी, अतः इस समय अगर यहाँ अटक कर कोई काम करेंगे तो बाहर निकलने में बहुत देर हो जायेगी और हम भी परेशान और दुःखी हो जायेंगे।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह आगे की तरफ बढ़े और सभी को लिए सामने वाली सुरंग में घुसे। अबकी दफे दोनों कुमारों और कैदियों को बहुत ज्यादा चलना पड़ा और साथ ही इसके भूख-प्यास की भी तकलीफ उठानी पड़ी। कई कोस का सफर करने के बाद जब वे लोग सुरंग के बाहर निकले, तो सुबह की सफेदी आसमान पर फैल चुकी थी, इसलिए दोनों कुमारों ने अन्दाज से समझा कि अबकी दफे हम लोग चौदह या पन्द्रह घंटे तक बराबर चलते रहे और जमानिया को बहुत दूर छोड़ आये।

सुरंग के बाहर निकलकर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने जिस सरजमीन पर अपने को पाया वह बहुत ही दिलचस्प और सुहावनी घाटी थी। चारों तरफ कम ऊँची, सुन्दर और हरी-भरी पहाड़ियों के बीच में सरसब्ज मैदान था, जिसके बीच में बरसाती पानी से बचने के लिए एक स्थान भी बना हुआ था। इस सरजमीन को इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने बहुत ही पसन्द किया और इन्द्रजीतसिंह ने उन कैदियों की तरफ देखकर कहा, "अब तुम लोग अपने को आजाद और तिलिस्मी कैदखाने से बाहर निकला हुआ समझो, थोड़ी देर में हम लोग तुम्हें इस घाटी से बाहर पहुँचा देंगे फिर जहाँ तुम लोगों की इच्छा हो, चले जाना।"

इसके जवाब में इन कैदियों ने हाथ जोड़कर कहा—"अब हम लोग इन चरणों को छोड़ नहीं सकते ! यद्यपि अपने दुश्मनों से बदला लेने के लिए हम लोग बेताब हो रहे हैं परन्तु हमारी यह अभिलाषा भी आपकी कृपा के बिना पूरी नहीं हो सकती, अतः हम लोग आपके साथ-ही-साथ राजा वीरेन्द्रसिंह के दरबार में चलने की इच्छा रखते हैं।"

दोनों कुमारों ने उनकी प्रार्थना मंजूर कर ली और इसके बाद जो कुछ अनूठी कार्रवाई उन लोगों ने की, दूसरे दिन बयान करूँगा।

इतना कहकर नकाबपोश चुप हो गया और अपने घर जाने की इच्छा से राजा साहब का मुँह देखने लगा। यद्यपि महाराज इसके आगे भी इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का हाल सुनना चाहते थे, परन्तु इस समय नकाबपोशों को छुट्टी दे देना ही उचित जान कर घर जाने की इजाजत दे दी और दरबार बर्खास्त किया।

10

अब देखना चाहिए कि देवीसिंह का साथ छोड़ के भूतनाथ ने क्या किया। भूतनाथ भी वास्तव में एक विचित्र ऐयार है। जिस तरह वह ऐयारी के फन में बड़ा ही तेज और होशियार है और जिस काम के पीछे पड़ जाता है उसे कुछ-न-कुछ सीधा किये बिना नहीं रहता, उसी तरह वह निडर भी परले सिरे का कहा जा सकता है। यद्यपि आज-कल उसे इस बात की धुन चढ़ी हुई है कि उसके दो-एक पुराने ऐब, जिनके सबब से उसकी ऐयारी में धब्बा लगता है, छिपे रह जायें और वह किसी-न-किसी तरह राजा वीरेन्द्रसिंह का ऐयार बन जाय, मगर फिर भी ऐयारी के समय अपना काम निकालने की धुन में वह जान तक की परवाह नहीं करता। इस मौके पर भी उसने नकावपोशों का पीछा करके जो कुछ किया उसके विषय में भी यही कहने की इच्छा होती है कि उसने अपनी जान को हथेली पर लेकर वह काम किया, जिसका हाल अब हम लिखते हैं।

संध्या होने में अभी घण्टे भर की देर है। उसी खोह के मुहाने पर जिसके अन्दर नकाबपोशों का मकान है या जिसमें भूतनाथ और देवीसिंह नकावपोशों का पता लगाते हुए गए थे, हम दो नकाबपोशों को ढाल-तलवार लगाये, हाथ में हाथ दिये टहलते हुए देखते हैं। इन दोनों नकाबपोशों की पोशाक और नकाव साधारण थी और हाथ-पैर से भी ये दोनों दुबले-पतले और कमजोर मालूम पड़ते थे। हम नहीं कह सकते कि ये दोनों यहाँ कितनी देर से और किस फिक्र में घूम रहे हैं तथा आपस में किस ढंग की बातें कर रहे हैं, हाँ, इनके हाव-भाव से इस बात का पता जरूर लगता है कि ये दोनों किसी के आने का इन्तजार कर रहे हैं। ऐसे ही समय में अचानक एक आदमी इनके पास आकर खड़ा हो गया जो सूरत-शक्ल आदि से बिल्कुल उजड्ड और देहाती मालूम पड़ता था तथा जिसके हाथ-पैर तथा चेहरे पर गर्द रहने से यह भी जान पड़ता था कि यह कुछ दूर से सफर करता हुआ आ रहा है।

दोनों नकाबपोशों ने उसकी सूरत गौर से देखी और एक ने पूछा, "तू कौन है और क्या चाहता है?"

उस देहाती ने नकाबपोश की बात का कुछ जवाब न दिया और इशारे से बताया कि यहाँ से थोड़ी दूर पर कोई किसी को मार रहा है।

पुनः एक नकाबपोश ने पूछा, "क्या तू गूँगा है?"

इसका भी उसने कुछ जवाब न देकर फिर पहले की तरह इशारे से कुछ समझाया और अपने साथ आने के लिए कहा।

दोनों नकाबपोशों को विश्वास हो गया कि यह गूँगा-बहरा और साथ ही इसके उजड्ड तथा बेवकूफ भी है, अतः एक नकाबपोश ने अपने साथी से कहा, "इसके साथ जाकर देखो तो सही, क्या कहता है।"

दोनों नकाबपोश उसके साथ चलने के लिए तैयार हो गये और वह भी यह इशारा करके कि तुम्हें थोड़ी ही दूर चलना पड़ेगा, उन्हें अपने साथ लिए हुए पूरब की तरफ

रवाना हुआ।

थोड़ी दूर जाने के बाद उस देहाती ने जमीन पर गिरे कई रुपये और दो-तीन जनाने जेवर नकाबपोशों को दिखाए जिससे इन्हें ताज्जुब हुआ और उन्होंने उस देहाती को जेवर और रुपये उठा लेने के लिए कहा, मगर उस देहाती ने ऐसा करने से इनकार किया और आगे चलने के लिए इशारा किया।

दोनों नकाबपोश भी जेवरों और रुपयो को उसी तरह छोड़ उस देहाती के पीछे-पीछे चलकर और आगे बढ़े तथा कुछ दूर चलने पर पुनः दो-तीन जेवर और एक कटा हुआ हाथ जमीन पर पड़ा देखा। ताज्जुब में आकर एक नकाबपोश ने दूसरे से कहा, "यह क्या मामला है? हमारे पड़ोस ही में कोई बुरी घटना हुई जान पड़ती है?"

दूसरा—रंग तो ऐसा ही मालूम पड़ता है!

पहला—यह कटा हाथ और जेवर भी किसी औरत के जान पड़ते हैं।

दूसरा—बेशक ये जेवर उसी के होंगे, इस बात का पता लगा कर अपने सरदार को इत्तिला देनी चाहिए।

ये बातें हो ही रही थीं कि आगे से किसी औरत के रोने की आवाज इन दोनों नकाबपोशों ने सुनी, जिससे ताज्जुब में आकर ये और आगे की तरफ बढ़े।

इसी तरह चलकर वे दोनों अपने स्थान से काफी दूर निकल गये और अन्त में एक औरत को जोर-जोर से रोते-चिल्लाते देखा। यह औरत साधारण न थी बल्कि किसी अमीर घर की मालूम पड़ती थी। इसके बदन में खुशबूदार फूलों के जेवर पड़े हुए थे और यह दोनों हाथ से अपना सिर पीट कर रो रही थी। इसके सामने एक दूसरी औरत की लाश पड़ी हुई थी और उसके बदन में भी खुशबूदार फूलों के जेवर पड़े हुए थे। उस लाश के बदन से खून बह रहा था और उसका एक हाथ कटा हुआ था।

थोड़ी देर तक ताज्जुब के साथ देखने के बाद एक नकाबपोश ने उस औरत से पूछा, "इसे किसने मारा और यह तेरी कौन है?" इसके जवाब में उस औरत ने अपने आँचल से आँसू पोंछ कर कहा, "मैं क्या बताऊँ कि किसने मारा! तुम्हारे किसी साथी ने मारा है, अब तुम मुझे भी मारकर छुट्टी करो जिससे बखेड़ा ही तय हो जाये।"

एक नकाबपोश—(ताज्जुब और क्रोध के साथ) क्या हम लोग ऐसे नामर्द और पतित हैं जो औरतों के खून से अपना हाथ रँगेंगे?

औरत—मैं तो यही सोचती हूँ, जब खुद मुझी पर बीत चुकी और बीत रही है, तब मैं और क्या कहूँ? शायद आप न हों, मगर आप ही की तरह पर्दे में मुँह छिपाने वालों ने इसे मारा है। चाहे वह मर्द हो या औरत मगर याद रहे कि इसका बदला लिए बिना न रहूँगी या इसके साथ अपनी भी जान दे दूँगी।

नकाबपोश—मगर यह तू कह किससे रही है और तुझे क्योंकर यकीन हो गया कि इसे हमारे साथियों ने मारा है?

औरत—तुम्हीं लोगों से कह रही हूँ और मुझे यह अच्छी तरह यकीन है कि इसे तुम्हारे साथियों ने मारा है!

नकाबपोश—(क्रोध से) क्या कहूँ, तू औरत है, तुझ पर हाथ छोड़ नहीं सकता, अगर कोई मर्द ऐसी बातें करता तो उसे ऐसी कहने का मजा चखा देता !

औरत—शायद मुझे धोखा हुआ हो मगर इसमें कोई शक नहीं कि जिसने इसे मारा है वह तुम्हारी ही तरह का था।

नकाबपोश—तू अपना और इसका हाल तो कह, शायद उससे कुछ पता लगे।

औरत—मैं इस जगह कुछ भी नहीं कहने की, अगर तुम उन लोगों में से नहीं हो जिन्होंने मुझे सताया है और असल मर्द हो, तो मुझे अपने सरदार के पास ले चलो, उसी जगह मैं सब हाल कहूँगी।

नकाबपोश—हमारे सरदार के पास तू नहीं जा सकती।

औरत—तो अब मुझे विश्वास हो गया जो कुछ किया सब तुम लोगों ने किया।

इसी तरह की बातें देर तक होती रहीं। यद्यपि वे दोनों नकाबपोश उस औरत को अपने सरदार के पास ले चलना या उसे अपना पता देना नहीं चाहते थे, मगर उस औरत ने ऐसी तीखी-तीखी बातें कहीं कि वे दोनों जोश में आ गए और उसे तथा उस लाश को उठाकर अपने खोह के मुहाने पर चलने के लिए तैयार हो गये। उन्होंने लाश उठाकर ले चलने में मदद करने के लिए उस गूँगे देहाती को इशारे में कहा, मगर उसने ऐसा करने से साफ इनकार किया बल्कि जब उन दोनों नकाबपोशों ने उसे डाँटा तब वह डरकर वहाँ से भागा और कुछ दूर पर जाकर खड़ा हो गया।

फिर उन दोनों नकाबपोशों ने उस गूँगे से कुछ कहना उचित न जाना और जोश में आकर खुद लाश को उठाकर ले चलने के लिए तैयार हो गये, क्योंकि उन्हें इस बात का पूरा विश्वास था कि इस औरत की जुबानी जरूर कोई अनूठी बात सुनेंगे।

हम ऊपर बयान कर चुके हैं कि उस औरत की लाश भी फूलों के गहनों से भरी हुई थी, अब इतना और कह देना है कि उन फूलों पर बेहोशी की दवा इस ढंग पर छिड़की हुई थी कि कुछ मालूम नहीं होता था और खुशबू के सबब नकाबपोशों पर उसका कुछ असर हो चुका था मगर उन्हें इस बात का खयाल कुछ भी न था।

जब उन दोनों ने उस लाश को उठा लिया और फूलों की खुशबू को तेजी के साथ दिमाग में घुसने का मौका मिला, तब उन दोनों नकाबपोशों ने समझा कि हमारे साथ ऐयारी की गई। मगर अब कर ही क्या सकते थे ? तुरत सिर में चक्कर आने लगा जिसके सबब से वे दोनों बैठ गये और साथ ही इसके बेहोश होकर जमीन पर लम्बे हो गये। उसी समय औरत की लाश भी चैतन्य हो गई और वह देहाती गूँगा भी उनकी खोपड़ी पर आ मौजूद हुआ। उस औरत ने देहाती गूँगे से कहा, "अब क्या करना चाहिए ?"

देहाती—बस अब हमारा काम हो गया, अब इन्हें मालूम हो जायगा कि भूतनाथ कोई साधारण ऐयार नहीं है।

औरत—मगर अब भी आपको इस बात के सोचने का मौका है कि नकाबपोश लोग आपसे रंज न हो जायँ और इस बखेड़े का नतीजा बुरा न निकले।

देहाती—इन बातों को मैं खूब सोच चुका हूँ। उन दोनों नकाबपोशों को जो

हमारे राजा साहब के दरबार में जाया करते है मैं रंज होने का मौका नही दूंगा और इन दोनों में से केवल एक ही को उठा ले जाकर और उसी से अपना काम निकालूंगा।

इतना कह उस देहाती ने दोनों नकाबपोशों के चेहरे पर से नकाब उलट दी मगर असली सूरत पर निगाह पड़ते ही चौंक के उस औरत की तरफ देखकर कहा, "ओफ ओह, ये सूरतें तो वे ही हैं जिन्होंने दरबारे-आम में दारोगा और जैपाल को बदहवास कर दिया था। पहले दिन जब एक नकाबपोश ने अपने चेहरे पर से नकाब हटाई थी तो दारोगा के सिर में चक्कर[1] आ गया था, और दूसरे दिन जब दूसरे नकाबपोश ने सूरत दिखाई तो जयपाल की जान शरीर से निकलने की तैयारी करने लगी थी।[2]

इसी बीच में वह औरत भी उठकर हर तरह से दुरुस्त हो गई थी जिसे थोड़ी देर पहले दोनों नकाबपोश मुर्दा समझ कर उठा ले चले थे। असल में उसका हाथ कटा हुआ हाथ लगाकर दिखा दिया गया था।

ऊपर की बातचीत से हमारे पाठक समझ गये होंगे कि ये देहाती महाशय असल में भूतनाथ हैं और दोनों औरतें उसके नौजवान शागिर्द तथा मर्द हैं।

भूतनाथ की आखिरी बात सुनकर उसके एक शागिर्द, ने जो औरत की सूरत में था कहा, "क्या ये ही दोनों हमारे महाराज के दरबार में जाया करते हैं?"

भूतनाथ—दरबार में जब नकाबपोशों ने सूरत दिखाई थी तब दो दफे इन्हीं दोनों की सूरतें देखने में आई थीं, मगर मैं नहीं कह सकता कि वहाँ जाने वाले दोनों नकाबपोश यही हैं। मेरा दिल तो यही गवाही देता है कि दोनों नकाबपोश कोई दूसरे हैं और जब दरबार में जाते हैं तो केवल नकाब ही डालकर नहीं बल्कि अपनी सूरतें भी बदल कर जाते हैं और उस दिन इन्हीं की सी सूरत बनाकर गये थे।

शागिर्द—बेशक ऐसा ही है।

भूतनाथ—खैर अब मैं इन दोनों में से एक को छोड़ न जाऊँगा जैसा कि पहले इरादा कर चुका था, बल्कि दोनों ही को उठकर ले जाऊँगा और असली भेद मालूम करके ही छोड़ूंगा।

इतना कह के भूतनाथ ने ऐयारी ढंग पर उन दोनों नकाबपोशों की गठरी बाँधी और तीनों आदमी मिलजुल कर उन्हें उठा ले गये।

11

नकाबपोशों के चले जाने के बाद जब केवल घर वाले ही वहाँ रह गये तब राजा वीरेन्द्रसिंह ने अपने पिता से तारासिंह की बाबत जो कुछ हाल हम ऊपर लिख आये हैं

1. देखिये चन्द्रकान्ता सन्तति उन्नीसवाँ भाग, दसवाँ बयान।
2. वही, बारहवाँ बयान।

कुछ घटा-बढ़ाकर बयान किया और इसके बाद कहा, "तारासिंह नकाबपोशों के सामने ही लौटकर आ गया था जिससे अभी तक यह पूछने का मौका न मिला कि वह कहाँ गया था और वह तस्वीर उसे कहाँ से मिली थी जो उसने अपनी माँ को दी थी।

इतना कहकर वीरेन्द्रसिंह चुप हो गये और देवीसिंह ने वह कपड़े वाली तस्वीर (जो चम्पा ने दी थी) महाराज सुरेन्द्रसिंह के सामने रख दी। सुरेन्द्रसिंह ने बड़े गौर से उस तस्वीर को देखा और इसके बाद तारासिंह से पूछा—

सुरेन्द्रसिंह—निःसन्देह यह तस्वीर किसी अच्छे कारीगर के हाथ की बनी हुई है, यह तुम्हें कहाँ से मिली ?

तारासिंह—मैं स्वयम् इस तस्वीर का हाल अर्ज करने वाला था, परन्तु इसके सम्बन्ध की कई ऐसी बातों को जानना आवश्यक था जिनके बिना इसका पूरा भेद मालूम नहीं हो सकता, अतएव मैं उन्हीं बातों के जानने की फिक्र में पड़ा हुआ था और इसी सबब से अभी तक कुछ अर्ज करने की नौबत नहीं आई।

तेजसिंह—तो क्या तुम्हें इसका पूरा-पूरा भेद मालूम हो गया ?

तारासिंह—जी नहीं, मगर कुछ-कुछ जरूर मालूम हुआ है।

तेजसिंह—तो इस काम में तुमने अपने साथियों से मदद क्यों नहीं ली ?

तारासिंह—अभी तक मदद की जरूरत नहीं पड़ी थी, मगर हाँ, अब उनकी मदद लेनी पड़ेगी !

वीरेन्द्रसिंह—खैर बताओ कि इस तस्वीर को तुमने क्योंकर पाया ?

तारासिंह—(इधर-उधर देखकर) भूतनाथ की स्त्री से।

तारासिंह की इस बात को सुनकर सब कोई चौंक पड़े, खास कर देवीसिंह को तो बड़ा ही ताज्जुब हुआ और उसने हैरत की निगाह से अपने लड़के तारासिंह की तरफ देखकर पूछा—

देवीसिंह—भूतनाथ की स्त्री तुम्हें कहाँ मिली ?

तारा—उसी जंगल में जिसमें आपने और भूतनाथ ने उसे देखा था, बल्कि उसी झोंपड़ी में जिसमें भूतनाथ और आप उसके साथ गये थे और लाचार होकर लौट आये थे। आपको यह सुनकर ताज्जुब होगा कि वह वास्तव में भूतनाथ की स्त्री ही थी।

देवीसिंह—(आश्चर्य से) हैं, क्या वह वास्तव में भूतनाथ की स्त्री थी ?

तारासिंह—जी हाँ, आप और भूतनाथ नकाबपोशों के फेर में यद्यपि कई दिनों तक परेशान हुए परन्तु उतना हाल मालूम न कर सके जितना मैं जान आया हूँ।

इस समय दरबार में आपस वालों के सिवाय कोई गैर आदमी ऐसा न था जिसके सामने इस तरह की बातों के कहने-सुनने में किसी तरह का खयाल होता, अतएव बड़ी उत्कण्ठा के साथ सब कोई तारासिंह की बातें सुनने के लिए तैयार हो गये और देवीसिंह का तो कहना ही क्या जिनका दिल तूफान में पड़े हुए जहाज की तरह हिचकोले खा रहा था, उन्हें यकायक यह खयाल पैदा हुआ कि अगर वह वास्तव में भूतनाथ की स्त्री थी तो दूसरी औरत भी जरूर चम्पा ही रही होगी, जिसे नकाबपोशों के मकान में देखा गया था, अतः बड़े ताज्जुब के साथ अपने लड़के तारासिंह से पूछा, "क्या तुम बता सकते

होकि जिन दो औरतों को हमने नकाबपोशों के मकान में देखा था वे कौन थीं ?"

तारासिंह—उनमें से एक तो जरूर भूतनाथ की स्त्री थी मगर दूसरी के बारे में अभी तक कुछ पता नहीं लगा।

देवीसिंह—(कुछ सोच कर) दूसरी तुम्हारी माँ होगी ?

तारासिंह—शायद ऐसा ही हो मगर विश्वास नहीं होता।

तेजसिंह—तुम्हें यह कैसे निश्चय हुआ कि वह वास्तव में भूतनाथ की स्त्री थी ?

तारासिंह—उसने स्वयं भूतनाथ की स्त्री होना स्वीकार किया बल्कि और भी बहुत-सी बातें ऐसी कहीं जिससे किसी तरह का शक नहीं रहा।

देवीसिंह—और तुम्हें यह कैसे मालूम हुआ कि नकाबपोशों के घर में जाकर हम लोगों ने किसे देखा या जंगल में भूतनाथ की स्त्री हम लोगों को मिली थी और हम लोग उसके पीछे-पीछे एक झोंपड़ी में जाकर सूखे हाथ लौट आये थे ?

तारासिंह—यह सब हाल भी मुझे बखूबी मालूम है क्योंकि उस समय मैं भी उसी जंगल में था जिस समय आपने भूतनाथ की स्त्री को देखा और उसके पीछे-पीछे गये थे। इस समय आप यह सुनकर और ताज्जुब करेंगे कि आपसे अलग होकर भूतनाथ ने उसी दिन अर्थात् कल संध्या के समय उन दोनों नकाबपोशों को गिरफ्तार कर लिया जिनकी सूरत यहाँ दरबार में देखकर दारोगा और जयपाल बदहवास हो गये थे।

वीरेन्द्रसिंह—(ताज्जुब से) हैं ! मगर वे दोनों नकाबपोश तो आज भी यहाँ आये थे जिनका जिक्र तुम कर रहे हो।

तारासिंह—जी हाँ उन्हें तो मैं अपनी आँखों ही से देख चुका हूँ, मगर मेरे कहने का मतलब यह है कि भूतनाथ ने कल जिन दोनों नकाबपोशों को गिरफ्तार किया है उनकी सूरतें ठीक वैसी ही हैं जैसी दारोगा और जयपाल ने यहाँ देखी थीं, चाहे ये लोग हों कोई भी।

तेजसिंह—और भूतनाथ ने उन्हें गिरफ्तार कहाँ पर किया ?

तारासिंह—उसी खोह के मुहाने पर उसने उन्हें धोखा दिया जिसमें नकाबपोश लोग रहते थे।

देवीसिंह—मालूम होता है कि हम लोगों की तरह तुम भी कई दिनों से नकाबपोशों की खोज में पड़े हो ?

तारासिंह—खोज में नहीं, बल्कि फेर में।

वीरेन्द्रसिंह—खैर, तुम खुलासा तौर पर सब हाल बयान कर जाओ, इस तरह पूछने और कहने से काम नहीं चलेगा।

तारासिंह—जो आज्ञा, मगर मेरा हाल कुछ बहुत लम्बा-चौड़ा नहीं, केवल इतना ही कहना है कि मैं भी पाँच-सात दिन से उन दोनों नकाबपोशों के फेर में पड़ा हूँ और इत्तिफाक से मैं भी उसी खोह के अन्दर जा पहुँचा था जिसमें वे लोग रहते हैं। (कुछ सोच और जीतसिंह की तरफ देखकर) अगर कोई हर्ज न हो तो दो घण्टे के बाद मुझसे मेरा हाल पूछा जाय।

जीतसिंह—(महाराज की तरफ देखकर और कुछ इशारा पाकर) खैर कोई

चिन्ता नहीं, मगर यह बताओ कि इस दो घण्टे के अन्दर तुम क्या काम करोगे ?

तारासिंह—कुछ भी नहीं, मैं केवल अपनी माँ से मिल लूँगा और स्नान-ध्यान से छुट्टी पा लूंगा ।

देवीसिंह—(धीरे से) आज-कल के लड़के भी कुछ विचित्र ही पैदा होते हैं, खास कर ऐयारों के ।

इसके जवाब में तारासिंह ने अपने पिता की तरफ देखा और मुस्कुराकर सिर झुका लिया । यह बात देवीसिंह को कुछ बुरी मालूम हुई मगर बोलने का मौका न देखकर चुप रह गये ।

तेजसिंह—(तारासिंह से) आज जब हम लोग तुम्हारे न मिलने से परेशान थे तो हमारी परेशानी को देखकर नकाबपोशों ने कहा था कि तारासिंह के लिए आपको तरद्दुद नहीं करना चाहिए, आशा है कि वह घण्टे-भर के अन्दर ही यहाँ आ पहुँचेगा। और वास्तव में हुआ भी ऐसा ही, तो क्या नकाबपोशों को तुम्हारा हाल मालूम था ? यह बात नकाबपोशों से भी पूछी गई थी मगर उन्होंने कुछ जवाब न दिया और कहा कि 'इसका जवाब तारा ही देगा ।'

तारासिंह—नकाबपोशों की सभी बातें ताज्जुब की होती हैं । मैं नहीं जानता कि उन्हें मेरा हाल क्योंकर मालूम हुआ ।

तेजसिंह—क्या तुम्हें इस बात की खबर है कि इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने तुम्हें और भैरोंसिंह को बुलाया है ?

तारासिंह—जी नहीं ।

तेजसिंह—(कुमार की चिट्ठी तारासिंह को दिखाकर) लो, इसे पढ़ो ।

तारासिंह—(चिट्ठी पढ़कर) नकाबपोशों ही के हाथ यह चिट्ठी आई होगी ?

तेजसिंह—हाँ, और उन्हीं नकाबपोशों के साथ तुम दोनों को जाना भी पड़ेगा ।

तारासिंह—जब मर्जी होगी, हम दोनों चले जायँगे ।

इसके बाद महाराज की आज्ञानुसार दरबार बर्खास्त हुआ और सब कोई अपने-अपने ठिकाने चले गये । तारासिंह भी महल में अपनी माँ से मिलने के लिए चला गया और घण्टे भर से ज्यादा देर तक उसके पास बैठा बातचीत करता रहा, इसके बाद जब महल से बाहर आया तो सीधे जीतसिंह के डेरे में चला गया और जब मालूम हुआ कि वे महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास गये हुए हैं तो खुद भी महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास महल में ही चला गया ।

हम नहीं कह सकते कि महाराज सुरेन्द्रसिंह, जीतसिंह और तारासिंह में देर तक क्या-क्या बातें होती रहीं, हाँ इसका नतीजा यह जरूर निकला कि तारासिंह को पुनः अपना हाल किसी से न कहना पड़ा, अर्थात् महाराज ने उसे अपना हाल बयान करने से माफी दे दी और तारसिंह को भी जो कुछ कहना-सुनना था, महाराज से ही कह-सुनकर छुट्टी पा ली । औरों को तो इस बात का ऐसा खयाल न हुआ, मगर देवीसिंह को यह चालाकी बुरी मालूम हुई और उन्हें निश्चय हो गया कि तारासिंह और चम्पा दोनों माँ-बेटे मिले हुए हैं और साथ ही इसके बड़े महाराज भी इस भेद को जानते हैं, मगर

ताज्जुब है कि ऐयारों पर प्रकट नहीं करते। इसका कोई-न-कोई सबब जरूर है, और तब देवीसिंह की हिम्मत न पड़ी कि अपने लड़के को कुछ कहें या डाटें।

दो घण्टे रात जा चुकी थी जब महाराज सुरेन्द्रसिंह ने वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह को अपने पास बुलवाया। उस समय जीतसिंह पहले ही से महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास बैठे हुए थे, अतः जब दोनों आदमी वहाँ आ गये तो दो घण्टे तक तारासिंह के बारे में बातचीत होती रही और इसके बाद महाराज आराम करने के लिए पलंग पर चले गये। वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह अपने-अपने कमरे में चले आये।

12

दूसरे दिन अपने मामूली समय पर पुनः दोनों नकाबपोशों के आने की इत्तिला मिली। उस समय जीतसिंह, वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह, राजा गोपालसिंह, बलभद्रसिंह, इन्द्रदेव और बद्रीनाथ वगैरह अपने यहाँ के कुछ ऐयार लोग भी महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास बैठे हुए थे और उन्हीं नकावपोशों के बारे में तरह-तरह की बातें हो रही थीं। आज्ञानुसार दोनों नकाबपोश हाजिर किए गए और फिर इस तरह बातचीत होने लगी—

तेजसिंह—(नकाबपोशों की तरफ देखकर) तारासिंह की जुबानी सुनने में आया कि भूतनाथ ने आपके दो आदमियों को ऐयारी करके गिरफ्तार कर लिया है।

एक नकाबपोश—जी हाँ, हम लोगों को भी इस बात की खबर लग चुकी है मगर कोई चिन्ता की बात नहीं है। गिरफ्तार होने और बेइज्जती उठाने पर भी वे दोनों भूतनाथ को किसी भी तरह की कोई नहीं तकलीफ न देंगे और न भूतनाथ ही उन्हें किसी तरह की तकलीफ दे सकेगा। यद्यपि उस समय भूतनाथ ने उन दोनों को नहीं पहचाना मगर जब उनका परिचय पायेगा और पहचानेगा तो उसे बड़ा ही ताज्जुब होगा। जो हो मगर भूतनाथ को ऐसा करने की जरूरत न थी। ताज्जुब है कि ऐसे फजूल के कामों में भूतनाथ का जी क्योंकर लगता है। ऐयारी करके जिस समय भूतनाथ ने दोनों को गिरफ्तार किया था उस समय उन दोनों की सूरत देखने के साथ ही छोड़ देना चाहिए था क्योंकि एक दफे भूतनाथ इस दरबार में उन दोनों सूरतों को देख चुका था और जानता था कि आखिर इन दोनों का हाल मालूम होगा ही। अब दोनों को गिरफ्तार करके ले जाने से भूतनाथ की बेचैनी कम न होगी बल्कि और ज्यादा बढ़ जायगी।

तेजसिंह—हाँ हम लोगों ने भी यही सुना था कि जिन सूरतों को देखकर माया-रानी का दारोगा और जयपाल बदहवास हो गए थे उन्हीं दोनों को भूतनाथ ने गिरफ्तार किया है।

नकाबपोश—जी हाँ, ऐसा ही है।

तेजसिंह—तो क्या वे दोनों स्वयं इस दरबार में आये थे या आप लोगों ने उन दोनों के जैसी सूरत बनाई थी?

नकाबपोश— वे लोग स्वयं यहाँ नहीं आये थे, बल्कि हम ही दोनों उन दोनों की तरह सूरत बनाए हुए थे। दारोगा और जयपाल इस बात को समझ न सके।

तेजसिंह—असल में वे दोनों कौन हैं जिन्हें भूतनाथ ने गिरफ्तार किया है?

नकाबपोश—(कुछ सोचकर) आज नहीं अगर हो सकेगा तो दो-एक दिन में मैं आपकी इस बात का जवाब दूंगा क्योंकि इस समय हम लोग ज्यादा देर तक यहाँ ठहरना नहीं चाहते। इसके अतिरिक्त सम्भव है कि कल तक भूतनाथ भी उन दोनों को लिए हुए यहीं आ जाय। अगर वह अकेला ही आवे तो हुक्म दीजिएगा कि उन दोनों को भी यहाँ ले आवे, उस समय कम्बख्त दारोगा और जयपाल के सामने उन दोनों का हाल सुनने से आप लोगों को विशेष आनन्द मिलेगा। मैं भी···(कुछ रुककर) मौजूद ही रहूँगा, जो बात समझ में न आवेगी समझा दूंगा। (कुछ रुककर) हाँ, भैरोंसिंह और तारासिंह के विषय में क्या आज्ञा होती है? क्या आज वे दोनों हमारे साथ भेजे जायँगे? क्योंकि इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को उन दोनों के बिना सख्त तकलीफ है।

सुरेन्द्रसिंह—हाँ, भैरों और तारासिंह तुम दोनों के साथ जाने के लिए तैयार हैं।

इतना कहकर महाराज ने भैरोंसिंह और तारासिंह की तरफ देखा जो उसी दरबार में बैठे हुए नकाबपोशों की बातें सुन रहे थे। महाराज को अपनी तरफ देखते देख दोनों भाई उठ खड़े हुए और महाराज को सलाम करने के बाद दोनों नकाबपोशों के पास आकर बैठ गये।

नकाबपोश—(महाराज से) तो अब हम लोगों का आज्ञा मिलनी चाहिए।

सुरेन्द्रसिंह—क्या आज दोनों लड़कों का हाल हम लोगों को न सुनाओगे!

नकाबपोश—(हाथ जोड़कर) जी नहीं, क्योंकि देर हो जाने से आज भैरोंसिंह और तारासिंह को इन्द्रजीतसिंह के पास हम लोग पहुँचा न सकेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—खैर, क्या हर्ज है, कल तो तुम लोगों का आना होगा ही?

नकाबपोश—अवश्य।

इतना कहकर दोनों नकाबपोश उठ खड़े हुए और सलाम करके बिदा हुए। भैरोंसिंह और तारासिंह भी उनके साथ रवाना हुए।

13

रात घण्टे भर से कुछ ज्यादा जा चुकी है। पहाड़ के एक सुनसान दर्रे में जहाँ किसी आदमी का जाना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव जान पड़ता है, सात आदमी बैठे हुए किसी के आने का इन्तजार कर रहे हैं और उन लोगों के पास ही एक लालटेन जल रही है। यह स्थान चुनारगढ़ के तिलिस्मी मकान से लगभग छः-सात कोस की दूरी पर होगा। यह दो पहाड़ों के बीच वाला दर्रा बहुत बड़ा, पेचीला, ऊँचा-नीचा और ऐसा भयानक था कि साधारण मनुष्य एक सायत के लिए भी यहाँ खड़ा रहकर अपने उछलते

और काँपते हुए कलेजे को सम्हाल नहीं सकता था। इस दर्रे में बहुत-सी गुफाएँ ऐसी हैं जिनमें सैकड़ों आदमी आराम से रह कर दुनियादारों की आँखों से, बल्कि वहम और गुमान से भी, अपने को छिपा सकते हैं, और इसी से समझ लेना चाहिए कि यहाँ ठहरने या बैठने वाला आदमी साधारण नहीं बल्कि जीवट और कड़े दिल का होगा।

ये सातों आदमी, जिन्हें हम बेफिक्री के साथ बैठे देखते हैं, भूतनाथ के साथी हैं और उसी की आज्ञानुसार ऐसे स्थान में अपना घर बनाये हुए पड़े हैं। इस समय भूतनाथ यहाँ आने वाला है, अतः ये लोग भी उसी का इन्तजार कर रहे हैं।

इसी समय भूतनाथ भी उन दोनों नकाबपोशों को, जिन्हें आज ही धोखा देकर गिरफ्तार किया था, लिये हुए आ पहुँचा। भूतनाथ को देखते ही वे लोग उठ खड़े हुए और बेहोश नकाबपोशों की गठरी उतारने में सहायता दी।

दोनों बेहोश जमीन पर सुला दिए गये और इसके बाद भूतनाथ ने अपने एक साथी की तरफ देखकर कहा, "थोड़ा पानी ले जाओ, मैं इन दोनों के चेहरे धोकर देखना चाहता हूँ।"

इतना सुनते ही एक आदमी दौड़ता हुआ चला गया और थोड़ी ही दूर पर एक गुफा के अन्दर घुसकर पानी का भरा हुआ लोटा लेकर चला आया। भूतनाथ ने बड़ी होशियारी से (जिसमें उनका कपड़ा भीगने न पावे) दोनों नकाबपोशों का चेहरा धोकर लालटेन की रोशनी में गौर से देखा मगर किसी तरह का फर्क न पाकर धीरे से कहा, "इन लोगों का चेहरा रँगा हुआ नहीं है।"

इसके बाद भूतनाथ ने उन दोनों को लखलखा सुँघाया जिससे वे तुरत ही होश में आकर उठ बैठे और घबराहट के साथ चारों तरफ देखने लगे। लालटेन की रोशनी में भूतनाथ के चेहरे पर निगाह पड़ते ही उन दोनों ने भूतनाथ को पहचान लिया और हँसकर उससे कहा, "बहुत खासे! तो ये सब जाल आप ही के रचे हुए थे?"

भूतनाथ—जी हाँ, मगर आप इस बात का खयाल भी अपने दिल में न लाइयेगा कि मैं आपको दुश्मनी की नीयत से पकड़ लाया हूँ।

एक नकाबपोश—(हँसकर) नहीं-नहीं, यह बात हम लोगों के दिल में नहीं आ सकती और न तुम हमें किसी तरह का नुकसान पहुँचा ही सकते हो, मगर मैं यह पूछता हूँ कि तुम्हें इस कार्रवाई के करने से फायदा क्या होगा?

भूतनाथ—आप लोगों से किसी तरह का फायदा उठाने की भी मेरी नीयत नहीं है। मैं तो केवल दो-चार बातों का जवाब पाकर ही अपनी दिलजमई कर लूँगा और इसके बाद आप लोगों को उसी ठिकाने पर पहुँचा दूँगा जहाँ से ले आया हूँ।

नकाबपोश—मगर तुम्हारा यह खयाल भी ठीक नहीं है क्योंकि तुम खुद समझ गये होगे कि हम लोग थोड़े ही दिनों के लिए अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए हैं और अपना भेद प्रकट होने नहीं देते, इसके बाद हम लोगों का भेद छिपा नहीं रहेगा, अतः इस बात को जानकर भी तुम्हें इतनी जल्दी क्यों पड़ी है और क्यों तुम्हारे पेट में चूहे कूद रहे हैं? क्या तुम नहीं जानते कि स्वयं महाराज सुरेन्द्रसिंह और राजा वीरेन्द्रसिंह हम लोगों का भेद जानने के लिए बेताब हो रहे थे, मगर कई बातों पर ध्यान देकर हम लोगों ने

अपना भेद खोलने से इनकार कर दिया और कह दिया कि कुछ दिन सब्र कीजिए फिर आपसे आप हम लोगों का भेद खुल जायगा, फिर तुम क्या चीज हो जो तुम्हारे कहने से हम लोग अपना भेद खोल देंगे ?

नकाबपोश की बेरुखी मिली हुई बातें सुनकर यद्यपि भूतनाथ को क्रोध चढ़ आया, मगर क्रोध करने का मौका न देख वह चुप रह गया और नरमी के साथ फिर बातचीत करने लगा।

भूतनाथ—आपका कहना ठीक है, मैं इस बात को खूब जानता हूँ, मगर मैं उन भेदों को खुलवाना नहीं चाहता जिन्हें हमारे महाराज जानना चाहते है, मैं तो केवल दो-चार मामूली बातें आप लोगों से पूछना चाहता हूँ जिनका उत्तर देने में न तो आप लोगों का भेद ही खुलता है और न आप लोगों का कोई हर्ज ही होगा। इसके अतिरिक्त मैं वादा करता हूँ कि मेरी बातों का जो कुछ आप जवाब देंगे, उसे मैं किसी दूसरे पर तब तक प्रकट न करूँगा जब तक आप लोग अपना भेद न खोलेंगे।

नकाबपोश—(कुछ सोचकर) अच्छा पूछो, क्या पूछते हो ?

भूतनाथ—पहली बात मैं यह पूछता हूँ कि देवीसिंह के साथ मैं आप लोगों के मकान में गया था, यह बात आपको मालूम है या नहीं ?

नकाबपोश—हाँ, मालूम है।

भूतनाथ—खैर, और दूसरी बात यह है कि वहाँ मैंने अपने लड़के हरनामसिंह को देखा, क्या वह वास्तव में हरनामसिंह ही था।

नकाबपोश—(कुछ क्रोध की निगाह से भूतनाथ को देखकर) हाँ, था तो सही, फिर ?

भूतनाथ—(लापरवाही के साथ) कुछ नहीं, मैं केवल अपना शक ही मिटाना चाहता था। अच्छा अब तीसरी बात यह जानना चाहता हूँ कि वहाँ देवीसिंह ने और मैंने अपनीअपनी स्त्रियों को देखा था, क्या वे दोनों वास्तव में हम दोनों की स्त्रियाँ थीं या कोई और ?

नकाबपोश—चम्पा के बारे में पूछने वाले तुम कौन हो ? हाँ अपनी स्त्री के बारे में पूछ सकते हो, सो मैं साफ कह देता हूँ कि वह बेशक तुम्हारी स्त्री 'रामदेई' थी।

यह जवाब सुनते ही भूतनाथ चौंका और उसके चेहरे पर क्रोध और ताज्जुब की निशानी दिखाई देने लगी। भूतनाथ को निश्चय था कि उसकी स्त्री का असली नाम 'रामदेई' किसी को मालूम नहीं है, मगर इस समय एक अनजान आदमी के मुँह से उसका नाम सुनकर भूतनाथ को बड़ा ही ताज़्जुब हुआ और इस बात पर उसे क्रोध भी चढ़ आया कि मेरी स्त्री इन लोगों के पास क्यों आई, क्योंकि वह एक ऐसे स्थान पर थी जहाँ उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई जा नहीं सकता था, ऐसी अवस्था में निश्चय है कि वह अपनी खुशी से बाहर निकली और इन लोगों के पास आई। केवल इतना ही नहीं, उसे इस बात के खयाल से और भी रंज हुआ कि मुलाकात होने पर भी उसकी स्त्री ने उससे अपने को छिपाया बल्कि एक तौर पर धोखा देकर बेवकूफ बनाया—आदि इसी तरह की बातों को परेशानी और रंज के साथ भूतनाथ सोचने लगा।

नकाबपोश—अब जो कुछ पूछना था पूछ चुके या अभी कुछ बाकी है?

भूतनाथ—हाँ, अभी कुछ और पूछना है।

नकाबपोश—तो जल्दी से पूछते क्यों नहीं, सोचने क्या लग गये?

भूतनाथ—अब यह पूछना है कि मेरी स्त्री आप लोगों के पास कैसे आई और वह खुद आप लोगों के पास आई या उसके साथ जबर्दस्ती की गई?

नकाबपोश—अब तुम दूसरी राह चले, इस बात का जवाब हम लोग नहीं दे सकते।

भूतनाथ—आखिर इसका जवाब देने में हर्ज ही क्या है?

नकाबपोश—हो या न हो, मगर हमारी खुशी भी तो कोई चीज है।

भूतनाथ—(क्रोध में आकर) ऐसी खुशी से काम नहीं चलेगा, आपको मेरी बातों का जवाब देना ही पड़ेगा?

नकाबपोश—(हँसकर) मानो आप हम लोगों पर हुकूमत कर रहे हैं और जबर्दस्ती पूछ लेने का दावा रखते हैं?

भूतनाथ—क्यों नहीं, आखिर आप लोग इस समय मेरे कब्जे में हैं।

इतना सुनते ही नकाबपोश को भी क्रोध चढ़ आया और उसने तीखी आवाज में कहा, "इस भरोसे न रहना कि हम लोग तुम्हारे कब्जे में हैं, अगर अब तक नहीं समझते थे तो अब समझ रक्खो कि उस आदमी का तुम कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते जो अपने हाथों से तुम्हारे छिपे हुए ऐबों की तस्वीर बनाने वाला है। हाँ-हाँ, बेशक तुमने वह तस्वीर भी हमारे मकान में देखी होगी, अगर सचमुच अपने लड़के हरनामसिंह को उस दिन देख लिया है तो।"

यह एक ऐसी बात थी जिसने भूतनाथ के होशहवास दुरुस्त कर दिये। अब तक जिस जोश और दिमाग के साथ वह बैठा बातें कर रहा था वह बिल्कुल जाता रहा और घबराहट तथा परेशानी ने उसे अपना शिकार बना लिया। वह उठकर खड़ा हो गया और बेचैनी के साथ इधर-उधर टहलने लगा। बड़ी मुश्किल से कुछ देर में उसने अपने को सम्हाला और तब नकाबपोश की तरफ देखकर पूछा, "क्या वह तस्वीर आपके हाथ की बनाई हुई थी?"

नकाबपोश—बेशक!

भूतनाथ—तो आप ही ने उस आदमी को वह तस्वीर दी भी होगी जो मुझ पर उस तस्वीर की बाबत दावा करने के लिए कहता था!

नकाबपोश—इस बात का जबाब नहीं दिया जायगा।

भूतनाथ—तो क्या आप मेरे उन भेदों को दरबार में खोलना चाहते हैं?

नकाबपोश—अभी तक तो ऐसा करने का इरादा नहीं था मगर अब जैसा मुनासिब समझा जायगा, वैसा किया जायगा।

भूतनाथ—उन भेदों को आपके अतिरिक्त आपकी मण्डली में और भी कोई जानता है?

नकाबपोश—इसका जवाब देना भी उचित नहीं जान पड़ता।

भूतनाथ—आप बड़ी जबर्दस्ती करते हैं !

नकाबपोश—जबर्दस्ती करने वाले तो तुम थे, मगर अब क्या हो गया ?

भूतनाथ—(तेजी के साथ) मुमकिन है कि मैं अब भी जबर्दस्ती का बर्ताव करूँ। कोई क्या जान सकता है कि तुम लोगों को कौन उठा ले गया ?

नकाबपोश—(हँसकर) ठीक है, तुम समझते हो कि यह बात किसी को मालूम न होगी कि हम लोगों को भूतनाथ उठा ले गया है ।

भूतनाथ—(जोर देकर) ऐसा ही है, इसके विपरीत भी क्या कोई समझा सकता है ?

इतने ही में थोड़ी दूर पर से यह आवाज आई, "हाँ, समझा सकता है और विश्वास दिला सकता है कि यह बात छिपी हुई नहीं है ।"

अब तो भूतनाथ की कुछ विचित्र ही हालत हो गई । वह घबराकर उस तरफ देखने लगा जिधर से एक आवाज आई थी और फुर्ती के साथ अपने आदमियों से बोला, "पकड़ो ! जाने न पाये !"

भूतनाथ के आदमी तेजी के साथ उस बोलने वाले की खोज में दौड़ गये, मगर नतीजा कुछ भी न निकला अर्थात् वह आदमी गिरफ्तार न हुआ और भागकर निकल गया । यह हाल देख दोनों नकाबपोशों ने खिलखिला कर हँस दिया और कहा, "क्यों, अब तुम अपनी क्या राय कायम करते हो ?"

भूतनाथ—हाँ, मुझे विश्वास हो गया कि आपका यहाँ रहना छिपा नहीं रहा, अथवा हमारे पीछे आपका कोई आदमी यहाँ तक जरूर आया है । इसमें कोई शक नहीं कि आप लोग अपने काम में पक्के हैं कच्चे नहीं । मगर ऐयारी के फन में मैंने आपको दवा लिया ।

नकाबपोश—यह दूसरी बात है; तुम ऐयार हो और हम लोग ऐयारी नहीं जानते, मगर इतना होने पर भी तुम हमारे लिए दिन-रात परेशान रहते हो और कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ता । मगर भूतनाथ, हम तुमसे फिर भी यही कहते हैं कि हम लोगों के फेर में न पड़ो और कुछ दिन सब्र तो करो, फिर आप से आप तुम्हें हम लोगों का हाल मालूम हो जायगा । ताज्जुब है कि तुम इतने बड़े ऐयार होकर जल्दबाजी के साथ ऐसी ओछी कार्रवाई करके खुदबखुद अपना काम बिगाड़ने की कोशिश करते हो ! उस दिन दरबार में तुम देख चुके हो और जान भी चुके हो कि हम लोग तुम्हारी तरफदारी करते हैं, तुम्हारे ऐबों को छिपाते हैं, और तुम्हें एक विचित्र ढंग से माफी दिलाकर खास महाराज का कृपापात्र बनाना चाहते हैं, फिर क्या सबब है कि तुम हम लोगों का पीछा करके खामखाह हमारा क्रोध बढ़ा रहे हो ?

भूतनाथ—(गुस्से को दबाकर नर्मी के साथ)नहीं-नहीं, आप इस बात का गुमान भी न कीजिए कि मैं आप लोगों को दुःख देना चाहता हूँ और···

नकाबपोश—(बात काट के लापरवाही के साथ)दुःख देने की बात मैं नहीं कहता क्योंकि तुम हम लोगों को दुःख दे ही नहीं सकते ।

भूतनाथ—खैर, न सही । मगर मैं अपने दिल की बात कहता हूँ कि किसी बुरे

इरादे से मैं आप लोगों का पीछा नहीं करता, क्योंकि मुझे इस बात का निश्चय हो चुका है कि आप लोग मेरे सहायक हैं। मगर क्या करूँ, अपनी स्त्री को आपके मकान में देखकर हैरान हूँ और मेरे दिल के अन्दर तरह-तरह की बातें पैदा हो रही हैं। आज मैं इसी इरादे से आप लोगों को यहाँ ले आया था कि जिस तरह हो सके, अपनी स्त्री का असल भेद मालूम कर लूँ।

नकाबपोश—'जिस तरह हो सके' के क्या मानी ? हम कह चुके हैं कि तुम हमें किसी तरह की तकलीफ नहीं पहुँचा सकते और न डरा-धमका कर ही कुछ पूछ सकते हो, क्योंकि हम लोग बड़े ही जबर्दस्त हैं।

भूतनाथ—अब इतनी ज्यादा शेखी तो न बघारिये, क्या आप ऐसे मजबूत हो गये कि हमारा हाथ कोई काम कर ही नहीं सकता !

नकाबपोश—हमारे कहने का मतलब यह नहीं है, बल्कि यह है कि ऐसा करने से तुम्हें कोई फायदा नहीं हो सकता, क्योंकि हमारे संगी-साथी सभी कोई तुम्हारे भेदों को जानते हैं, मगर तुम्हें नुकसान पहुँचाना नहीं चाहते। हमारी ही तरफ ध्यान देकर देख लो कि तुम्हारे हाथों दुःखी होकर भी तुम्हें दुःख देना नहीं चाहते और जो कुछ तुम कर चुके हो, उसे सहकर बैठे हैं !

भूतनाथ—हमने आपको क्या दुःख दिया है ?

नकाबपोश—अगर हम इस बात का कुछ जवाब देंगे तो तुम औरों को तो नहीं, मगर हमें पहचान जाओगे।

भूतनाथ—अगर आपको पहचान भी जाऊँगा तो क्या हर्ज है ? मैं फिर प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ जब तक आप स्वयं अपना भेद न खोलेंगे, तब तक मैं अपने मुँह से कुछ भी किसी के सामने न कहूँगा, आप इसका निश्चय रखिये।

नकाबपोश—(कुछ सोचकर) मगर हमारा जवाब सुनकर तुम्हें गुस्सा और चढ़ आवेगा और ताज्जुब नहीं कि खंजर का वार कर बैठो।

भूतनाथ—नहीं-नहीं, कदापि नहीं, क्योंकि मुझे अब निश्चय हो गया कि आपका यहाँ आना छिपा नहीं है, अगर मैं आपके साथ कोई बुरा बर्ताव करूँगा तो किसी लायक न रहूँगा।

नकाबपोश—हाँ, यह ठीक है और बेशक बात भी ऐसी ही है। (कुछ सोचकर) अच्छा तो अब तुम्हारी उस बात का जवाब देते हैं, सुनो और अपने कलेजे को अच्छी तरह सम्हालो।

भूतनाथ—कहिये, मैं हर तरह से सुनने के लिए तैयार हूँ।

नकाबपोश—उस पीतल वाली सन्दूकड़ी में, जिसके खुलने से तुम डरते हो, जो कुछ है, वह हमारे ही शरीर का खून है, उसे तुम हमारे ही सामने से उठा ले गये थे, और हमारा ही नाम 'दलीपशाह' है।

यह एक ऐसी बात थी कि जिसके सुनने की उम्मीद भूतनाथ को नहीं हो सकती थी और न भूतनाथ में इतनी ताकत थी कि ये बातें सुनकर भी अपने को सम्हाले रहता, उसका चेहरा एकदम जर्द पड़ गया, कलेजा भी धड़कने लगा, हाथ-पैर में कँपकँपी होने

लगी, और वह सकते की सी हालत में ताज्जुब के साथ नकाबपोश के चेहरे पर गौर करने लगा।

नकाबपोश—तुम्हें मेरी बातों पर विश्वास हुआ या नहीं ?

भूतनाथ—नहीं, तुम दलीपशाह कदापि नहीं हो सकते ! यद्यपि मैंने दलीपशाह की सूरत नहीं देखी है, मगर मैं उसके पहचानने में गलती नहीं कर सकता और न इसी बात की उम्मीद हो सकती है कि दलीपशाह मुझे माफ कर देगा या मेरे साथ दोस्ती का बर्ताव करेगा।

नकाबपोश—तो मुझे दलीपशाह होने के लिए कुछ और भी सबूत देना पड़ेगा और उस भयानक रात की ओर इशारा करना पड़ेगा जिस रात को तुमने वह कार्रवाई की थी, जिस रात को घटाटोप अँधेरी छाई हुई थी, बादल गरज रहे थे, तो बार-बार बिजली चमककर औरतों के कलेजों को दहला रही थी, बल्कि उसी समय एक दफे बिजली तेजी के साथ चमक कर पास ही वाले खजूर के पेड़ पर गिरी थी, और तुम स्याह कम्बल की घोंघी लगाये आम की बारी में घुसकर यकायक गायब हो गये थे। कहो, कुछ और भी परिचय दूँ या बस !

भूयनाथ—(काँपती हुई आवाज में) बस-बस, मैं ऐसी बातें सुनना नहीं चाहता। (कुछ रुककर) मगर मेरा दिल यही कह रहा है कि तुम दलीपशाह नहीं हो।

नकाबपोश—हाँ ! तब तो मुझे कुछ और भी कहना पड़ेगा। जिस समय तुम घर के अन्दर घुसे थे, तुम्हारे हाथ में स्याह कपड़े का एक बहुत बड़ा लिफाफा था, जब मैंने तुम पर खंजर का वार किया, तब वह लिफाफा तुम्हारे हाथ से गिर पड़ा और मैंने उठा लिया, जो अभी तक मेरे पास मौजूद है, अगर तुम चाहो तो मैं दिखा सकता हूँ।

भूतनाथ—(जिसका बदन डर के मारे काँप रहा था) बस-बस-बस, मैं तुम्हें कह चुका हूँ और फिर कहता हूँ कि ऐसी बातें सुनना नहीं चाहता और न इसके सुनने से मुझे विश्वास ही हो सकता है कि तुम दलीपशाह हो। मुझ पर दया करो और अपनी चलती-फिरती जुबान रोको !

नकाबपोश—अगर विश्वास नहीं हो सका हो तो मैं कुछ और भी कहूँगा और अगर तुम न सुनोगे तो अपने साथी को सुनाऊँगा। (अपने साथी नकाबपोश की तरफ देख के) मैं उस समय अपनी चारपाई के पास बैठा कुछ लिख रहा था जब यह भूतनाथ मेरे सामने आकर खड़ा हो गया। कम्बल की घोंघी एक क्षण के लिए इसके आगे की तरफ से हट गई थी और इसके कपड़े पर पड़े हुए खून के छींटे दिखाई दे रहे थे। यद्यपि मेरी तरह इसके चेहरे पर भी नकाब पड़ी हुई थी, मगर मैं खूब समझता था कि यह भूतनाथ है। मैं उठ खड़ा हुआ और फुरती के साथ इसके चेहरे पर से नकाब हटाकर इसकी सूरत देख ली। उस समय इसके चेहरे पर भी खून के छींटे पड़े हुए दिखाई दिए। भूतनाथ ने मुझे डाटकर कहा कि 'तुम हट जाओ और मुझे अपना काम करने दो'। तब तक मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी कि यह मेरे पास क्यों आया है और क्या चाहता है। जब मैंने पूछा कि 'तुम क्या करना चाहते हो और मैं यहाँ से क्यों हट जाऊँ' तब इसने मुझ पर खंजर का वार किया, क्योंकि यह उस समय बिलकुल पागल हो रहा था और

मालूम होता था कि इस समय अपने-पराये को पहचान नहीं सकता···

भूतनाथ—(बात काटकर) ओफ, बस करो । वास्तव में उस समय मुझमें अपने पराये को पहचानने की ताकत न थी, मैं अपनी गरज में मतवाला और साथ ही इसके अन्धा भी हो रहा था !

नकाबपोश—हाँ-हाँ, सो तो मैं खुद ही कह रहा हूँ, क्योंकि तुमने उस समय अपने प्यारे लड़के को कुछ भी नहीं पहचाना और रुपये के लालच ने तुम्हें मायारानी के तिलिस्मी दारोगा का हुक्म मानने पर मजबूर किया ।(अपने साथी नकाबपोश की तरफ देखकर) उस समय इसकी स्त्री अर्थात् कमला की माँ इससे रंज होकर मेरे ही घर में आई और छिपी हुई थी और जिस चारपाई के पास मैं बैठा हुआ लिख रहा था, उसी पर उसका छोटा बच्चा अर्थात् कमला का छोटा भाई सो रहा था, उसकी माँ अन्दर के दालान में भोजन कर रही थी और उसके पास उसकी बहिन अर्थात् भूतनाथ की साली भी बैठी हुई अपने दुःख-दर्द की कहानी के साथ ही इसकी शिकायत भी कर रही थी, उसका छोटा बच्चा उसकी गोद में था, मगर भूतनाथ···

भूतनाथ—(बात काटता हुआ) ओफ-ओफ ! बस करो, मैं सुनना नहीं चाहता, तु-तु-तु तुम में···

इतना कहता हुआ भूतनाथ पागलों की तरह इधर-उधर घूमने लगा और फिर एक चक्कर खाकर जमीन पर गिरने के साथ ही बेहोश हो गया ।

14

भूतनाथ के बेहोश हो जाने पर दोनों नकाबपोशों ने भूतनाथ के साथियों में से एक को पानी लाने के लिए कहा और जब वह पानी ले आया तो उस नकाबपोश ने जिसने अपने को दलीपशाह बताया था, अपने हाथ से भूतनाथ को होश में लाने का उद्योग किया । थोड़ी ही देर में भूतनाथ चैतन्य हो गया और नकाबपोश की तरफ देखकर बोला, "मुझसे बड़ी भारी भूल हुई जो आप दोनों को फँसाकर यहाँ ले आया हूँ ! आज मेरी हिम्मत बिलकुल टूट गई और मुझे निश्चय हो गया कि अब मेरी मुराद पूरी नहीं हो सकती और मुझे लाचार होकर अपनी जान देनी पड़ेगी ।"

नकाबपोश—नहीं-नहीं भूतनाथ, तुम ऐसा मत सोचो, देखो हम कह चुके हैं और तुम्हें मालूम भी हो चुका है कि हम लोग तुम्हारे ऐबों को खोलना नहीं चाहते, बल्कि राजा वीरेन्द्रसिंह से तुम्हें माफी दिलाने का बन्दोबस्त कर रहे हैं । फिर तुम इस तरह हताश क्यों होते हो ? होश करो और अपने को सम्हालो ।

भूतनाथ—ठीक है, मुझे इस बात की आशा हो चली थी कि मेरे ऐब छिपे रह जायेंगे और मैं इसका बन्दोबस्त भी कर चुका था कि वह पीतल वाली सन्दूकड़ी खोली न जाय, मगर अब वह उम्मीद कायम नहीं रह सकती, क्योंकि मैं अपने दुश्मन को अपने

सामने मौजूद पाता हूँ।

नकाबपोश—बड़े ताज्जुब की बात है कि दरबार में हम लोगों को कैफियत देख-सुनकर भी तुम हमें अपना दुश्मन समझते हो! यदि तुम्हें मेरी बातों का विश्वास न हो तो मैं तुम्हें इजाजत देता हूँ कि खुशी से मेरा सिर काटकर पूरी दिलजमई कर लो और अपना शक भी मिटा लो। तब तो तुम्हें अपने भेदों के खुलने का भय न रहेगा?

भूतनाथ—(ताज्जुब से नकाबपोश की सूरत देखकर)दलीपशाह, वास्तव में तुम बड़े ही दिलावर, शेर-मर्द, रहमदिल और नेक आदमी हो। क्या सचमुच तुम मेरे कुसूरों को माफ करते हो?

नकाबपोश—हाँ-हाँ, मैं सच कहता हूँ कि मैंने तुम्हारे कसूरों को माफ कर दिया, बल्कि दो रईसों के सामने इस बात की कसम खा चुका हूँ।

भूतनाथ—वे दोनों रईस कौन हैं?

नकाबपोश—जिनके कब्जे में इस समय हम लोग हैं और जो नित्य महाराज साहब के दरबार में जाया करते हैं।

भूतनाथ—क्या राजा साहब के दरबार में जाने वाले नकाबपोश कोई दूसरे हैं आप नहीं, या उस दिन दरबार में आप नहीं थे जिस दिन आपकी सूरत देखकर जयपाल घबराया था?

नकाबपोश—हाँ, बेशक वे नकाबपोश दूसरे हैं और समय-समय पर नकाब डालने के अतिरिक्त सूरतें भी बदलकर जाया करते हैं। उस दिन वे हमारी सूरत बन-कर दरबार में गये थे।

भूतनाथ—वे दोनों कौन हैं?

नकाबपोश—यही तो एक बात है जिसे हम लोग खोल नहीं सकते, मगर तुम घबराते क्यों हो? जिस दिन उनकी असली सूरत देखोगे खुश हो जाओगे। तुम ही नहीं, बल्कि कुल दरबारियों को और महाराजा साहब को भी खुशी होगी, क्योंकि वे दोनों नकाबपोश कोई साधारण व्यक्ति नहीं हैं।

भूतनाथ—मेरे इस भेद को वे दोनों जानते हैं या नहीं?

नकाबपोश—फिर तुम उसी तरह की बातें पूछने लगे।

भूतनाथ—अच्छा अब न पूछूँगा, मगर अंदाज से मालूम होता है कि जब आप उनके सामने भेद छिपाने की कसम खा चुके हैं तो वे इस भेद को जानते जरूर होंगे। खैर, जब आप कहते ही हैं कि मेरा भेद छिपा रह जायगा तो मुझे घबराना न चाहिए। मगर मैं फिर भी यही कहूँगा कि आप दलीपशाह नहीं हैं।

नकाबपोश—(खिलखिलाकर हँसने के बाद)तब तो फिर मुझे कुछ और कहना पड़ेगा। वाह, तुम्हारी स्त्री बड़ी ही नेक थी, जो कुछ तुमने उसके सामने किया···

भूतनाथ—(नकाबपोश के मुँह पर हाथ रखकर) बस-बस-बस, मैं कुछ भी नहीं सुनना चाहता! यह कैसी माफी है कि आप अपनी जुबान नहीं रोकते!

इतने ही में पत्थरों की आड़ में से एक आदमी निकलकर बाहर आया और यह कहता हुआ भूतनाथ के सामने खड़ा हो गया, "तुम उन्हें भले ही रोक दो। मगर मैं उन

बातों की याद दिलाये बिना नहीं रह सकता !"

हम नहीं कह सकते कि इस नये आदमी को यहाँ पर आये कितनी देर हुई या यह कब से पत्थरों की आड़ में छिपा हुआ इन दोनों की बातें सुन रहा था, मगर भूतनाथ उसे यकायक अपने सामने देखकर चौंक पड़ा और घबराहट तथा परेशानी के साथ उसकी सूरत देखने लगा। यह देखकर उस आदमी ने जानबूझकर रोशनी के सामने अपनी सूरत कर दी जिसमें पहचानने के लिए भूतनाथ को तकलीफ न करनी पड़े।

यह वही आदमी था जिसे भूतनाथ ने नकाबपोशों के मकान में सूराख के अन्दर से झाँक कर देखा था और जिसने नकाबपोशों के सामने एक बड़ी-सी तस्वीर पेश करके कहा था कि "कृपानाथ, बस मैं इसी का दावा भूतनाथ पर करूँगा।"

इस आदमी को देख कर भूतनाथ पहले से भी ज्यादा घबरा गया। उसके बदन का खून बर्फ की तरह जम गया और उसमें हाथ-पैर हिलाने की ताकत बिल्कुल न रही। उस आदमी ने पुनः कड़क कर भूतनाथ से कहा, "ये नकाबपोश साहब तुम्हारी बात मान कर चाहे चुप रह जायँ, मगर मैं उन बातों को अच्छी तरह याद दिलाए बिना न रहूँगा जिन्हें सुनने की ताकत तुममें नहीं है। अगर तुम इनको दलीपशाह नहीं मानते हो तो मुझे दलीपशाह मानने में तुम्हें कोई उज्र भी न होगा।"

भूतनाथ यद्यपि आश्चर्यमय घटनाओं का शिकार हो रहा था और एक तौर पर खौफ, तरद्दुद, परेशानी और नाउम्मीदी ने उसे चारों तरफ से आकर घेर लिया था, मगर फिर भी उसने कोशिश करके अपने होश-हवास दुरुस्त किये और उस नए आये दलीपशाह की तरफ देख कर कहा, "बहुत खासे ! एक दलीपशाह ने तो परेशान कर ही रखा था, अब आप दूसरे दलीपशाह भी आ पहुँचे, थोड़ी देर में कोई तीसरे दलीपशाह भी आ जायँगे, फिर मैं काहे को किसी से दो बातें कर सकूँगा। (पुराने दलीपशाह की तरफ देख कर) अब बताइये, दलीपशाह आप हैं या ये ?"

पुराना दलीपशाह—तुम इतने ही में घबरा गये ! हमारे यहाँ जितने भी नकाबपोश हैं, सभी अपना नाम दलीपशाह बताने के लिए तैयार होंगे, मगर तुम्हें अपनी अक्ल से पहचानना चाहिए कि वास्तव में दलीपशाह कौन है।

भूतनाथ—इस कहने का मतलब तो यही है कि आप लोग सच नहीं बोलते ?

पुराना दलीपशाह—जो बातें हमने तुमसे कहीं, क्या वे झूठ हैं ?

नया दलीपशाह—या मैं जो कुछ कहूँगा वह झूठ होगा ! अच्छा सुनो, मैं एक दिन का जिक्र करता हूँ। जब तुम ठीक दोपहर के समय उसी पीतल वाली सन्दूकड़ी को बगल में छिपाये रोहतासगढ़ की तरफ भागे जा रहे थे। जब तुम्हें प्यास लगी तब तुम एक ऊँची जगत वाले कुएँ पर पानी पीने के लिए ठहर गये जिस पर एक पुराने नीम के पेड़ की सुन्दर छाया पड़ रही थी। कुएँ की जगत में नीचे की तरफ एक खुली कोठरी थी और उसमें एक मुसाफिर गर्मी की तकलीफ मिटाने की नीयत से लेटा हुआ तुम्हारे ही बारे में तरह-तरह की बातें सोच रहा था। तुम्हें उस आदमी के वहाँ मौजूद रहने का गुमान भी न था। मगर उसने तुम्हें कुएँ पर जाते हुए देख लिया, अस्तु, वह इस फिक्र में पड़ गया कि तुम्हारी छोटी-सी गठरी में क्या चीज है इसे मालूम करे और अगर उसमें

कोई चीज उसके मतलब की हो तो उसे निकाल ले। उस समय उस आदमी की सूरत ऐसी न थी कि तुम उसे पहचान सकते, बल्कि वह ठीक एक देहाती पंडित की सूरत में था क्योंकि वह वास्तव में एक ऐयार था, अस्तु, वह हाथ में लोटा लिए हुए कोठरी के बाहर निकला और उस ठिकाने पर गया, जहाँ तुम झुक कर पानी खींच रहे थे। तुम्हें इस बात का गुमान भी न था कि वह तुम्हारे साथ दगा करेगा। मगर उसने पीछे से तुम्हें ऐसा धक्का दिया कि तुम कुएँ के अन्दर जा रहे और उसने तुम्हारे ऐयारी के बटुए पर कब्जा करके जो कुछ अन्दर था, उसे अच्छी तरह देख और समझ लिया, बल्कि कुछ ले भी लिया। क्या तुम्हें आज तक भी मालूम हुआ कि वह कौन था !

भूतनाथ—(ताज्जुब से) नहीं, मैं अभी तक न जान सका कि वह कौन था, मगर इन बातों के कहने से तुम्हारा मतलब ही क्या है ?

नया दलीपशाह—मतलब यही है कि तुम जान जाओ कि इस समय वह आदमी तुम्हारे सामने खड़ा है।

भूतनाथ—(क्रोध से खंजर निकाल कर) क्या वह तुम ही थे ?

नया दलीपशाह—(खंजर का जवाब खंजर ही से देने के लिए तैयार होकर) बेशक मैं ही था और मैंने तुम्हारे बटुए में क्या-क्या देखा सो भी इस समय बयान करूँगा।

पहला दलीपशाह—(भूतनाथ को डपट कर) बस खबरदार ! होश में आओ और अपनी करतूतों पर ध्यान दो। हमने पहले ही कह दिया था कि तुम क्रोध में आकर अपने को बर्बाद कर दोगे। बेशक तुम बर्बाद हो जाओगे और कौड़ी काम के न रहोगे, साथ ही इसके यह भी समझ रखना कि तुम दलीपशाह का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते और न उसे तुम्हारे तिलिस्मी खंजर की परवाह है।

भूतनाथ—मैं आपसे किसी तरह तकरार नहीं करता, मगर इसको सजा दिए बिना भी न रहूँगा। क्योंकि इसने मेरे साथ दगा करके मुझे बड़ा नुकसान पहुँचाया है और यही वह शख्स है, जो मुझ पर दावा करने वाला है, अतः हमारे इसके बीच में इसी जगह सफाई हो जाय तो बेहतर है।

पहला दलीपशाह—खैर, जब तुम्हारी बदकिस्मती आ ही गई है तो हम कुछ नहीं कह सकते, तुम लड़ कर देख लो और जो कुछ बदा है भोगो, मगर साथ ही इसके यह भी सोच लो कि तुम्हारी तरह इसके और मेरे हाथ में भी तिलिस्मी खंजर हैं और इन खंजरों की चमक में तुम्हारे आदमी तुम्हें कुछ भी मदद नहीं पहुँचा सकते।

भूतनाथ—(कुछ सोचकर और फिर रुक कर) तो क्या आप इसकी मदद करेंगे ?

पहला दलीपशाह—बेशक !

भूतनाथ—आप तो मेरे सहायक हैं ?

पहला दलीपशाह—मगर इतने नहीं कि अपने साथियों को नुकसान पहुँचावें।

भूतनाथ—आखिर ये जब मुझे नुकसान पहुँचाने के लिए तैयार हैं तो क्या किया जाए ?

पहला दलीपशाह—इनसे भी तुम माफी की उम्मीद करो क्योंकि हम लोगों के सरदार तुम्हारे पक्षपाती हैं।

भूतनाथ—(खंजर म्यान में रख कर) अच्छा, अब हम आपकी मेहरबानी पर भरोसा करते हैं, जो चाहे कीजिये।

पहला दलीपशाह—(नये दलीप से) आओ जी, तुम मेरे पास बैठ जाओ।

नया दलीपशाह—मैं तो इससे लड़ता ही नहीं मुझे क्या कहते हो ? लो, मैं तुम्हारे पास बैठ जाता हूँ। मगर यह तो बताओ कि अब इसी भूतनाथ के कब्जे में पड़े रहोगे या यहाँ से चलोगे भी ?

पहला दलीपशाह—(भूतनाथ से) कहो अब मेरे साथ क्या सलूक करना चाहते हो ? तुम्हें मुनासिब तो यही है कि हमें कैद करके दरबार में ले चलो।

भूतनाथ—नहीं, मुझमें इतनी हिम्मत नहीं है, बल्कि आप मुझे माफी की उम्मीद दिलाइये तो मैं यहाँ से चला जाऊँ।

पहला दलीपशाह—हाँ, तुम माफी की उम्मीद कर सकते हो, मगर इस शर्त पर कि अब हम लोगों का पीछा न करोगे !

भूतनाथ—नहीं, अब ऐसा न करूँगा। चलिए मैं अब आपको ठिकाने पहुँचा दूँ।

नया दलीपशाह—हमें अपना रास्ता मालूम है, किसी मदद की जरूरत नहीं।

इतना कहकर नया दलीपशाह उठ खड़ा हुआ और साथ ही वे दोनों नकाबपोश भी जिन्हें भूतनाथ बेहोश करके लाया था उठे और अपने मकान की तरफ चल पड़े।

15

महाराज सुरेन्द्रसिंह के दरबार में दोनों नकाबपोश दूसरे दिन नहीं आये, बल्कि तीसरे दिन आये और आज्ञानुसार बैठ जाने पर अपनी गैरहाजिरी का सबब एक नकाबपोश ने इस तरह बयान किया—

"भैरोंसिंह और तारासिंह को साथ लेकर, यद्यपि हम लोग इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के पास गये थे। मगर रास्ते में कई तरह की तकलीफ हो जाने के कारण जुकाम (सर्दी) और बुखार के शिकार बन गये, गले में दर्द और रेजिश के सबब से साफ बोला नहीं जाता था। बल्कि अभी तक आवाज साफ नहीं हुई, इसीलिए कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने जोर देकर हम लोगों को रोक लिया और दो-तीन अपने पास से हटने न दिया, लाचार हम लोग हाजिर न हो सके। उन्होंने एक चिट्ठी भी महाराज के नाम की दी है।"

यह कहकर नकाबपोश ने एक चिट्ठी जेब से निकाली और उठ कर महाराज के हाथ में दी। महाराज ने बड़ी प्रसन्नता से वह चिट्ठी जो खास इन्द्रजीतसिंह के हाथ की लिखी हुई थी, पढ़ी और इसके साथ बारी-बारी से सभी के हाथ में वह चिट्ठी घूमी। उसमें प्रणाम इत्यादि के बाद यह लिखा हुआ था—

"आपके आशीर्वाद से हम लोग प्रसन्न हैं। दोनों ऐयारों के न होने से जो तकलीफ थी, अब वह भी जाती रही। रामसिंह और लक्ष्मणसिंह ने हम लोगों की बड़ी

मदद की, इसमें कोई सन्देह नहीं। हम लोग तिलिस्म का बहुत ज्यादा काम खत्म कर चुके हैं। आशा है कि आज के तीसरे दिन हम दोनों भाई आपकी सेवा में उपस्थित होंगे और इसके बाद जो कुछ तिलिस्म का काम बचा हुआ है, उसे आपकी सेवा में रहकर ही पूरा करेंगे। हम दोनों की इच्छा है कि तब तक आप कैदियों का मुकदमा भी बन्द रखें क्योंकि उसके देखने और सुनने के लिए हम दोनों बेचैन हो रहे हैं। उपस्थित होने पर हम दोनों अपना अनूठा हाल भी अर्ज करेंगे।"

इस चिट्ठी को पढ़कर और यह जान कर सभी प्रसन्न हुए कि अब कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह आना ही चाहते हैं। इसी तरह इस उपन्यास के प्रेमी पाठक भी यह जानकर प्रसन्न होंगे कि अब यह उपन्यास भी शीघ्र ही समाप्त होना चाहता है। अस्तु, कुछ देर तक खुशी के चर्चे होते रहे और इसके बाद पुनः नकाबपोशों से बातचीत होने लगी—

एक नकाबपोश—भूतनाथ लौट कर आया या नहीं ?

तेजसिंह—ताज्जुब है कि अभी तक भूतनाथ नहीं आया। शायद आपके साथियों ने उसे···

नकाबपोश – नहीं-नहीं, हमारे साथी लोग उसे दुःख नहीं देंगे। मुझे तो विश्वास था कि भूतनाथ आ गया होगा, क्योंकि वे दोनों नकाबपोश लौटकर हमारे यहाँ पहुँच गये जिन्हें भूतनाथ गिरफ्तार करके ले गया था। मगर अब शक होता है कि भूतनाथ पुनः किसी फेर में तो नहीं पड़ गया या उसे पुनः हमारे किसी साथी को पकड़ने का शौक तो नहीं हुआ !

तेजसिंह—आपके साथी ने लौटकर अपना हाल तो कहा होगा ?

नकाबपोश—जी हाँ, कुछ हाल कहा था, जिससे मालूम हुआ कि उन दोनों को गिरफ्तार करके ले जाने पर भूतनाथ को पछताना पड़ा।

तेजसिंह—क्या आप बता सकते हैं कि क्या-क्या हुआ ?

नकाबपोश—बता सकते हैं, मगर यह बात भूतनाथ को नापसन्द होगी, क्योंकि भूतनाथ को उन लोगों ने उसके पुराने ऐबों को बताकर डरा दिया था और इसी सबब से वह उन नकाबपोशों का कुछ बिगाड़ न सका। हाँ, हम लोग उन दोनों नकाबपोशों को अपने साथ यहाँ ले आये हैं यह सोचकर कि भूतनाथ यहाँ आ गया होगा, अतः उनका मुकाबला हुजूर के सामने करा दिया जायेगा।

तेजसिंह—हाँ ! वे दोनों नकाबपोश कहाँ हैं ?

नकाबपोश—बाहर फाटक पर उन्हें छोड़ आया हूँ। किसी को हुक्म दिया जाये, उन्हें भीतर बुला लाये।

इशारा पाते ही एक चोबदार उन्हें बुलाने के लिए चला गया, और उसी समय भूतनाथ भी दरबार में हाजिर होता दिखाई दिया। कौतुक की निगाह से सबने भूतनाथ को देखा भूतनाथ ने सबको सलाम किया और आज्ञानुसार देवीसिंह के बगल में बैठ गया।

जिस समय भूतनाथ इस इमारत की ड्योढ़ी पर आया था उसी समय उन दोनों नकाबपोशों को फाटक पर टहलता हुआ देखकर चौंक पड़ा था। यद्यपि उन दोनों के चेहरे

नकाब से खाली न थे, मगर फिर भी भूतनाथ ने उन्हें पहचान लिया कि ये दोनों वही नकाबपोश हैं, जिन्हें हम फँसा ले गये थे। अपने धड़कते कलेजे और परेशान दिमाग को लिए हुए भूतनाथ फाटक के अन्दर चला गया और दरबार में हाजिर होकर उसने दोनों सरदार नकाबपोशों को देखा।

एक नकाबपोश—कहो भूतनाथ, अच्छे तो हो ?

भूतनाथ—हुजूर लोगों के इकबाल से जिन्दा हूँ, मगर दिन-रात इसी सोच में पड़ा रहता हूँ कि प्रायश्चित्त करने या क्षमा माँगने से ईश्वर भी अपने भक्तों के पापों को भुलाकर क्षमा कर देता है परन्तु मनुष्यों में वह बात क्यों नहीं पाई जाती !

नकाबपोश—जो लोग ईश्वर के सच्चे भक्त हैं, और जो निर्गुण और सगुण सर्व-शक्तिमान् जगदीश्वर का भरोसा रखते हैं, वे जीवमात्र के साथ वैसा ही बर्ताव करते हैं, जैसा ईश्वर चाहता है या जैसीकि हरि-इच्छा समझी जाती है। अगर तुमने सच्चे दिल से परमात्मा से क्षमा माँग ली और अब तुम्हारी नीयत साफ है तो तुम्हें किसी तरह का दुःख नहीं मिल सकता। अगर कुछ मिलता है तो इसका कारण तुम्हारे चित्त का विकार है। तुम्हारे चित्त में अभी तक शान्ति नहीं हुई और तुम एकाग्र होकर उचित कार्यों की तरफ ध्यान नहीं देते, इसलिए तुम्हें सुख प्राप्त नहीं होता। अब हमारा कहना इतना ही है कि तुम शान्ति के स्वरूप बनो और ज्यादा खोज-बीन के फेर में न पड़ो। यदि तुम इस बात को मानोगे, तो निःसन्देह अच्छे रहोगे, और तुम्हें किसी तरह का कष्ट न होगा।

भूतनाथ—निःसन्देह आप उचित कहते हैं।

देवीसिंह—भूतनाथ, तुम्हें यह सुनकर प्रसन्न होना चाहिए कि दो ही तीन दिन में कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह आने वाले हैं !

भूतनाथ—(ताज्जुब से) यह कैसे मालूम हुआ ?

देवीसिंह—उनकी चिट्ठी आई है।

भूतनाथ—कौन लाया है ?

देवीसिंह—(नकाबपोशों की तरफ बताकर) ये ही लाये हैं।

भूतनाथ—क्या मैं उस चिट्ठी को देख सकता हूँ ?

देवीसिंह—अवश्य।

इतना कहकर देवीसिंह ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह की चिट्ठी भूतनाथ के हाथ में दे दी, और भूतनाथ ने प्रसन्नता के साथ पढ़कर कहा, "अब सब बखेड़ा तय हो जायेगा !"

जीतसिंह—(महाराज का इशारा पाकर भूतनाथ से)भूतनाथ, तुम्हें महाराज की तरफ से किसी तरह का खौफ नहीं करना चाहिए, क्योंकि महाराज आज्ञा दे चुके हैं कि तुम्हारे ऐबों पर ध्यान न देंगे और देवीसिंह, जिन्हें महाराज अपना अंग समझते हैं, तुम्हें अपने भाई के बराबर मानते हैं। अच्छा, अब यह बताओ कि तुम्हारे लौट आने में इतना विलम्ब क्यों हुआ, क्योंकि जिन दो नकाबपोशों को तुम गिरफ्तार करके ले गये थे उन्हें अपने घर लौटे दो दिन हो गए।

भूतनाथ कुछ जवाब देना ही चाहता था कि वे दोनों नकाबपोश भी हाजिर हुए जिन्हें बुलाने के लिए चोबदार गया था। जब वे दोनों सबको सलाम करके आज्ञानुसार

बैठ गये तब भूतनाथ ने जवाब दिया—

भूतनाथ—(दोनों नकाबपोशों की तरफ बताकर) जहाँ तक मैं खयाल करता हूँ, ये दोनों नकाबपोश वे ही हैं, जिन्हें मैं गिरफ्तार करके ले गया था। (नकाबपोशों से) क्यों साहबो ?

एक नकाबपोश—ठीक है, मगर हम लोगों को ले जाकर तुमने क्या किया, सो महाराज को मालूम नहीं है।

भूतनाथ—हम लोग एक साथ ही अपने-अपने स्थान की तरफ रवाना हुए थे, ये दोनों तो बे-खटके अपने घर पर पहुँच गए होंगे, मगर मैं एक विचित्र तमाशे के फेर में पड़ गया था।

जीतसिंह—वह क्या ?

भूतनाथ—(कुछ संकोच के साथ) क्या कहूँ, कहते हुए शर्म मालूम होती है !

देवीसिंह—ऐयारों को किसी घटना के कहने में शर्म न होनी चाहिए, चाहे उन्हें अपनी दुर्गति का हाल ही क्यों न कहना पड़े, और यहाँ कोई गैर-शख्स भी बठा हुआ नहीं है। ये नकाबपोश साहब भी अपने ही हैं, तुम खुद देख चुके हो कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने इनके बारे में क्या लिखा है।

भूतनाथ—ठीक है, मगर…खैर, जो होगा देखा जायेगा। मैं बयान करता हूँ, सुनिये। इन नकाबपोशों को बिदा करने के बाद जिस समय मैं वहाँ से रवाना हुआ, रात आधी से कुछ ज्यादा जा चुकी थी। जब मैं 'पिपलिया' वाले जंगल में पहुँचा, जो यहाँ से दो-ढाई कोस होगा, तो गाने की मधुर आवाज मेरे कानों में पड़ी और मैं ताज्जुब से चारों तरफ गौर करने लगा। मालूम हुआ कि दाहिनी तरफ से आवाज आ रही है, अतः मैं रास्ता छोड़ धीरे-धीरे दाहिनी तरफ चला और गौर से उस आवाज को सुनने लगा। जैसे-जैसे आगे बढ़ता था, आवाज साफ होती जाती थी और यह भी जान पड़ता था कि मैं इस स्वर से अपरिचित नहीं, बल्कि कई दफे सुन चुका हूँ, अतः उत्कण्ठा के साथ कदम बढ़ाकर चलने लगा। कुछ और आगे जाने के बाद मालूम हुआ कि दो औरतें मिलकर बारी-बारी से गा रही हैं, जिनमें से एक की आवाज पहचानी हुई है। जब उस ठिकाने पहुँच गया जहाँ से आवाज आ रही थी तो देखा कि बड़ के एक बड़े और पुराने पेड़ के ऊपर कई औरतें गा रही हैं। वहाँ बहुत अंधकार हो रहा था, इसलिए इस बात का पता नहीं लग सकता था कि वे औरतें कौन हैं, कैसी और किस रंग-ढंग की हैं तथा उनका पहनावा कैसा है।

मैं भले-बुरे का कुछ ख़याल न करके उस पेड़ के नीचे चला गया और तिलिस्मी खंजर अपने हाथ में लेकर रोशनी के लिए उसका कब्जा दबाया। उसकी तेज रोशनी से चारों तरफ उजाला हो गया और पेड़ पर चढ़ी हुई वे औरतें साफ दिखाई देने लगीं। मैं उनके पहचानने की कोशिश कर ही रहा था कि यकायक उस पेड़ के चारों तरफ चक्र की तरह आग भभक उठी और तुरन्त ही वह बुझ गई। जैसे किसी ने बारूद की ढेर में आग दी हो और वह भभक से उड़ जाने के बाद वहाँ केवल धुआँ-ही-धुआँ रह जाये, ठीक वसा ही मालूम हुआ। आग बुझ जाने के साथ ही ऐसा जहरीला और कड़ुआ धुआँ फैला कि मेरी तबीयत घबरा गई और मैं समझ गया कि इसमें बेहोशी का असर जरूर है और मेरे साथ

ऐयारी की गई। बहुत कोशिश की, मगर मैं अपने को सम्हाल न सका और बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा।

मैं नहीं कह सकता कि बेहोश होने के बाद मेरे साथ कैसा सलूक किया गया। हाँ, जब मैं होश में आया और मेरी आँखें खुलीं; तो मैंने एक सुन्दर सजे हुए कमरे में अपने को हथकड़ी-बेड़ी से मजबूर पाया। उस समय कमरे में रोशनी बखूवी हो रही थी, और मेरे सामने साफ फर्श के ऊपर कई औरतें बैठी हुई थीं, जिनमें मेरी औरत ऊँची गद्दी पर बैठी हुई उन सबकी सरदार मालूम पड़ती थी।

□□

चन्द्रकान्ता सन्तति

बाबू देवकीनन्दन खत्री

चन्द्रकान्ता सन्तति • बाबू देवकीनन्दन खत्री

5